



परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री  
**सुविधिसागर जी महाराज**

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर  
सुविधि-परिवार के द्वारा आयोजित

**जिनवाणी-महोत्सव**



**सहस्रग्रन्थसंग्रह**

\* जन्मदिवस 19-03-1971

\* मुनिदीक्षा-11-05-1989

\* आचार्यपद- 20-06-2004

पट्टाधीशपद- 24-12-2010 (20-06-2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मत्तिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:-

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी-जुलाई 2004) (अक्षयज्योति-अक्तूबर 2004)



# जिनवाणी संग्रह

संकलनकर्त्री  
मामचन्द, हुजलासचन्द, प्रकाशचन्द जैन

प्राप्ति स्थानः  
मित्रसेन जैन देवचन्द (उत्तरप्रदेश)



(परम्परानायक)



(द्वितीय पट्टाधीश)



परम पूज्य तीर्थभक्त-शिरोमणि,  
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

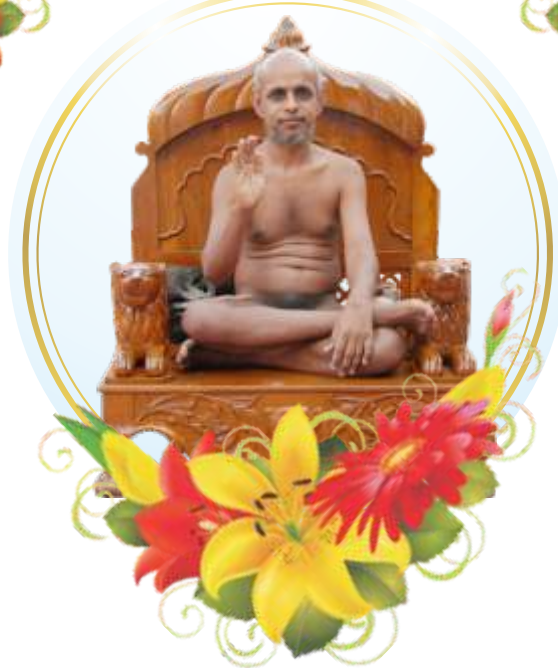
परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती,  
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज  
(अंकलीकर)

(तृतीय पट्टाधीश)



परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती,  
आचार्यश्री सन्मत्तिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)



परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें। मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि-परिवार

पूजनीया,

माताजी श्रीमती राजकलीजी की स्मृति में

बिना मूल्य में

# जिनवाणी संग्रह

विनीत :—

मामचन्द, हुलासचन्द, प्रकाशचन्द

मूल्य सदुपयोग

मंगाने के लिये पोस्टेज ॥३॥ के टिकिट

किसी एक निम्न पते पर भेजें

H. C. Jain.  
R. B. S. Jain Rubber Mills  
Lillooah, ( E. I. Ry. )

ला० मित्रसैन मामचन्द जैन  
देवचन्द  
यू, पी,

# प्रकाशकके दो शब्द



बन्धुओं !

यह जानकर आप अश्चय ही प्रसन्न होंगे कि सच्चा जिन-वाणा सप्रह भादों मासमें ही छपाया गया था, परन्तु दो माहमें ही यह आवृत्ति शेष हो गयी। तब यह नवीन आवृत्ति यूरोपीय लडाईं आरम्भ होनेके बाद प्रकाशित की जा रहा है। जब कि कागजका भाव बहुत ही ज्यादा बढ़ गया है। इस परिस्थितिमें इतने बड़े संग्रहका प्रकाशन करना कष्ट साध्य अवश्य हो गया था। फिर भी ५०० ग्राहकोंका आर्डर नोट होजानेसे हमने यथा साध. पुष्ट कागज पर ही तमाम संग्रह छपवाया है गत आवृत्तिसे जरा भी त्रुटि नहीं होने दी है।

हम अपने जैन समाजके उन शास्त्र दानियोंका ध्यान इस ओर पुनः आकर्षित करते हैं कि वे इस संग्रहकी १००-१०० प्रतियां एक साथ लागत मात्रसे भी कम दाममें खरीद कर शास्त्र दानका महान यश प्राप्त करें।

मान्यवर प्यारेलालजी भगतने इस बार भी कई सौ प्रतियां मंगवा कर हमें बहुत कुछ सहायता पहुंचाई है। इसके उन्हें धन्यवाद दिये वगैर नहीं रह सकते।

दांपावली—

व.र सं० २४६५,

समाज सेवक

दुलीचंद परवार



# विषय सूची ।



क्रम सं०	पाठ	पृष्ठ	क्रम सं०	पाठ	पृष्ठ
१	णमोकार मंत्र गाथा	१	२०	लघु अभिषेक ( सं० )	५१
०२	दर्शन ॥३	२	२१	भाषा	५७
०३	ज्ञानानन्दकृत दर्शन	३	२२	जलाभिषेक क्षाल	५६
४	सामायिक पाठ	४	२३	नियम पाठ	६४
५	गंध दफ लेनेका मंत्र	१२	२५	नित्य नियम पूजा(सं०)	६७
६	आशिका लेनेका दोहा	१२	२५	देवशास्त्र गुरुपूजा भाषा	८४
७	शास्त्रजीको नमस्कार	१२	२६	बोम तीर्थका पूजा भाषा	८६
८	पंच परमेष्ठीको आरती	१३	२७	अकृत्रिम चन्द्यालय अघ	६४
९	दाप धूपके श्लोक	१५	२८	विद्वेषा द्रव्याष्टक	६७
१०	दर्शन 'तुव जिनंद'	१६	२९	विद्वेषा भावाष्टक	१०३
११	सुप्रभात स्तोत्र	१६	३०	फुटकर अर्घ	१४
०१२	दृष्टाष्टक स्तोत्र	१६	३१	पंच परमेष्ठी जयमाला	१०४
०१३	अष्टाष्टक स्तोत्र	२१	३२	शान्त पाठ	१०६
०१४	नमस्कार मंत्र दर्शन पाठ	२२	३३	विषजन	११०
१०	दर्शन दशक	२३	३४	भाषा स्तुति पाठ	११०
०१६	आल्लोचना पाठ	३०	३५	नामावली स्तुति	११३
१७	अभिषेक पाठ पंचमगल	३३	३६	जिनेन्द्र स्तुति	११५
१८	दोलत कृत स्तुति	४७	३७	दुखहाण स्तुति	११७
१६	भूधर कृत स्तुति	४६	३८	करुणाष्टक	१-२

३६ पार्श्वनाथ स्तुति	१२३	६१ अकलङ्क स्तुति	२५४
४० शारदाष्टक	१२५	६२ पार्श्वनाथस्तोत्र(द्यानत)	२५८
४१ शास्त्र भक्ति	१२७	६३ " भूधर	२६०
४२ बड़ी साधु बंदना	१२६	६४ देव पूजा भाषा	३६४
४३ भूधर कृत :स्तुति	१३४	६५ सरस्वती पूजा भाषा	२६६
४४ " दूसरी	१३५	६६ गुरु पूजा भाषा	२७३
४५ गुर्वावली	१३७	६७ अकृतिम चैत्यालयपूजा	२७७
४६ मंगलाष्टक	१४४	६८ सिद्ध पूजा भाषा	२८६
४७ आचार्य रविसेन स्तुति	१४६	६९ समुच्चय चौबीसी पूजा	२६२
४८ श्रीजिनसेनाचार्य स्तुति	१४६	७० आदिनाथ जिन पूजा	२६६
४९ जिन सहस्र नाम	१४७	७१ चन्द्रप्रभ जिन पूजा	३०२
५० भक्तामर स्तोत्र सं०	१६७	७२ वासुपूज्य जिन पूजा	३०६
५१ " " भाषा	१७५	७३ अनन्तनाथ जिन पूजा	३१५
५२ मोक्ष शास्त्र	१८६	७४ शान्तिनाथ जिनपूजा	३२०
५३ कल्याण मंदिर स्तोत्र	२०७	७५ पार्श्वनाथ जिन पूजा	२२१
५४ " भाषा	२१५	दीपावली वर्द्धमान	
५५ एकीभात्र स्तोत्र (सं०)	२२२	जिन पूजा	३३३
५६ " भाषा	२२८	७७ निर्वाण क्षेत्र पूजा	३४०
५७ विषापहार स्तोत्र (सं०)	२३४	७८ निर्वाणकाण्ड (गाथा)	३४४
५८ " भाषा	२४०	७९ " भाषा	३४७
५९ महावीराष्टक	२५०	८० महावीराष्टक भाषा	३५०
६० मंगलाष्टक	२५२	८१ सर्गांश पूजा	३५२

८२ पंचमेरु पूजा	३५८	१०४ बारहभावना भूधरकृत	४७१
८३ नन्दीश्वर पूजा (सं०)	३६२	१०५ " बुधजनकृत	४७४
८४ " " भाषा	३७३	१०६ वैराग्य भावना	४७८
८५ सोलहकारणपूजा भाषां	३७६	१०७ बारहभावना जयचन्द	४८३
८६ दशलक्षण पूजा भाषा	३८०	१०८ " " मंगल	४८७
८७ स्वयम्भूस्तोत्र (सं०)	३८८	१०९ द्वात्रिंशतिका	४९५
८८ " भाषा	३९२	११० मेरी भावना	४९९
८९ रत्नत्रयपूजा भाषा	३९६	१११ जकड़ी रूपचन्द कृत	५०३
९० संमेदाचल पूजा	४०४	११२ " दौलतराम कृत	५०५
९१ गिरनार क्षेत्र पूजा	४२२	११६ " दूसरी	५०७
९२ चम्पापुरी सिद्ध क्षेत्र पूजा	४३०	११४ " भूधरकृत	५१२
९३ पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा	४३४	११५ " रामकृष्ण कृत	५१४
९४ आरती संग्रह	४३९	५१६ शारदास्तवन प्रभाती	५१७
९५ दीप धूप चढानेके मंत्र	४४५	५१७ ज्ञान पञ्चीसी	५१८
९६ स्तुति भागचन्द	४४६	५१८ धर्म पञ्चीसी	५२०
९७ स्तुति भूधर दास	४४७	११९ आध्यात्म पञ्चीसिका	५२४
९८ " दूसरी	४४९	१२० सप्तव्यसनके चौबोले	५३०
९९ " प्रभू इस जग	४५०	१२१ गायन झण्डाभिवादन	५३६
१०० " हे दीन बन्धु	४५३	१२२ गायन धर्म दशा	५६३
१०१ " हे करुणानिधि	४५६	१२३ गायन देश दशा	५३७
१०२ " पुकार पञ्चीसी	४६२	१२४ धर्म वन्नति	५३८
१०३ बारहभावना भगोती	४६८	१२५ फूलमाल पञ्चीसी	५३९



० १२६ छहढाला	५४४	१४८ नवनागयण	६२१
१२७ बाइम परीषह	५६३	१४९ नवप्रति नारायण	„
१२८ समाधिमरण	५७२	१५० नवबलभद्र	६२२
१२९ बारहमासा नेमराजुल	५८५	१५१ नव नारद	„
१३० बारहमासा भीताजी	५९३	१५२ ग्यारह रुद्र	„
१३१ बारहभावना सीताजी	६०६	१५३ चौदह कुलकर	„
१३२ चौब स ढण्डक	६०८	१५४ बारह प्रसिद्ध पुरुष	„
१३३ तीर्थकरोंके चिन्ह	६१६	१५५ चौदह गुणस्थान	„
१३४ संक्षिप्त सूक्त विधि	६१७	१५६ ग्यारह प्रतिमा	६२३
१३५ पंच परमेष्ठीके नाम	६१९	१५७ आवकके १७ नियम	„
१३६ आठ महाप्रातिहार्य	„	१५८ सप्त व्यसन	„
१३७ चार अनन्त चतुष्टय	„	१५९ अष्ट मूलगुण	„
१३८ च र घातिया कर्म	„	१६० दसलक्षण धर्म	„
१३९ समोशरणकी भूमि	६२०	१६१ तीन प्रकारका लोक	„
१४० अठारह दोष	„	१६२ पांच प्रकारके ब्रह्मचारी	„
१४१ षोडश भावना	„	१६३ छह आर्यकर्म	६२४
१४२ दस प्रकारके कल्प वृक्ष	„	१६४ दशां पूजा	६२४
१४३ बारह चक्रवर्ती	„	१६५ चारप्रकारके ऋषि	६२४
१४४ चक्रवर्तीके सात अंग	६२१	१६६ नवप्रकारके प्रायश्चित्त	६२४
१४५ चक्रवर्तीकेचौदहरत्न	„	१६७ बारह प्रकारका तप	६२४
१४६ चक्रवर्तीके नवनिधि	६२१	१६९ जैनझण्डा गायन	६२५
१४७ चक्रवर्तीके दस भोग	„	१७० होलिकोत्सव भजन	६२७

१७१ दिवालीके भजन	६२७	२४४ देव दर्शन	७११
१७२ वीर जयन्तीके "	६२८	२४५ उत्तमक्षमा भजन	७१२
१७३ रक्षाबन्धनके "	६२९	२४६ उत्तम मादव "	७१३
१७४ पर्युषण पर्वके "	"	२४७ उत्तम मार्जव "	७१४
१७५ अक्षय तृतियाके "	६३०	२४८ उत्तम सत्य "	७१४
१७६ भजन ५१	"	२४९ उत्तम सौच "	७१५
२२७ अर्द्धक्षेत्रपार्श्वनाथस्तुति	६६६	२५० उत्तम संयम "	७१६
२२८ आराधना पाठ	६७०	२५१ उत्तम तप "	७१७
२२९ णमोकार महिमा	६७२	२५२ उत्तम त्याग "	७१७
२३० श्रीसम्मेशशिखर पूजा	६७३	२५३ उत्तम आकिंचन "	७१८
( अलग २ टोकोंके अर्थ )		२५४ महावीर स्तुति	७१९
२३१ सल्लुना पूजा	६७६	२५५ नेमस्तति	७१९
२३२ जयमाल	६८२	२५६ तार्थकरोंके निर्वाणक्षेत्र	७२०
२३३ प्रातःकालकी स्तुति	६८४	२५७ पांच महाकल्याण	७२०
२३४ सायंकालकी स्तुति	६८५	२५८ दशलक्षण व्रत कथा	७२१
२३५ शीलमहात्म्य	६८६	२५९ पुणपांजलिब्रत कथा	७२७
२३६ णमोकार मंत्रकामहात्म्य	६८९	२६० अनन्तचौदशब्रतकथा	७३४
२३७ श्रीजिनगिरा स्तवन	६९०	२६१ सुगन्धदशमीब्रत कथा	७५५
२३८ रविब्रत पूजा	६९१	२६२ मुक्तावला व्रत कथा	७६१
२३९ संस्कृत प्रार्थना	६९६	२६३ रत्नत्रय व्रत कथा	७६७
२४० शांतिपाठ भाष्य	६९९	२६४ नन्द श्वर व्रत कथा	७७१
२४१ जिनबर पचीसी	७०१	२६५ अठारहनातेकी कथा	७८१
२४२ लघुसमाधिमरण भाषा	७०६	२६६ जैनभारतोंका नमूना	७८६
		२६७ रविब्रत कथा	७८७
		२६८ निर्वाणभोजन कथा	७९०
		२६९ सूचापत्र	७९३

# असली सोने-चांदी की

## दुकान

( हमारे यहां सीर्फ १ ) सैकड़ा आढ़त ली जाती है व्यापारियोंको हमसे जरूर व्यवहार करके लाभ उठाना चाहिये )

जब कभी आपको असली सोने-चांदीके जेवरात, थाली, लोटा, गिलास, सिंहासन, पंचमेरु, अष्टमंगल, सोलह स्वप्न, मुकुट, नालकी, आसा सोटा, भामंडला, घोड़ेका साज, रथका साज, चंवर, पहिरने के गहने, जैसे, पायल, पायजेव, टोडल, पेजना, नोंगरे, चंदोरी, करधोनी, टुसी, तिदाना, पोंची, पिछेली, हार, चूरा सकरी, मालायें, लच्छा, झांझें आदि बनवाना हो तो उचित मजदूरी लेकर गैरंटीके साथ बनवा दिया जायगा ।

नोट— १ जब कभी आपको हमारी बनी चीजें लौटानी हो तों मजदूरी बाद देकर बाजार भावसे चांजका रु० वापिस मिलेगा ।

२—जो कुछ पूछताछ करनी हो, तो नीचे के पतेसे पत्र व्यवहार करके निश्चय करें ।

सिंघई दुलीचंद दमरूलाल सराफ

गांधीचौक—सराफा बाजार, सागर ( सी० पी० )



सच्चा जिनवाणी संग्रह—



पवनजय चित्तमै गिरने जा रहे थे कि अंजना पहुंच जाती है।

( अंजना नाटक )

## सच्च। जिनवाणी संग्रह--



एक व्रती श्रावक स्वाध्याय कर रहा है।



सञ्ज्ञा

# जिनवाणी संग्रह

पहिला अध्याय ।

णमोकार मंत्र ।

गाथा ।

णमो अरहंताणं, णमोसिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।  
णमो उवज्झयाणं, णमो लोए सब्बसाहूणं ॥१५॥  
• अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः ।

## दर्शनिपाठ ।

प्रभु पतितपावन में अपावन, चरन आयो सरन  
जी । यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन  
मरनजी । तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव  
विविधप्रकारजी । या बुद्धिसेती निज न जाण्यो,  
भ्रम गिण्यो हितकारजी ॥ १ ॥ भवविकटवनमें  
करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हन्यो । तब इष्ट भूल्यो  
भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरतो फिन्यो ॥ धन  
घडी यो धम दिवस यो ही, धन जनम मेरो  
भयो । अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको  
लखल्यो ॥ २ ॥ छवि वीतरागी नगन मुद्रा,  
दृष्टि नासापै धरें । वसु प्रातिहार्य अनंत गुण  
जुत, कोटि रवि छविको हरें ॥ मिट गयो तिमिर  
मिथ्यात मेरो, उदयरवि आतम भयो । मो उर  
हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो ॥ ३ ॥  
में हाथ जोड नवाय मस्तक, वीनऊं तुव चरन  
जी । सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपाति जिन, सुनहु तारन  
तरन जी ॥ जाचूं नहीं सुरवास पुनि, नरराज

परिजन साथजी । बुध जाचहूं तव भक्ति भव  
भव, दीजिये शिवनाथजी ॥ इति ॥

### । ब्रह्मचारी इन्द्रानंदकृत दर्शन

अति पुण्य उदब मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन  
थाया । अबतक तुमको विनजाने, दुख पाये निज  
गुण हाने ॥ पाये अनंते दुःखअबतक, जगतको  
निज जानकर । सर्वज्ञ भाषित जगत हितकर धर्म  
नहिं पहिचानकर ॥ भवबंध कारक सुखप्रहारक  
विषयमें सुखमानकर । निजपर विवेचकज्ञान-  
मय सुखनिधि सुधा नहिं पानकर ॥१॥ तव पद  
मम उरमें आये, लखिकुमति विमोह पलाये ।  
निजज्ञान कला उर जागी, रुचि पूर्ण स्वहितमें  
लागी ॥ रुचिलगी हितमें आत्मके, सतसंगमें  
अब मन लगा । मनमें हुई अब भावना, तब  
भक्तिमें जाऊँ रँगा ॥ प्रियवचनकी हो टेव गुणि  
गुण गानमें ही चितपगै । शुभ शास्त्रका नितहो  
मनन, मन दोषवादनतैं भगै ॥२॥ कब समता  
उरमें लाकर, द्वादश अनुप्रेक्षा भाकर । ममता-

मय भूतभगाकर, मुनिव्रत धारूं वन जाकर  
 धरकर दिगंबररूप कब, अठवीसगुण पालन  
 करूं । दोवीस परिषह सह सदा, शुभधर्म दश  
 धारन करूं ॥ तप तपूं द्वादशविधि सुखद नित,  
 बंध आस्रव परिहरूं । अरु रोकि नूतन कर्म  
 संचित, कर्मरिपुकों निर्जरूं ॥ ३ ॥ कब धन्य  
 सुअवसर पाऊं, जब निजमें ही रमजाऊं । कर्ता-  
 दिक भेद मिटाऊं, रागादिक दूर भगाऊं ॥ कर  
 दूर रागादिक निरंतर, आत्मको निर्मल करूं ।  
 बल ज्ञान दर्शन सुखअतुल, लहि चरित क्षायि-  
 क आचरूं ॥ आनंदकंद जिनेंद्र बन उपदेशको  
 नित उच्चरूं । आवैं 'अमर' कब सुखद दिन  
 'जब' दुखद भवसागर तरूं ॥४॥ इति ॥

### सामायिक पाठ भाषा ।

१ प्रतिक्रमण कर्म ।

काल अनंत भ्रम्यो जगमें सहिये दुख भारी ।  
 जन्ममरण नित किये पापको है अधिकारी ॥

कोटि भवांतरमाहिं मिलन दुर्लभ सामायिक ।  
 धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुखदायक ॥  
 हे सर्वज्ञ जिनेश ! किये जे पाप जु मैं अब ।  
 ते सब मन-वच-काय-योगकी गुप्ति बिना लभा ॥  
 आप समीप हजूर माहिं मैं खडो खडो सब ।  
 दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुःख देहिं जब ॥  
 २ ॥ क्रोधमानमदलोभमोहमायावशि प्राणी ।  
 दुःखसाहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥  
 बिना प्रयोजन एकेंद्रिय वितिचउपंचेंद्रिय ।  
 आप प्रसादाहिं मिटै दोष जो लग्या मोहि जिया ॥  
 ३ ॥ आपसमें इकठौर थापकरि जे दुख दीने ।  
 पेलि दिए पगतलैं दाबिकरि प्राण हरीने ॥  
 आप जगतके जीव जिते तिन सबके नायक ।  
 अरज करूं मैं सुनो दोष मेटो दुखदायक ॥४॥  
 अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय ।  
 तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय ॥  
 मेरे जे अब दोष भये ते क्षमहु दयानिध । यह  
 पडिकोणो कियो आदि षट्कर्ममाहिं विधि ॥५॥

२ । द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म ।

इसके आदि वा अन्तमें आलोचना पाठ बोलकर फिर तीसरे सामायिक कर्मका पाठ करना चाहिये ।

जो प्रमादवशि होय विराधे जीव घनेरे ।  
तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥ सो  
सब भूठो होउ जगतपतिके परसादै । जा  
प्रसादतैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ॥ ६ ॥  
मैं पापी निर्लज्ज दयाकरि हीन महाशठ ।  
किये पाप अघ ढेर पापमति होय चित्त दुठ ॥  
निंदूहूंमैं बारबार निज जियको गरहूं । सब-  
विधि धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूं ॥ ७ ॥  
दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावक कुल भारी ।  
सतसंगति संजोग धर्मजिनश्रद्धा, धारी ॥ जिन  
बचनामृत धार समावतैं जिनवानी । तोहू  
जीव संघारे धिक धिक धिक हम जानी ॥ ८ ॥  
इंद्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब ।  
अज्ञानी जिमि करै तिसी विधि हिंसक है अब ॥  
गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले । ते सब  
दोष किये निंदूं अब मन क्व तोले ॥ ९ ॥



आलोचनाविधिथकी दोष लागे जु घनेरे । ते सब  
दोष विनाश होउ तुम तैं जिन मेरे ॥ बारबार  
इसभांति मोहमद दोष कुटिलता । ईर्षादिकतैं  
भये निंदिये जे भयभीता ॥ १० ॥

३ तृतीय सामायिक भावकर्म ।

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है । सब  
जिय मोसम समता राखो भाव लग्यो है ॥ आर्त्त  
रौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूं सामायिक । संजम  
मो कब शुद्ध होय यह भावबधायक ॥ ११ ॥  
पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउकाय वनस्पति ।  
पंचहि थावरमाहिं तथा त्रस जीव बसैं जित ॥  
बेइंद्रिय तिय चउ पंचेंद्रियमांहि जीव सब । तिन  
तैं क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब ॥ १२ ॥  
इस अवसरमें मेरे सब सम कंचन अरु तृण । महल  
मसान समान शत्रु अरु मित्रहिं सम गण ॥  
जामन मरण समान जानि हम समता कीनी ।  
सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनी ॥ १३ ॥  
पेरो है इक आत्म तामैं ममंत जु कीनो । और

सबै मम भिन्न जानि समतारसभीनो ॥ मात  
 पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह, मोतैं  
 न्यारे जानि जथारथ रूप करयो गह ॥ १४ ॥  
 मैं अनादि जगजालमांहि फांसी रूप न जाण्यो ।  
 एकेंद्रिय दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो ॥ ते  
 सब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी । भवभ-  
 वको अपराध छिमा कीज्यो कर मरजी ॥१५॥

४ चतुर्थ स्तवनकर्म

नमौ ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीति कर्म-  
 को । संभव भवदुखहरण करण अभिनंद 'शर्म'  
 को ॥ सुमति सुमति दातार तार भवसिंधु  
 पार कर । पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीति  
 धर ॥ १६ ॥ श्रीसुपार्श्व कृतपाश नाश भव  
 जास शुद्धकर । श्रीचंद्रप्रभ चंद्रकांतिसम देह  
 कांतिधर ॥ पुष्पदंत दामिदोषकोश भविपोष  
 रोषहर । शीतल शीतल करण हरण भवताप  
 दोषकर ॥ १७ ॥ श्रेयरूप जिनश्रेय ध्येय नित  
 सेय भव्यजन । वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिदं

भवभयहन ॥ विमल विमलमति देन अंतगत है  
 अनंत जिन । धर्मशर्मशिवकरण शांतिजिन  
 शांतिविधायिन ॥ १८ ॥ कुंथ कुंथुमुख जीवपाल  
 अरनाथ जाल हर । मल्लि मल्लसम मोहमल्लमारन  
 प्रचार धर । मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुर-  
 संधहिं नमि जिन । नेमिनाथ जिन नेमि धर्म-  
 रथमांहि ज्ञानधन ॥ १९ ॥ पार्श्वनाथ जिन पार्श्व  
 उपलसम मोक्ष रमापति । वर्द्धमान जिन नमूं  
 बमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ या विधि में जिन संध-  
 रूप चउवीस संख्यधर । स्तवूं नमूं हूं बारबार  
 वंदूं शिव सुखकर ॥ २० ॥

५ पंचम वंदनाकर्म ।

वंदूं में जिनवीर धीर महावीर सुसनमति । वर्द्ध-  
 मानअतिवीर बंदि हूं मनवचतनकृत ॥ त्रिश-  
 लातनुज महेश धीश विद्यापति वंदूं । वंदों नित  
 प्रति कनकरूप तनु पापनिकंदूं ॥ २१ ॥ सिद्धा-  
 रथ नृपनंददुंददुख दोष मिटावन, दुरित दवा-  
 नल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन ॥ कुंडल

पुर करि जन्म जगत जिय आनँदकारन । वर्ष  
 बहत्तर आयु पाय सबही दुख टारन ॥ २२ ॥  
 सप्तहस्त तनु तुंग भंगकृतजन्ममरणभय । बाल-  
 ब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय ॥ दे उपदेश  
 उधारि तारि भवसिंधु जीवघन । आप बसे शिव-  
 मांहि ताहि बंदों मन वच तन ॥ २३ ॥ जाके  
 वंदनथकी दोष दुखदूरहि जावै । जाके वंदन  
 थकी मुक्तितिय सन्मुख आवै ॥ जाके वंदनथकी  
 बंध होवें सुरगनके, ऐसे वीर जिनेश वन्दि हूं  
 क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक षट्कर्ममाहिं  
 बंदन यह पंचम । बंदों वीरजिनेंद्र इंद्रशतबंध  
 बंध मम ॥ जन्म मरणभय हरो करो अघशांति  
 शांतिमय । मैं अघकोष सुपोष दोषको दोष  
 विनाशय ॥ २५ ॥

६ छठा कायोत्सर्ग कर्म ।

कायोत्सर्ग विधान करूं अंतिम सुखदाई । काय-  
 त्यजनमय होय काय सबको दुखदाई ॥ पूरब  
 दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं । जिनगृह

वंदन करूं हरूं भवपापतिमिर मैं ॥२६॥ शिरों.  
 नती मैं करूं नमूं मस्तक कर धरिकैं । आवर्ता.  
 दिक क्रिया करूं मन वच मद हरिकैं ॥ तीनलोक  
 जिनभवनमाहिं जिन हैं जु अकृत्रिम । कृत्रिम हैं  
 द्वय अर्द्धद्वीप माहीं वन्दों जिम । २७। आठकोडि  
 परि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं । च्यारि  
 शतक पर असी एक जिनमंदिर जाणूं ॥ व्यंतर  
 ज्योतिषिमाहिं संख्यरहिते जिनमंदिर । ते सब  
 वंदन करूं हरहु मम पाप संघकर ॥ २८ ॥ सा-  
 मायिकसम नाहिं और कोउ वैरमिटायक । सामा-  
 यिकसम नाहिं और कोउ मैत्रीदायक ॥ श्रावक  
 अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक । यह आव-  
 श्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे  
 भवि आत्मकाज-करण उद्यमके धारी । ते सब  
 काज विहाय करो सामायिक सारी ॥ राग रोष  
 मदमोहक्रोध लोभादिक जे सब । बुध महाचन्द्र  
 विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥ ३० ॥

\* इति सामायिक पाठ समाप्त \*

गंधोदक लेनेका मंत्र ।

**निर्मलं निर्मलीकरं पवित्रं पापनाशकं ।**

जिन गंधोदकं वंदे कर्माष्टकविनाशकं ॥ १ ॥

निर्मलसे निर्मल अती. अधनाशक सुखसौर ।

वंदू जिनअभिषेककृत. यह गंधोदक नीर ॥

आशिका लेनेका दोहा ।

श्रीजिनवरकी आशिका लीजै शीश चढाय ।

भवभवके पातक कटैं. दुःख दूर हो जांय ॥१॥

शास्त्रजीको नमस्कार करनेके कवित्त ।

वीर हिमाचलतैं निकरी. गुरु गौतमके मुख  
कुंड ढरी है । मोहमहाचल भेद चली. जगकी  
जडतातप दूर करी है ॥ ज्ञान पयोनिधिमांहि  
रली. बहुभंगतरंगानिसों उछरी है । ता शुचि  
शारद गंगनदी प्रति. मैं अंजुलिकर शीश धरी है  
।१। या जगमंदिरमें अनिवार अज्ञान अँधेर छयो  
अति भारी । श्रीजिनकी धुनि दीपशिखासम.  
जो नहिं होत प्रकाशन-हारी ॥ तो किसभांति

पदारथपांति. कहां लहते. रेहत आविचारी । या  
विधि संत कहें धनि हैं. धनि हैं जिनवैन बडे  
उपकारी ॥ २ ॥

रात्रिकोभी इसीप्रकार दर्शन करके तत्पश्चात् दीपधूपसे नीचे  
छिखी अथवा जिसपर रुचि हो वह आरती करना चाहिये ।

### पंचपरमेष्ठीकी आरती ।

चाल खड़ी ।

मनवचतनकर शुद्धपंचपद. पूजें भविजन  
सुखदाई । सबजन मिलकर दीप धूप ले. करहिं  
आरती गुण गाई ॥ टेक ॥ प्रथमहिं श्रीअरहंत  
परमगुरु चौतिस अतिशयसहित बसैं । प्रातिहार्य  
वसु अतुल चतुष्टय. सहित समवसृत मांहि लसैं  
क्षुधा तृषा भय जन्म जरा मृति. गद राति चिंता  
शोक महा । विस्मय स्वेद स्वेद मद निद्रा. राग  
रोष मिल मोह दहा. इन अष्टादश दोषरहितानित  
इंद्रादिक पूजत आई । सब०१। दूजे सिद्ध सदा  
सुखदाता. सिद्धशिलापर राजत हैं । सम्यक-  
दर्शन ज्ञान वीर्य अरु. सूक्ष्मपणाकरि छाजत हैं ।  
अगुरुलघू अवगहनशक्तिधर बाधाविन अश-

रीरा है। तिनका सुमिरण नित्य कियेते शीघ्र  
 नशत भवपीरा है ॥ या करण नित्त चित्त शुद्ध  
 कर भजहु सिद्ध शिवके राई सब ० ॥२॥ तीजे  
 श्रीआचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी हैं।  
 दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज पंचाचार प्रचारी  
 हैं ॥ द्वादशतप दशधर्म गुप्तित्रय षट् आवश्यक  
 नित्त पालें। सब मुनिजनको प्रायश्चित्त दे मुनि  
 व्रतके दूषण टालें ॥ ऐसे श्रीआचार्य गुरुनकी  
 पूजा करिये चित्तलाई सब ० ॥३॥ चौथे—श्रीउव-  
 भाय चरणपंकजरज सुखदा भविजनको।  
 ग्यारह अंग सु पूर्वचतुर्दश पढें पढावें मुनिगन  
 को ॥ मुनिके सब आचरण आचरें द्वादशतपके  
 धारी हैं। स्यादवाद सुखकारी विद्या सबजगमें  
 विस्तारी हैं ॥ ऐसे श्रीउवभाय गुरुनके चरण-  
 कमल पूजहु भाई सब ० ॥४॥ पंचमि आरति सर्व  
 साधुकी आठवीस गुण मूल धरें। पंच महाव्रत  
 पंचसामिति धर हंद्रिय पांचों दमन करें ॥ षट्-  
 आवश्यक केशलोंच इकबार खड़े भोजन करते



दांतणस्नान त्वाग भू सोवत. यथाजात मुद्रा  
 धरते ॥ या विधि 'पन्नालाल' पंचषद. पूजत  
 भवदुस्व नशजाई । सब जन मिलकर दीप धूप  
 ले करहिं आरती गुणगाई ॥ ५ ॥

इस प्रकार आरती बोलकर नीचे लिखा श्लोक, दोहा पढ़कर  
 आरती मस्तक पर चढ़ावें ।

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघात  
 दीपान् । दीपैःकनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्रसि-  
 द्धांतयतीन्यजेऽहं ॥

स्वपरप्रकाशनज्योति अति दीपकतमकरहीन ।  
 जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व-  
 पामीति स्वाहा ।

धूप खेनेका श्लोक ।

दुष्टाष्टकमेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूमकेतून्  
 धूपौर्विधूतान्यसुगंधगंधैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् य-  
 जेऽहं ॥ २ ॥

दोहा—अग्निमार्हे परिमलदहन चंदनादि गुण  
 लीन । जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

तुव जिनंद दिट्टियो, आज पातक सब भजे  
 तुव जिनंद दिट्टियो, आज वैरी सब लजे ॥ तुव  
 जिनंद दिट्टियो, आज में सरवस पायो । तुव  
 जिनंद दिट्टियो आज चिंतामणि आयौ ॥ जै जै  
 जिनंद त्रिभुवन तिलक आज काज मेरो सरयो ।  
 कर जोरि भविक विनती करत, आज सकल  
 भवदुख टरयो ॥ १ ॥ तुव जिनंद ममदेव सेव  
 में तुमरी करिहौं । तुव जिनंद मम देव, नाथ  
 तुम हिरदै धरिहौं । तुव जिनंद मम देव तुही  
 साहिव में बंदा । तुव जिनंद मम देव, मही  
 कुमुदानि तुम चंदा ॥ जै जै जिनंद भवि कमल  
 रवि, मेरो दुःख निवारिकै । लीजै निकाल भव  
 जालतैं, अपनो भक्त विचारकै ॥२॥

### सुप्रभात स्तोत्र ।

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे  
 यद्दीक्षाप्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे ।  
 यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः

संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः  
 ॥१॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपाद  
 युग ! दुर्धरकर्मदूर । श्रीनाभिनंदन ! जिनाजित  
 शंभवाख्य ! त्वद्भ्यानतोस्तु सततं मम सुप्रभातं  
 ॥२॥ छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमानदेवाभिनंदन  
 मुने सुमते जिनेंद्र । पद्मप्रभारुणमणिश्रुतिभासु-  
 रांग, त्व० ॥ ३ ॥ अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलव-  
 र्णगात्रप्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्णगौर । चंद्रप्रभ  
 स्फटिक पांडुर पुष्पदंत ! त्व० ॥ ४ ॥ संतप्तकां-  
 चनरुचे जिनशीतलाख्य । श्रेयान्विनष्टदुरिताष्ट  
 कलंकपंक बंधूकबंधुर रुचे जिनवासुपूज्य,  
 त्व० । ५। उदंडदर्पकरिपो विमलामलांग स्थंमन्न-  
 नंतजिदनंतसुखांबुराशे । दुष्कर्मकल्मषविव-  
 र्जित धर्मनाथ, त्व० ॥ ६ ॥ देवामरीकुसुमस-  
 न्निभ शांतिनाथ कुंथोदयागुणविभूषणभूषि-  
 तांग देवाधिदेव भगवन्नर तीर्थनाथ, त्व० । ७।  
 यन्मोहमल्लमदभंजन मल्लिनाथ क्षेमं करावि-  
 तथशासनसुव्रताख्य । यत्संपदा प्रशामितो नमि

नामधेय, त्व० ॥ ८ ॥ तापिच्छगुच्छरुचिरो-  
ज्ज्वल नेमिनाथ घोरोपसर्गविजायिन् जिने-  
पार्श्वनाथ । स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पण वर्द्धमान,  
त्व० ॥९॥ प्रालेयनीलहरितारुणपीतभासंयन्मूर्-  
तिमव्यय सुखावसथं मुनीन्द्राः । ध्यायन्ति  
सप्ततिशतं जिन वल्लभानां, त्व० ॥१०॥ सुप्र-  
भातं सुनक्षत्रं मांगल्यं परिकीर्तितं । चतुर्विंशति,  
तीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥ ११ ॥ सुप्रभातं  
सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनांदितं । देवता ऋषयः  
सिद्धाः सुप्रभातं दिने दिने ॥ १२ ॥ सुप्रभातं  
तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं  
तीर्थं भव्यसत्त्व सुखावहं ॥१३॥ सुप्रभातं जिने-  
न्द्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषां । अज्ञानतिमिरां-  
धानां नित्यमस्तमितोरविः ॥ १४ ॥ सुप्रभातं  
जिनेन्द्रस्य वीरः कमललोचनः । येन कर्माटवी  
दग्धा शुक्लध्यानोप्रवाहिना ॥ १५ ॥ सुप्रभातं  
सुनक्षत्रं सुकल्याण सुमंगलं । त्रैलोक्याहितकर्तृ-  
णां जिनानामेव शासनं ॥१६ ॥ इति ॥

## दृष्ट्याष्टक स्तोत्र

( दर्शनायं ज्ञाते हुये जबसे जिनमंदिर दिखने लगे तबसे इसका पाठ करना प्रारंभ कर दे )

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारी भव्यात्मनां  
विभवसंभवभूरिहेतुः । दुग्धाब्धिफेनधवलोज्वल  
कूटकोटीनद्ध्वजप्रकरराजिविराजमानं ॥ १ ॥  
दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैक लक्ष्मीर्धामर्द्धिवर्द्धित  
महामुनि सेव्यमानं । विद्याधरामरवधूजनमुक्त-  
दिव्यपुष्पांजलिप्रकरशोभितभूमिभागं ॥ २ ॥  
दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादिवासविख्यातनाकग-  
णिकागणगीयमानं । नानामणिप्रचयभासुरराशि-  
जालव्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालं ॥ ३ ॥  
दृष्टं जिनेन्द्रभवनं सुरसिद्धयक्षगंधर्वकिन्नर करा-

पितवेणुवीणा । संगीतमिश्रितनमस्कृतधारणा-  
 दैरापूरितांबरतलोरुदिगंतरालं ॥ ४ ॥ दृष्टं जि-  
 नेन्द्रभवनं विलसद्विश्रोलमालाकुलालिललिताल-  
 कविभ्रमाणं । माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासनीनां  
 लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यं ॥ ५ ॥ दृष्टं जिने-  
 द्रभवनं मणिरत्नहेमसारोज्ज्वलैः कलशचामर-  
 दर्पणाद्यैः । सन्मंगलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्विभ्रा-  
 जितं विमलमौक्तिकदामशोभं ॥ ६ ॥ दृष्टं जिने-  
 द्रभवनं वरदेवदारुकर्पूरचंदनतरुष्कसुगंधिधूपैः ।  
 मेघायमानगगने पवनाभिघातचचच्चलद्वि मलके-  
 तनतुंगशालं ॥ ७ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलात-  
 पत्रच्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृंदैः । दोधूयमा-  
 नसितचामरपंक्तिभासं भामंडलद्युतियुतप्रतिमा-  
 भिरामं ॥ ८ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकार-  
 पुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमिः । नित्यं वसंत-  
 तिलकश्रियमादधानं सन्मंगलं सकल चंद्रमुनी-  
 द्रवंद्यं ॥ ९ ॥ दृष्टं मयाद्यमणिकांचनचित्रतुंग-  
 सिंहासनादिजिनविंबविभूतियुक्तं । चैत्यालययं-

दतुलं परिकीर्तितं मे सन्मंगलं सकल चंद्रमुनी-  
द्रव्यं ॥ १० ॥ इति ॥

**मंदिरजीमें प्रवेश करना आदि ।**

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते ही “ओं जय जय जय निःसहि  
निःसहि निःसहि” इसप्रकार उच्चारण कर नीचे लिखा अष्टाष्टक  
स्तोत्र बोलकर दर्शनपाठादि बोले ।

**अष्टाष्टक स्तोत्र ।**

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वा-  
मद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षय संपदः ॥ १ ॥ अद्य  
संसारगंभीरपारावारः सुदुस्तरः । सुतरोऽयं  
क्षणेनैव जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥ अद्य मे  
क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नातोहं  
धर्मतीर्थेषु जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥ अद्य मे  
सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमंगलं । संसारार्णवती-  
णोऽहं जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥ अद्य कर्मा-  
ष्टकज्वालं विधूतं सकषायकं । दुर्गतेर्विनिवृत्तो-  
ऽहं जिनेंद्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्या  
ग्रहाः सर्वे शुभाश्रैकादशस्थिताः । नष्टानि विघ्न

जालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो  
 महाबंधः कर्मणां दुःखदायकः । सुखसंगं समा-  
 पन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥ अद्य कर्माष्टकं  
 नष्ट दुःखोत्पादन कारकं । सुखांभोधिनिमग्नो-  
 ऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अद्य मिथ्यांध-  
 कारस्य हंता ज्ञान दिवाकरः । उदितो मच्छरीरे  
 स्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥९॥ अद्याहं सुकृती  
 भूतो निर्धूताशेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽहं  
 जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥ अद्याष्टकं पठे-  
 द्यस्तु गुणानंदितमानसः । तस्य सर्वार्थसंसिद्धि-  
 र्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥ इति ॥

नमस्कारमंत्रदर्शनपाठदि ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरी  
 याणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं  
 चत्तारि मंगलं-अरहंत मंगलं । सिद्ध मंगलं ।  
 साहू मंगलं । केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं ॥१॥  
 चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंत लोगुत्तमा । सिद्ध  
 लोगुत्तमा । साहू लोगुत्तमा । केवलिपण्णत्तो



धम्मो लोगुत्तमा ॥ २ ॥ चत्तारि सरणं पवज्जामि-अरहंतसरणं पवज्जामि । सिद्धसरणं पवज्जामि । साहुसरणं पवज्जामि । केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पवज्जामि । ओं झौं झौं स्वाहा ॥

वर्तमान चौबीस तीर्थकरोंके नाम कवित्त ।

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पद्म सुपास प्रभुचंद्र । पुहपदंत शीतल श्रेयांस प्रभु, वासुपूज्य प्रभु विमल सुछंद ॥ स्वामि अनंत धर्मप्रभु शांति सु, कुंथु अरह जिन मल्लि अनंद मुनिसुव्रत नमि नेमि पास, वीरेश सकल वंदों सुखकंद ॥१॥ श्रीऋषभः१ अजितः२ संभवः३ अभिनंदनः४सुमतिः५पद्मप्रभः६सुपार्श्वः७चंद्रप्रभः८पुष्पदंतः९शीतलः१० श्रेयांसः११ वासुपूज्यः१२विमलः१३अनंतः१४धर्मः१५ शांतिः१६ कुंथुः१७अरः१८मल्लिः१९मुनिसुव्रतः२० नमिः २१नेमिः२२पार्श्वनाथः२३महावीरः२४ इति वर्तमान कालसंबन्धिचतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमोनमः ॥

इसप्रकार बोलकर साष्टांग नमस्कार करना चाहिये । नमस्कारके पश्चात् पूजनके लिये चावल चढ़ाना हो, तो नीचे लिखे पद्य तथा मंत्र पढ़कर चढ़ावे । गीता छंद —

यह भवसमुद्र अपार तारण, के निमित्त सुविधि  
ठई । अति दृढ परमपावन जथारथ भक्ति वर  
नौका सही ॥ उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल,  
पुंज धरि त्रयगुण जचूं । अरहंत श्रुत सिद्धांत  
गुरुनिरग्रंथ-नितपूजा रचूं ॥१॥

तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित  
बीन । जासों पूजों परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन  
॥१॥ ओं ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यः अक्षयपदप्राप्तये  
अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

यदि पुष्पोंसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा पद्य पढ़ें ।

जे विनयवंत सुभव्य उर अंबुज-प्रकाशन भान  
हैं । जे एकमुखचारित्र भाषत, त्रिजगमाहिं प्रधान  
हैं । लहि कुंदकमलादिक पहुप, भव भव कुवे-  
दनसों बचूं । अरहंत श्रुतसिद्धान्त गुरु निरग्रंथ  
नित पूजा रचूं ॥२॥

विविधभाँति परिमलसुमन, भ्रमर जास आधीन।

तासों पूजों परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ २ ॥

यदि किसीको लोंग, बादाम इलायची या कोई प्रासुक फल चढ़ाना हो तो नीचे लिखे पद्य और मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

लोचन सुरसना घ्राण उर उत्साहके करतार हैं ।  
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुण  
सार हैं ॥ सो फल चढ़ावत अर्थपूरन, सकल  
अम्रतरस सचूं । अरहंत श्रुत सिद्धांत गुरुनिर-  
ग्रंथनितपूजा रचूं ॥ ३ ॥

जे प्रधानफलफलविषै, पंचकरण रसलीन ।  
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥३॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

यदि किसीको अर्घ्य चढ़ाना हो, तो नीचे लिखे पद्य व मन्त्र बोलकर चढ़ाना चाहिये ।

जल परम उज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक  
धरूं । वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनमेके  
पातक हरूं ॥ इहभांति अर्घ्य चढाय नित भवि

करत शिवपंकाति मचूं। अरहंत श्रुतसिद्धांत  
गुरुनिरग्रंथ नित पूचा रचूं ॥४॥

वसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मनकीन।  
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥४॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

दर्शनदशक ।

छप्पय ।

देखे श्रीजिनराज, आज सब विघन नशाये ।  
देखे श्रीजिनराज, आज सब मंगल आये ॥  
देखे श्रीजिनराज काज करना कछु नाहीं ।  
देखे श्रीजिनराज हौंस पूरी मनमांहीं ॥ तुम  
देखे श्रीजिनराज पद भौजल अंजुलिजल  
भया । चिंतामनिपारसकल्पतरु मोहसबनिसों  
उठि गया ॥ १ ॥

देखे श्रीजिनराज भाज अघ जाहिं दिसंतर ।  
देखे श्रीजिनराज काज सब होय निरंतर ॥  
देखे श्रीजिनराज राज मनवांछित करिये । देखे

श्रीजिनराज नाथ दुख कबहुं न भरिये ॥ तुम  
देखे श्रीजिनराजपद, रोमरोम सुख पाइये । धनि  
आज दिवस धनि अब घरी, माथ नाथकों  
नाइये ॥२॥

धन्य धन्य जिनधर्म कर्मकों छिनमें तोरै ।  
धन्य धन्य जिनधर्म परमपदसों हित जोरै ॥  
धन्य धन्य जिनधर्म भर्मको मूल मिटावै । धन्य  
धन्य जिनधर्म शर्मकी राह बतावै ॥ जग धन्य  
धन्य जिनधर्म यह, सो परगट तुमने किया ।  
भावेखेत पापतप—तपतकों, मेघरूप है सुख  
दिया ॥३॥

तेज सूरसम कहूं, तपत दुखदायक प्राणी ।  
कांति चंदसम कहूं, कलंकित मूरति मानी ।  
वारिधिसम गुण कहूं, खारमें कौन भलप्पन ॥  
पारससम जस कहूं, आपसम करै न पर-तन ॥  
इन आदि पदारथ लोकमें, तुमसमान क्यों

---

१ कल्याणको, आत्महितकी । २ पापरूप अग्निसे तप्त ।  
३ सूर्यसदृश । ४ पराये शरीरको अथात् दूसरी धातुओंको ।  
५ पट्टर, उपमा ।

दीजिये । तुम महाराज अनुपमदसा, मोहि  
अनूपम कीजिये ॥४॥

तब विलंब नहिं कियो, चीर द्रोपदिको  
बाढ्यो । तब विलंब नहिं कियो, सेठ सिंहासन  
चाढ्यो ॥ तब विलंब नहिं कियो, सीय पावकतैं  
टारयो । तब विलंब नहिं कियो, नीरं मौतंग  
उवारयो ॥ इहिविधि अनेकदुख भगतके, चूर  
दूर किय सुख अवनि । प्रभु मोहि दुःख नासनि-  
विषै, अब विलंब कारण कवन ॥५॥

कियो भौनतैं गौनैं, मिटी आरति संसारी ।  
राह आन तुम ध्यान, फिकर भाजी दुखकारी  
देखे श्री जिनराज, पाप मिथ्यात विलायो ।  
पूजाश्रुति बहुभगति, करत सम्यकगुण आयो  
इस मारवाडसंसारमें कल्पवृक्ष तुम दरश है ।  
प्रभु मोहि देहु भौ भौ विषै, यह वांछा मन सरस  
है ॥६॥

---

१ जलमेंसे । २ हाथी । ३ पृथिवीमें । ४ घरसे ।  
५ गमन । ६ मारवाडरूपी (वृक्षरहित सूखे देशरूपी) संसारमें ।

जै जै श्रीजिनदेव, सेवतुमरी अघनाशक ।  
 जै जै श्रीजिनदेव भेव षटद्रव्य प्रकाशक ॥ जै जै  
 श्रीजिनदेव, एक जो प्रानी ध्यावै । जै जै श्री  
 जिनदेव, टेव अहमेव मिटावै । जै जै श्रीजिन  
 देव प्रभु, हेय करमरिपु दलनकों । हूजै सहाय  
 सँघरायजी, हम तयार सिवचलनकों ॥ ७ ॥

जै जिनंद आनंदकंद, सुरवृंदवंधपद । ज्ञान-  
 वान सब जान, सुगुन मनिखान आनपद ॥  
 दीनदयाल कृपाल, भविक भौजाल निकालक ।  
 आप बूझ सब सूझ, गूझ नहिं बहुजन पालक ।  
 प्रभु दीनबंधु करुनामयी, जगउधरन तारनतरन  
 दुखरासनिकास स्वदासकों, हमें एक तुमही  
 सरन ॥८॥

देखनीक लखिरूप, वंदिकरि वंदनीक हुव ।  
 पूजनीक पद पूज, ध्यानकरि ध्यावनीक धुव ॥  
 हरष बढाय बजाय, गाय जस अंतरजामी ।  
 दरब चढाय अघाय, पाय संपति निधि स्वामी

१ भेद । २ गद पेसा भी पाठ है । ३ गुप्तछिपी  
 ४ देवनेलायक ।

तुमगुण अनेक मुख एकसों कौन भांति बर-  
नन करौ । मनवचनकायबहुप्रीतिसों एक  
नामहीसों तरौ ॥ ६ ॥

चैत्यालय जो करै धन्य सो श्रावक कहिये ।  
तामैं प्रतिमा धरै धन्य सो भी सरदहिये ॥ जो  
दोनों विस्तरै संघनायक ही जानौं । बहुत  
जीवकों धर्म-मूलकारन सरधानों । इस दुख-  
मकाल विकरालमें तेरो धर्म जहां चले । हे नाथ  
काल चौथो तहां ईति भीति सबही टलै ॥१०॥

दर्शन दशक कवित्त, चित्तसों पढै त्रिकालं ।  
प्रीतम सनमुख होय, खोय चिंता गृहजालं ॥  
सुखमें निसिदिन जाय, अंत सुरराय कहावै ।  
सुर कहाय शिवपाय जनम मृति जरा मिटावै ॥  
धानि जैनधर्म दीपक प्रगट, पाप तिभिर छय-  
कार है । लखि साहिवराय सुआँससों, सरधा-  
तारनहार है ॥ ११ ॥ इति ॥



## आलोचना पाठ ।

यह आलोचनापाठ सामायिक कालमें प्रथमकर्म प्रतिक्रमण  
कर्म है उस कर्मके आदि वा अन्तमें बोलना चाहिए ।

दोहा-वंदों पांचों परमगुरु, चौवीसों जिनराज ।  
करूं शुद्ध आलोचना, शुद्धिकरनके काज ॥१॥

सखी छंद चौदह मात्रा ।

सुनिये जिन अरज हमारी । हम दोष कियेअति  
भारी ॥ तिनकी अब निर्वृत्ति काज । तुम सरन  
लही जिनराज ॥ २ ॥ इक वे ते चउ इंद्री वा ।  
मनरहित सहित जे जीवा ॥ तिनकी नहिं  
करुणा धारी । निरदइ है घात विचारी ॥ ३ ॥  
समरंभ समारंभ आरंभ । मनवचतन कीने प्रारंभ  
कृत कारित मोदन करिकैं । क्रोधादि चतुष्टय  
धरिकैं ॥ ४ ॥ शत आठ जु इमि भेदनतैं । अघ  
कीने परछेदनतैं ॥ तिनकी कहूं कोलों कहानी ।  
तुम जानत केवलज्ञानी ॥ ५ ॥ विपरीत एकांत  
विनयके । संशय अज्ञान कुनयके ॥ वश होय  
घोर अघ कीने । वचतैं नहिं जाय कहीने ॥ ६ ॥

कुगुरनकी सेवा कीनी । केवल अदयाकरि  
 भीनी । याविधि मिथ्यात भ्रमायो । चहुंगति  
 मधि दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसा पुनि झूठ जु  
 चोरी । परवनितासों दृग जोरी ॥ आरंभपरिग्रह  
 भीनो । पनपाप जु या विधि कीनो । ८ । सपरस  
 रसना घाननको । चखु कान विषयसेवनको ॥  
 बहु करम किये मनमानी । कछु न्याय अन्या-  
 य न जानी ॥ ९ ॥ फल पंच उदंवर खाये । मधु  
 मांस मद्य चितचाहे ॥ नहिं अष्टमूलगुणधारी ।  
 विसन न सेये दुखकारी ॥ १० ॥ दुइवीस अभख  
 जिनगाये । सो भी निशदिन भुंजाये ॥ कछु  
 भेदाभेद न पायो । ज्यों त्योंकरि उदर भरायो  
 ॥ ११ ॥ अनंतानु जु बंधी जानो । प्रत्याख्यान  
 अप्रत्याख्यानो ॥ संज्वलन चौकरी गुनिये ।  
 सब भेद जु षोडश मुनिये ॥ १२ ॥ परिहास अर-  
 तिरति शोग । भय ग्लानि तिवेद संजोग ॥ पन-  
 वीस जु भेद भये इम । इनके वश पाप किये हम  
 । १३ । निद्रावश शयन कराई । सुपनेमधिदोष

लगाई । फिर जागी विषयवन धायो । नाना-  
 विध विषफल खायो ॥१४॥ कियेऽहार निहार-  
 विहारा । इनमें नहिं जतन विचारा ॥ विन देखी  
 धरी उठाई । विन शोधी वस्तु जु खाई ॥१५॥  
 तब ही परमाद सतायो । बहुविधि विकल्प उप-  
 जायो ॥ कछु सुधिबुधि नाहिं रही है । मिथ्या-  
 मति छाय गयी है ॥ १६ ॥ मरजादा तुमढिंग  
 लीनी । ताहूमें दोष जु कीनी ॥ भिन भिन अब  
 कैसें कहिये । तुम ज्ञानविषै सब पइये ॥ १७ ॥  
 हा हा ! मैं दुठ अपराधी । त्रसजीवनराशि विरा-  
 धी ॥ थावरकी जतन न कीनी । उरमें करुना  
 नहिं लीनी ॥ १८ ॥ पृथिवी बहु खोद कराई ।  
 महलादिक जागां चिनाई ॥ पुनि विनगाल्यो  
 जल ढोल्यो । पंखातैं पवन विलोल्यो ॥१९॥ हा  
 हा ! मैं अदयाचारी । बहु हरितकाय जु विदारी  
 ॥ तामधि जीवनके खंदा । हम खाये धरि आनं  
 दा ॥ २० ॥ हा हा ! परमाद बसाई । विन देखे  
 अगनि जलाई ॥ तामधि जे जीव जु आये । ते

हू परलोक सिधाये ॥ २१ ॥ वीध्यो अनराति  
 पिसायो । ईधन विन सोधि जलायो ॥ झाडू ले  
 जागां बुहारी । चिंवटी आदिक जीव विदारी ॥  
 २२ ॥ जल छानि जिवानी कीनी । सो हू पुनि  
 डारि जु दीनी ॥ नहिं जलथानक पहुंचाई । कि.  
 रिया विन पाप उपाई ॥ २३ ॥ जल मल मोरिन  
 गिरवायो । कृमिकुल बहु घात करायो ॥ नदियन  
 बिच चीर धुवाये । कोसनके जीव मराये ॥ २४ ॥  
 अन्नादिक शोध कराई । तामें जु जीव निसराई ॥  
 तिनका नहिं जतन कराया । गरियालैं धूप  
 डराया ॥ २५ ॥ पुनि द्रव्य कमावन काज । बहु  
 आरंभ हिंसा साज ॥ कीये तिसनावश भारी ।  
 करुना नहिं रंच विचारी ॥ २६ ॥ ताको जु उदय  
 अब आयो । नानाविध मोहि सतायो ॥ फल भुं-  
 जत जियदुख पावै । वचतैं कैसें करि गावै ॥ २७ ॥  
 तुमजानत केवलज्ञानी । दुख दूर करो शिवथा-  
 नी ॥ हम तो तुम शरण लही है । जिन तारन-  
 विरद सही है ॥ २८ ॥ जो गांवपती इक होवै ।

सो भी दुखिया दुख खोंवै ॥ तुम तनिभुवनके  
 स्वामी । दुख मेटहु अंतरजामी ॥ २९ ॥ द्रोप-  
 दिको चीर बढायो । सीताप्रति कमल रचायो ॥  
 अंजनसे किये अकामी । दुख मेढ्यो अंतरजामी  
 ॥ ३० ॥ मेरे अवगुन न चितारो । प्रभु अपनो  
 विरद सम्हारो ॥ सब दोषरहित करि स्वामी ।  
 दुख मेटहु अंतरजामी ॥ ३१ ॥ इंद्रादिक पदवी  
 न चाहूं । विषयनिमें नाहिं लुभाऊं ॥ रागादिक  
 दोष हरीजै । परमात्म निजपद दीजै ॥ ३२ ॥  
 दोहा—दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो  
 मोय । सब जीवनके सुख बढै, आनंद मंगल  
 होय ॥ अनुभव माणिक पारखी, 'जौहरी' आप  
 जिनंद । ये ही वर मोहि दीजिये, चरनशरन  
 आनंद ॥इति॥

अभिषेक ।

# नित्यपूजादि संग्रह ।

पंच मंगल ।

पणविवि पंच परमगुरु; गुरु जिन सासनो  
सकलसिद्धिदातार सु विघनविनासनो ॥  
सारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो ।  
मंगल कर चउ-संधहि पापपणासनो ॥

पापहिपणासन गुणहि गरुवा; दोष अष्टादश-रहिउ ।

धरिध्यान करमविनाश केवल; ज्ञान अविचल जिन लहिउ ।

प्रभु पञ्चकल्याणक विराजित; सकल सुर नर ध्यावहीं ।

त्रैलोकनाथ सु देव जिनवर; जगत मङ्गल गावहीं ॥ १ ॥

१ । गर्भकल्याण ।

जाके गरभकल्याणक धनपति आइयो ।  
अवधिज्ञान-परवान सु इंद्र पठाइयो ॥

अति बनी पौरि पगार परिखा सुवन उखन सोहाण ।

नर नारि सुन्दर चतुरभेय सु देख जनमन मोहण ॥

साहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं रतनधारा वरसियां ।

गुनि रुचिकवासिनि जननिसेवा करहिं सब विधि हरसियो ॥

रवि नव सारह जोजन, नयरि सुहावनी ।  
कनकरयणमणिमंडित, मंदिर अति बनी ॥

जाति बनी पोरि पगारि परिखा, सुबन उपवन सोहये ।  
नरनारि सुंदर चतुर भेख सु, देख जनमन मोहये ।  
तहं जनकगृह छहमास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो ।  
पुनि हचिकवासिनि जाननि-सेवा करहिं सबबिधि हरसियो ॥ २ ॥

सुरकुंजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो ।  
केहरि-केशरशोभित, नख सिखसुन्दरो ॥  
कमलाकलस-न्हवन, दुइ दाम सुहावनी ।  
रविसासि मडल मधुर, मीन जुग पावनी ॥

पावनिकनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरा ।  
कल्लोलमालाकुलितसागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥  
रमणीक अमरविमान फणिपति-भुवन रवि छवि छाजई ।  
हचि रतनरासि दिपंत, दहन सु तेजपुंज विराजई ॥ ३ ॥

ये साखि सोरह सुपने सूती सयनहीं ।  
देखे माय मनोहर, पश्चिम रयनहीं ॥  
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवाधि प्रकाशियो ।  
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो ॥

भासियो फल तिहिं चित दम्पति परम आनंदित भये ।  
छहमासपरि नवमान पुनि तहं, रैन दिन सुखसों गये ॥

गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सध सुख पावहा ।

भणि 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥ ४ ॥

२ । जन्मकल्याणक ।

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो ।

तिहुंलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो ॥

कल्पवासि घर घंट, अनाहद बज्जिया ।

जोतिषघर हरिनाद. सहज गल गज्जिया ॥

गज्जिया सहजहिं संख भावन, भुवन सवद सुहावने ।

बिंतरनिलय पट्ट पटह बज्जहि, कहत महिमा क्यों बने ॥

कंपित सुरासन अवधिबल जिन-जनम निहचै जानियो ।

घनराज तब गजराज माया-मयी निरमय आनियो ॥ ५ ॥

जोजन लाख गयंद. वदन सौ निरमये ।

वदन वदन वसुदंत. दंत सर संठये ॥

सरसर-सौ पनवीस. कमलिनी छाजहीं ।

कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजहीं ।

राजहीं कमलिनी कमलऽठोतर सौ मनोहर दल बने ।

दल दलहिं अपल्लर नटहिं नवरस, हाव भाव सुहावने ॥

मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमण्डप सांहेये ।

घन घंट चँवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहये ॥ ६ ॥

तिहिं करि हरि चढि आयउ सुरपरिवारियो ।



पुरिहि प्रदच्छन दे त्रय. जिन जयकारियो ॥

गुप्तजाय जिन-जननिहिं. सुखनिद्रा रची ।

मायामायि सिसु राखितौ. जिन आन्योसची ॥

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपित न हूजिये ।

तब परम हरषित हृदय हरणा सहस्र लोचन श्रूजिये ।

पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछंग धरि प्रभु लीनऊ ।

ईसान इंद्र सु चंद्र छवि सिर, छत्र प्रभुके दीनऊ ॥ ७ ॥

सनतकुमार माहेंद्र. चमर दुइ ढारहीं ।

सेस सक्र जयकार. सबद उच्चारहीं ॥

उच्छवसहित चतुरविधि. सुर हरषित भये ।

जोजन सहस्र निन्यानव. गगन उलँघि गये ॥

लँघिगये सुरगिर जहां पांडुक, बन विचित्र विराजहीं ।

पांडुक शिला तहँ अर्द्धचंद्र समान, मणि छवि छाजहीं ॥

जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी ।

षर अष्ट-मङ्गल-कनक कलसनि सिंहपीठ सुहावनी ॥ ८ ॥

रचि मणिमंडप सोभित. मध्य सिंहासनो ।

थाप्यो पूरव मुख तहँ, प्रभु कमलासनो ॥

बाजहिं ताल मृदंग. वेणु वीणा घने ।

दुंदुभि प्रमुख मधुरधुनि, अवर जु बाजने ॥

---

१—पूजिये अर्थात् पूरण किये—बनाये ।

बाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मङ्गल गावहीं ।  
 पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं ॥  
 मरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुरगिरि ल्यावहीं ।  
 सौधर्म अरु ईशान इंद्र सु कलस ले प्रभु न्हावहीं ॥ ६ ॥

बदन उदर अवगाह, कलसगत जानिये ।

एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये ॥  
 सहस-अठोतर कलसा, प्रभुके सिर ढरइँ ।

पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करइँ ॥  
 करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दये ।  
 धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गये ॥  
 जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।  
 मणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥ १० ॥

३—तपकल्याणक ।

श्रमजलरहित सरीर, सदा सब मलरहिउ ।

छीर वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥  
 प्रथम सार संहनन, सरूप विराजहीं ।

सहज सुगंध सुलच्छन, मंडित छाजहीं ॥  
 छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने ।  
 दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ।  
 आबाल काल बिलोकपति मन, रुखिर उचित जु नित नयं ।  
 अमरपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगये ॥ ११ ॥

भवतन-भोग-विरत्त, कदाचित् चित्तए ।

धन जोवन पिय पुत्त, कलत्त अनित्तए ॥  
कोउ न सरन मरनदिन, दुख चहुंगति भरयो ।  
सुखदुख एकहि भोगत, जिय विधिवसिपरयो ॥

पक्षो विधिवसि आन चेतन, आन जइ जु कलेवरो ।

तन भसुच्चि परतै होय आस्रव, परिहरेतै संवरो ।

निरजरा तपबल होय, समफित,-विन सदा त्रिभुवन भम्यो ।

दुर्लभ विवेक विना न कबहुं परम धरमविबै रम्यो ॥ १२ ॥

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया ।

लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया ॥

कुसुमांजलि दे चरन, कमल सिर नाइया ।

स्वयंबुद्ध प्रभु थुतिकर, तिन समुझाइया ॥

समुझाय प्रभुको गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो ।

हचिरुचिर चित्र विचित्र सिविका,-करसु नंदन-बन लियो ॥

तहँ पंचमुष्टी लोंच कीनों, प्रथम सिद्धनि थुति करी ।

मंडिय महावत पंच दुद्धर सकल परिगह परिहरी ॥ १३ ॥

नणिमयभाजन केश परिट्टिय सुरपती ।

छीरसमुद-जल खिपकरि, गयो अमरावती ॥

तपसंयमबल प्रभुको, मनपरजय भयो ।

मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो ॥

भयो कछु तहं काल तपबल, रिद्धि वसुविधि सिद्धिया ॥  
 बसु धर्मध्यानबलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया ।  
 खिपि सातवे' गुण जतनघिन तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि बढिउ ।  
 करि करण तीन प्रथम सुकलबल, खिपकसेनी प्रभु चढिउ ॥१४॥

प्रकृति छतीस नवें-गुण, थान विनासिया ।  
 दसवें सूच्छमलोभ, प्रकृति तहँ नासिया ॥

सुकल ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभु पूरियो ।  
 बारहवें-गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियो ॥

चूरियो त्रे सठ प्रकृति इहविधि, घातियाकरमनितणी ।  
 तप कियो ध्यानप्रयंत बारह-विधि त्रिलोकसिरोमणी ॥  
 निःक्रमणकल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।  
 भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥ १५ ॥

४—ज्ञानकल्याणक ।

तेरहवें गुण-थान सयोगि जिनेसुरो ।  
 अनंतचतुष्टयमंडिय, भयो परमेशुरो ॥  
 समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो ॥  
 आगमजुगति प्रमान, गगनतल परिठयो ॥

परिठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभामण्डप सोहये ।  
 तिहिंमध्य बारह बने कोठे, वनक सुरनर मोहये ।  
 मुनि कलपवासिनि अरजिका पुनि ज्योति भौमि-भवनतिया ।  
 पुनि भवनव्यंतर नभग सुरनर पसुनि कोठे बैठिया ॥ १६ ॥

मध्यप्रदेश तीन, माणिपीठ तहां बने ।

गंधकुटी सिंहासन, कमल सुहावने ॥

तीन छत्र सिर सोहत त्रिभुवन मोहए ।

अंतरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए ॥

सोहये चौसठ चमर ढरत, अशोकतरुतल छाजए ।

पुनि दिव्यधुनि प्रतिसबदजुत तहँ, देव दुंदभि बाजए ।

सुरपुहुपवृष्टि सुप्रभामण्डल, कोटि रवि छवि छाजए ।

शमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए ॥ १७ ॥

दुइसै जोजनमान सुभिच्छ चहूँ दिसी ।

गगनगमन अरुप्राणी, वध नहिं अहनिसी ॥

निरुपसर्ग निराहार, सदा जगदीशए ।

आनन चार चहूँदिसि, सोभित दीसए ॥

दीसय असेस विसेस विद्या, विभव वर ईसुरपना ।

कायाविवर्जित सुद्ध फटिक समान तन प्रभुका बना ॥

नहिं नयनपलकपतन कदाचित, केस नख सम छाजहीं ।

ये घातियाछयजनित अतिशय, दस विचित्र विराजहीं ॥ १८ ॥

सकल अरथमय मागधि-भाषा जानिए ।

सकल जीवगत मैत्री-भाव बखानिए ॥

सकलरितुज फलफूल, वनस्पति मन हरै ।

दरपनसम मनि अवनि, पवन गतिअनुसरै ॥

मनुसरे परमानंद सबको, नारि नर जं सेवता ।  
 जोजन प्रमान धरा सुमार्जहि, जहां मारुत देवता ॥  
 पुनिकरहि मेघकुमार गंधोदक सुबृष्टि सुहावनी  
 पदकमलतर सुरखिपहिंकमलसु, धरणि सखिनेभा बनी ॥ १६ ॥  
 अमलगगनतल अरु दिसि, तहँ अनुहारहीं ।  
 चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारहीं ॥  
 धर्मचक्र चलै आगैं, रविजहँ लाजहीं ।  
 पुनि भंगार--प्रमुख वसु मंगल राजहीं ॥  
 राजहीं चौदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने ।  
 जिनराज केवलज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा बने ॥  
 तब इंद्र आय कियो महोच्छ्रव, सभा सोभा अति बनी ।  
 धर्मोपदेश दियो तहां, उच्चरिय वानी जिनतनी ॥ २० ॥  
 बुधातृषा अरु रोग, रोष असुहावने ।  
 जनम जराअरु मरण, त्रिदोष भयावने ॥  
 रोग सोग भय विस्मय, अरु निद्रा घनी ।  
 स्वेद स्वेद मद मोह, अरति चिंता गनी ॥  
 गनिये अठारह दोष तिनकरि रहितदेव निरंजनो ।  
 बस परम केवललब्धिर्मंडिय सिवरमनि-मनरंजनो ॥  
 श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावहीं ।  
 अणि 'रूपचंद' सुदेव त्रिनवर, अगत मङ्गल गावहीं ॥ २१ ॥

५ । निर्वाणकल्याणक ।

केवलदृष्टि चराचर, देख्यो जारिसो ।  
भव्यनिप्रति उपदेस्यो, जिनवर तारिसो ॥  
भवभयभीत भविकजन, सरणै आइया ॥  
रत्नत्रयलच्छन सिवपंथ लगाइया ॥

लगाइया पंथ जु भव्य पुान प्रभु, तृतीय सकल जु पूरियो ।  
तजि तेरवां गुणधान जोग, अजोगपथपग धारियो ॥  
पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती ।  
इमि घाति वसुविध कर्म पहुँच्यो, समयमें पंचमगती ॥

लोकसिखर तनुवात, बलयमहँ संठियो ।  
धर्मद्रव्यविन गमन न जिहि आगैं कियो ॥  
मयनरहित मूषोदर, अंवर जारिसो ।  
किमपि हीन निजतनुतैं, भयो प्रभु तारिसो ॥

तारिसो पर्जय नित्य अविचल, अर्थपर्जय छनछयी ।  
निश्चयनयेन अनंतगुण, विवहार नय वसुगुणमयी ।  
वस्तुस्वभाव विभावविरहित, सुद्ध परिणति परिणयो ।  
चिदरूपपरमात्मंदमंदिर, सिद्ध परमात्म भयो ॥ २३ ॥

तनुपरमाणू दामिनिपर, सब खिरंगण ।  
रहे सेस नखकेश-रूप, जे परिणण ॥

---

१—जारिसो—जैसा । २—तारिसो—तैसा ।

तव हरिप्रमुख चतुरविधि, सुरगण शुभसच्यो ।

मायामयि नख केशरहित, जिनतनुरच्यो ॥

रवि अगारचंदन प्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो ।

पदपतित अगनिकुमार मुकुटानल, सुविध सँस्कारियो ॥

निर्वाण कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावहीं !

मणि "रूपचंद" सुदेष जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥२४॥

मैं मतिहीन भगतिवस भावन भाइया ॥

मंगल गीतप्रबंध, सु जिनगुण गाइया ॥

जो नर सुनहिं, बखानहिं सुर धरि गावहीं ।

मनवांछित फल सो नर, निहचै पावहीं ॥

पावहीं भाठों सिद्धि नवनिधि, मन प्रतीत जो लावहीं ।

अम भाव छूटै सकल मनके, निजस्वरूप लखावहीं ॥

पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सु होंहिं मंगल नितनये ।

मणि 'रूपचंद' त्रिलोकपति, जिनदेषचउसंघहिजये ॥२५॥

दौलतरामजीकृत दर्शनस्तुति

सकल ज्ञेयज्ञायक तदापि, निजानंद रसलीन । सो

जिनेंद्र जयवत नित, अरिरजरहसविहीन ॥१॥



जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको  
हरन सूर ॥ जय ज्ञानअनंतानंत धार । दृगसुख  
वीरजमंडित अपार ॥२॥ जय परमशांत मुद्रा  
समेत । भविजनको निज अनुभूति हेत ॥ भवि  
भागनवचजोगेवशाय । तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम  
नसाय ॥३॥ तुमगुण चिंतत निजपरविवेक ।  
प्रगटै विघटै आपद अनेक ॥ तुम जगभूषण  
दूषणवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ।४।  
अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप । परमात्म परम पा-  
वन अनूप ॥ शुभअशुभविभाव अभाव कीन ।  
स्वाभाविकपरिणतिमयअछीन ॥५॥ अष्टादश-  
दोषविमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गँभीर ॥  
मुनिगणधरादि सेवत महंत । नवकेवललब्धि-  
रमा धरंत ॥६॥ तुम शासन सय अमेय जीव ।  
शिव गये जाहिं जैहैं सदीव । भवसागरमें दुख  
छार वारि । तारनको अवरन आप टारि ॥७॥  
यह लखि निज दुखगदहरणकाज । तुमही

निमित्तकारण इलाज,—जाने तातैं भं शरण  
 आय । उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥८॥  
 मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप । अपनाये विधि  
 फल पुण्य पाप । निजको परको करता पिछान।  
 पर मैं अनिष्टता इष्टि ठान ॥ ९ ॥ आकुलित  
 भयो अज्ञान धारि । ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि  
 वारि ॥ तनपरणतिमें आपो चितार । कबहू न  
 अनुभयो स्वपदसार ॥१०॥

तुमको विन जाने जो कलेश । पाये सो तुम  
 जानत जिनेश ॥ पशुनारकनरसुरगतिमँझार ।  
 भव धर धर मन्यो अनंत बार ॥ ११ ॥ अब  
 काललब्धिबलतैं दयाल । तुम दर्शन पाय भयो  
 खुश्याल ॥ मन शांत भयो मिटि सकल द्वंद्व  
 चारुयो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ १२ ॥ तातैं  
 अब ऐसी करहु नाथ । विछुरै न कभी तुव  
 चरण साथ ॥ तुम गुणगणको नहिं छेव देव ।  
 जग तारनको तुव विरद एव ॥ १३ ॥ आत्म  
 के अहित विषय कषाय । इनमें मेरी परिणति

न जाय ॥ मैं रहूँ आपमें आप लीन । सो करो  
 होऊँ ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु  
 और ईश । रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ  
 कारजके कारन सु आप । शिव करहु, हरहु मम  
 मोहताप ॥ १५ ॥ शशि शांतिकरन तपहरन  
 हेत । स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत  
 पियूष ज्यों रोग जाय । ल्यों तुम अनुभवतैं भव  
 नसाय ॥ १६ ॥ त्रिभुवनतिहुँकाल मँझार कोय ।  
 नहिं तुम विन निज सुखदायहोय ॥ मोउर यह  
 निश्चय भयो आज । दुखजलधिउतारन तुम  
 जिहाज ॥ १७ ॥

दोहा--तुम गुणगणमणि गणपती, गनत न  
 पावहिं पार । 'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूं  
 त्रियोगसँभार ॥ १८ ॥ इति ॥

। भूषणकृत दर्शनस्तुति ।

हरिगीतिका ।

पुलकंत नयन चकोर पक्षी, हँसत उर इंदी-

वरो । दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुरी, निविड  
 मिथ्यातम हरो ॥ आनंद अंबुधि उमगि उछन्यो,  
 अखिल आतप निरदले । जिनवदन पूरनचंद्र  
 निरखत, सकल मनवांछित फले ॥ १ ॥ मम  
 आज आतम भयो पावन, आज विधन विना-  
 शिया । संसारसागर नीर निवड्यो, अखिल  
 तत्व प्रकाशिया ॥ अब भई कमला किंकरी  
 मम, उभय भव निर्मल थये । दुख जन्यो दुर्गति  
 वास निवड्यो, आज नव मंगल भये ॥ २ ॥  
 मनहरन मूरति हेरि प्रभुकी, कौन उपमा लाइये ।  
 मम सकल तनके रोम हुलसे हर्षओर न पाइये ।  
 कल्याणकाल प्रतच्छ प्रभुको, लखैं जे सुरनर घने ।  
 तिहसमयकी आनंद महिमा, कहत क्यों मुख  
 मों बने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको  
 और वांछा ना रही । मन ठठ मनोरथ भये पूरन  
 रंक मानों निधि लही ॥ अब होउ भव भव  
 भक्ति तुम्हरी, कृपा ऐसी कौजिये । कर जोर  
 भूधरदास विनवै, यही वर मोहि दीजिये ॥४॥

श्रीमज्जिजेनद्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादना-  
यकमनंतचतुष्टयार्हम् । श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृ-  
तकहेतुजैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि ॥ १ ॥  
श्रीमन्मदरमुन्दरे शुचिजलैर्धौतैः सदभाक्षितैः  
पीठे मुक्ति करं निधायरचितं त्वत्पादपद्मस्रजः ।  
इंद्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे  
मुद्राकंकणशंखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवेऽ

इसको पढ़कर अभिषेक करनेवाले यज्ञोपवीत धारण करें ।

सौगंध्यसंगतमधुव्रतभंकृतेन, संवर्ण्यमानमिव  
गंधमनिन्द्यमादौ । आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्द  
वंद्यपादारविंदाभिवंद्य जिनोत्तमानां ॥३॥

इसको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंका अङ्गमें चंदन लगाना चाहिये  
ये संति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाःप्रभूत  
बलदर्पयुता विबोधाः । संरक्षणार्थममृतेनशुभेन  
तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥४॥

इसको पढ़कर अभिषेकके लिये भूमि या चौकीका प्रक्षालन करे ।

क्षीरणवस्य पयसांशुत्रिभिः प्रवाहै प्रक्षालि-

तं सुरवरैर्यदनेकवारम् । अत्युद्धमुद्यतमहं जिन  
पादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥ ५ ॥

(जिसपर विराजमान करै उस सिंहासनका प्रक्षालन करै )

श्रीशारदासुमुखनिर्गतबीजवर्णं श्रीमंगलीक-  
वरसर्वजनस्य नित्यं । श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य  
विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णलिखितं जिनभद्रपीठे

( इस श्लोकको पढ़कर सिंहासनपर श्रीकार लिखना चाहिये )

इंद्राग्निदंडधरनैऋतपाशपाणि वायूत्तरेशश-  
शिमौलिफणींद्रचंद्राः । आगत्य यूयमिह सानु-  
चराः सचिह्नाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपा-  
भिषेके ॥ ७ ॥

(नीचे लिखे मंत्रोंको पढ़कर क्रमसे दशदिक्पालोंके लिये अर्घ्य चढ़ावे)

- १ ओं आं क्रौं ह्रीं इंद्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।
- २ ओं आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ॥
- ३ ओं आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।
- ४ ओं आं क्रौं ह्रीं नैऋत आगच्छ आगच्छ नैऋताय स्वाहा ॥
- ५ ओं आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ॥
- ६ ओं आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।
- ७ ओं आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।
- ८ ओं आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ॥

३ ओं आं क्रौं ह्रीं धरणींद्र आगच्छ आगच्छ धरणींद्राय स्वाहा ।  
१० ओं आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ॥

इति दिक्पालमंत्राः ।

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः पौत्रार्पितं  
प्रतिदिनं महतादरेण । त्रैलोक्यमंगलसुखानल  
कामदाहमारार्तिकं तवविभोरवतारयामि ॥

दधि अक्षत पुष्प और दीप रक्ताबीमें लेकर मंगल पाठ तथा  
अनेक वादित्रोंके साथ त्रैलोक्यनाथकी आरती उतारनी चाहिये ।

यः पांडुकामलशिलागतमादिदेवमस्नापयन्सु-  
खराः सुरशैलमूर्धनि । कल्याणमीप्सुरहमक्षत-  
तोयपुष्पैः संभावयामि पुर एव तदीय विंबं ॥९॥

जल अक्षत पुष्प क्षेपणकर श्रीकार लिखित पीठपर जिनविंबकी  
स्थापना करना चाहिये ।

सत्पल्वार्चितमुखान्कलधौतरूप्यताम्रारकूटघटि-  
तान्पयसा सुपूर्णान् । संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः  
समुद्रान् संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकांते

जलपूरित सुन्दर पत्तोंसे ढके हुये सुवर्णादि धातुके चार कलश  
बौकी या वेदीके चारों कोनोंमें स्थापन करना चाहिये ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना

चंदनेन, श्रीदृक्पेयैरमीभिः शुचिसदलचयैरुद्गमे  
रोभिरुद्धैः । हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनामिमैर्दीपय-  
द्भिः प्रदीपैः घूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फले  
रोभिरीशं यजामि ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं श्री परमदेवाय श्री अर्हतपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दूरावनप्रसुरनाथकिरीटकोटीसंलभरत्नकिर-  
णच्छविधूसरांग्निं । प्रस्वदेतापमलमुक्तमपि प्रकृ-  
ष्टैर्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे ॥ १२ ॥

ओं ह्रीं श्रीमतं भगवंतं कृपालसंतं वृषभादि  
महावीरपर्यंत-चतुर्विंशतितीर्थकरपरमदेवं आ-  
द्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे  
नाम्नि नगर मासानामुत्तमैमासैः मासे  
पक्षे शुभदिने मुनिआर्यिका-श्रावकश्रावि-  
काणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः । १३

(इस पढ़कर श्रीजिनप्रतिमापर जलके कलशसे धारा छोड़नी  
चाहिये ) यहां प्रत्येक धाराके बाद “उद्गकचन्दन आदि श्लोक बोलकर  
अर्घ्य चढ़ाना चाहिये ।

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिरामदेहप्रभावलयसंग  
मलुप्तदीप्तिं । धारां घृतस्य शुभगन्ध गुणानुभेयां



वंदेर्हतां सुरभिसस्नपनीपयुक्तां ॥ १३ ॥

( ऊपर लिखा पूरा मन्त्र पढ़कर मन्त्रमें "जलेनाभिषिक्ते" की जगह 'घृतेनाभिषिक्ते' पढ़कर घृतके कलशसे स्नान करना चाहिये )

सम्पूर्ण शारदशशांकमरीचिजालस्यंदैरिवात्म  
यशसामिव सुप्रवाहैः क्षीरैर्जिनाः शुचिवरैरभि ।  
षिंच्यमानाःसंपादयंतु मम चित्तसमीहितानि । १४

( ऊपरके मन्त्रमें 'जलेनाभिषिक्ते' की जगह 'क्षीरेणाभिषिक्ते' पढ़कर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ) ।

दुग्धाब्धिबीचिपयसांचितफनराशिपांडुत्वकांति  
मवधीरयतामतीव । दध्नांगतां जिनपते प्रतिमां  
सुधारा संपद्यतां सपदि वांछितसिद्धयेनः ॥ १५ ॥

ऊपर लिखे मन्त्रमें 'जलेन' की जगह 'दध्ना' पढ़कर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः हस्तैश्च्युताः  
सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः । तत्कालपीलितमहेक्षुर  
सस्य धारा सद्यैः पुनातु जिनविंबगतैव शुष्मान्

( ऊपरके मन्त्रमें 'जलेन' की जगह 'इक्षुरसेन' पढ़कर इक्षुरमके कलश से अभिषेक करना चाहिये ) ।

संस्नापितस्य घृतदूग्धदधीक्षुवाहैः सर्वाभिरौष-

धिभिरर्हतउज्ज्वलाभिः । उद्वर्तितस्य विदधाम्य-  
भिषेकमेलाकालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥१७॥

( ऊपरके मंत्रमें “जलेन” की जगह ‘सर्वोपधेन’ पढ़कर सर्वो-  
षधीके कलशसे अभिषेक करना चाहिये )

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाद्यैरामोदवासित-  
समस्तदिगंतरालैः । मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंग  
वानां त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥१८॥

यहां ‘जलेन’ की जगह ‘सुगन्धजलेन’ पढ़कर केशर कर्पूरादि  
सुगन्धित पदार्थोंसे बनाये जलसे स्नपन करना चाहिये ।

इष्टैरमनोरथशतैरिव भव्यपुंसां पूर्णैः सुवर्ण  
कलशैर्निखिलैर्वसानैः । संसारसागरविलंघनहेतु-  
सेतुमाप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेंद्रं ॥१९॥

( ऊपर लिखे मंत्रसे बचे हुये समस्त कलशोंसे अभिषेक करो )

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्यांकुरोत्पादकं  
नागेंद्रत्रिदशेंद्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकं ॥

सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलतासंवृद्धिसंपादकं ।

कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गंधोदकं

( इस श्लोकको पढ़कर गंधोदक अपने अंगमें लगाना चाहिये )

॥ इति श्री लघु अभिषेकविधिः समाप्तः ॥

## । अथ लघुपंचामृतमभिषेक माफा

घृत दुग्ध आदिसे पंचामृत अभिषेक करना हो तो यह पाठ बोलना अथवा पंचामृतके अभावमें सिर्फ जलधारासे काम लेना ।

श्रीजिनवर चौबीस वर, कुनयध्वांतहर भान ।  
अमितवीर्यदृगबोधसुख, युत तिष्ठौ इहि थान ॥

नाराच छंद ।

गिरीश शीस पांडुपै, सचीश ईश थापियो ।

महोत्सवो अनंदकंदको, सबै तहां कियो ॥

हमें सो शक्ति नाहिं, व्यक्त देखि हेतुआपना ।

यहां करें जिनेंदचंद्रकी सुविंब थापना ॥२॥

( पुष्पांजलि क्षेपण करके श्रीवर्णपर जिनविंबकी स्थापना करना )

सुन्दरी छंद ।

कनकमणिमय कुंभ सुहावने । हरि सुछीर भरे

अति पावने । हम सुवासित नीर यहां भरें ।

जगतपावन—पांय तरैं धरैं ॥३॥

( पुष्पांजलि क्षेपण करके वेदीके कोनोंमें चार कलशोंकी स्थापना )

हरिगीतका छंद ।

शुद्धोपयोग समान भ्रमहर, परम सौरभ  
पावनो । आकृष्टभृंगसमूहं गंग समुद्भवो अति

भावदो ॥ मणिकनक कुंभानिसुभकिल्विष,  
विमल शीतल भरि धरौं । श्रम स्वद भक्त नि-  
वार जिन त्रय धार दे पायनि परौं ॥ ॥

( इस मन्त्रसे शुद्ध जलकी तीन धारा जिनवर पर छोड़ना )

अति मधुर जिनधुनि सम सुप्राणित प्राणि-  
वर्ग सुभावसों । बुधचित्तसम हरिचित नित,  
सुमिष्ट इष्ट उद्भावनों । तत्काल इक्षुममुत्थप्रा  
सुक रतनकुंभ विषै भरौं । मत्रासतापानिवार  
जिन त्रयधार देपांयनि परौं ॥५॥

( ऊपरका मन्त्र पढ़कर इक्षुसकी धारा देना )

निष्टसक्षिप्तसुवर्णतददमनीय ज्यों विधि जैन-  
की । आयुप्रदा बलवृद्धिदा रक्षा सुर्यौं जिय  
सैनकी ॥ तत्कालमथित क्षोर उत्थित, प्राज्य  
मणिभारी भरौं । दीजै अतुलबल मोंहि जिन,  
त्रयधार दे पांयनि परौं ॥६॥

( घृतरसकी धारा देना )

शरदभ्र शुभ्र सुहाटकद्वयुति. सुराभि पावन  
सोहनों । क्लीवत्वहर बलधरन पूरन पयसकल

मनमोहनो ॥ कृतउष्ण गोथनतैं समाहृत घट  
जटितमणिमें भरौं । दुर्बल दशा मो मेट जिन  
त्रयधार दे पांयनि परौं ॥७॥

( दुग्धकी धारा देना )

वर विशदजैनाचार्य ज्यों मधुराम्लकर्कशता  
धरैं । शुचिकर रसिक मंथन विमंथन नेह दोनों  
अनुसरैं ॥ गोदधि सुमणिभृंगार पूरन लायकर  
आगैं धरौं । दुखदोष कोष निवार जिन त्रय-  
धार दे पांयनि परौं ॥८॥

( दहीकी धारा )

सर्वौषधी मिलायके, भरि कंचन भृंगार ।  
जजौं चरण त्रयधार दे, तारतार भवतार ॥९॥

(सर्वौषधिकी धारा देना)

। अथ जलाभिषेक का प्रक्षाल  
करनेका पाठ ।

प्रक्षाल करते समय बोलना ।

जय जय भगवन्ते सदा, मंगल मूल महान ।  
वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुगपान ॥

ढाल मंगलकी छंद अडिल्ल और गीता ।

श्रीजिन जगमें ऐसो, को बुधवंत जू । जो  
तुम गुणवरनानि करि पावै अंत जू ॥ इंद्रादिक  
सुर चार ज्ञानधारी मुनी । कहि न सकै तुम  
गुणगण हे त्रिभुवनधनी ॥

अनुपम अमित तुमगणनिवारिध, ज्यों अलो  
काकाश है । किमि धरैं हभ उर कोषमें सो  
अकथगुणमणिराश है ॥ पै जिनप्रयोजन सिद्धि  
की तुम नाममें ही शक्ति है । यह चित्तमें सर-  
धान यातैं नाम हीमें भक्ति है ॥१॥ ज्ञानावरणी  
दर्शनआवरणी भने । कर्ममोहनी अंतराय चारों  
हने ॥ लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञानमें । इंद्रा  
दिकके मुकुट नये सुरथानमें ॥ तब इंद्र जान्यो  
अवधितैं, उठि सुरनयुत वंदत भयो । तुम पुन्य  
को प्रेन्यो हरी है मुदित धनपतिसौं चयो ॥  
अब वेगि जाय रचौ समवसृति सफल सुरपद-  
को करौ । साक्षात् श्रीअरहंतके दर्शन करौ  
कल्मष हरौ ॥ २ ॥ ऐसे वचन सुने सुरपतिके

धनपती । चल आयो ततकाल मोद धारै अती ॥  
 वीतराग छवि देखि शब्द जय जय चर्यौ । दै  
 परदच्छिना बार बार बंदत भयो ॥ अति भक्ति  
 भीनो नम्रचित है समवशरण रच्यौ सही ।  
 ताकी अनूपम शुभगतीको, कहन समरथ कोउ  
 नही ॥ प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणि-  
 मय छाजही । नगजडित गंधकुटी मनोहर  
 मध्यभाग विराजही ॥ ३ ॥ सिंहासन तामध्य  
 बन्यौ अदभुत दिपै । तापर वारिज रच्यो प्रभा  
 दिनकर छिपै ॥ तीनछत्र सिर शोभित चौसठ  
 चमरजी । महाभक्तियुत ढोरत है तहां अमर  
 जी ॥ प्रभु तरन तारन कमल ऊपर, अंतरीक्ष  
 विराजिया । यह वीतरागदशा प्रतच्छ विलोकि  
 भविजन सुख लिया ॥ मुनि आदि द्वादश  
 सभाके भवि जीव मस्तक नायकें । बहुभांति  
 बारंबार पूजै, नमैं गुणगण गायकें ॥ ४ ॥ पर-  
 मौदारिक दिव्य देव पावन सही । क्षुधा तृषा  
 चिंता भय गद दूषण नही ॥ जन्म जरा मृति

अरति शोक विस्मय नसे । राग रोष निद्रा मद  
 मोह सबै खसे ॥ श्रमविल श्रमजलरंहित पावन  
 अमल ज्योतिस्वरूपजी । शरणागतनिकी अशु-  
 चिता हरि, करत विमल अनूपजी ॥ ऐसे प्रभूकी  
 शांतिमुद्राको न्हवन जलतैकरै । 'जस' भक्तिवश  
 मन उक्तितै हम भानु ढिग दीपक धरै ॥ ५ ॥  
 तुमतौ महज पवित्र यही निश्चय भयो । तुम  
 पवित्रताहेत नहीं मज्जन ठयो ॥ मैं मलिन रागा-  
 दिक मलतै ह्वे रह्यो । महामलिन तनमैं वसु-  
 विधिवश दुख सहयो ॥ बीत्यो अनंतो काल यह  
 मेरी अशुचिता ना गई । तिस अशुचिताहर एक  
 तुम ही भरहु बांझा चित ठई ॥ अब अष्टकर्म  
 विनाश सब मल रोषरागादिक हरौ । तनरूप  
 कारागेहतै उद्धार शिववासा करौ ॥ ६ ॥ मैं जानत  
 तुम अष्टकर्म हरि शिव गये । आवागमन विमुक्त  
 रागवर्जित भये ॥ पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत  
 सही । नयप्रमानतै जानि महा साता लही ॥  
 पापाचरण तजि न्हवन करता चित्तमैं ऐसे धरूं ।



साक्षात् श्रीअरहंतका मानों न्हवन परसन करूं।  
ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध  
तैं। विधि अशुभ नसि शुभबंधतैं है शर्म सब  
विधि तासतैं ॥ ७ ॥ पावन मेरे नयन, भये  
तुम दरसतैं। पावन पान भये तुम चरनानि  
परसतैं ॥ पावन मन है गयो तिहारे ध्यानतैं।  
पावन रसना मानी, तुम गुण गानतैं ॥  
पावन भई परजाय मेरी, भयौ मैं पूरणधनी।  
मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्णभक्ति नहीं  
वनी ॥ धन्य ते बडभागि भवि तिन नीव  
शिवघरकी धरी। वर क्षीरसागर आदि जलम-  
णि कुंभभरि भक्ती करी ॥ ८ ॥ विघनसघन-  
वनदाहन-दहन प्रचंड हो। मोहमहातमदलन  
प्रबल मारतंड हो ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश, आदि  
संज्ञा धरो। जगविजयी जमराज नाश ताको  
करो ॥ आनंदकारण दुखनिवारण, परममंगल  
मय सही। मोसो पतित नहिं और तुमसो, पतित  
तार सुन्यौ नहीं ॥ चिंतामणी पारस कलपतरु,

एकभव सुखकार ही । तुम भक्तिनवका जे चढें  
 ते, भये भवदाधि पार ही ॥ ९ ॥ दोहा—  
 तुम भवदाधितें तरि गये, भये निकल अविकार  
 तारतम्य इस भक्तिको, हमें उतारो पार ॥१०॥

॥ इति हरजसरात कृत अभिषेक पाठ ॥

विनयपाठ दोहावली ।

इहि विधि ठाडो होयके, प्रथम पढै जो पाठ ।  
 धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ ॥१॥  
 अनंत चतुष्टयके धनी, तुमही हो सिरताज् ॥  
 मुक्ति बंधूके कंथ तुम, तीन भुवनके राज ॥२॥  
 तिहुं जगकी पीडाहरन, भवदाधि शोषणहार ।  
 ज्ञायक हो तुम विश्वके. शिवसुखके करतार ॥  
 ३॥ हरता अघअंधियारके, करता धर्मप्रकाश ।  
 थिरतापददातार हो, धरता निजगुण रास  
 ॥४॥ धर्माभृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम  
 रूप । तुमरे चरणसरोजको, नावत तिहुं जग  
 भूप ॥ ५ ॥ मैं बंदौं जिनदेवको, कर अति  
 निरमल भाव ॥ कर्मबंधके छेदने, और न कछू

उपाव ॥ ६ ॥ भविजनकों भवकूपतैं. तुमही  
 काढनहार ॥ दीनदयाल अनाथपति. आतम  
 गुणभंडार ॥७॥ चिदानंद निर्मल कियो, धोय  
 कर्मरज मैल ॥ सरल करी या जगतमें भविजन  
 को शिवगैल ॥ ८ ॥ तुमपदपंकज पूजतैं.  
 विघ्न रोग टर जाय ॥ शत्रु मित्रताकों धरैं, विष  
 निरविषता थाय ॥९॥ चक्रीखगधरइंद्रपद, मिलैं  
 आपतैं आप ॥ अनुक्रम कर शिवपद लहैं, नेम  
 सकल हनि पाप ॥१०॥ तुम विन मैं व्याकुल  
 भयो, जैसे जलविन मीन । जन्मजरा मेरी हरो,  
 करो मोहि स्वाधीन ॥ ११ ॥ पतित बहुत  
 पावन किये, गिनती कौन करेव । अंजनसे तारे  
 कुधी, जय जय जय जिनदेव ॥१२॥ थकी नाव  
 भवदाधिविषै, तुम प्रभु पार करेय । खेवटिया  
 तुम हो प्रभू, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥  
 रागसहित जगमें रूल्यो, मिले सरागी देव ।  
 वीतराग भेद्यों अरवैं, मेटो राग कुटेव ॥ १४ ॥  
 कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान

आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर धान  
 ॥१५॥ तुमको पूजें सुरपती, अहिपति नरपति  
 देव । धन्य भाग्य मेरो भयो, करनलग्यो तुम सेव  
 ॥१६॥ अशरणके तुम शरण हो, निराधार  
 आधार ॥ मैं डूबत भवसिंधुमें खेओ लगाओ  
 पार ॥१७॥ इंद्रादिक गणपति थके, कर विन-  
 ती भगवान । अपनो विरद निहारिकैं, कीजे  
 आप समान ॥१८॥ तुमरी नेक मुदृष्टितैं, जग  
 उत्तरत हे पार । हाहा डूव्यो जात हों, नेक  
 निहार निकार ॥ १९ ॥ जो मैं कह हूं औरमां,  
 तो न भिटे उरझार । मेरी तां तोमां बनी, तातैं  
 करौं पुकार ॥ २० ॥ बंदों पावों परमगुरु, सुर  
 गुरु वंदत जास । विघनहरन संगलकरन, पूरन  
 पूरन परम प्रकाश ॥ २१ ॥ चौबीसों जिनपद  
 नमां, नमां शारदा माय । शिवमग साधक साधु  
 नामि रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥

## नित्य नित्यमपूजा ।

देव शास्त्रगुरुपूजा संस्कृत ।

ओं जय जय जय । नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु ।  
णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं ।  
णमो उवज्झायाणं, णमोलोये सव्वसाहूणं ॥१॥  
ओं ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः । (पुष्पांजलि  
क्षेपण करना ) चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं,  
मिद्धमंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तो, धम्मो  
मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंतलोगुत्तमा  
सिद्धलोगुत्तगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्ण-  
त्तो धम्मोलोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-  
अरहंतसरणं पव्वज्जामि, मिद्धसरणं पव्वज्जामि,  
साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं  
पव्वज्जामि ॥ ओं नमोऽर्हते स्वाहा ।

( यहाँ पुष्पांजलि क्षेपण करना )

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।  
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥  
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।

यः स्मरेत्परमात्मानं स वाह्याभ्यंतरे शुचिः । अप-  
 राजितमंत्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः । मंगलेषु  
 च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥ एसो पंचण-  
 मोयारो सव्वपावप्पणासणो । मंगलाणं च सव्वेसिं  
 पढमं होइ मंगलं ॥ ४ ॥ अहमित्यक्षरं ब्रह्मवा-  
 चकं परमेष्ठिनः । सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः  
 प्रणमाम्यहं ॥ ५ ॥ कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मी-  
 निकेतनं । सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमा-  
 म्यहं ॥ ६ ॥ विघ्नौघाः प्रलयं यांति शाकिनी  
 भूतपन्नगाः । विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने  
 जिनेश्वरे ॥ ७ ॥ ( पुष्पांजलि )

( यदि पर्वके दिन हो वा अवकाश हो, तो यहांपर सहस्रनाम  
 पढ़कर दश अर्घ देना चाहिये । नहीं तो नीचे लिखा श्लोक पढ़कर  
 एक अर्घ चढ़ाना चाहिये ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपफलार्घ-  
 कैः । धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिन-  
 नाम महं यजे ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्थं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीमज्जिनेंद्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं स्याद्वादनायक

मनंतचतुष्टयाहं । श्रीमूलसंघ सुदृशां सुकृतैक  
हेतुर्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ॥ ८ ॥  
स्वस्ति त्रिलोकगुरुवे जिनपुंगवाय, स्वस्ति-  
स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय । स्वस्ति प्रकाश-  
सहजोर्जितदृङ्मयाय, स्वस्ति प्रशन्नललिता-  
द्भुतवैभवाय ॥९॥ स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधा-  
प्लवाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय,  
स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिका-  
लसकलायतविस्तृताय ॥ १० ॥ द्रव्यस्य शुद्धि-  
मधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधि-  
गंतुकामः । आलंबनानि विविधान्यवलंब्यव-  
लान्, भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञं ॥ ११ ॥  
अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखि-  
लान्ययमेकएव । अस्मिन् ज्वलाद्विमलकेवलबोध-  
वह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥१२॥

( यहां पुष्पांजलि क्षेपण करना )

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः ।  
श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनंदनः ।

श्रीसुमार्तेः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः । श्री  
सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचंद्रप्रभः । श्रीपुष्प-  
दंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः । श्रीश्रेयांसः  
स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः । श्रीविमलः स्व-  
स्ति, स्वस्ति श्रीअनंतः । श्रीधर्मः स्वस्ति,  
स्वस्ति श्रीशांतिः । श्रीकुंथुः स्वस्ति, स्वस्ति  
श्रीअरनाथः । श्रीमालिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री  
मुनिसुव्रतः । श्रीनामिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमि-  
नाथः । श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः ।

(पुष्पांजलि क्षेपण)

नित्याप्रकंपान्हुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्यय  
शुद्धबोधाः । दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति  
क्रियासुः परमर्षयो नः ॥१॥

पुष्पांजलि क्षेपणा । आगे भी प्रत्येक श्लोकके अंतमें पुष्पांजलि  
क्षेपण करना चाहिये )

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृप-  
दानुसारि । चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति  
क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ २ ॥ संस्पर्शनं संश्रव-  
णं च दरादाग्वादनघ्राणार्वलोकनानि । दिव्या-



न्मतिज्ञानबलाद्धहंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्ष-  
 यो नः ।३। प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येक-  
 बुद्धा दशसर्वपूर्वैः । प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तवि-  
 ज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।४। जंघावलि  
 श्रेणिफलांबुतंतुप्रसूनबीजांकुर चारणाह्वाः । न  
 भोंऽगणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परम  
 र्षयो नः ॥५॥ अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि  
 लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गारिम्णि । मनोवपुर्वा-  
 ग्वलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः  
 ॥६॥ सकामरूपित्ववाशित्वमैश्य प्राकाम्य मंतर्द्धि-  
 मथाप्तिमाप्ताः । तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः  
 स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥७॥ दीप्तं च त-  
 स्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।  
 ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्ष-  
 यो नः ॥८॥ आमर्षसर्वोषधयस्तथाशीर्विषंविषा  
 दृष्टिविषंविषाश्च । सखिल विड्जल्लमलौषधीशाः  
 स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥९॥ क्षीरं स्रवंतो-  
 ऽत्र घृतं स्रवंतो मधुस्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः

अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परम-  
र्षयो नः ॥ १० ॥

इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानं ।

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पापसंतापहर्ता  
त्रैलोक्यक्रांतकीर्तिः क्षतमदनरिपुर्धातिकर्मप्रणा-  
शः । श्रीमान्निर्वाणसम्पद्धरयुवतिकरालीढकंठैः  
सुकरणैर्देवैर्द्रव्यपादो जयति जिनपतिः प्राप्तक-  
ल्याणपूजः ॥ १ ॥

जय जय जय श्रीसत्क्रांतिप्रभो जगतां पते !  
जय जय भवानेव स्वामी भवांभसि मज्जतां ।  
जय जय महामोहध्वांतप्रभातकृतेऽर्चनं । जय  
जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥ २ ॥

ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवनर अदतर । संवौषट् ( इत्याह्वानम् )  
ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ( इतिस्थापनम् )  
ओं ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट्

देवि श्रीश्रुतदेवते भगवति ! त्वत्पादपङ्केरुह,  
द्वंद्वे यामि शिली मुखत्वमपरं भक्त्यामया प्रार्थ्य-  
ते । मातश्चेतासि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भूते सदा

त्राहि मां, दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं संपूज-  
यामोऽधुना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अवतर ।  
संवौषट्

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । उः उः ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतद्वादशांगश्रुतज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो  
भव भव । षषट् ।

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मयुगं गुरोः ।

तपः प्राप्तप्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र अवतर अवतर । संवौ०

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । उः उः

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव २  
षषट् ।

( जिनको केवल भाषाष्टक परसे भाव पूजा करना हो, वे आगे  
लिखे हुये भाषाष्टकको बोलकर पूजा करै )

देवेन्द्रनागेन्द्रनरेन्द्रवन्द्यान् शुभत्पदान् शोभित-  
सारवर्णान् । दुग्धाब्धिसंस्पर्धिगुणैर्जलोर्ध्वैर्जि-  
नेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ १ ॥

मलिन वस्तु उज्वल करै यह स्वभाव जलमांय, जलसे जिन  
पद् पूजिये कृत कलंक मिट जाय । नीर बुझावै अग्निको तृषा  
रोग नहिं जाय, तृषारोग प्रभु तुम हरो यातै पूजूं पाँय ॥

ओं ह्रीं परब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिनाय  
षट्चत्वारिंशद्गुणसहिताय अर्हत्परमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय  
जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुत ज्ञानाय  
जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र्यादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय  
सर्वसाधुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्तिसमस्तसत्त्वाहित-  
हारिवाक्यान् । श्रीचंदनैर्गंधविलुब्धभृगैर्जिनेन्द्र-  
सिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥२॥

तपत वस्तु शीतल करै, चंदन शीतल आप; चन्दनसे पूजा  
करूं मिटै मोह संताप । चंदन शीतलता करै भवाताप नहिं जाय,  
भवाताप प्रभु तुम हरो यातै पूजूं पाय ।

संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्  
सुभक्त्या । दीर्घाक्षतांगैर्धवलक्षतो धैर्जिनेन्द्रसि-  
द्धांतयतीन् यजेऽहं ॥३॥

तन्दुल धवल पवित्र अति नाम सु अक्षत तास, अक्षतसों जिन  
पूजिये अक्षत गुण परकास, अक्षय अक्षय में कहूं सो अक्षय पद  
नाय, महा अक्षय पद तुम लियो यातै पूजूं पाय ।

अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान्वर्यान् सुचर्या-  
कथनैकधुर्यान् । कुंदारविंदप्रमुखैः प्रसूनैर्जिनेन्द्र-  
सिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥४॥

पुष्प चाप धर पुष्प सर धारी मनमथ वीर, यातै पूजा  
पुष्पको हरै मदनकी पीर । कामबाण पुष्पे हरो सो तुम जीते  
राय, यातै में पायन पडूँ मदन काम नशि जाय ॥

कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कुदर्पकंदर्पविसर्पसर्पप्रसह्यानिर्णाशनवैनते-  
यान् । प्राज्याज्यसारैश्चरुभी रमाब्धैर्जिनेन्द्रसि-  
द्धांतयतीन् यजेऽहं ॥५॥

परम अन्न नैवेद्य विधि क्षुधाहरण तन पोष, जे पूजै नैवेद्यमां  
मिटै श्रुधादिक रोग, भोजन नाना विधि किये मूल क्षुधा नहिं  
जाय, क्षुधारोग प्रभु तुम हरो यातै पूजूं पाय ।

क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रति-  
घातदीपान् । दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जि-  
नेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥६॥

आपापर देखे सकल, निशिमैं दीपक जोत, दीपकसों जिन  
पूजिये निर्मल ज्ञान उद्योत । दीप घटा घटमें बसै ज्ञानघटा घर  
मांय, दूढ़त डोलै कर्मको कृत कलंक मिट जाय ।

मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वापामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्टकमेन्धनपुष्टजालसंधूपने भासुरधूम-  
केतून् । धूपैर्विधूतान्यसुगंधगंधैर्जिनेन्द्रसिद्धांत-  
यतीन् यजेऽहं ॥७॥

पाचक दहै सुगन्धको धूप चढ़ावै सोय, खेबत धूप जिनेशको  
अष्टकर्म क्षय होय । जब धूपायनमें लगे ध्यान अग्निकर वीर,  
कर्म काटिया खंडये त्रिभुवन पति गम्भीर ।

अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वापामीति स्वाहा ।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाप्यगम्यान् कुवादिवादाऽ  
स्वलितप्रभावान् । फलैरलं मोक्षफलाभिसारै  
र्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन् यजेऽहं ॥८॥

जो जैसी करनी करे सो तैसा फललेय, फल पूजा महाराज-  
की निश्चय शिव फल देय । फलियन फलियन में कहूं सो फलि-  
यन फल नाहिं, महा मोक्षफल तुम लियो यातै पूजूं पाय ।

मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वापामीति स्वाहा ।

सद्वारिगंधाक्षतपुष्पजातैर्नैवेद्यदीपामलधूप-  
धूमैः । फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोगान् जिनेन्द्रसिद्धां-  
तयतीन् यजेऽहं ॥९॥

जलधारा चंदन घसी अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप फल अर्घ-  
युत ये पूजा बसु भेव । ये जिनपूजा अष्ट विधि काजे कर शुचि  
अंग, प्रति पूजा जलधार सु दीजे धार अभंग ।

अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथशास्त्रयमिनां भक्त्या सदा  
कुर्वते, त्रैसंध्यं सुविचित्रकाव्यरचनामुच्चारयंतो  
नराः। पुण्याढ्या मुनिराजकीर्तिसहिता भूत्वा  
तपोभूषणांस्ते भव्याः सकलावबोधरुचिरांसिद्धिं  
लभन्ते परम् ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः ( पुण्यांजलि क्षेपण करना )

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनंदनः । सुम  
तिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥  
चंद्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः । श्रे  
यांश्च वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥  
अनंतो धर्मनामा च शांति कुंथुर्जिनोत्तमः ।  
अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥  
॥ ३ ॥ हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः ।  
ध्वस्तोपस्वर्ग दैत्यारिः पार्श्वो नागेंद्रपूजितः । ४।  
कर्मांतकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः एते  
सुरासुरौघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥ पू-  
जिता भरताद्यैश्च भूषेद्रैर्भूरिभूतिभिः । चतुर्वि-  
धस्य संघस्य शांतिं कुर्वतु शाश्वतीं ॥ ६ ॥ जिने

भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे । सम्य-  
क्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ७ ॥

( पुष्पांजलि क्षेपण करणा )

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।  
सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ८ ॥

( पुष्पांजलिम् )

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदाऽस्तु मे ।  
चारित्र्यमेव संसार वारणं मोक्षकारणं ॥ ९ ॥

( पुष्पांजलिम् )

अथ देव जयमाला प्राकृत

वत्ताणुट्टाणे जणधणुदाणे पइपोसिउ तुहु स्वत्त-  
धरु । तुहु चरण विहाणे केवलणाणे तुहु परम-  
पउ परमपरु ॥ १ ॥ जय रिसहरिसीसर णभि-  
यपाय । जय अजिय जियंगणरोसराय ॥ जय  
संभव संभवक्यवियोय । जय अहिणंदण एंदि-  
य पओय ॥ २ ॥ जय सुमइ सुमइसम्मयपयास,  
जय पउमप्पह पउमाणिवास ॥ जय जयहि सु-  
पास सुपासगत । जय चंदप्पह चंदाहवत्त ॥ ३ ॥  
जय पुप्फयंत दंतंतरंग । जय सीयल सीयलव-



यणभंग ॥ जय सेय सेयकिरणोहसुज्ज । जय  
 वासुपुज्ज पुज्जाण पुज्ज ॥ ४ ॥ जय विमल वि  
 मलगुणसेढिठाण जय जयहि अणंताणंतणाण  
 जय धम्म धम्मतित्थयर सन्त । जय सांतिसांति  
 विहियायवत्त ॥ ५ ॥ जय कुन्थु कुन्थुपहुअङ्गि-  
 मदय । जय अर अर माहर विहियसमय ॥ जय  
 मल्लि मलि आदामगन्ध । जय मुणिसुव्वयसुव्व-  
 यणिवन्ध ॥ ६ ॥ जय णमि णमियाभरणियर-  
 सामि । जय णेमि धम्मरहचक्कणोमि । जय पाम  
 पासच्छिंदणकिवाण । जय बड्ढमाण जसवड्ढ-  
 माण ॥ ७ ॥

घत्ता—इह जाणिय णामहिं दुरियविरामहिं  
 परहिंवि णमिय सुरावलिहिं । अणहणाहिं अणाइ  
 हिं समिय कुवाइहिं पणविवि अरहन्तावलिहिं ॥

## अथ शास्त्रजयमाला ।

संपद्सुहकारण कम्मवियारण भवसमुद्दतारण-  
 तरणं । जिणवाणि णमस्समि सत्तिपयासमि सम्ग-  
 मोक्खसंगमकरणं ॥ १ ॥ जिणंदमुहाउ विणिग्गयतार  
 गणिंदविगुंफियगंधपयार । तिलोयहिमंडण धम्मह  
 खाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ २ ॥  
 अवग्गह ईह अवायजु एहि । सुधारणभेयहिं ति-  
 णिसएहि । मई छत्तीस बहुप्पमुहाणि । सया पण-  
 मामि जिणिंदह वाणि ॥ ३ ॥ सुदं पुण दोणिण  
 अणेयपयार । सुवारह भेय जगत्तयसार । सुरिंद-  
 णरिंदसमुच्चि ओ जाणि । सया पणमामि जिणिंदह  
 वाणि ॥ ४ ॥ जिणंदगणिंदणरिंदह रिद्धि । पयासह  
 पुण्णपुराकिउलद्धि । णिउग्गु पहिल्लउ एहु वियाणि ।  
 सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ५ ॥ ज लोय-  
 अलोयह जुत्ति जणेइ । जु तिणिण विकालसरूप  
 भणेइ । चउग्गइ लक्खण दुज्जउ जाणि । सयापणा-  
 मामि जिणिंदह वाणि ॥ ६ ॥ जिणिंदचरित्तवि-  
 चित्त मुणेइ । सुहावइधम्मह जुत्ति जणेइ । णिउग्ग  
 वितिज्जउ इत्थु वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह  
 वाणि ॥ ७ ॥ सुजीवअजीवह तच्चह चक्खु । सुपुण्ण  
 विपाव विबंध विमुक्खु । चउत्थुणिउग्गु विभासिय

णाणि । सयापणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ८ ॥  
 तिभेयहिं ओहि विणाण विचित्त । चउत्थु रिजो-  
 विउलं भइउत्त । सुखाइय केवलणाण वियाणि । सया  
 पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ९ ॥ जिणिंदह णाणु  
 जगत्तयभाणु । महातमणासिय सुक्खणिहाणु ।  
 पयच्चउ भक्तिभरेण वियाणि । सया पणमामि जि-  
 णिंदह वाणि ॥ १० ॥ पयाणि सुबारहकोडिसयेण  
 सुलक्खतिरासिय जुत्ति भरेण । सहस्स अठावण  
 पंच वियाणि । सया पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ ११ ॥  
 इकावण कोडिउ लक्ख अठेव । सहस चुलसी  
 दिसया छक्केव । सढाइगवीसह गंथपयाणि । सया  
 पणमामि जिणिंदह वाणि ॥ १२ ॥ घत्ता-इह जिण-  
 वरवाणि विसुद्धमई । जो भवियण णियमण  
 धाई । सो सुरणरिंद संपइ लहई । केवलणाण  
 वित्तरई ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगमित द्वादशांगश्रुतज्ञानाय अर्च्यै  
 निंबपामीति स्वाहा ।

भवियह भवतारण, सोलहकारण, अज्जवि  
 तित्थयरत्तणहं । तवकम्म असंगइ दयधम्मंगइ  
 पालवि पंच महव्वयहं ॥१॥ बंदामि महारिसि  
 सीलवंत । पंचेंद्रियसंजम जोगजुत्त ॥ जे ग्यारह  
 अंगह अणुसरंति । जे चउदह पुव्वह मुणि थुणं-  
 ति ॥२॥ पादाणु सारवर कुट्टुबुद्धि । उप्पण्णु  
 जाह आयासरिद्धि ॥ जे पाणाहारी तोरणीय जे  
 रुक्खमूल आतावणीय ॥ ३ ॥ जे मोणिधाय  
 चंदाहणीय । जे जत्थत्थवाणि णिवासणीय ॥ जे  
 पंचमहव्वय धरणधीर । जे समिदिगुत्ति पाल-  
 णहि वीर ॥४॥ जे वड्ढहिं देहविरत्तचित्त । जे  
 रायरोसभयमोहचित्त ॥ जे कुगइहि संवरु विग-  
 यलोह । जे दुरियविणासणकामकोह ॥ ५ ॥ जे  
 जल्लमल्लतणलित्त गत्त । आरंभपरिग्गह जे  
 विरत्त ॥ जे तिण्णकाल बाहर गमंति । छट्टुट्टुभ  
 दसमउ तउ चरंति ॥६॥ जे इक्कगास दुइगास  
 लित्ति जे णीरसभोयण रह करंति ॥ ते मुणिवर

बंदुं ठियमसाण, जे कम्मडहइ वर सुक्कझाण  
 ॥ ७ ॥ बारहविहसंजम जे धरंति । जे चारिउ  
 विकहा परिहरंति ॥ बावीस परीषह जे सहंति ।  
 संसारमहण्णउ ते तरंति ॥ ८ ॥ जे धम्मबुद्धि  
 महियलि थुणंति । जे काउस्सगो णिसि गमंति ॥  
 जे सिद्धविलासणि अहिलसंति । जे पक्खमास  
 आहार लिति ॥९॥ गोदूहण जे वीरासणीय ।  
 जे धणुहसेज वज्जासणीय । जे तववलेण आयास  
 जंति जे गिरि गुहकंदरविवरथंति ॥ १० ॥ जे  
 सत्तु मित्त समभाव चित्त । ते मुनिवर वंदुं  
 दिठचरित्त ॥ चउवीसह गंथह जे विरत्त । ते  
 मुनिवर वंदुं जगपवित्त ॥११॥ जे सुज्झाणिज्झा  
 एकचित्त । वंदामि महारिसि मोखपत्त ॥ रयण-  
 त्तयरंजिय सुद्धभाव । ते मुनिवर वंदुं ठिदि-  
 सहाव ॥१२॥

धत्ता—जे तपसूरा, संजमधीरा, सिद्धवधू अणु-  
 राईया । रयणत्तयरंजिय, कम्महगंजिय, ते ऋ-  
 षिवरमय झाईया ॥

ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय-  
सर्वसाधुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

## अथ देवशास्त्रगुरुकी माया पूजा ।

आदिल्ल छन्द ।

प्रथमदेव अरहंत सुश्रुत सिद्धांतजू । गुरुनि-  
रग्रंथ महन्त मुकतिपुरपंथजू । तीन रतन जग-  
मांहि सो ये भवि ध्याइये । तिनकी भक्तिप्रसाद  
परमपद पाइये ॥ १ ॥ दोहा-पूजों पद अरहंतके  
पूजों गुरुपदसार । पूजों देवी सरस्वती, नित-  
प्रति अष्टप्रकार ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर । संवौषट् । ओं ह्रीं  
देवशास्त्र गुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं देवशास्त्र-  
गुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

गीता छंद

सुरपति उरगनरनाथ तिनकर, बन्दनीक सुप-  
दप्रभा । अति शोभनीक सुवरण उज्वल, देखि  
अवि मोहित सभा ॥ वर नीर क्षीरसमुद्रघटभरि  
अग्र तसु बहुविधि नचूं । अरहन्त श्रुतसिद्धांत  
गुरु निरग्रन्थ नित पूजा रचूं ॥ १ ॥ दोहा-

मलिन वस्तु हरलेत सब, जल स्वभाव मलछीन ।  
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरुतीन ॥ १ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व० ॥ १ ॥

जे त्रिजग उदर मँझार प्राणी, तपत अति दुद्धर  
खरे । तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम  
शीतलता भरे ॥ तसु भ्रमर लोभित घ्राण पावन  
सरस चंदन घसि सचूं । अरहंत० ॥ दोहा—

चंदन शीतलता करै, तपत वस्तु परवीन ।  
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्व० ॥ २ ॥

यह भवसमुद्र अपार तारण,—के निमित्त सु  
विधि ठई । अति दृढ परमपावन जथारथ भक्ति  
वर नौका सही ॥ उज्जल अखंडित सालि तंदुल  
पुंज धरि त्रयगुण जचूं । अरहंत० ॥ दोहा—  
तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन ।  
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामोति स्वाहा ॥

जे विनयवंत सुभव्य उर अंबुज प्रकाशनभान

हैं । जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहि  
 प्रधान हैं । लहि कुंद कमलादिक पहुप, भव २  
 कुवेदनसों बचूं ॥ अरहंत० ॥४॥ दोहा—

विविधभांति परिमलसुमन, भ्रमर जास आधीन ।  
 जासों पूजौं परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥४॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ॥ ४ ॥

अतिसबल मदकंदर्प जाको क्षुधाउरग अमान  
 है । दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुड  
 समान है ॥ उत्तम छहोरसयुक्त नित, नैवेद्यकरि  
 घृतमें पचूं । अरहंत० ॥ ५ ॥ दोहा—

नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजनसरस नवीन ।  
 जासों पूजौं परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥५॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥ ५ ॥

जे त्रिजगउद्यम नाश कीने, मोहतिमिर महा-  
 बली । तिहि कर्मघाती ज्ञानदीपप्रकाशजोति  
 प्रभावली ॥ इहभांति दीप प्रजाल कंचनके  
 सुभाजनमें खचूं । अरहंत० ॥ ६ ॥ दोहा—  
 स्वपरप्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन



जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥६॥

ओं हीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वा० ॥ ६ ॥

जो कर्म-ईंधन दहन आग्निसमूह सम उद्धत  
लसै । वर धूप तासु सुगंधताकरि, सकल परिम-  
लता हंसै ॥ इहभांति धूप चढाय नित भवज्व-  
लनमाहिं नहीं पचूं । अरहंत० ॥ ७ ॥ दोहा--

आग्निमांहि परिमलदहन, चंदनादि गुणलीन ।  
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥७॥

ओं हीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्व० ॥७॥

लोचन सु रसना घान उर, उत्साहके करतार हैं ।  
मोपै न उपमा जाय वरणी, सकलफलगुणसार  
हैं ॥ सो फल चढावत अर्थपूरन, परम अमृतरस  
सचूं । अरहंत० ॥ ८ ॥ दोहा--

जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण-रस लीन ।  
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥८॥

ओं हीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक  
धरूं । वर धूप निरमल फल विविध, बहु जनम-

के पातक हरूं॥ इहि भांति अर्घ चढ़ाय नित भवि  
करत शिवपंकतिमचूं । अरहंत० ॥ १ ॥ दोहा—  
वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उच्चाह मन कीन ।  
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥६॥

॥ ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राये अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला ।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार ।  
भिन्न भिन्न कहूं आरती, अल्प सुगुणविस्तार ॥

पद्मरि छन्द ।

चौकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश  
दोषराशि । जे परम सुगुण हैं अनंत धीर, कह-  
वतके छयालिस गुण गंभीर ॥२॥ शुभ समवश-  
नर शोभा अपार, शतइंद्र नमत करसीसधार ।  
देवाधिदेव अरहंतदेव, बंदों मनवचतनकरि सु  
सेव ॥३॥ जिनकी ध्वनि है ओंकाररूप, निर  
अक्षरमय महिमा अनूप । दस अष्ट महाभाषा  
समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥ सो  
स्यद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूथ बारह सुअंग ॥

रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों  
 बहुप्रीति ल्याय । ५। गुरु आचारज उवझाय साध,  
 तन नगन रतनत्रयनिधि अगाध । संसारदेह  
 वैराग धार, निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥६॥  
 गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस, भवतारन तरन  
 जिहाज ईस । गुरुकी महिमा वरनी न जाय,  
 गुरुनाम जपों मनवचनकाय ॥ ७ ॥ सोरठा---  
 कीजै शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै ।  
 द्यानत सरधावान, अजर अमरपद भोगवै ॥८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

सूचना—आगे जिस भाईको निराकुलता हो, वह नीचे लिखे  
 अनुसार बीस तीर्थकरोंकी भाषा पूजा करै । यदि स्थिरता न हो  
 तो इस पूजाके आगेमें जो अर्घ लिखा है उसको पढ़कर अर्घ चढ़ा  
 देवे ।

। श्रीबीस तीर्थकरपूजा भाषा ।

दीप अढाई मेरु पन, अरु तीर्थकर बीस ।  
 तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि सीस ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकराः ! अत्र अवतर अवतर । संवोपट् ।  
 ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरा ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत । ठः ठः ।

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकराः ! अत्र मम सन्निहितो भवतु  
भवत वषट् ।

इंद्र फणींद्र नरेंद्र वंद्य, पद निर्मल धारी ।  
शोभनीक संसार, सारगुण हैं अविकारी ॥  
क्षीरोदधि सम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार  
सीमंधर जिन आदि दे, बीस विदेह मँझार ॥  
श्री जिनराज हो भव, तारणतरण जिहाज ॥१॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं०  
( इस पूजामें बीस पुंज करना हो, तो इस प्रकार मंत्र बोलना )  
ओं ह्रीं सीमंधर—जुगमंधर—बाहु सुबाहु—संजातक—स्वयंप्रभ—ऋष-  
भानन अनंतवीर्य सूरप्रभ—विशालकीर्ति—वज्रधर—चंद्रानन—भद्रबाहु  
भुजंगम—इश्वर—नेमिप्रभ—वीरसेण—महाभद्र—देवयशांऽजितवी-  
र्येति विंशतिविद्यमान तीर्थद्वारेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं  
निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

तीनलोकके जीव, पाप आताप सताये ।  
तिनकों साता दाताँ, शीतल वचन सुहाये ॥  
बावन चंदनसों जजूं ( हो ) भ्रमन-त्पत निर-  
वार । सीमंधर० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थद्वारेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं नि०  
( इसके स्थानमें यदि इच्छा हो, तो बड़ा मंत्र पढ़ें )

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी ।  
 तारै तारे बडी भक्ति-नौका जगनामी ॥  
 तंदुल अमल सुगंधसों ( हो ) पूजों तुम गुण-  
 सार । सीमंधर० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयदप्राप्तये अक्षतान् निर्वा०  
 भविक-सरोज-विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो ।  
 जति श्रावक आचार, कथनको, तुमही बडे हो ॥  
 फूलसुवास अनेकसों (हो) पूजों मदन प्रहार ।  
 सीमंधर० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय दीपं निर्वा०  
 काम नाग विषधाम, नाशको गरुड कहे हो ।  
 छुधा महादवज्वाल, तासको मेघ लहे हो ॥  
 नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूखविडार ।  
 सीमंधर० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नेवेद्यं०  
 उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भन्यो है ।  
 मोह महातम घोर, नाश परकाश कन्यो है ॥  
 पूजों दीपप्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार ।  
 सीमंधर० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं०  
 कर्म आठ सब काठ,--भार विस्तार निहारा ।  
 ध्यान अगनि कर प्रकट, सरव कीनो निरवारा ॥  
 धूप अनूपम खेवतैं (हो), दुःख जलैं निरधार ।  
 सीमंधर० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽष्टकर्मविधांसनाय धूपं० ।

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं । सबको  
 छिनमैं जीत जैनके मेरु खरे हैं ॥ फल अति  
 उत्तमसों जजों (हो) वांछितफलदातार । सीमं०

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वा० ।

जल फल आठों दर्व, अरघकर प्रीति धरी है ।  
 गणधर इंद्रनहूतैं, थुति पूरी न करी है ॥ द्यानत  
 सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार । सीमं०

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनघर्षपदप्राप्तये अघर्षं नि० ।

अथ जयमाला आरती ।

सोरठा--ज्ञान सुधाकर चंद्र, भविकखेतहित मेघ  
 हो । भ्रमतमभान अमंद, तीर्थकर बीसों नमों ॥

चौपाई १६ मात्रा ।

सौमंधर सीमंधर स्वामी । जुगमंधर जुगमंधर

नामी । बाहु बाहु जिन जगजन तारे । करम  
सुबाहु बाहुबल दारे ॥१॥ जात सुजात केवल-  
ज्ञानं । स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं । ऋषभानन  
ऋषि भानन दोषं । अनंतवीरज वीरजकोषं ॥२॥  
सौरीप्रभ सौरीगुणमालं । सुगुण विशाल विशाल  
दयालं । वज्रधार भूज गिरिवज्जर हैं । चंद्रानन  
चंद्रानन वर हैं ॥३॥ भद्रबाहु भद्रनिके करता ।  
श्रीभुजंग भुजंगम हरता ॥ ईश्वर सबके ईश्वर  
छाजैं । नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ॥४॥ वीर-  
सेन वीरं जग जानै । महाभद्र महाभद्र बखानै ॥  
नमों जसोधर जसधरकारी । नमों अजितवीरज  
बलधारी ॥५॥ धनुष पांचसै काय विराजै । आव  
कोडिपूरव सब छाजै ॥ समवसरण शोभित  
जिनराजा । भवजलतारनतरन जिहाजा ॥६॥  
सम्यक रत्नत्रयनिधिदानी । लोकालोक प्रकाशक  
ज्ञानी ॥ शतइंद्रनिकरि बंदित सोहैं । सुरनर  
पशु सबके मन मोहैं ॥ ७ ॥  
दोहा-तुमको पूजैं वंदना, करै धन्य नर सोय ।

द्यानत सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ॥

ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कुरेभ्यो महार्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

अथ विद्यमान बीस तीर्थंकरोंका अर्घ ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूप फला-  
र्घकैः । धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिन-  
राजमहं यजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभञ्जि  
मानन अनन्तवीर्य सूर्यप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचंद्रानन भद्रबाहु-  
भुजंगमईश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येति विंशति-  
विद्यमानतीर्थङ्कुरेभ्योऽर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

अकृत्रिम चैत्यालयोंके अर्घ ।

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान् नित्यंत्रिलोकीं  
गतान् । वंदे भावनव्यंतरान् द्युतिवरान् स्वर्गा-  
मरावासगान् ॥ सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः  
सद्दीपधूपैः फलैर् द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं  
दुष्कर्मणां शांतये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसंबंधिजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं निर्वा०

वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नंदीश्वरे यानि च मंदरेषु  
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिन



पुंगवानां ॥ २ ॥ अवनितलगतानां कृत्रिमाकृ-  
 त्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां ॥  
 इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां । जिनवर-  
 निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ ३ ॥ जंबूधात-  
 किष्पुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रय ये भवाँश्चंद्रांभोज-  
 शिखांडिकरठकनकप्रावृडधना भाजिनाः ॥ सम्य-  
 गज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मधनाः । भूताः  
 नागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ ४ ॥  
 श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबु  
 वृक्षे, वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुंडले मा-  
 नुषांके । इष्वाकारेजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यं-  
 तरे स्वर्गलोके, ज्योतिलोकेऽभिवंदे भुवनमहि-  
 तले यानि चैत्यालयानि ॥ ५ ॥ द्वौ कुंदेंदुतुषार-  
 हारधवलौ द्वाविंद्रनीलप्रभौ । द्वौ बंधूकसमप्रभौ  
 जिनवृषे द्वौ च प्रियंगुप्रभौ । शेषाः षोडस ज-  
 न्ममृत्युरहिताः सतप्तहेमप्रभास्ते संज्ञानदिवा-  
 कराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥ ६ ॥

भौ ह्रीं त्रिलोकसंबंधी कृत्याकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपा०

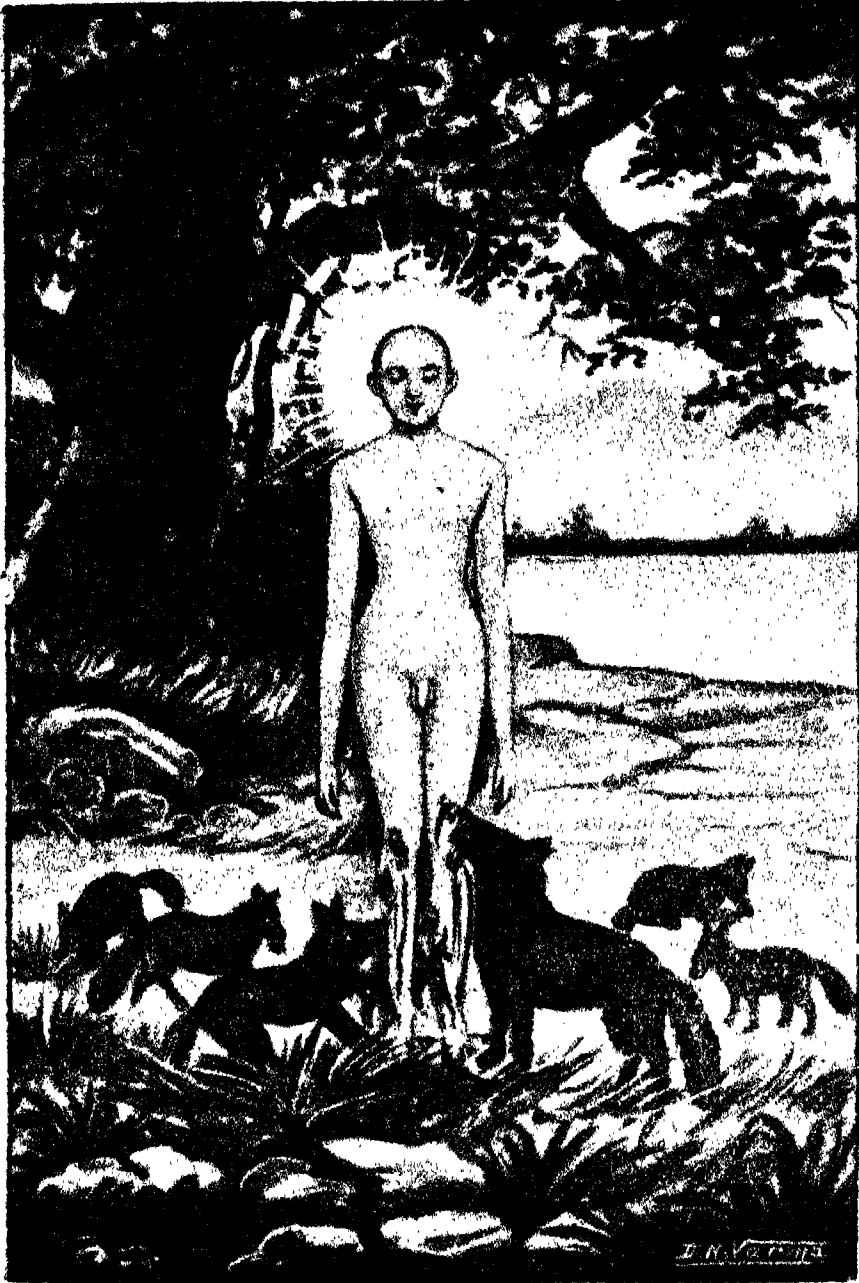
इच्छामि भंते चेइयभक्ति काञ्चोसग्गो कञ्चो  
तस्सालोचेञ्चो अहलोय तिरियलोय उइढलोय-  
म्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेयाणि  
ताणि सव्वाणि, तासुवि लोयेसु भवणवसिय  
वाणवितरजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा  
सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दि-  
व्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुप्पेण दिवेण वासेण  
दिव्वेण ह्वाप्पेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति  
बंदंति णमस्संति । अहमवि इहसंतो तत्थसंत इ  
णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि बंदामि णमस्सामि  
दुक्खक्खञ्चो कम्मक्खञ्चो बोहिलाहो सुगइग-  
मणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥

( इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत् )

अथ पौर्वाहिक-माध्याह्निक-अपराह्निक-देव-  
वंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं  
भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्ति  
कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

एमो अरहंताणं । एमो सिद्धाणं एमो आइरी-

## सच्चा जिनवाणी संग्रह—



सुकुमाल स्वामीको स्यालनी बच्चों सहित भक्षण कर रही है ।

( सुकुमाल चरित्र )

## सच्चा जिनवाणी सग्रह—



चंपा दासी पवन द्वारा दी हुई अंगूठीको अंजनाकी अंगुली  
से बदल रही है। ( अंजना नाटक )

याणं । एमो उवज्झयाणं, एमो लोए सब्बसाहूण  
तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

। अथ सिद्धपूजा द्रव्याष्टक ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सर्विंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं ।  
वर्गापूरितादिगतांबुजदलं तत्संधितत्वान्वितं ॥  
श्रंतःपत्रतटेष्वनाहतयुतं हींकार संवेष्टितं ।  
देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकंठीरवः ।

ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर  
अवतर संवौषट् । ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् !  
अत्र तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् !  
अत्र मम सन्निहितो । भव भव । वषट् ।

निरस्तकर्मसंबंधं, सूक्ष्म नित्यं निरामयम् ।  
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तमनुप्रदवम् ॥ १ ॥

( यहां सिद्धयंत्रकी भी स्थापना करना )

जिन त्यागियोंको बिना द्रव्य चढ़ाये भाव पूजा करना  
हो, वे आगे भावाष्टक है, उसको बोलकर करें । अष्टद्रव्य से  
पूजा करनेवालोंको भावपूजाका अष्टक कदापि नहीं बोलना चाहिये ।

द्रव्याष्टक ।

सिद्धौ निवासमज्ञगं परमात्म्यगम्यं हान्यादि

भावरहितं भववीतकायं । रेवापगावरसरोयमु-  
नोद्भवानां, नीरैर्यजेकलशगैर्वरसिद्धचक्रं ॥१॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि०

आनंदकंदजनकं घनकर्ममुक्तं, सम्यक्त्वशर्मग-  
रिमं जननार्ति वीतं । सौरभ्यवासितभुवं हरि-  
चंदनानां, गंधैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥२॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं

सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं, सिद्धं स्वरूप-  
निपुणं कमलं विशालं । सौगंध्यशालिवनशालि-  
वराक्षतानां, पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ।३।

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं

नित्यंस्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानिपेक्ष-  
ममृतं मरणाद्यतीतम् । मंदारकुंदकमलादिवन-  
स्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वांसनाय पुष्पं

ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं, ब्रह्मादिवीज-  
सहितं गगनावभासम् । क्षीरान्नसाज्यवटकै रस-  
पूर्णगर्भैर्नित्यं यजे चरुवरैर्वर सिद्धचक्रम् ॥५॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंशनाय नेत्रेभ्य

आतंकशोकभयरोगमदप्रशांत-निर्द्वंद्वभाव-  
धरणं महिमानिवेशं । कर्पूरवर्तिबहुभिः कनका-  
वदातैर्-दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीप

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितांतं त्रैकाल्यवस्तु  
विषये निविडप्रदीपम् । सद्द्रव्यगंधघनसारवि-  
मिश्रितानां धूपैर्यजे पारिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं

सिद्धासुरादिपतियक्ष्णैर्द्रव्यैश्चैव शिवं सक-  
लभव्यजनैःसुवद्यं । नारिङ्गपूगकदलीवरनारि-  
केलैः सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं

गंधाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणैः संगं वरं चंदनं ।  
पुष्पौधं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकं ॥  
धूपं गंधयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये ॥  
सिद्धार्थं युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितं ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घं निर्बधामीति

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपं, सूक्ष्मस्वभा-  
वपरमं यदनंतवीर्यं । कर्मौघकक्षदहनं सुखसस्य  
बीजं बंदे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रं ॥१०॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने महार्घं निर्व० स्वाहा ॥

त्रैलोक्येश्वरवंदनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शा-  
श्वतीं यानाराध्य निरुद्धचंडमनसः संतोऽपि  
तीर्थकराः ॥ सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदा  
ऽव्याबाधताद्यैर्गुणैर् युक्तांस्तानिह तोष्ट्वीमि  
सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ( पुष्पांजलि )

अथजयमाला ।

विरागसनातनशांतनिरंश । निरामय निर्भय  
निर्मल हंस ॥ सुधाम विबोधनिधान विमोह ।  
प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥ विदूरित  
संसृतिभाव निरंग । समामृतपूरित देव विसंग ॥  
अबंधकषाय विहीनविमोह । प्रसीद विशुद्ध सु-  
सिद्धसमूह ॥२॥ निवारितदुष्कृतकर्मविपास ।  
सदाप्रल केवलकेलिनिवास ॥ भवोदाधिपारग  
शान्त विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह



॥ ३ ॥ अनंतसुखामृतसागर धीर । कर्लक-  
 रजोमलभूरिसमीर ॥ विखंडितकाम विराम  
 विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥  
 विकारविवर्जित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्र-  
 विलोकितलोक ॥ विहार विराव विरंग विमोह  
 प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥ रजोमल-  
 खेदविमुक्त विगात्र । निरंतर नित्य सुखामृत-  
 पात्र ॥ सुदर्शनराजित नाथ विमोह । प्रसिद्ध  
 विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥ नरामरवांदित नि-  
 र्मल भाव । अनंत मुनीश्वरपूज्य विहाव ॥ सदो-  
 दय विश्वमहेश विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध  
 समूह ॥ ७ ॥ विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र ।  
 परात्परशंकरसार वितंद्र ॥ विकोप विरूप  
 विशंक विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ८  
 जरामरणोज्झित वीतविहार । विचिंतित नि-  
 र्मल निरहंकार ॥ अचिंत्यचरित्र विदर्प विमोह ।  
 प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥ विवर्ण विगंध  
 विमान विलोभ । विमाय विकाय विशब्द विशो-

भ ॥ अनाकुल केवल सर्व विमोह । प्रसीद विशुद्ध  
सुसिद्धसमूह ॥ १० ॥ घत्ता—

असमसमयसारं चारुचैतन्याचिह्नं, परपरणति  
मुक्तं पद्मनदींद्रवंद्यं । निखिलगुणनिकेतं सिद्ध-  
चक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति सो  
ऽभ्येति मुक्तिं ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

अथाशीर्वाद । अडिल्लछंद ।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो । समा-  
धान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो । शुद्धबोध अवि-  
रुद्ध अनादि अनंत हो, जगत शिरोमणि सिद्ध  
सदा जयवंत हो ॥ १ ॥ ध्यान अगनिकर कर्म  
कलंक सबै दहे, नित्य निरंजनदेव सरूपी है  
रहे । ज्ञायकके आकार ममत्वनिवारिकैं, सो  
परमात्म सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनंतकी  
खानु । ध्यान धरै सो पाइये, परम सिद्ध भग-  
वान् ॥ ३ ॥

## । अथ सिद्धपूजाका भावाष्टक ।

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधारसधारया ।  
सकल बोधकलारमणीयकं, सहज सिद्धमहं परिपूजये ॥ जलं ॥  
सहजकर्मफलं कविनाशनैरमलभावसुवासितचन्दनैः ।  
अनुपमानगुणावलिनायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ चन्दनं ॥  
सहजभावसुनिर्मलतंदुलैः सकल दोषविशालविशोधनैः ।  
अनुपरोधसुबोधनिधानकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ अक्ष० ॥  
समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरणे विशोधया ।  
परमयोगबलेन वशीकृतं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ पुष्पं ॥  
अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः ।  
निरवधिप्रचुरात्मगुणालयं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ नैवेद्यं ॥  
सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकैः, रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः ।  
निरवधिस्वविकाशप्रकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ दीपं ॥  
निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।  
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ धूपं ॥  
परमभावफलावलिस्म्पदा, सहजभावकुभावविशोधया ।  
निजगुणास्फुरणात्मनिरञ्जनं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ फलं ॥  
नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यंतबोधाय वै ।  
वर्गाधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सहीप धूपैः फलैः ।  
यश्चित्तामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत् ।  
सिद्धं स्वादुमगाधबोधमचलं सञ्चर्चयामो वयं ॥ ६ ॥  
इति सिद्धपूजा भावाष्टकं ।

सोलहकारणका अर्घ ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः  
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं  
यजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुभ्यादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

दशलक्षणधर्मका अर्घ ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः  
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं  
यजे ॥ २ ॥

ह्रीं अर्हन्मुखकमलसमुद्भूतोत्तमक्षमामार्द्रवाज्जवशौचसत्य संयम  
त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्यदशलक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ नि . स्वाहा

रत्नत्रयका अर्घ ।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्वरुसुदीपसुधूपकलार्घकैः  
धवलमंगलगानरवाकुलेजिनगृहेजिनरत्नमहंयजे

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदशप्रका-  
रसम्यक्चारित्राय अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

। अथपंचपरमेष्ठिजयमाला ।

माण्यु-णाइंद-सुरधरियञ्जततया पंचकक्षाणसु-  
स्वाली पत्तया । दंसणं णाण भाणं अणंतं

बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥ जेहिं  
 भाणगिवाणेहिं अइथट्टयं, जम्मजरमरणणय  
 रत्तयं दट्टयं । जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं ते जि-  
 णादिंतु सिद्धावरं णाणयं ॥ २ ॥ पंचहाचारपंचग्गि  
 संसाहया, बारसंगाइ सुयजलहिं अवगाहया ।  
 मोक्खलच्छी महंती महं ते सया, सुरिणो दिंतु  
 मोक्खं गया संगया ॥ ३ ॥ घोरसंसारभीमाड-  
 वीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे णट्ट  
 मग्गाण जीवाण पहदेसया, बंदिमो ते उवज्जाय  
 अम्हे सया ॥ ४ ॥ उग्गतवयरणकरणेहिं भीणं  
 गया, धम्मवरभाणसुक्केभाणंगया । णिब्भरं  
 तवसिरीएसमालिंगया साहओ ते महामोक्खपह  
 मग्गया ॥ ५ ॥ एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदये गुरु-  
 यसंसारघणवेत्ति सो व्खिंदए । लहइ सो सिद्ध सु-  
 क्खाइवरमाणणं कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं

आर्या ।

अरिहा सिद्धाइरीया उवज्जाया साहु पंचपरमिद्धी  
 एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥

जों ही अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपत्रपरमेष्ठिभ्योऽयं निर्व०

अथाशीर्वादः ।

इच्छामि भंते पंचगुरुभक्ति कञ्चोसग्गो कञ्चो  
तस्सालो चेञ्चो अट्टमहापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहं  
ताणं।अट्टगुणसंपरणाणंउड्ढलोयमि पइट्टियाणं  
सिद्धाणं । अट्टपवयणमाउसंजुत्ताणं आइरीयाणं  
आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं ।  
तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं।णिच्चका-  
लं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि एमस्सामि दुक्खक्ख-  
ओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि  
मरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।इत्याशीर्वादः

( पुष्पांजलिं क्षिपेत् )

**अथ शांतिपाठ स्तुति ।**

( शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करत रहें । )

दोधकवृत्तं ।

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंय-  
मपात्रं । अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनो-  
च्चमंबुजनेत्रं ॥१॥ पंचमभीप्सितचक्रधराणां पृ-

जिनिमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च शांतिकरं गणशांतिमभा  
 षुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥२॥ दिव्यतरुः  
 सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुदुभिरासनयोजनघोषौ । आतप-  
 वारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडल तेजः  
 ॥ ३ ॥ तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं  
 शिरसा प्रणमामि । सर्व गणाय तु यच्छतु शांतिं  
 मह्यपरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसंततिलका छंद ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुंडलहाररत्नैः शक्रादिभिः  
 सुरगणैः स्तुतपादपद्माः । ते मे जिनाः प्रवरवंश  
 जगत्प्रदीपास् तीर्थकराः सततशांतिकरा भवंतु

इन्द्रवज्रा ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र सामान्यत-  
 पोधनानां देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु  
 शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तं ।

क्षेमं सर्व प्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमि  
 पालः काले काले च सम्यग्वर्षतु मधवा व्याधयो

यांतु नाशं । दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां  
मास्मभूज्जीवलोके जैनैंद्रं धर्मचक्रं प्रभवतु स-  
ततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप् ।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञान भास्कराः ।  
कुर्वतु जगतःशांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥  
प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्ट प्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः  
सद्बृत्तानां गुणगणकथादोषवादे च मौनं ।  
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे  
संपद्यंतां मम भवमेव यावदेतेऽपवर्गः ॥

आर्यावृत्तं ।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं ।  
तिष्ठतु जिनैंद्र ! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥ १० ॥  
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं भए भणियं ।  
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु  
॥ ११ ॥ दुःक्खखओ कम्मखओ, समाहिमरणं च



बोहिलाहोय । मम होउ जगतबन्धव तव, जि-  
नवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥

संस्कृतप्राथेना ।

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानन्दैककारण  
कुरुष्व । मयि किंकरेत्र करुणा यथा तथा जाय  
ते मुक्तिः ॥१३॥ निर्विणोहं नितरामर्हन् बहु  
दुःखया भवस्थित्या । अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु  
करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥ उद्धर मां पतित-  
मतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा । अर्हन्नल-  
मुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वचिम् ॥ १५ ॥ त्वं  
कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं  
मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरःकुर्वे ॥१६॥  
ग्रामपतेरपि करुणा परेण केनाप्युपदुरुते पुंसि ।  
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलुकर्माभि  
प्रहते ॥१७॥ अपहर मम जन्म दयां, कृत्वैत्येक-  
वचसि वक्तव्यं । तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव  
प्रलापित्वं ॥ १८ ॥ तव जिनवर चरणाब्जयुगं  
करुणामृतशीतलं यावत । संसारतापतप्तः करो

मि हृदि तावदेव मुखी ॥ १६ ॥ जगदंकशरण  
भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनन्दितगुणौध ! किं बहुना  
कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ २० ॥

( परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत् )

अथ विसर्जनं ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।  
तत्सर्वपूर्णमेवास्तु त्वत्प्रशादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥  
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।  
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥  
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।  
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३ ॥  
आहूता ये पुरा देवा लब्ध भागा यथाक्रमं ।  
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यांतु यथास्थितिं ४

। अथ मायास्तुतिपाठः ।

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन  
आनन्दनो । श्रीन/भिनन्दन जगतवंदन, आदि-  
नाथ निरंजनो ॥ १ ॥ तुव आदिनाथ अनादि  
सेऊँ सेय पदपूजा करुं । कैलाश गिरिपर रिष-

भजिनवर, पदकमल हिरदै धरूं ॥ २ ॥ तुम  
 अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली ।  
 इह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीज्यो  
 नाथजी ॥ ३ ॥ तुम चंद्रवदन सु चंद्रलच्छन  
 चंद्रपुरि परमेश्वरो । महासेननंदन, जगतवंदन  
 चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥ तुम शांतिपाँचक-  
 ल्याण पूजों, शुद्धमनवचकाय जू । दुर्भिक्ष चोरी  
 पापनाशन, विघन जाय पलाय जू ॥ ५ ॥ तुम  
 बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमल विकारिनो ।  
 श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विना-  
 शनो ॥ ६ ॥ जिन तजी राजुल राजकन्या,  
 कामसेन्या वश करी । चारित्ररथ चढि होय  
 दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥ कंदर्प दर्प  
 सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो । अश्व-  
 सेननंदन जगतवंदन सकलसँघ मंगल कियो ॥  
 ८ ॥ जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानवि-  
 दारकैं । श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्रके पद, मैं नमों  
 शिरधारकैं ॥ ९ ॥ तुम कर्मघाता मोक्षदाता,

दीन जानि दया करो । सिद्धार्थनदन जगत  
 बंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥:०॥ छत्र तीन  
 सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अवधारिये । करजो  
 डि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये ॥  
 ॥११॥ अब होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा से-  
 वक रहों । करजोड़ यो वरदान मांगूं, मोक्षफल  
 जावत लहों ॥१२॥ जो एक मांहों एक राजत  
 एकमांहिं अनेकनो । इक अनेककि नहीं संख्या  
 नमूं सिद्ध निरंजनो ॥१३॥

चौ०—मैं तुम चरणकमलगुणगाय । बहु-  
 विधि भक्ति करो मनलाय ॥ जनम जनम प्रभु  
 पाऊं तोहि । यह सेवाफल दीजै मोहि ॥१४॥  
 कृपा तिहारी ऐसी होय । जामन मरन मिटावो  
 मोय ॥ बारबार मैं विनती करूं । तुम सेयां भव-  
 सागर तरूं ॥ १५॥ नाम लेत सब दुख मिट-  
 जाय । तुमदर्शन देख्याप्रभु आय ॥ तुम हो प्रभु  
 देवनका देव मैं तो करूं चरण तव सेव ॥ १ ॥  
 मैं आयो पूजनके काज । मेरो जन्म सफल भयो

आज । पूजाकरके नवाऊं शीश । मुझ अपराध  
क्षमहु जगदीश ॥१७॥

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी वान ।  
मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥  
पूजन करते देवकी, आदिमध्य अवसान ।  
सुरगनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥१६  
जैसी माहिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय ।  
जो सूरजमें जोति है, तारणमें नहिं सोय ॥२०  
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलायँ ।  
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अंधकार विनशाय ॥२१  
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान ।  
पूजाविधि जानूं नहीं, सरन राखि भगवान ॥  
इति भाषास्तुति पाठ ।

देवशास्त्रगुरु स्तुति संग्रह ।

**नामावली स्तुति ।**

छंद १६ मात्रा ।

जय जिनंद सुखकंद नमस्ते । जय जिनंद  
जितफंद नमस्ते ॥ जय जिनंद वरबोध नमस्ते

जय जिनंद जितक्रोध नमस्ते ॥ १ ॥ पापताप-  
हर इंद्रु नमस्ते । अर्हवरनजुतविंदु नमस्ते ॥  
शिष्टाचार विशिष्ट नमस्ते । इष्ट मिष्ट उत्कृष्ट  
नमस्ते ॥ २ ॥ पर्म धर्म वर शर्म नमस्ते । मर्म  
भर्मघन धर्म नमस्ते ॥ दृग विशाल वरभाल  
नमस्ते । हृददयाल गुनमाल नमस्ते ॥३॥ शुद्ध  
बुद्ध अविरुद्ध नमस्ते । रिद्धिसिद्धि वरवृद्धि  
नमस्ते ॥ वीतराग विज्ञान नमस्ते । चिद्विलास  
धृत ध्यान नमस्ते ॥ ४ ॥ स्वच्छगुणांबुधि रत्न  
नमस्ते । सत्त्व हितंकरयत्न नमस्ते ॥ कुनयक-  
रीमृगराज नमस्ते । मिथ्याखगवरवाज नमस्ते  
॥ ५ ॥ भव्यभवोदधिपार नमस्ते । शर्माभृत-  
सिवसार नमस्ते ॥ दरश-ज्ञान-सुखवीर्य नमस्ते ।  
चतुराननधरधीर्य नमस्ते ॥ ६ ॥ हरिहरब्रह्मा  
विष्णु नमस्ते । मोहमर्दमनुजिष्णु नमस्ते ॥  
महादान मह भोग नमस्ते । महाज्ञान महजोग  
नमस्ते ॥ ७ ॥ महाउग्रतपसूर नमस्ते । महा  
मौनगुणभूरि नमस्ते ॥ धरमत्रकि वृषकेतु

नमस्ते । भवसमुद्रशतसंतु नमस्ते ॥ विद्या  
 ईश मुनीश नमस्ते । इंद्रादिकनुतशीस नमस्ते ।  
 जय रत्नत्रयराय नमस्ते । सकल जीवसुखदाय  
 नमस्ते ॥ ९ ॥ असरणशरणसहाय नमस्ते ।  
 भव्यसुपंथलगाय नमस्ते ॥ निराकार साकार  
 नमस्ते । एकानेक अधार नमस्ते ॥ १० ॥ लोका  
 लोकविलोक नमस्ते । त्रिधा सर्वगुणथोक न-  
 मस्ते ॥ सल्लदल्लदलमल्ल नमस्ते । कल्लमल्लजित-  
 छल्ल नमस्ते ॥ ११ ॥ भुक्तिमुक्तिदातार नमस्ते ।  
 उक्तिसुक्तिशृंगार नमस्ते ॥ गुणअनंत भगवंत  
 नमस्ते । जै जै जै जयवंत नमस्ते ॥ १२ ॥

। जिनेन्द्रस्तुति ।

गीता छंद ।

मंगलसरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेशजी  
 तुम अधमतारण अधम मम लखि मेट जन्म-  
 कलेश जी ॥ टेक ॥ तुम मोह जीत अजीत  
 इच्छातीत शर्माभृत भरे । रजनाश तुम वर भा-  
 सदृग नभ ज्ञेय सब इक उडुचरे ॥ रटरास क्षति

अति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो । सब  
 रहित दूषण त्रिजगभूषण अज अमल चिद्रूप  
 हो ॥१॥ इच्छा विना भविभाग्यतेँ तुम, ध्वनि  
 सु होय निरक्षरी । षटद्रव्यगुणपर्यय अखिलयुत  
 एकछिनमें उच्चरी । एकांतवादी कुमत पक्षविलिप्त  
 इम ध्वनि मद हरी । संशय तिमिरहर रविकला  
 भविशस्यकों अमरित झरी ॥ २ ॥ वस्त्राभरण  
 विन शांतमुद्रा, सकल सुरनरमन हरै । नाशा-  
 ष्टष्टि विकारवर्जित निरखि छवि संकट टरै ॥  
 तुम चरणपंकज नखप्रभा नभ कोटिसूर्य प्रभा  
 धरै । देवेंद्र नाग नरेंद्र नमत सु, मुकुटमणिद्युति  
 विस्तरै ॥ ३ ॥ अंतर बहिर इत्यादि लक्ष्मी, तुम  
 असाधारण लसै । तुम जाप पापकलापनासै,  
 ध्यावते शिवथल बसै ॥ मैं सेय कुटग कुबोध  
 अव्रत, चिर भ्रम्यो भववन सबै । दुख सहे सर्व  
 प्रकार गिरिसम, सुख न सर्षपसम कबै ॥ ४ ॥  
 परचाहदाहदह्यो सदा कबहूं न साम्यसुधा च-  
 ह्यो । अनुभव अपूरव स्वादुविन नित, विषय



रसचारो भख्यो ॥ अब बसो मो उरमें सदा प्रभु,  
 तुम चरण सेवक रहों । वर भक्ति अति दृढ  
 होहु मेरे, अन्य विभव नहीं चहों ॥ ५ ॥ एकें-  
 द्रियादिक अंतग्रीवक, तक तथा अंतरघनी ।  
 पर्याय पाय अनंतवार अपूर्व, सो नहिं शिवध-  
 नी । संसृतिभ्रमणतैं थकित लखि निज, दासकी  
 सुन लीजिये । सम्यकदरश वरज्ञानचारितपथ  
 'विहारी' कीजिये ॥

दुःखहरण स्तुति ।

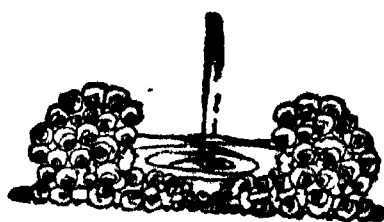
श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुखहरन तु-  
 मारा बाना है । मत मेरी बार अबार करो,  
 मोहि देहु विमल कल्याण है ॥टेक॥ त्रैकालिक  
 वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुमसों कछु बात न छाना  
 है । मेरे उर आरत जो वरतैं, निहचै सब सो  
 तुम जाना है ॥ अवलोक विथा मत मौन गहो  
 नहिं मेरा कहीं ठिकाना है । हो राजिवलोचन  
 सोचविमोचन, मैं तुमसों हित ठाना है ॥ श्री०  
 ॥१॥ सब ग्रंथनिमें निरग्रंथनिने, निरधार यही

गणधार कही । जिननायक ही सब लायक हैं,  
 सुखदायक छायाक ज्ञानमही ॥ यह बात हमारे  
 कान परी, तब आन तुमारी सरन गही । क्यों  
 मेरी बार विलंब करो, जिननाथ कहो वह बात  
 सही ॥ श्री० ॥ २ ॥ काहूको भोग मनोग करो,  
 काहूको स्वर्गविमाना है । काहूको नागनरेशप-  
 ती, काहूको ऋद्धि निधाना है । अब मोपर  
 क्यों न द्रुपा करते, यह क्या अंधेर जमाना  
 है । इनसाफ़ करो मत देर करो, सुखवृंद भरो  
 भगवाना है ॥ श्री० ॥ ३ ॥ खल कर्म मुझे हैरान  
 किया, तब तुमसों आन पुकारा है । तुम ही  
 समरत्थ न न्याव करो, तब बंदेका क्या चारा है ।  
 खल घालक पालक बालकका नृपनीति यही  
 जगसारा है । तुम नीतिनिपुन त्रैलोक्यपती,  
 तुमही लगि दौर हमारा है ॥ श्री० ॥ ४ ॥ जबसे  
 तुमसे पहिचान भई, तबसे तुमहीको माना है ।  
 तुमरे ही शासनका स्वामी, हमको शरना सर-  
 धाना है ॥ जिनको तुमरी शरनागत है, तिन-

सौं जमराज डराना है। यह सुजस तुम्हारे  
 सांचेका सब गावत वेद पुराना है ॥ श्री० ॥  
 ५॥ जिसने तुमसे दिलदर्द कहा तिसका तुमने  
 दुख हाना है। अघ छोटा मोटा नाशि तुरत  
 सुख दिया तिन्हें मनमाना है ॥ पावकसों शी-  
 तल नीर किया औ चीर चढा असमाना है।  
 भोजन था जिसके पास नहीं सो किया कुबेर  
 समाना है ॥ श्री० ॥ ६॥ चिंतामन पारस कल्प-  
 तरू सुखदायक ये परधाना है। तव दासनके  
 सब दास यही हमरे मनमें ठहराना है ॥ तुम  
 भक्कनको सुरइंदपदी फिर चक्रपतीपदपाना है।  
 क्या बात कहौं विस्तार बड़ी वे पावैं मुक्ति  
 ठिकाना है ॥ श्री० ॥ ७ ॥ गति चार चुरासी  
 लाखविषैं चिन्मूरत मेरा भटका है। हो दीन-  
 बंधु करुणानिधान अबलौं न मिटा वह खटका  
 है ॥ जब जोग मिला शिवसाधनका तब विघन  
 कर्मने हटका है। तुम विघन हमारे दूर करौ  
 सुख देह निराकुल घटका है ॥ श्री० ॥ ८ ॥

गजग्राहप्रसित उद्धार लिया, ज्यों अंजन त-  
 स्कर तारा है । ज्यों सागर गोपदरूप किया ।  
 मैनाका संकट टारा है ॥ ज्यों शूलीतें सिंहासन  
 औ बेडीको काट विडारा है । त्यों मेरा संकट  
 दूर करो प्रभु मोकूं आस तुम्हारा है ॥ श्री०  
 ॥ ६ ॥ ज्यों फाटक टेकत पांय खुला औ सांप  
 सुमन कर डारा है । ज्यों खड्ग कुसुमका माल  
 किया । बालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ  
 विपत चकचूर पूर घर लक्ष्मीसुख विस्तार  
 है । त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोकूं आस  
 तुम्हारा है ॥ श्री० ॥ १० ॥ यद्यपि तुमको रागादि  
 नहीं यह सत्य सर्वथा जाना है । चिन्मूरति  
 आप अनंतगुनी नित शुद्धदशा शिवथाना है  
 यद्यपि भक्तकी भीड हरो सुखदेत तिन्हें जु  
 शुहाना है । यह शक्ति अचिंत तुम्हारीका क्या  
 पावे पार सयाना है ॥ श्री० ॥ ११ ॥ दुखखंडन  
 श्रीमुखमंडनका तुमरा प्रन परम प्रमाना है ।  
 बरदान दया जस कीरतका तिहुंलोकधुजा

फहराना है ॥ कमलाधरजी ! कमलाकरजी, क-  
रिये कमला अमलाना है । अब मेरी विथा  
अवलोकित रमापति, रंच न बार लगाना है ॥  
श्री० ॥ १२ ॥ हो दीनानाथ अनाथ हितू, जन  
दीन अनाथ पुकारी है । उदयागत कर्मविपाक  
हलाहल, मोह विथा विस्तारी है ॥ ज्यों आप  
और भवि जीवनकी, ततकाल विथा निरवारी  
है । त्यों 'वृंदावन' यह अर्ज करै, प्रभु आज  
हमारी बारी है ॥ १३ ॥



जैन ग्रन्थ, चित्र और बांटेने योग्य टूकटों  
को सुविधा दरमें देनेवाला भारतर्षमें एक मात्र  
कार्यालयका पता—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

१६१।१ हरासन रोड, कलकत्ता ।



## । करुणाष्टक ।

करुणा ल्यो जिनराज हमारी, करुणाल्यो०॥टेक  
अहो जगतगुरु जगपतीजी, परमानंदनिधान ।  
किंकरपर कीजै दयाजी, दीजे अविचल थान ।  
हमारी० ॥१॥ भव दुखसों भयभीत हौंजी, शिवपद  
वांछासार । करौ दया मुझ दीनपैजी, भवबंधन  
निरवार ॥हमारी०॥२॥ परचो विषम भवकूपमेंजी  
हे प्रभु ! काढौ मोहि । पतित उधारण हो तुम्हीं  
जी, फिर फिर विनऊँ तोहि । हमारी०॥३॥ तुम  
प्रभु परम दयाल हो जी, अशरनके आधार ।  
मोहि दुष्ट दुख देत हैं जी, तुमसों करहुं पुकार  
हमारी० ॥ ४ ॥ दुःखित देखि दया करैजी,  
गांवपति इक होय । तुम त्रिभुवनपति कर्मतैंजी  
क्यों न छुडावो मोय । हमारी० ॥ ५ ॥ भव  
प्राताप तबै बुझैजी, जब राखूं उर धोय । दया  
सुधारक सीयराजी, तुम पदपंकज दोय ॥

हमारी० ॥ ६ ॥ यही एक मुझ वीनतीजी,  
 स्वामी ! हर संसार । बहुत धज्यौं हूं त्रासतैंजी,  
 विलख्यो बारंबार । हमारी० ॥ ७ ॥ पदमनंदिको  
 अर्थ लैजी, अरज करी हितकाज । शरणा गत  
 भूतरतणीजी, राखहु जगपति लाज ॥ हमारी० ॥ ८

। पार्श्वनाथ स्तुति ।

सोरठा ।

पारसप्रभुको नाउँ, सार सुधारस जगतमें ।  
 मैं वाकी बलिजाउँ, अजर अमरपदमूल यह ॥ १ ॥

हरिगीता ( १८ मात्रा )

राजत उत्तंग अशोक तरुवर, पवन प्रेरित  
 थरहरै । प्रभु निकट पाय प्रमोद नाटक, करत  
 मानों मन हरै ॥ तस फूल गुच्छन भ्रमर गुंजत,  
 यही तान सुहावनी । सो जयो पार्श्व जिनेंद्र  
 पातकहरन जग चूडामनी ॥ २ ॥ निज मरन  
 देखि अनंग डरप्यो, सरन दूढत जग फिरयो ।  
 कोई न राखैं चोर प्रभुको, आयपुनि पायनि  
 गिरयो ॥ यों हार निज हथियार डारे पुहपवर्षा

मिस भनी । सो जयो० ॥ ३ ॥ प्रभुअंगनीलउ-  
 तंगगिरितैं वानि शुचि सरिता ढली । सो भेदि  
 भ्रमगजदंतपर्वत, ज्ञानसागरमें रली ॥ नय सप्त-  
 भंग-तरंग-मंडित, पापतापविध्वंसनी । सो जयो०  
 ॥ ४ ॥ चंद्रार्चिचयछवि चारु चंचल, चमरवृंद  
 सुहावने । ढोलै निरंतर यक्षनायक, कहत क्यों  
 उपमा बनै ॥ यह नीलगिरिके शिखर मानों,  
 मेघझरि लागी घनी । सो जयो० ॥ ५ ॥ हीरा  
 जवाहिर खचित बहुविधि. हेमआसन राजये ।  
 तहँ जगत जनमनहरन प्रभु तन, नील वरन  
 विराजये । यह जटिल वारिजमध्यमानों, नील  
 मणिकलिका बनी । सो जयो० ॥ ६ ॥ जगजीत  
 मोह महान जोधा जगतमें पटहा दियो । सो  
 शुकल-ध्यान-कृपानवल जिन, निकट वैरी वश  
 कियो ॥ ये बजत विजयनिशान दुंदुभि, जीत  
 सूचै प्रभुतनी । सो जयो० ॥ ७ ॥ छदमस्थपदमें  
 प्रथम दर्शन, ज्ञानचारित आदरे । अब तीन तेई  
 छत्रछलसों, करत छाया छवि भरे ॥ अति धवल



रूप अनूप उन्नत, सोमर्विषप्रभाहनी । साजयो०  
 दुति देखि जाकी चन्द सरमै, तेजसौं रवि लाजई  
 तव प्रभामण्डलजोग जगमै, कौन उपमा छाजई  
 इत्यादि अतुल विभूति मंडित, सोहिये त्रिभुव-  
 नधनी । सोजये० ॥ ६ ॥ या अगम महिमा  
 सिंधु साहब, शक्र पार न पावहीं । ताजि हासमय  
 तुम दास 'मधुर' भगतिवश यश गावहीं ॥ अब  
 होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदासेवक रहौं । कर  
 जोरि यह वरदान मांगौं, मोखपद जावत लहौं ॥



### । चारवाष्टक ।

नमो केवल नमो केवल रूप भगवान । मुख  
 ओंकार धुनि सुनि अर्थ गणधर विचारैं । रचि  
 रचि अगम उपदिसै भविक जीव संशय निवारैं ।  
 सो सत्यारथ शारदा तासु भक्ति उर आन ।  
 बंद भुजङ्गप्रयातमै अष्टक कहौं बखान ॥ १ ॥

जिनादेश जाता जिनेंद्रा विख्याता । विशुद्ध-  
प्रबुद्धा नमो लोकमाता ॥ दुराचार दुर्नेहरा शंक  
रानी । नमो देवि वागीश्वरी जैनवानी ॥ २ ॥  
सुधाधर्मसंसाधनी धर्मशाला । क्षुधातापनिर्ना-  
शिनी मेघमाला ॥ महामोहविध्वंसनी मोक्ष-  
दानी । नमो देवि०॥३॥ अखै वृक्षशाखा व्यती-  
ताभिलाषा । कथा संस्कृता प्राकृता देशभाषा ।  
चिदानंदभूपालकी राजधानी । नमो० ॥ ४ ॥  
समाधानरूपा अनूपा अछुद्रा । अनेकांतधा  
स्यादवादाकमुद्रा ॥ त्रिधा सप्तधा द्वादशांगी  
बखानी । नमो देवि० ॥ ५ ॥ अकोपा अमाना  
अदंभा अलोभा । श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा  
महापावनी भावना भव्यमानी । नमो देवि०॥६॥  
अतीता अजीता सदा निर्विकारा । विषै वाटिका  
खंडिनी खड्गधारा ॥ पुरापापविक्षेपकर्त्री कृपा  
णी । नमो देवि०॥७॥ अगाधा अबाधा निरंध्रा  
निराशा । अनंता अनादीश्वरी कर्मनाशा ॥  
निशंका निरांका चिदंका भवानी । नमो देवि०

॥८॥ अशोका मुदेका विवेका विधानी । जग-  
 ज्जंतु मित्रा विचित्रावसानी ॥ समस्ता विलोका  
 निरस्ता निदानी ॥ नमोदेवि० ॥६॥

जैनवानी जैनवानी सुनाहि जे जीव ।  
 जे आगमरुचि धार, जे प्रतीत मनमांहिं आनहिं  
 अब धारहिं जे पुरुष समर्थ पद अर्थ जानहिं ॥  
 जे हित हेतु बनारसी देहिं धर्म उपदेश ।  
 ते सब पावहिं परमसुख तज संसार कलेश ॥१०॥

इति शारदाष्टक ।

### शास्त्र-भक्ति ।

अकेला ही हूं मैं करम सब आये सिमिटिकें ।  
 लिया है मैं तेरा शरण अब माता सटकिकें ॥  
 भ्रमावत है मोको-करम दुख देता जनमका ।  
 करों भक्तीतेरी, हरो दुखमाता भ्रमनका ॥१॥  
 दुखी हुआ भारी, भ्रमत फिरता हूं जगतमैं ।  
 सहा जाता नहीं अकल घबरानी भ्रमनमैं ॥  
 करों क्या मा मोरी, चलत वश नहीं मिटनका ।  
 करों भक्ती तेरी, हरो दुखमाता भ्रमनका ॥२॥

सुनो माता मोरी, अरज करता हूं दरदमें ।  
 दुखी जानों मोकों, डरप कर आयो शरनमें ।  
 कृपा ऐसी कीजे, दरद मिटजावै मरनका । करों  
 भक्ती तेरी हरो दुख माता भ्रमनका ॥ ३ ॥  
 पिलावै जो मोकों, सुबुधिकर प्याला अमृतका ।  
 मिटावै जो मेरा सरब दुख सारा फिरनका ।  
 परों पावां तेरे हरो दुख सारा फिकरका । करों  
 भक्ती तेरी, हरो दुख माता भ्रमनका ॥ ४ ॥

सवेया ।

मिथ्या-तम नाशवेको ज्ञानके प्रकाशवेको. आ-  
 पा-परभासवेको भानुसी बखानी है । छहों द्रव्य  
 जानवेको बंधविधि भानवेको स्वपर पिछानवे-  
 को परम प्रमानी है ॥५॥ अनुभौ बतायवेको  
 जीवके जतायवेको. काहू न सतायवेको भव्य  
 उर आनी है । जहांतहां तारवेको पारके उता-  
 रवेको. सुख विसतारवेको येही जिनवानी है ।६

दोहा ।

बह जिनवानी की थुती. अल्प बुद्धि परमान ।

पनालाल विनती करै. दे माता मोहि ज्ञान ।७।  
 हे जिनवानी भारती. तोहि जपों दिन रैन ।  
 जो तेरा शरना गहै, सो पावै सुख चैन ॥८॥  
 जा वानीके ज्ञानतैं. सूझै लोकालोक ।  
 सो वानी मस्तक चढो. सदा देत हों धोक ॥९॥

१ अथ बड़ी साधुकंदना १

दोहा ।

श्रीजिनभाषित भारती. सुमरि आन मुखपाठ ।  
 कहुं मूलगुणसाधुके, परमित विंशति आठ  
 पंचमहाव्रत आदरन. समिति पंच परकार ।  
 प्रबल पंचइंद्रिय. विजय. षट अविशिक आचार ॥  
 भूमिशयन मंजनतजन. वसन त्याग कचलोच ।  
 एकवार लघुअसन थिति-असन दंतवनमोच ॥

चोपाई ।

थावर जंतु पंचपरकार । चारभेद जंगमतनधार ॥  
 जो सब जीवनको रछपाल । सो सुसाधु वंदहु  
 तिरकाल ॥४॥ संतत सत्यवचन मुख कहै ।  
 अथवा मौन विरत धर रहै ॥ मृषावाद नहिंकोले

रती । सो जिनमारग सांचा जती ॥५॥ कोडी  
 आदि रतन परजंत । घटित अघट धनभेद  
 अनंत ॥ दत्त अदत्त न फरसै जोइ । तारण  
 तरण मुनीश्वर सोय ॥६॥ पशु पंछी नर दानव  
 देव । इत्यादिक रमणी-रति-सेव ॥ तजहिं निरं-  
 तर मदन विकार । सो मुनि नमहुं जगताहितकार  
 ॥ ७ ॥ द्विविध परिग्रह दशविध जान । संख  
 असंख अनंत बखान ॥ सकल संगतज होय  
 निरास । सो मुनि लहै मोखपद वास ॥ ८ ॥  
 अधोदृष्टि मारग अनुसरै । प्रासुक भूमि निरख  
 पग धरै ॥ सदय हृदय साधै शिवपंथ । सो तपीश  
 निरभय निरग्रंथ ॥ ९ ॥ निरभिमान निरवद्य  
 अदीन । कोमल मधुर दोष दुखहीन ॥ ऐसे सुव-  
 चन कहैं स्वभाव । सो रिषिराज नमहुं धरि भाव  
 ॥१०॥ उत्तम कुल श्रावक संचार । तामगेह प्रासुक  
 आहार ॥ भुंजै दोष छियालिस टाल । सो मुनि  
 बंदौ सुरति सँभाल ॥ ११ ॥ उचित वस्तु निज  
 हित परहेत । तथा धरम उपकरण अचेत ॥

निरख जतनसों गहै जु कोय । सो मुनि नमहुँ  
 जोर कर दोय ॥१२॥ रोग विकृति पूरव आदान  
 नवदुवार-मल-अंग उठान ॥ डारै प्रासुक भूमि  
 निहार । सो मुनि नमहुँ भगति उरधार ॥१३॥  
 कोमल कर्कस हरुव सँभार । रूक्षसचिकण तपत  
 तुसार । इनको परसन सुखदुख लहै । सो  
 मुनिराज जिनेश्वर कहै ॥१४॥ आमल कटुक  
 कषायल मिष्ट । तिक्त चार रस इष्ट अनिष्ट ॥  
 इनहिं स्वाद रति अरति न बेव । सो ऋषिराज  
 नमहिं तिहँ देव ॥१५॥ शुभ सुगंध नानापर-  
 कार । दुखदायक दुर्गंध अपार । नासा विषय  
 गनहिं समतूल । सो मुनि जिन सासनतरुमूल  
 ॥१६॥ श्याम हरित सित लोहित पीत । वर्ण  
 विवर्ण मनोहर भीत । ए निरखे तज राग विरोध  
 सो मुनि कर कर्ममल शोध ॥१७॥ शब्द कु-  
 शब्द हि समरससाद । श्रवण शूनत नहिं हर्ष  
 विषाद ॥ धुति निंदा दोऊं सम शुणै । सो  
 राज परमपद मुणै ॥१८॥ सामाहिक सार्धै

काल । मुकति पंथकी करै सँभाल ॥ शत्रु मित्र  
 दोऊ सम गिणै । सो मुनिराज करमरिपु हणै  
 ॥ १९ ॥ अरहत सिद्ध सूरि उवझाय । साधु पंच  
 पद परम सहाय ॥ इनके चरणनिमें मनलाय ।  
 तिह मुनिवरके वंदों पाय ॥ २० ॥ पावनपंच  
 परमपदइष्ट । जगतमाहिं जानै उतकिष्ट ॥ ठनै  
 गुणथुति बारंबार । सो मुनिराज लहै भवपार  
 ॥ २१ ॥ ज्ञानक्रियागुण धारै चित्त । दोष विलो-  
 कि करै प्राच्छित्त ॥ नित प्रतिक्रमण क्रिया रस-  
 लीन । सो सुसाधु संजम परवीन ॥ २२ ॥ श्री  
 जिनवचनरचन विस्तार । द्वादशांग परमागम  
 सार ॥ निजमति मान करै सज्झाउं । सो मुनिवर  
 वंदहुं धर भाव ॥ २३ ॥ काउसग्ग मुद्रा धरि  
 नित्त । शुद्ध स्वरूप विचारै चित्त ॥ त्यागै त्रिविध  
 जोग ममकार । सो मुनिराज नमों निरधार ॥  
 २४ ॥ प्रासुक शिला उचित भू खेत । अचल  
 अंग समभाव समेत ॥ पच्छिमरैन अल्प निद्राल



सो योगीश्वर बंचै काल ॥ २५ ॥ धर्म ध्यान  
 युत परम विचित्र । अंतर बाहिज सहज पवित्र ॥  
 न्हाणविलेपन तजै त्रिकाल । वंदों सो मुनि दीन  
 दयाल ॥ २६ ॥ लोकलाज विगलित भय हीन ।  
 विषयवासना रहित अदीन ॥ नगन दिगंबर-  
 मुद्राधार । सो मुनिराज जगतसुखकार ॥ २७ ॥  
 सघन केशगर्भित मल कीच । त्रस असंख्य  
 उत्पति तसु वीच ॥ कच लुंचै यह कारण जान ।  
 सो मुनि नमहुं जोरि जुगपान ॥ २८ ॥ छुधा  
 वेदनी उपशमहेत । रस अनरस समभाव समेत ॥  
 एक बार लघु भोजन करै । सो मुनिमुकतिपंथ  
 पगधरै ॥ २९ ॥ देहसहारो साधन मोख । तब  
 लों उचित काय बलपोख ॥ यह विचार यति  
 लेहिं अहार । सो मुनि परम धरम धनधार ॥ ३० ॥  
 जहँजहँ नवदुवार मलपात । तहँतहँ अमिति  
 जीव उत्पात ॥ यह लख तजहिं दंतवनकाज ।  
 सो शिवपथ साधक ऋषिराज ॥ ३१ ॥

## अथ मूधरकृत गुरुस्तुति ।

बंदों दिगंबर गुरुचरन जग-तरन तारन  
जान । जे भरमभारी रोगको हैं राजवैद्य महान  
जिनके अनुग्रह बिन कभी नहिं कटै कर्मजँजी  
र । ते साधु मेरे उर बसहु मम हरहु पातक  
पीर ॥१॥ यह तन अपावन अथिर है संसार  
सकल असार । ये भोग विषपकवानसे इहभां-  
ति शोच विचार ॥ तप विरचि श्रीमुनि वनबसे  
सब छांड़ि परिगह भीर । ते साधु० ॥२॥ जे काच  
कंचनसम गिनहिं अरि मित्र एक सरूप ।  
निंदा बड़ाई सारिखी, वनखंड शहर अनूप ॥  
सुखदुःख जीवनमरनमें, नहिं खुशी नहिं दिल-  
गीर । ते साधु० ॥३॥ जे वाह्य परवत वनबसे  
गिरि गुफा महल मनोग । सिल सेज समता  
सहचरी, शशिकिरनदीपक जोग ॥ मृग मित्र  
भोजन तपमई विज्ञान निरमल नीर । ते साधु०  
॥४॥ सूखहिं सरोवर जल भरे, सूखहिं तरं-  
गिनि-तोय ॥ बाटहि बटोही ना चलै, जहँ घाम

गरमी होय ॥ तिहँकालमुनिवरतपतपहि, गिरि  
 शिखरठाडे धीर । ते साधु० ॥ ५ ॥ घनघोर  
 गरजहिं घनघटा, जलपरहिं पावसकाल । चहुँ  
 ओर चमकहि बीजुरी, अति चलै सीरी व्याल ॥  
 तरुहेठ तिष्ठहिं तब जती, एकान्त अचलशरीर ।  
 ते साधु० ॥ ६ ॥ जब शीतमास तुषारसों, दाहै  
 सकल वनराय । जब जमै पानी पोखरां, थरहरै  
 सबकी काय ॥ तब नगन निवसैं चौहटै, अथवा  
 नदीके तीर । ते साधु० ॥ ७ ॥ करजोर 'भूधर'  
 बीनवै, कब मिलहिं वे मुनिराज । यह आश  
 मनकी कब फलै, मम सरहिं सगरे काज ॥  
 संसार विषम विदेशमें जे बिना कारण वीर । ते  
 साधु० ॥ ८ ॥

अथ मूषरकृत दूसरी गुरुस्तुति ।

राग भरतरी—दोहा ।

ते गुरु मेरे मन बसो, जे भवजलधि जिहाज ।  
 आप तिरहिं पर तारहीं, ऐसे श्रीऋषिराज ॥  
 ॥ ते गुरु० ॥ ११ ॥ मोहमहारिपु जानिकैं छाड्यो

सब घरबार । होय दिगंबर वन बसे, आत्म  
 शुद्ध विचार ॥ ते गुरु० ॥२॥ रोग उरग-विलवपु  
 गिरयो, भोग भुजंग समान । कदलीतरु संसार  
 है, त्याग्यो सब यह जान ॥तेगुरु०॥३॥ रतन-  
 त्रयनिधिउरधरें, अरु निरग्रंथ त्रिकाल । मान्यो  
 कामखवीसको, स्वामी परमदयाल ॥तेगुरु०॥  
 पंचमहाव्रत आदरे, पांचों समिति समेत । तीन  
 गुपाति पालें सदा, अजर अमर पदहेत ॥ ते  
 गुरु० ॥५॥ धर्म धरें दशलाछनी, भावें भावन  
 सार । सैं परीपह बीस द्वै, चारित-रतन-भंडार  
 ॥तेगुरु०॥६॥ जेठ तपै रवि आकरो, सूखै सर  
 वर नीर । शैल-शिखर मुनि तप तपैं दामैं नगन  
 शरीर ॥ ते गुरु० ७ ॥ पावस रैन डरावनी,  
 बरसै जलधरधार । तरुतल निवसै तब यती,  
 बाजै भंभा व्यार ॥ ते गु० ८ ॥ शीत पडै  
 कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय । तालतरंगनि  
 के तटैं, ठाढ़े ध्यान लगाय ॥ ते गु० ॥९॥ इहि  
 विधि दुद्धर तप नपैं, तीनोंकाल मंभार । लागे

सहज सरूपमें तनसों ममत निवार ॥ ते गु० ॥  
 पूरव भोग न चिंतवै, आगम बांछैं नाहिं । चहुं  
 गतिके दुखसों डरै, सुरति लगी शिवमाहिं ॥  
 ते गु० ॥ ११ ॥ रंगमहलमें पौढ़ते, कोमल सेज  
 विधाय । ते पच्छिम निशि भूमिमें, सोवें संवरी  
 काय ॥ ते गु० १२ ॥ गजचढि चलते गरवसों,  
 सेना सजि चतुरंग । निरखि निरखि पग वे धरैं  
 पालैं करुणा अङ्ग ॥ ते गु० १३ ॥ वे गुरू चरण  
 जहां धरै जगमें तीरथ जेह । सो रज मम मस्तक  
 चढो, भूधर मांगे एह ॥ ते गु० १४ ॥

अथ गुर्वाकली लिख्यते ।

जैवंत दयावंत सुगुरू देव हमारे । संसाराविषम  
 खारसों जिनभक्त उधारे ॥ टेक ॥ जिनवीरके  
 पीछें यहां निर्वानके थानी । बासठ बरसमें तीन  
 भये केवलज्ञानी । फिर सौ बरसमें पांच श्रुतके  
 वली भये । सर्वांग द्वादशांगके उमंग रस लये  
 ॥ जैवंत० १ ॥ तिस बाद वर्ष एकशतक और  
 तिरासी । इसमें हुयेदशपूर्व ग्यारै अंगके भाषी ।

ग्यारै महामुनीश ज्ञानदानके दाता । गुरुदेव  
 सोई देहिंगे भविष्यंदको साता । जैवंत० २। तिस  
 बाद वर्ष दोय शतक बीसके माहीं । मुनि पांच  
 ग्यारै अंगके पाठी हुये ह्यांहीं ॥ तिसबाद वरष  
 एकसौ अठारमें जानी । मुनि चार हुये एक  
 आचारांगके ज्ञानी । जैवंत० ॥ ३ ॥ तिसबाद  
 हुये हैं जु सुगुरु पूर्वके धारक । करुणानिधान  
 भक्तको भवसिंधु उधारक ॥ करकंजतैं गुरु मेरे  
 उपर छांह कीजिये । दुख द्वंद्वको निकंदके आनंद  
 दीजिये ॥ जैवंत० ॥ ४ ॥ जिनवीरके पीछेसों  
 वरष छहसौ तिरासी । तबतक रहे इक अंगके  
 गुरुदेव अभ्यासी ॥ तिसबाद कोई फिर न हुये  
 अंगके धारी । पर होते भये महा सुविद्वान  
 उदारी ॥ जैवंत०।५। जिनसों रहा इस कालमें  
 जिनधर्मका शाका । रोपा है सात भंगका अभं-  
 ग पताका ॥ गुरुदेव नयंधरको आदि दे बडे  
 नामी । निरग्रंथ जैनपंथके गुरुदेव जो स्वामी ॥  
 ॥जैवंत० ६ ॥ भाषों कहां लों नाम बडी बार

लगैगा । परनाम करों जिससे बेडा पार लगैगा  
 जिसमेंसे कछुइक नाम सूत्रकारके कहों । जिन  
 नामके प्रभावसे परभावको दहों ॥जैवंत० ७॥  
 तत्त्वार्थसूत्र नामि उमास्वामी किया है । गुरुदेव  
 ने संक्षेपसे क्या काम किया है ॥ जिसमें अपार  
 अर्थने विश्राम किया है । बुधवृंद जिसे ओरसे  
 परनाम किया है ॥जैवंत० १८॥ वह सूत्र है इस  
 कालमें जिनपंथकी पूंजी । सम्यक्त्व ज्ञानभाव है  
 जिस सूत्रकी कूंजी ॥ लडते हैं उसी सूत्रसों  
 परवादके मूंजी ॥ फिर हारके हट जाते हैं इक  
 पक्षके लूंजी ॥ जैवंत० १९॥ स्वामी समंतभद्र  
 महाभाष्य रचा है । सर्वग सात भंगका उमंग  
 मचा है ॥ परवादियोंका सर्व गर्व जिससे पचा  
 है । निर्वान सदनका सोई सोपान जचा है ॥  
 ॥जैवंत० १०॥ अकलंकदेव राजवारतीक बनाया ।  
 परमान नयनिक्षेपसों सब वस्तु बताया ॥ श्लोक  
 वारतीक विद्यानंदजी मंडा । गुरुदेवने जडमूल  
 सों पाखंडाको खंडा ॥जै० ११॥ गुरु पूज्यपाद

जी हुये मरजादके धोरी । सर्वार्थसिद्धि च  
 की टीका जिन्हों जोरी ॥ जिसके लखेसों फिर  
 न रहे चित्तमें भरम । सब जीवको भाषै है स्व-  
 रभावका मरम ॥ जैवंत० । १२ । धरसेन गुरु-  
 जी हरो भविचंद्रकी व्यथा । अग्रायणीयपूर्वमें  
 कुछ ज्ञान जिन्हें था ॥ तिनके हुये दो शिष्य पुष्प-  
 दंत भुतबली । धवलादिकोंका सूत्र किया जि-  
 स्से मग चली ॥ जैवंत० । १३ । गुरु औरने  
 उस सूत्रका सब अर्थ लहा है । तिन धवल महा-  
 धवल जयसुधवल कहा है ॥ गुरु नेमिचंद्रजी  
 हुये धवलादिके पाठी । सिद्धांतके चक्रीशकी  
 पदवी जिन्हों गांठी ॥ जैवंत० ॥ तिन तीनोंही  
 सिद्धांतके अनुसारसों प्यारे । गोमट्टसार आदि  
 सुसिद्धांत उचारे ॥ यह पहिले सुसिद्धांतका  
 विरतंत कहा है । अब और सुनो भावसों जो  
 भेद महा है ॥ जैवंत० । १५ । गुणधर मुनीशने  
 पढा था तीजा पराभृत । ज्ञानप्रवाद पूर्वमें जो  
 भेद है आश्रित । गुरु हस्तिनागजीने सोई जिन-



सों लहा है । फिर तिनसों यतीनायकने मूल  
 गहा है ॥ जैवंत० । १६ । तिन चूर्णिका स्वरूप  
 तिससे सूत्र बनाया । परमान छै हजार यों सि-  
 द्धांतमें गाया ॥ तिसका किया उद्धरण समुद्धरण  
 जु टीका । बारह हजारके प्रमान ज्ञानकी ठीका  
 ॥ जैवंत० । १७ । तिसहीसे रचा कुंदकुंदजीने  
 सुशासन । जो आत्मीक पर्म धर्मका है प्रकाश-  
 न ॥ पंचास्तिकाय समयसार सारप्रवचन । इत्यादि  
 सुसिद्धांत स्यादवादका रचन ॥ जैवंत० । १८ ।  
 सम्यक्त्वज्ञान दर्श सुचारित्र अनूपा । गुरुदेव  
 ने अध्यात्मीक धर्म निरूपा ॥ गुरुदेव अमी-  
 इंदुने तिनकी करी टीका ॥ झरता है नि-  
 जानंद अमीवृंद सरीका ॥ जैवंत० । १९ । रच-  
 नानुवेदभेदके निवेदके करता । गुरुदेव जे भये  
 हैं पापतापके हरता ॥ श्रीबट्टकेर देवजी वसु-  
 नंदजी चक्री । निरग्रंथ ग्रंथ पंथके निरग्रंथके  
 शक्री ॥ जैवंत० । २० । योगींद्रदेवने रचा पर-  
 मात्माप्रकाश । शुभचंद्रने किया है ज्ञान आर-

णव विकाश ॥ की पद्मनंदजीने पद्मनंदिप  
 सी । शिवकोटिने आराधना सुसार रचीसी ॥  
 जैवंत । २१ । दोसंध तीनसंध चारसंध पांचसंध ।  
 षटसंध सातसंधलों गुरु रचा है प्रबंध ॥ गुरु देव-  
 नंदिने किया जैनेंद्रव्याकरण । जिस्से हुवा पर-  
 वादियोंके मानका हरन ॥ जैवंत० । २२ । गुरु-  
 देवने रची है रुचिर जैनसंहिता । वरनाश्रमादि  
 की क्रिया कहें हैं जु संहिता ॥ वसुनंदि वीरनंदि  
 यशोनंदि संहिता । इत्यादि बनी हैं दशोंप्रकार  
 संहिता ॥ जैवंत० । २३ । परमेयकमलमारतंडके  
 हुये कर्ता । प्रभेन्दु माणिक्यनंदि नयप्रमाणके  
 भर्ता ॥ जैवंत सिद्धसेन सुगुरु देव दिवाकर ।  
 जै वादिसिंह देवसिंह जैति यशोधर ॥ जैवंत०  
 २४ ॥ श्रीदत्त काणभिक्षु और पात्रकेशरी ।  
 श्रीवज्रसूर महासेन श्रीप्रभाकरी । शिरीजटा-  
 चार गुरु वीरसेन हैं । जैसेन शिरीपाल मुझे  
 कामधेन हैं ॥ जैवंत । २५ । इन एक एक गुरूने  
 जो ग्रंथ बनाया । कहि कौन सके नाम कोइ

पार न पाया ॥ जिनसेन गुरूने महापुराण रचा  
 है । मरजाद क्रियाकांडका सब भेद खचा है ॥  
 जैवंत० ॥ २६ ॥ गुणभद्र गुरूने रचा उत्तरपुरानको  
 सो देव गुरूजी कल्याण थानको ॥ रविषेण  
 गुरूजीने रचा रामका पुरान । जो मोहतिमर  
 भाननेको भानुके समान ॥ जैवंत० ॥ २७ ॥ पुत्रा-  
 टगणविषै हुये जिनसेन दूसरे । हरिवंशको ब-  
 नाके दास आसको भरे । इत्यादि जे वसुबीस  
 सुगुण मूलके धारी । निर्ग्रथ हुये हैं गुरू जिन-  
 ग्रंथके कारी ॥ जैवंत० ॥ २८ ॥ वंदौ तिन्हें मुनि  
 जे हुये कवि काव्य करैया ॥ वंदामि गमक सा-  
 धु जो टीकाके धरैया ॥ वादी नमों मुनिवादमें  
 परवाद हरैया । गुरु वागमीकको नमों उपदेश  
 करैया ॥ जैवंत० ॥ २९ ॥ ये नाम सुगुरु देवका  
 कल्याण करै है । भविबृंदका तत्काल ही दुख  
 दूंद हरै है ॥ धनधान्य ऋद्धि सिद्धि नवों निद्धि  
 भरै हैं । आनंद कंद देहि सबी विघ्न टरै है ॥  
 जैवंत० ॥ ३० ॥ इह कंठमें धारै जो सुगुरु नामकी

माला । परतीतसों उरप्रीतिसों घ्यावै जु त्रिकाला ।  
 इहलोकका सुख भोग सो सुरलोकमें जावै ।  
 नरलोकमें फिर आयके निरवानको पावै ।  
 जैवंत दयावंत सुगुरुदेव हमारे । संसार  
 विषमस्वारसों जिन भक्त उधारे ॥ ३१ ॥ इति ॥

### १ मंगलाष्टक

कवित्त ( ३१ मात्रा )

संघसहित श्रीकुंदकुंदगुरु, वंदनहेत गये गि-  
 रनार । वाद परचो तहँ संशयमतिसों, साक्षी  
 बदी अंविंकाकार ॥ 'सत्य' पंथ निरग्रंथ दिगं-  
 बर, कही सुरी तहँ प्रगट पुकार । सो गुरुदेव  
 वसौ उर मेरे, विघनहरण मंगल करतार ॥१॥  
 स्वामी समंतभद्र मुनिवरसों शिवकोटी हठ  
 कियो अपार । वंदन करो शंभुपिंडीको, तब गुरु  
 रच्यो स्वयंभू भार ॥ वंदन करत पिंडिका  
 फाटी, प्रगट भये जिन चंद्र उदार । सो० ॥२॥  
 श्रीअकलंकदेव मुनिवरसों, वाद रच्यौ जहँ

१ । मंवादेवीकी मूर्ति ।

बौद्ध विचार । तारादेवी घटमें थापी, पटके ओट  
 करत उच्चार ॥ जीत्यो स्यादवादबल मुनिवर,  
 बौद्धबोध तारामद टारा।सो०।३। श्रीमतविद्या-  
 नंदि जबै, श्रीदेवागमथुति सुनी सुधार । अर्थ  
 हेतु पहुंच्यो जिनमंदिर, मिल्यो अर्थ तहँ सुख  
 दातार।। तब ब्रत परमदिगंबरको धर, परमत  
 को कीनों परिहार ॥सो०॥ ४ ॥ श्रीमत मान-  
 तुंग मुनिवरपर, भूप कोप जब कियौ गँवार ।  
 बंद कियो तालोंमें तबही, भक्तामर गुरु रच्यौ  
 उदार ॥ चक्रेश्वरी प्रगट तब हैकै, बंधन काट  
 कियो जयकार ॥ सो० ॥ ५ ॥ श्रीमत वादि-  
 राज मुनिवरसों, कह्यो कुष्टिभूपति जिहँ बार ॥  
 श्रावक सेठ कह्यो तिहँ अवसर, मेरे गुरु कञ्चन  
 तनधार ॥ तबहीं एकीभाव रच्यो गुरु, तन  
 सुवरणदुति भयो अपार ॥ सो०॥६ ॥ श्रीमत  
 कुमुदचन्द्र मुनिवरसों, वाद परयो जहँ सभा  
 मँभार । तब ही श्रीकल्याणधामथुति, श्रीगुरु  
 रचना रची अपार।। तब प्रतिमा श्रीपार्श्वनाथ-

की, प्रगट भई त्रिभुवन जयकार ॥ सो० ॥७॥  
 श्रीमत अभयचंद्र गुरुसों जब, दिल्लीपति इमि  
 कही पुकार। कै तुम मोहि दिखावहु अतिशय  
 कै पकरौ मेरो मत सार ॥तब गुरु प्रगट अलौ-  
 किक अतिशय, तुरत हरयो ताको मद भार ।  
 सो गुरुदेव बसौ उर मेरे विघन हरन मङ्गल  
 करतार ॥ ८ ॥

दोहा—

विघन हरण मङ्गल करण वाञ्छित फल दातार ।  
 'वृन्दावन' अष्टक रच्यो, करौ कंठ सुखकार ॥

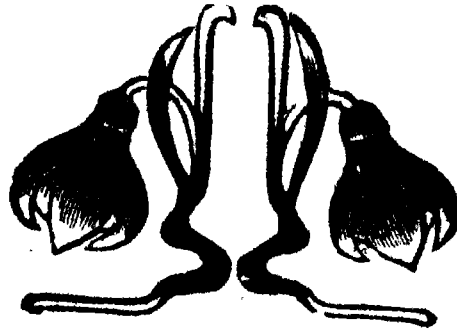
आचार्यवर्य रविषेणस्तुति ।

रविसे रविसेन अचारज हैं, भविवारिजके विक-  
 सावनहारे । जिन पद्मपुराण बखान कियौ भव  
 सागरतैं जगजन्तु उधारे ॥ सियरामकथासुजथा-  
 रथ भाखि, मिथ्यातसमूह समस्त विदारे । भवि  
 'बृंद' विथा अब क्यों न हरौ, गुरुदेव तुम्हीं मम  
 प्राण अधारे ॥१॥

आचार्यवर्य जिनसेनस्तुति ।

भगवज्जिनसेन कविद नमों जिन आदि जि-

निंदके छंद सुधारे । प्रथमानुसुवेद निवदनमें  
जिनको परधान प्रमान उचारे ॥ जगमें मुदमङ्गल  
भूरि भरे दुख दूर करे भवसागर तारे । भव  
'वृंद' विथा अब क्यों न हरो गुरुदेव तुम्हीं मम  
पान अधारे ॥१॥



स्तोत्रसंग्रह संस्कृत और भाषा ।

भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं

श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रं ।

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मानि ।  
स्वात्मनैव तथोद्भूतवृत्तये चित्यवृत्तये १॥ नमस्ते  
जगतांपत्ये लक्ष्मीः भर्त्रेणमोनमः ॥ विदांवर नम-

स्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥ कामशत्रुहणं  
देवमामनंति यनीषिणः । त्वामानमस्तुरेन्मौलि-  
भामालाभ्यर्वितक्रमम् ॥ ३ ॥ ध्यानदुर्घणनिर्भिन्न-  
घनघातिमहातरुः । अनंतभवसंतानजयोप्या-  
सीरनंतजित् ॥ ४ ॥ त्रैलोक्यनिर्जयाव्याप्तदुर्द-  
र्षमतिदुर्जयं । मृत्युराजं विजित्यासीज्जन्ममृत्युं  
जयो भवान् ॥ ५ ॥ विधूताशेषसंसारो बंधुर्नो  
भव्यवांधवः । त्रिपुरारिस्त्वमीशोसि जन्ममृ-  
त्युजरांतकृत् ॥ ६ ॥ त्रिकालविजयाशेषतस्त्व-  
भेदात् त्रिर्बिधोच्छ्रदं । केवलारुख्यं दधच्चक्षुस्त्रिने-  
त्रोसि त्वमीशिता ॥ ७ ॥ त्वामंधकांतकं प्राहुर्मो-  
हांधासुरमर्दनात् । अर्द्धतेनारयो यस्मादर्धनारी-  
श्वरोस्युत ॥ ८ ॥ शिवः शिवपदाध्यासाद् दुरि-  
तारिहरो हरः । शंकरः कृतशं लोके संभवस्त्वं  
भवन्मुखे ॥ ९ ॥ वृषभोसि जगज्ज्येष्ठः गुरुर्गुरु  
गुणोदयैः । नाभेयो नाभिसंभूतोरिच्छाकुकुला-  
नंदनः ॥ १० ॥ त्वमेकः पुरुषस्कंधस्त्वं द्वे लोक-  
स्य लोचने । त्वं त्रिधाबुधसन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञान



धारकः ॥ ११ ॥ चतुर्मांगल्यमूर्तिस्त्वं शरण-  
 चतुरःसुधीः । पंचब्रह्ममयो देवःपविनस्त्वं पुनी-  
 हि मां ॥१२॥स्वर्गावतारिणे तुभ्यं सद्योजाता-  
 त्मनेनमः । जन्माभिषेकबाम्नाय वामदेव नमोस्तु  
 ते ॥ १३ ॥ सुनिःक्रांताय घोराय परं प्रश-  
 ममीयुषे ।केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय नमोस्तु  
 ते ॥१४॥ पुरुस्तत्पुरषत्वेन विमुक्तपदभागिने  
 नमस्तत्पुरुषावस्थां भावनाणवविभ्रते ॥१५॥  
 ज्ञानावरणनिर्हास नमस्तेनंतचक्षुषे । दर्शना  
 वरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदर्शिने ॥१६॥नमो  
 दर्शनमोहादिक्षायिकामलदृष्टये । नमश्चारित्रमो-  
 हधने विरागाय महौजसे ॥१७॥ नमस्तेनंतवी-  
 र्याय नमोनंतसुखाय ते । नमस्तेनंतलोकाय  
 लोकालोकविलोकिने ॥ १८ ॥ नमस्तेनंतदा-  
 नाय नमस्तेनंतलब्धये । नमस्तेनंतभोगाय न-  
 मोनंताय भोगिने ॥ १९ ॥ नमः परमयोगाय  
 नमस्तुभ्यमयोनये । नमः परमपूताय नमस्ते  
 परमर्षये ॥२०॥ नमः परमविद्याय नमःपरमव-

च्छिदे । नमःपरमतत्वाय नमस्ते परमात्मने ॥  
 २१॥ नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे । नमः  
 परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥ २२ ॥ परम-  
 द्विजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः । नमः पारे-  
 तमः प्राप्तधाम्ने ते परमात्मने ॥ २३ ॥ नमः क्षीण-  
 कलंकाय क्षीणबंध नमोस्तुते । नमस्ते क्षीण-  
 मोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥ २४ ॥ नमः सुग-  
 तये तुभ्यं शोभनागतमीयुषेः । नमस्तर्तीन्द्रिय-  
 ज्ञानसुखायानिन्द्रियात्मने ॥ २४ ॥ कायबंधन-  
 निर्मोक्षादकायाय नमोस्तुते । नमस्तुभ्यमयो-  
 गाय योगिनामपि योगिने ॥ २६ ॥ अवेदाय  
 नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः । नमः परमयो-  
 गिन्द्रिबन्दितांघ्रियद्वयाय ते ॥ २७ ॥ नमः परम  
 विज्ञान नमःपरमसंयम । नमः परमदृग्दृष्टपर-  
 मार्थाय ते नमः ॥ २८ ॥ नमस्तुभ्यमलेश्याय  
 शुक्ललेश्यांशकस्पृशे । नमो भव्येतरावस्थाव्य-  
 तीताय विमोक्षणे ॥ २९ ॥ संज्ञासंशिद्धयावस्था-  
 व्यातिरिक्तामलात्मने । नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः

चायिकदृष्टये ॥३०॥ अनाहाराय तृप्ताय नमः  
 परमभाजुषे।व्यतीताशेषदोषाय भवाद्वै पारमी-  
 युषे ॥ ३१ ॥ अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेतीत  
 जन्मने । अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने  
 ॥ ३२ ॥ अलमास्तां गुणस्तोत्रमनंतास्तावका  
 कुणाः त्वन्नामस्मृतिमात्रेण परमं शं प्रशास्म-  
 हे ॥ ३३ ॥ एवं स्तुत्वा जिनंदेवं भक्त्यापरमया  
 सुधीः। पठेदष्टोतरं नाम्नां सहस्रं पाप शान्तये॥

इति प्रस्तावना ।

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणस्त्वं गिरां पतिः ना-  
 म्नामष्टसहस्रेण त्वां स्तुमोभीष्टसिद्धये॥१॥ श्री-  
 मान्स्वयंभूवृषभःशंभवःशंभुरात्मभूः।स्वयंप्रभः  
 प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २॥ विश्वात्मा  
 विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः विश्वविद्विश्व  
 विद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥३॥ विश्वदृश्वा  
 विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः विश्वव्यापी  
 विधिर्वेधाःशाश्वतो विश्वतोमुखः॥ ४ ॥ विश्व-  
 कर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः।विश्वदृक्

विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः॥५॥ जिनो  
 जिष्णुरमेयात्मा जगदीशो जगत्पतिः। अनंत  
 चिदचिंत्यात्मा भव्यबंधुरबंधनः॥६॥ युगादि-  
 पुरुषो ब्रह्मा पंचब्रह्ममयःशिवः । परः परतरः  
 सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥७॥ स्वयंज्योतिर-  
 जोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः मोहारिविजयी-  
 जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥ प्रशांतारिर-  
 नंतात्मा योगी योगीश्वरार्चितः । ब्रह्माविद् ब्रह्म-  
 तत्त्वज्ञो ब्रह्मेद्याविद्यतीश्वरः ॥ ९ ॥ शुद्धो बुद्धः  
 प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सि-  
 द्धांतविद्भ्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १०॥  
 सहिष्णुरच्युतो नंतः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः । प्रभू-  
 ष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः॥११॥  
 विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । पर-  
 मात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

( यहां उदकचन्दनतंदुल आदि श्लोक पढ़कर अर्घ चढ़ाना चाहिये )

दिव्य भाषापातीर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।

पूतात्मा परमज्योतिधर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥  
 श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजाविरजाः शुचिः । तीर्थ-  
 कृत्केवली शांतः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥२॥  
 अनंतदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः  
 शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥  
 निरंजनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः । अ-  
 चलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥  
 अग्रणीर्ग्रामिणर्निता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत ।  
 शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥  
 ५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।  
 वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभांको वृषोद्भवः ॥६॥ हि-  
 रण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनः । प्रभवो  
 विभवो भास्वान् भवो भावो भवांतकः ॥ ७ ॥  
 हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः । स्वयं-  
 प्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः सर्वादिः  
 सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः । सर्वात्मा सर्व-  
 लोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ८ ॥ सुगतिः  
 सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिबहुश्रुतः विश्रुतः

विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवा ॥ १०॥  
सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञसहस्राक्षः सहस्रपात् । भूत-  
भव्यभवद्भर्ता विश्वविद्या महेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥ अर्घ ।

स्थाविष्ठःस्थविरो जेष्ठ पृष्ठःप्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।  
स्थेष्ठो गरिष्ठो वंहिठः श्रेष्ठो निष्ठोगारिष्ठगीः  
॥१॥ विश्वभृद्विश्वसृद् विश्वेद् विश्वभुग्विश्वना-  
यकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजि-  
तांतकः ॥ २ ॥ विभवो विभयो वीरो विशोको  
विजरो जरन् । विरागो विरतोऽसंगो विविक्रो  
वीतमत्सरः ॥३॥ विनैर्येजनताबंधुर्विलीनाशेष  
कल्मषः । वियोगो योगविद्विद्धांविधातासुविधि-  
मुधीः ॥ ४ ॥ क्षांतिभाक्पृथिवीमूर्तिः शांति-  
भाक्सलिलात्मकः । वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्नि-  
मूर्तिरधर्मधृक् ॥५॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा  
सुत्रामपूजितः । ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगम-  
मृतं हविः ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिरभूतात्मा निर्लेपो  
निर्मलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौभ्यात्मा सूर्य-

मूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥ मंत्रविन्मंत्रकृन्मन्त्री मन्त्रम्-  
 तिरेनंतकः । स्वतंत्रस्तंत्रकृत्स्वांत कृतांतांतः  
 कृतांतकृत् ॥८॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृ-  
 त्य कृतक्रतुः । नित्यो मृत्युंजयो मृत्युरमृतात्मा-  
 मृतोद्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा  
 ब्रह्मसंभवः । महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेद् महाब्रह्मपदेश्वरः  
 ॥१०॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।  
 प्रशमात्मा प्रशांतात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥११॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥ अर्घ्य ।

महाशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टापद्मविष्टरः ।  
 पद्मेशः पद्मसंभूतिः पद्मनाभिरनुत्तः ॥१॥ पद्म-  
 योनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः । स्तव-  
 नाहो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥  
 गणाधिपो गणज्येष्ठो गणयः पुण्यो गणाग्रणीः  
 गुणाकरो गुणांभोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥३॥  
 गुणाकरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः श-  
 रण्यः पुण्यवाक्कपूर्तोऽरेण्यः पुण्यनायकः ॥४॥  
 अगण्यः पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।

धर्मरामो गुणश्रामः पुरयापुरयनिरोधकः ॥५॥  
 पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।  
 निद्वंद्वो निमदःशान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥६॥  
 निर्निमेषो निराहारो निःक्रियोनिरुपल्लवः । नि  
 ष्कलङ्को निरस्तैनानिर्धूतांगो निराश्रयः ॥७॥  
 विशालो विपुलज्योतिरतुलोचिंत्यवैभवः । सुसं  
 बृतः सुगुप्तात्मा सुब्रत्सुनयतत्त्ववित् ॥८॥ एक-  
 विद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः । धीशो  
 विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतांतकः ॥ ९॥  
 पिता पितामहःपाता पवित्रःपावनो गतिः ।  
 त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदःपरमःपुमान् ॥ १०॥  
 कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभःपुरुः । प्रतिष्ठः  
 प्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ११ ॥

इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥ ४ ॥ अर्घ ।

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षणय शुभः लक्षणः  
 निरक्षः पुंडरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥  
 सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः सिद्धात्मा सिद्धिसाधनः  
 बुद्ध बोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥२॥



वेदांगो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांबरः । वेदवे-  
 द्यः स्वयंवेद्यो विवेदो वदतांबरः ॥३॥ अनादि-  
 निधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः । युगादि-  
 कृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ४ ॥ अतीं-  
 द्रोऽतींद्रियो धींद्रो महेंद्रोऽतींद्रियार्थदृक् । अ-  
 निंद्रियोऽहमिंद्राच्यो महेंद्रमहितो महान् ॥ ५ ॥  
 उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः । अग्रा-  
 ह्यो गहनं गुह्यं परार्ध्यं परमेश्वरः ॥ ६ ॥ अनंत-  
 द्विरमेयद्विरचित्यद्विः समग्रधीः प्राग्रथः प्राग्रह-  
 रोऽभ्यग्रथः प्रत्यग्रोग्रचोग्रिमोग्रजः ॥ ७ ॥ महा-  
 तपा महातेजा महोदको महोदयः । महायशो  
 महाधामा महासत्त्वो महाधृतिः ॥८॥ महाधैर्यो  
 महावीर्यो महासंपन्महाबलः । महाशक्तिर्महा-  
 ज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥ महामतिर्महा-  
 नीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः । महाप्राज्ञो महाभागो  
 महानंदो महाकविः ॥२०॥ महामहामहाकीर्ति-  
 र्महाकांतिर्महावपुः । महादानो महाज्ञानो महा-  
 योगो महागुणः ॥११॥ महामहपतिः प्राप्तमहा-

कल्याणपंचकः । महाप्रभुमहाप्रातिहार्याधीशो  
महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥ ४॥ अर्च

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः । महा  
क्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥ महा  
व्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः । महामैत्री  
भयोऽमेयो महोपायो महोदयः ॥ २ ॥ महाका-  
रुण्यको मंता महामंत्री महायतिः । महानादो  
महाघोषो महैज्यो महसांपतिः ॥३॥ महाध्वर  
धरो धुर्यो महौदार्यो महैष्टवाक् । महात्मा मह-  
सांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥ महाक्लेशां  
कुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः । महापराक्रमोऽ-  
नंतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥ महाभवाब्धिसं  
तारिर्महामोहाद्रिसूदनः । महागुणाकर क्षांतां  
महायोगीश्वरः शमी ॥६॥ महाध्यानपतिर्ध्या  
ता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिः । आत्मज्ञो  
महादेवो महेशिता ॥७॥ सर्वक्लेशापहः श्लाघुः  
सर्वदोषहरो हरः । असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमा-

त्मा प्रशमाकरः ॥८॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिंत्यः  
 श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः । दांतात्मा दमतीर्थेशो  
 योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥ प्रधानमात्मा प्रकृ-  
 तिः परमः परमोदयः । प्रक्षीणबंधः कामारिः  
 क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१०॥ प्रणवः प्रणयः प्रा-  
 णः प्राणदः प्रणतेश्वरः । प्रमाणं प्राणिधिर्दक्षो  
 दक्षिणो ध्वर्युरध्वरः ॥११॥ आनंदो नंदनो नंदो  
 वंद्योऽनिंद्योऽभिनंदनः । कामहा कामदः का-  
 म्यः कामधेनुररिंजयः ॥ १२ ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अर्ध ।

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत् ।  
 अन्तकृत्कांतगुः कांतश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥१॥  
 अजितोजितकामारिरमितोऽमितशासनः । जि-  
 तक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ॥२॥  
 जिनेन्द्रः परमानंदो मुनींद्रो दुंदुभिस्वनः । महे-  
 न्द्रवंद्यो योगींद्रो यतींद्रो नाभिनंदनः ॥ ३ ॥  
 नाभेयो नाभिजो जातः सुव्रतो मनुरुत्तमः । अ-  
 भेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोधिगुरुः सुधीः ४

सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षा निरुत्सुकः । वि  
 शिष्टः शिष्टभुक्शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः  
 ५ क्षमी क्षमंकरोऽक्षम्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।  
 अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ६  
 सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयनश्चतुराननः ।  
 श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः । ७ ।  
 सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।  
 सत्याशीः सत्यसंधानः सत्यः सत्यपरायणः । ८ ।  
 स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः । अ-  
 णोरणीयाननणुर्गुरुराद्योगरीयसां ९ सदायोगः  
 सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः । सदागतिः सदा  
 सौख्यः सदाविद्यः सदादयः ॥ १० ॥ सुघोषः  
 सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तो  
 गुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥ ११ ॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥ ७ ॥ अर्घ ।

बृहन्वृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।  
 मनीषी धिषणो धीमाञ्छ्रेमुषीशो गिरांपतिः १  
 नैकरूपो नयण्तुगो नैकात्मा नैकधमकर्तृ ।

अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥२॥  
 ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्म-  
 गर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥३॥ लक्ष्मी-  
 वांस्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता । मनोहरो  
 मनोज्ञांगो धीरो गंभीरशासनः ॥ ४ ॥ धर्मयूपो  
 दयायागोः धर्मनेमिर्मुनीश्वरः धर्मचक्रायुधो  
 देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ५ ॥ अमोघवागमो-  
 घाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरूपः सुभगस्त्या-  
 गी समयज्ञः समाहितः ॥ ६ ॥ सुस्थितः स्वा-  
 स्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः । अलेपो  
 निष्कलकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥ वश्ये-  
 द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेंद्रियः । प्रशां-  
 तोऽनंतधामर्षिमंगलं मलहानघः ॥ ८ ॥ अनी-  
 दृगुपमाभूतो दृष्टिर्देवमगोचरः । अमूर्तो मूर्ति-  
 मानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्म-  
 गम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवंदितः । सर्वत्रगः  
 सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः  
 चंद्रदो दांतो दमी क्षांतिपरायणः । अधिपः पर-

मानंदः परात्मज्ञः परात्परः ॥ ११ ॥ त्रिजगद्वल्ल-  
भोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः । त्रिजगत्पतिपूजां  
धिस्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥ १२ ॥

इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥ अर्घं

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः ।  
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १ ॥  
पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगविस्तरः । आदिदेवः  
पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥ युगमुख्यो  
युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः । कल्याणवर्णः  
कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥  
कल्याणः प्रकृतिदीप्तिः कल्याणात्मा विकल्मषः ।  
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः  
॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्वंधुर्जगाद्विभुः ।  
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ॥ ५ ॥  
चराचर गुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः । सद्यो-  
जातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥ ६ ॥  
आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।  
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ ७ ॥

तपनीयनिभस्तुंगो बालार्काभोऽनलप्रभः ।  
 संध्याभ्रभवभ्रूहेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ ८ ॥  
 निष्टप्तकनकच्छायः कनत्कांचनसन्निभः ।  
 हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुंभनिभप्रभः ॥ ९ ॥  
 द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजांबूनदद्युतिः । सुधौ-  
 तकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्वयुतिः ॥ १० ॥  
 शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरक्षमः । शत्रु  
 ध्नोप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः  
 ॥ ११ ॥ शांतिनिष्ठो मुनिज्ज्येष्ठः शिवतातिः शि-  
 वप्रदः । शांतिदः शांतिकृच्छांतिः कांतिमान्का-  
 मितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठ  
 प्रतिष्ठितः । सुस्थितः स्थावरः स्थाणुः प्रथीया-  
 न्प्रथितः पृथुः ॥ १३ ॥

इति त्रिकालदृश्यादिशतम् ॥ ६ ॥ अर्घं

दिग्वासा वातरशनो निर्भ्रथेशो निरंबरः ।  
 निष्किंचनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥  
 तेजोराशिरनंतौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।  
 तंजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥

जगच्चूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः । कलि-  
घ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥ ३ ॥  
अनिद्रालुरतंद्रालुर्जागरूकः प्रभामयः । लक्ष्मी-  
पतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितैः ॥४॥ मुमु-  
क्षुर्वंधमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः । प्रशांत  
रसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥ मूलकर्ता-  
खिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः । आप्तो वागी-  
श्वरः श्रेयाञ्छ्रयसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥ प्रवक्ता  
वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् । सुतनुस्तनु-  
निर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥ ७ ॥ श्रीशः श्री-  
श्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः । उत्सन्नदोषो  
निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥८॥ लोकोत्तरो  
लोकपतिलोकचक्षुरपारधीः । धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः  
शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥९॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो  
यतिर्नियमितेंद्रियः । भदंतो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृ-  
क्षो वरप्रदः ॥ १ ॥ समुन्मूलितकर्मारिः कर्म-  
काष्ठा शुशुक्षाणिः । कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेया-  
देयविचक्षणः ॥११॥ अनंतशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरा-



रिखिलोचनः । त्रिनत्रसेत्र्यंबकस्त्र्यक्षः केवल-  
 ज्ञानवीक्षणः ॥१२॥ समंतभद्रः शान्तारिर्धर्मा-  
 चार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शी जितानंगः कृपा-  
 लुर्धर्मदेशकः ॥१३॥ शुभंयुः शुखसाद्भूतःपुण्य  
 राशिरनामयः । धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्रा  
 ज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासादिशतं ॥१०॥ इत्याष्टाधिक सहस्रनामावली । अर्घ

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।  
 समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥  
 गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।  
 स्तोतां तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं लभेत्  
 ॥२॥ त्वमतोऽसि जगद्बंधुस्त्वमऽतोसि जगद्धि-  
 षक् । त्वमतोसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धि-  
 तः ॥३॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयो-  
 गभाक् । त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगं सोत्थानंतचतु-  
 ष्टयः ॥४॥ त्वं यंचब्रह्मतत्त्वात्मा पंचकल्याणना-  
 यकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥५॥  
 दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।

दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वरः ॥ ६ ॥  
 युष्मन्नाभावलीहृब्धाविलसत्स्तोत्रमालया । भवं-  
 तं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥ ७ ॥ इदं  
 स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः । यः स-  
 पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनं ॥८॥ ततः  
 सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः । पौरुहूतीं  
 श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥ ९ ॥ स्तुत्वेति  
 मधवा देवं चराचरजगद्गुरुं । ततस्तीर्थविहारस्य  
 व्यधात्प्रस्तावनामिमां ॥१०॥ स्तुतिः पुण्यगु-  
 णोत्कीर्तिः स्तोतः भव्यः प्रसन्नधीः । निष्ठिता-  
 र्थो भवांस्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखं ॥११॥

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं  
 कस्यचित् । ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता  
 स्वयं कस्यचित् ॥ यो नेतृन् नयते नमस्कृतिमल-  
 नंतव्यपक्षेक्ष्णः स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च  
 गुरुर्देवः पुरुः पावनः ॥१२॥ तं देवं त्रिदशाधिपा-  
 र्चितपदं घातिक्षयानंतरं । प्रोत्थानंतचतुष्टयं  
 जिनामिमं भव्याब्जनीनामिनं । मानस्तं भर्विलो-

कनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं । प्राप्ताचित्यव  
हिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवंदामहे ॥१३॥

पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

श्रीमान्तुङ्गाचार्य गिरचित आदिनाथ स्तोत्र

### भक्तामर स्तोत्रम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं द-  
लितपापतमोवितानं । सम्यक् प्रणम्य जिनपा-  
दयुगंयुगादा-वालंबनं भवजले पततां जनानां  
॥१॥यः संस्तुतःसकलवाङ्मयतत्त्वबोधादुद्भूत  
बुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-  
चित्तहरैरुदारैः, स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं  
जिनेन्द्रं ॥२॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपी-  
ठस्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहं । बालं वि-  
हाय जलसंस्थित मिन्दुर्विवमन्यः क इच्छतिज-  
नः सहसा गृहीतुं ॥३॥ वक्तुं गुणान्गुणसमुद्र  
शशांककांतान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि-  
बुद्ध्या । कल्पांतकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा

तरीतुमलमंबुनिधिं भुजाभ्यां ॥ ४ ॥ सोहं  
 तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश, कर्तुं स्तवं विग-  
 तशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य भृगी  
 मृगेंद्रं, नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थं  
 ॥५॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम, त्वद्भक्ति  
 रेव मुखरीकुरुते बलान्मां । यत्कोकिलः किल  
 मधौ मधुरं विरौति, तच्चाप्रचारुकलिकानिकरैक-  
 हेतु ॥६॥ त्वत्संस्तवेन भवसंततिसन्निवद्धं पापं  
 क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजां । आक्रांतलोकम-  
 लिनीलमशेषमाशु, सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमंध-  
 कारं ॥७॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमा-  
 रभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् । चेतो हरि-  
 ष्यति सतां नलिनीदलेषु, मुक्ताफलद्युतिमुपैति  
 ननूदविंदुः ॥८॥ आस्तां तवस्तवनमस्तसमस्त  
 दोषं, त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हंति । दूरे  
 सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव, पद्माकरेषु जलजानि  
 विकासभांजि ॥९॥ नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूत-  
 नाथ ! भूतैर्गुणैर्भुविभवंतमाभिष्टुवंतः । तुल्या

भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा, भूत्याश्रितं यद्दह  
 नात्मसमं करोति ॥ १० ॥ दृष्ट्वा भवंतमनिमेष-  
 विलोकनीयं, नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः  
 पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिंधोः क्षारं जलं  
 जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शांतराग-  
 रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं निर्मापितः स्त्रिभुवनैक  
 ललामभूत । तावंत एव खलु तेप्यणवः पृथि-  
 व्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥ १२ ॥  
 वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि, निश्शेषनिर्जित-  
 जगत्त्रितयोपमानं । विंबं कलंकमलिनं क्व नि-  
 शाकरस्य, यद्वासरे भवतिपांडुपलाशकल्पं ॥ १३ ॥  
 संपूर्णं मंडलशशांककलाकलाप-शुभ्रा गुणास्त्रि-  
 भुवनं तव लंघयन्ति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-  
 नाथमेकं, कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टं  
 ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-  
 नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गं । कल्पांत-  
 कालमरुता चलिताचलेन, किं मंदराद्रिशिखरं  
 चालेतं कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्तिरपवर्जित-

तैलपूरः, कृत्स्नं जगत्रयमिदं प्रगटीकरोषि ।  
 गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां दीपोऽप-  
 रस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥ १६ ॥ नास्तं  
 कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि  
 सहसा युगपज्जगंति । नांभोधरोदरनिरुद्धमहा-  
 प्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनींद्र लोके  
 ॥१७॥ नित्योदयं दलितमोहमहांधकारं, गम्यं  
 न राहुवदनस्य न वारिदानां । विभ्राजते तव  
 मुखाब्जमनल्पकांति, विद्योतयज्जगदपूर्वशशांक-  
 विंबं ॥१८॥ किं शर्वरीषु शशिनाडि विवस्वता  
 वा, युष्मन्मुखेंदुदलितेषु तमस्सु नाथ । निष्पन्न  
 शालिवनशालिनि जीवलोकं, कार्यं कियज्जल-  
 धरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि वि-  
 भाति कृतावकाशं, नैवं तथा हरिहरादिषु नाय-  
 केषु । तेजःस्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं, नैवं  
 तु काचशकले किरणाकुलेपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं  
 हरिहरादय एव दृष्ट्या दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि  
 तोषमेति । किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः

कश्चिन्मनो हरति नाथ भवांतरेपि ॥२१॥ स्त्रीणां  
 शतानि शतसो जनयन्ति पुत्रान्, नान्या सुतं  
 त्वदुपमं जननी प्रसूता । सर्वा दिशो दधाति भानि  
 सहस्ररश्मिं, प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजा  
 लं ॥२२॥ त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसमा-  
 दित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् । त्वामेव सम्य-  
 गुपलभ्य जयन्ति मृत्युं, नान्यः शिवश्शिवपदस्य  
 मुनींद्र पंथाः ॥ २३ ॥ त्वामव्ययं विभुमचिंत्यम-  
 संख्यमाद्यं, ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनंगकेतुं । योगी-  
 श्वरं विदितयोगमनेकमेकं, ज्ञानस्वरूपममलं प्रव-  
 दन्ति संतः ॥ २४ ॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबु-  
 द्विबोधात्, त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात् ।  
 धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद् व्यक्तं त्व-  
 मेव भगवन्पुरुषोत्तमोसि ॥२५॥ तुभ्यं नमस्त्रि-  
 भुवनार्तिहराय नाथ, तुभ्यं नमः क्षितितलामल-  
 भूषणाय । तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय, तुभ्यं  
 नमो जिनभवोदाधिशोषणाय ॥२६॥ को विस्म-  
 योत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवका-

शतया मुनीश । दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः  
 स्वप्नांतरेपि न कदाचिदपीक्षितोसि ॥ २७ ॥  
 उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं  
 भवतो नितांतं । स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमो-  
 वितानं, विंबं रवेरिवपयोधरपार्श्ववर्ति ॥ २८ ॥  
 सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते  
 तव वपुः कनकावदातं । विंबं वियद्विलसदंशु-  
 लतावितानं तुंगोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः  
 ॥२९॥ कुंदावदातचलचामरचारुशोभं, विभ्राजते  
 तव वपुः कलधौतकांतं । उद्यच्छशांकशुचिनि-  
 र्झरवारिधारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौंभं  
 ॥३०॥ छत्रत्रयं तव विभाति शशांककांतमुच्चै-  
 स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापं । मुक्ताफलप्रकर-  
 जालविवृद्धशोभं, प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वर-  
 त्वं ॥ ३१ ॥ गंभीरताररवपूरितदिग्विभागस्रै-  
 लोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः । सद्धर्मराज-  
 जयघोषणघोषकः सन्, खे दुंदुभिर्ध्वनति ते  
 पशसः प्रवादी ॥ ३२ ॥ मंदारसुंदरनमेरुसुपा-



रिजातसंतानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा । गंधो-  
दविंदुशुभमंदमरुत्प्रयाता, दिव्यादिवः पतति ते  
वयसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुंभत्प्रभावलयभूरि-  
विभा विभोस्ते, लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षि-  
पंती । प्रोद्यद्दिवाकरनिरंतरभूरिसंख्या, दीप्त्या  
जयत्यपि निशामपि सोमसोम्यां ॥ ३४ ॥ स्व-  
र्गापवर्गगममार्गविमार्गणेषु, सद्धर्मतत्त्वकथनैक-  
पटुस्त्रिलोक्याः । दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थ  
सर्व भाषास्वभावपरिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥ ३५ ॥  
उन्निद्रहेमनवपंकजपुंजकांती, पर्युल्लसन्नखमयू-  
खशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र जिने-  
द्र ! धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति  
॥ ३६ ॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेद्र, धर्मो-  
पदेशनविधौ न तथा परस्य । यादृक्प्रभा दिन-  
कृतः प्रहतांधकारा तादृक् कुतो ग्रहगणस्य वि-  
काशिनोपि ॥ ३७ ॥ श्योतन्मदाविलविलो-  
लकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपं ।  
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतंतं, दृष्ट्वा भयं भवति

नो भवदाश्रितानां ॥ ३८ ॥ भिन्नेभकुंभगलदु-  
 ज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभा-  
 गः । बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोपि, नाक्रा-  
 मति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥ ३९ ॥ कल्पांत-  
 कालपवनोद्धतवह्निकल्पं, दावानलंज्वलितमु-  
 ज्ज्वलमुत्स्फुलिंगं । विश्वं जिघित्सुमिव संमुख-  
 मापतंतं, त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषं ॥४०॥  
 रक्तेक्षणं समदकोकिलकंठनीलं, क्रोधोद्धतं फ-  
 णिनमुत्फणमापतंतं । आक्रामति क्रमयुगेण नि-  
 रस्तशंकस्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः  
 ॥४१॥ बलात्तुरंगगजगार्जितभीमनादमाजौ बलं  
 बलवतामपि भूपतीनां । उद्यद्दिवाकरमयूखशि-  
 खापविद्धं, त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति  
 ॥ ४२ ॥ कुंताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगा-  
 वतारतरणातुरयोधभीमे । युद्धे जयं विजितदु-  
 र्जयजेयपक्षास्, त्वत्पादपंकजवना श्रयिणो लभंते  
 ॥ ४३ ॥ अंभोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपा-  
 ठीनपीठभयदोल्बणवाडवाग्नौ । रंगत्तरंगशिरु

रस्थितयानपात्रास् त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्  
 व्रजंति ॥४४॥ उद्भूत भीषणजलोदरभारभुग्नाः  
 शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः । त्वत्पा-  
 दपंकजरजोमृतदिग्धदेहा, मर्त्या भवन्ति मकर-  
 ध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकंठमुरुशृंखल  
 वेष्टितांगा, गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघाः ।  
 त्वन्नाममंत्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः, सद्याः स्वयं  
 विगतबंधभयाभवन्ति ॥४६॥ मत्तद्विप्रेन्द्रमृगराज-  
 दवानलाहिसंग्रामवारिधिमहोदरबंधनोत्थं । त-  
 स्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव, यस्तावकं स्त-  
 वमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्र स्रजं तव  
 जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां, भक्त्या मया विविधवर्णवि-  
 चित्रपुष्पां । धत्ते जनो य इह कंठगतामजस्रं, तं  
 मानतुंगमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

धत्ते श्रीमानतुंगाचार्य विरचितमादिनाथस्तोत्रं समाप्तम् ॥

**अथ भक्तमर भाषा ।**

आदिपुरुष आदीश जिन, आदि सुविधिकरतार ।  
 धरमधुरंधर परमगुरु, नमो आदि अवतार ॥१॥

सुरनतमुकुट रतन छवि करै । अंतर पापतिमि-  
र सब हरै ॥ जिनपद बंदों मनवचकाय । भव-  
जलपतित-उधरनसहाय ॥ १ ॥ श्रुतपारग  
इंद्रादिक देव । जाकी थुति कीनी कर सेव ॥  
शब्द मनोहर अरथ विशाल । तिस प्रभुकी वर-  
नों गुनमाल ॥२॥ विबुधवंद्यपद में मतिहीन । हो  
निलज्ज थुति-मनसा कीन । जलप्रतिविंब बुद्ध  
को गहै । शशिमंडल बालक ही चहै ॥३॥ गुन-  
समुद्र तुमगुन अविकार । कहत न सुरगुरु पावै  
पार ॥ प्रलयपवनउद्धत जलजंतु । जलधि तिरै  
को भुजबलवंतु ॥ ४ ॥ सो में शक्तिहीन थुति  
करूं । भक्तिभाववश कछु नहिं डरूं ॥ ज्यों मृगि  
निजसुतपालन हेत । मृगपतिसन्मुख जाय  
अचेत ॥५॥ में शठ सुधीहँसनको धाम । मुझ तव  
भक्ति बुलावै राम ॥ ज्यों पिक अंबकलीपरभाव ।  
मधुऋतु मधुर करै आराव ॥६॥ तुमजस जंपत  
जन छिनमाहिं । जनम जनमके पाप नशाहिं ॥

ज्यों रवि उगै फटे ततकाल । अलिवत नील  
 निशातमजाल ॥ तुव प्रभावतैं कहूं विचार ।  
 होसी यह थुति जनमनहार ॥ ज्यों जलकमल-  
 पत्रपै परै । मुक्ताफलकी द्युति विस्तरै ॥८॥ तुम  
 गुनमाहिमा हतुदुखदोष । सो तो दूर रहो सुख-  
 पोष । पापविनाशक है तुम नाम । कमलविका-  
 शी ज्यों रविधाम ॥ ९ ॥ नहिं अचंभ जो होहिं  
 तुरंत । तुमसे तुमगुण वरणत संत ॥ जो अधी-  
 नको आपसमान । करै न सो निंदित धनवान  
 ॥१०॥ इकटक जन तुमको अविलोय । अवर-  
 विषै रति करै न सोय ॥ कोकरि क्षीरजलधिजल  
 पान । क्षारनीर पीवै मतिमान ॥११ प्रभु तुम  
 बीतराग गुनलीन । जिन परमाणु देह तुम कीन  
 हैं तितने ही ते परमाण । यातैं तुम सम रूप न  
 आन ॥१२॥ कहँ तुम मुख अनुपम अविकार ।  
 सुरनरनागनयनमनहार । कहां चंद्रमंडल सक-  
 लंक । दिनमें ढाकपत्र समरंक ॥ १३ ॥ पूरन-  
 चंद्र जोति छविवंत । तुमगुन तीनजगत लघंत

एकनाथ त्रिभुवन आधार । तिन विचरतको  
 करै निवार ॥१४॥ जों सुरतिय विभ्रम आरंभ ।  
 मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ ॥ अचल चला-  
 व प्रलय समीर । मेरुशिखर डगमगै न धीर  
 ॥१५॥ धूमरहित वाती गतनेह । परकाशै त्रिभु-  
 वन घर एह ॥ वातगम्य नाहीं परचंड । अपर  
 दीप तुम बलो अखंड ॥ १६ ॥ छिपहु न लुपहु  
 राहुकी छांहि । जगपरकाशक हो छिनमांहि ॥  
 घन अनवर्त दाह विनिवार । रवितैं अधिक धरो  
 गुणसार ॥१७॥ सदा उदित विदलित मनमोह  
 विघटित मेघराहु अविरोह ॥ तुम मुखकमल  
 अपूरवचंद । जगतविकाशी जोति अमंद ॥१८॥  
 निशादिन शशि रविको नहिं काम । तुम मुख  
 चंद हरेँ तमधाम ॥ जो स्वभावतैं उपजै नाज  
 सजल मेघ तो कौनहु काज ॥१९॥ जो सुबोध  
 सोहै तुममांहि । हरि हर आदिकमें सो नाहिं ॥  
 जो श्रुतिं महारतनमें होय । काजखंड पावै नहिं  
 सोय ॥२०॥

सराग देव देख में भला विशेष मानिया ।  
 स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥  
 कलू न तोहिं देखके जहां तुही विशेषिया ।  
 मनोग चित्तचोर और भूलहू न पेखिया ॥२१॥  
 अनेक पुत्रवंतिनी नितंविनी सपूत हैं । न तो-  
 समान पुत्र और माततैं प्रसूत हैं ॥ दिशा ध-  
 रंत तारिका अनेक कोटि को गिनै । दिनेश  
 तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै ॥२२॥ पुरान  
 हो पुमान हो पुनीत पुन्यवान हो । कहैं मुनीश  
 अंधकारनाशको सुभान हो ॥ महंत तोहि जा-  
 नके न होय वश्य कालके । न और भौहि मो-  
 खपंथ देय तोहि टालके ॥२३॥ अनंत नित्य  
 चित्तकी अगम्य रम्य आदि हो । असंख्य सर्व-  
 व्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो ॥ महेश का-  
 मकेतु योग ईश योग ज्ञान हो । अनेक एक  
 ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो ॥२४॥ तुही जिनेश  
 बुद्ध है सुबुद्धिके प्रमानतैं तुही जिनेश शंकरो

जगत्त्रये विधानतै ॥ तुही विधात है सही  
सुमोखपंथ धारतै । नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके  
विचारतै ॥ २५ ॥ नमों करूं जिनेश तोहि  
आपदा निवार हो । नमों करूं सुभूरि भूमिलो-  
कके सिंगार हो ॥ नमों करूं भवाब्धिनीरराशि-  
शोषहेतु हो । नमों करूं महेश तोहि मोखपंथ  
देतु हो ॥ २६ ॥

चौपाई १५ मात्रा

तुम जिन पूरनगुनगन भरे । दोष गर्वकरि  
तुम परिहरे ॥ और देवगण आश्रय पाय । स्वप्न  
न देखे तुम फिर आय ॥ २७ ॥ तरुअशोकतर  
किरन उदार । तुमतन शोभित है अविकार ॥  
मेघनिकट ज्यों तेज फुरंत । दिनकर दिपै  
तिमिर निहनंत ॥ २८ ॥ सिंहासन मनिकिरन-  
विचित्र । तापर कंचनवरन पवित्र ॥ तुमतन-  
शोभित किरनविथार । ज्यों उदयाचल रवित-  
महार ॥ २९ ॥ कुंदपुहुपसितचमर दुरंत । कन-  
कवरन तुमतन शोभंत ॥ ज्यों सुमेरुतट



निर्मल कांति । झरना झरै नीर उमगांति ॥३०  
 ऊंचे रहें सूर दुति लोप । तीन छत्र तुम  
 दिपें अगोप ॥ तीन लोककी प्रभुता कहें  
 मोती झालरसों छवि लहें ॥ ३१ ॥  
 दुंदुभि शब्द गहर गंभीर । चहुँदिशि होय  
 तुम्हारै धीर ॥ त्रिभुवनजन शिवसंगम करै ।  
 मानूं जय जय ख उच्चरै ॥३२॥ मंद पवन गंधोदक  
 इष्ट । विविध कल्पतरु पुहपसुवृष्ट ॥ देव करैं  
 विकसित दल सार । मानों द्विजपंकति अवतार  
 ॥ ३३ ॥ तुमतन-भामंडल जिनचंद । सब  
 दुतिवंत करत है मंद ॥ कोटिशंख रवितेज  
 छिपाय । शशिनिर्मलनिशि करै अछाय ॥३४॥  
 स्वर्गमोखमारगसंकेत । परमधरम उपदेशनहेत  
 दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध । सबभाषागर्भित  
 हितसाध ॥३५॥

दोहा—विकसितसुवरनकमलदुति, नखदुति-  
 मिलि चमकाहिं । तुमपद पदवी जहँ धरो, तहँ  
 सुर कमल रचाहिं ॥३६॥ ऐसी महिमा तुमविषै,

और धरै नहिं कोय । सूरजमें जो जोत है,  
नहिं तारागण होय ॥ ३७ ॥

षट्पद-मदअवलिप्तकपोल-मूल अलिङ्गुल  
झंकारै । तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत-  
अति धारै ॥ कालवरन विकराल, कालवतसग  
मुख आवै । ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय  
उपजावै ॥ देखि गयंद न भय करै तुम पदमहि-  
मा छीन । विपतिरहित संपतिसहित, वररौ  
भक्त अदीन ॥ ३८ ॥ अति मदमत्तगयंद कुंभ-  
थल नखन विदारै । मोती रक्त समेत डारि  
भूतल सिंगारै ॥ बांकी दाढ विशाल, वदनमें  
रसना लोलै । भीमभयानकरूप देखि जन थर-  
हर डोलै ॥ ऐसे मृगपति पगतलैं, जो नर आयो  
होय । शरण गये तुम चरणकी, बाधा करै न  
सोय ॥ ३९ ॥ प्रलयपवनकर उठी आग जो तास  
पटंतर । बमैं फुलिंग शिखा उतंग परजलैं निरं-  
तर ॥ जगत समस्त निगल भस्मकर हैगी मानों  
तडतडाट दवअनल, जोर चहुंदिशा उठानों ॥

सो इक छिनमें उपशमें, नामनीर तुम लेत ।  
 होय सरोवर परिनमै विकसित कमल समेत ॥  
 ॥४०॥ कोकिलकंठसमान, श्याम तन क्रोध ज-  
 लंता । रक्तनयन फुंकार, मारविषकण उगलंता ॥  
 फणको ऊंचो करै, वेग ही सन्मुख धाया । तब  
 जन होय निशंक, देख फणपतिको आया ॥ जो  
 चांपै निज पगतलैं, व्यापै विष न लगार । नाग-  
 दमनि तुम नामकी है जिनके आधार ॥ ४१ ॥  
 जिस रनमाहिं भयानक रवकर रहे तुरंगम ।  
 घनसे गज गरजाहिं मत्त मानों गिरि जंगम ॥  
 अति कोलाहलमाहिं बात जहँ नाहिं सुनीजै ।  
 राजनको परचंड, देख बल धीरज छीजै ॥ नाथ  
 तिहारे नामतैं सो छिनमांहि पलाय । ज्यों दिन-  
 कर परकाशतैं अंधकार विनशाय ॥ ४२ ॥ मारै  
 जहां गयंद कुंभ हथियार विदारै । उमगै रुधिर  
 प्रवाह बेग जलसम विस्तारै ॥ होय तिरन अस  
 मर्थ महाजोधा बलपूरे । तिस रनमें जिन तोर  
 भक्त जे हैं नर सूरे ॥ दुर्जय अरिकुल जीतके,

जय पावैं निकलंक । तुम पद पंकज मन  
बसै ते नर सदा निशंक ॥४३॥ नक्र चक्र मग-  
रादि मच्छकरि भय उपजावै । जामैं बडवा  
अग्नि दाहतै नीर जलावै ॥ पार न पावै जास  
थाह नहिं लहिये जाकी । गरजै अतिगंभीर,  
लहरकी गिनति न ताकी ॥ सुखसों तिरै समु-  
द्रको, जे तुमगुनसुमराहिं । लोलकलोलनके  
शिखर, पार यान ले जाहिं ॥४४॥ महा जलो-  
दर रोग, भार पीडित नर जे हैं । वात पित्त  
कफ कुष्ठ आदि जो रोग गहै हैं ॥ सोचत रहैं  
उदास नाहिं जीवनकी आशा । अति घिनावनी  
देह, धरैं दुर्गाधि निवासा ॥ तुम पदपंकजधूल-  
को, जो लावैं निज अंग । ते नीरोग शरीर  
लहि, छिनमें होय अनंग ॥ ४५ ॥ पांव कंठतैं  
जकर बांध सांकल अति भारी । गाढी बेडी  
पैरमांही, जिन जांघ विदारी ॥ भूख प्यास चिंता  
शरीर दुख जे विललाने । सरन नाहिं जिन  
कोय भूपके बंदीखाने ॥ तुम सुमरत स्वयमेव ही

बंधन सब खुल जाहिं । छिनमें ते संपति लहै,  
 चिंता भय विनसाहिं ॥ ४६ ॥ महामत्त गजराज  
 और मृगराज दवानल । फणपाति रणपरचंड  
 नीरनिधि रोग महाबल ॥ बंधन ये भय आठ  
 डरपकर मानों नाशै । तुम सुमरत छिनमाहिं  
 अभय थानक परकाशै ॥ इस अपार संसारमें  
 शरन नहीं प्रभु कोय । यातैं तुम पदभक्तको  
 भक्ति सहाई होय ॥ ४७ ॥ यह गुनमाल विशाल  
 नाथ तुम गुनन सँवारी । विविधवर्णमय पुहुप  
 गूथ मैं भक्ति विथारी ॥ जे नर पाँहर कंठ भाव-  
 ना मनमें भावैं । मानतुंग ते निजाधीन शिवल-  
 छमी पावैं ॥ भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हित  
 हेत । जे नर पढैं सुभावसों, ते पावैं शिवश्वेत  
 ॥ ४८ ॥ इति ।

**जेनधर्म सम्बन्धी चिन्त्र ग्रंथ शास्त्र**

मिलनेका एकमात्र पता—

जिनबाणी प्रचारक कार्यालय,

नं० १६११, हरीसन रोड, कलकत्ता ।

१८५

## । मोक्षशास्त्रं ।

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृतां ।

ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां बंदे तद्गुणलब्धये ॥

श्रौकाल्यं द्रव्यपट्टकं नत्रपदसहितं जीवषट्कायलेश्याः ।

पंचान्ये चास्तिकाया वृतसमितिगतिज्ञानचारित्रभेदाः ॥

इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्विरीशैः ।

प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥

सिद्धे जयप्पसिद्धे, चउविहाराहणाफलं पत्ते ।

वंदित्ता अरहंते, वोच्छं आराहणा कमसो ॥ २ ॥

उज्जोवणमुज्जवणंणिब्बाहणं साहणं च णिउरणं ।

इंसणणाणचरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥ ३ ॥

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं ॥ २ ॥ तन्निसर्गाद-

धिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवास्रवबंधसंवरनिर्ज-

रामोक्षास्तत्त्वं ॥ ४ ॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्त-

न्न्यासः ॥ ५ ॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ नि-

र्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणास्थितिविधानतः । ७

सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालांतरमाधाल्पबहुत्वैश्च ॥

॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानं

॥ ९ ॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्ये परोक्षं ॥ ११ ॥

प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिंता-  
 भिनिबोध इत्यनर्थांतरं ॥ १३ ॥ तदिन्द्रियानिन्द्रि-  
 यनिमित्तं ॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥१५॥  
 बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणां  
 ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यंजनस्यावग्रहः ॥१८॥  
 न चक्षुरनिन्द्रियाभ्यां ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्रव्य-  
 नेकद्वादशभेदं ॥ २० ॥ भवप्रत्ययोवधिर्देवनार-  
 काणां ॥ २१ ॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः  
 शेषाणां ॥ २२ ॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः  
 ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥  
 विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः  
 ॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु  
 ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनंतभागे मनः  
 पर्ययस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य  
 ॥ २९ ॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना-  
 चतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च  
 ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्त-  
 यत् ॥३२॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसम-

भिरूढैवंभूता नयाः ॥ ३३ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रं प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य  
स्वतत्त्वमौदायिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विन-  
बाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमं ॥ २ ॥ स-  
म्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोप-  
भोगवीर्याणि च ॥ ४ ॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्च-  
श्चतुस्त्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंय-  
माश्च ॥ ५ ॥ गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञाना-  
संयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्येकैकैकैकभेदाः  
॥ ६ ॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥ उप-  
योगो लक्षणं ॥ ८ ॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥  
संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥ समनस्कासनस्काः  
॥ ११ ॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥ पृथि-  
व्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥ द्वी-  
न्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १४ ॥ पंचेंद्रियाणि ॥ १५ ॥  
द्विविधानि ॥ १६ ॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येंद्रियं  
॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगो भावेंद्रियं ॥ १८ ॥ स्प-



शंनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ १६ ॥ स्पर्शरस-  
 गंधवर्णशब्दास्तदर्थः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य  
 ॥ २१ ॥ वनस्पत्यंतानामेकं ॥ २२ ॥ कृमिपि-  
 पीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥ २३ ॥  
 संज्ञिनःसमनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः  
 ॥ २५ ॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥ अविग्रहा  
 जीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक्  
 चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥ २९ ॥ एकं  
 द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥ ३० ॥ समूर्च्छनगर्भोपपादा  
 जन्म ॥ ३१ ॥ सचित्तशीतसंवृताःसेतरा मिः  
 श्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजांडजपो  
 तानां गर्भः ॥ ३३ ॥ देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥  
 शेषाणां सम्मूर्च्छनं ॥ ३५ ॥ औदारिकवैक्रियि-  
 काहारकतैजसकर्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥ परं  
 परं सूक्ष्मं ॥ ३७ ॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्  
 तैजसात् ॥ ३८ ॥ अनंतगुणे परे ॥ ३९ ॥ अ-  
 प्रतीघाते ॥ ४० ॥ अनादिसंबंधे च ॥ ४१ ॥  
 सर्वस्य ॥ ४२ ॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदे-

कस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमंत्यं ।४४।  
 गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यं ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रि-  
 यिकं ॥ ४६ ॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥ तैज-  
 समपि ॥ ४८ ॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहा-  
 रकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ४९ ॥ नारकसंमूर्च्छिनो  
 नपुंसकानि ॥ ५० ॥ न देवाः ॥ ५१ ॥ शेषास्त्रि-  
 वेदाः ॥ ५२ ॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्ये-  
 यवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

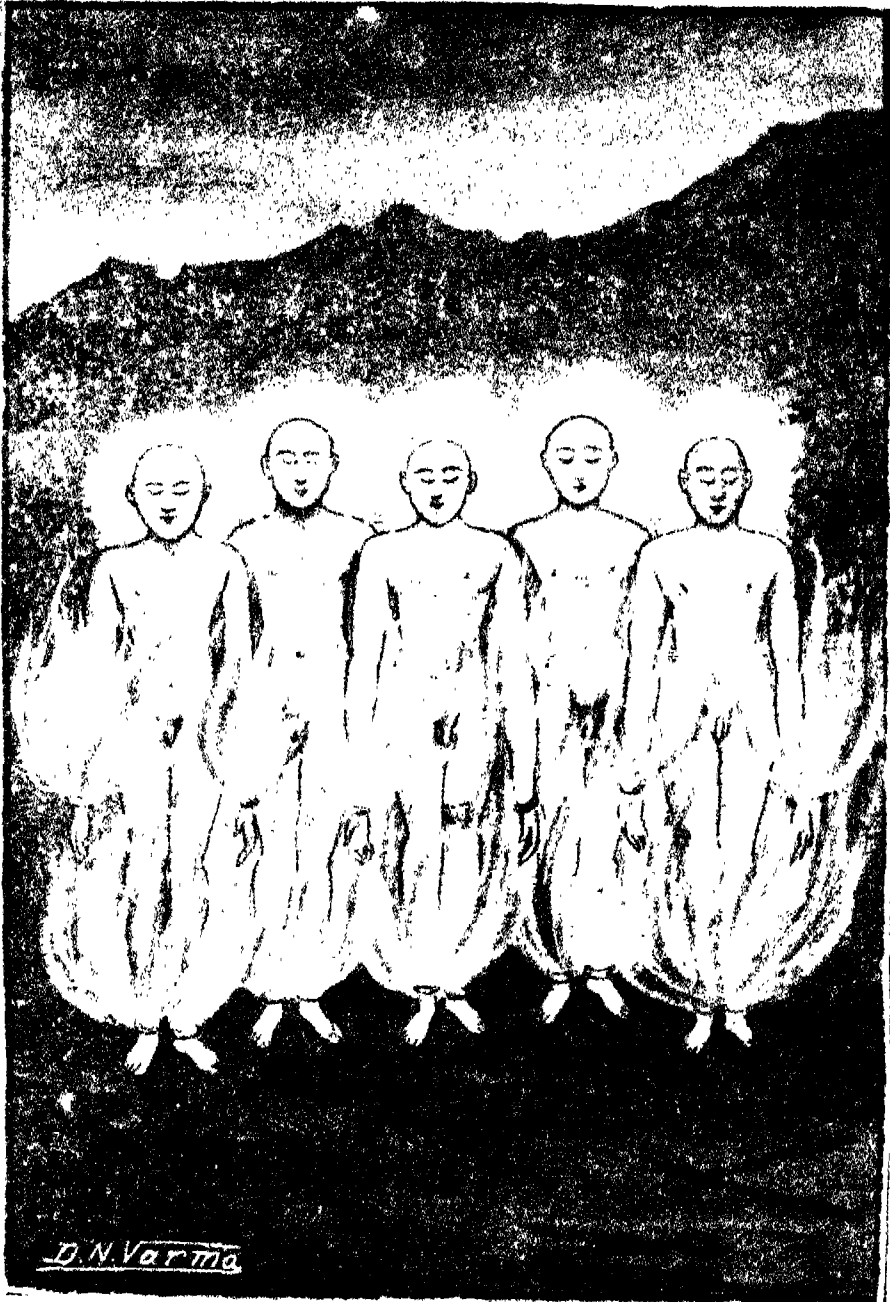
इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रो द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

रत्नशर्कराबालुकापंकघूमतमोमहातमःप्रभा-  
 भूमयो घनांबुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः  
 ॥ १ ॥ तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रिप-  
 चोनैकनरकशतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमं  
 ॥२॥ नारका नित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेह-  
 वेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥ परस्परोदीरितदुःखाः  
 ॥ ४ ॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् च-  
 तुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंश-  
 तित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परा स्थितः

॥ ६ ॥ जंबूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वी-  
 पसमुद्राः ॥ ७ ॥ द्विर्द्विर्विष्कंभाः पूर्वपूर्वपरिक्षे-  
 पिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥ तन्मध्ये मेरुना भिवृ-  
 त्तो योजनशतसहस्रविष्कंभो जंबूद्वीपः ॥ ९ ॥  
 भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरग्यवतैरावतवर्षाः  
 क्षेत्राणि ॥ १० ॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता  
 हिमवन्महाहिमवन्निषिधनीलरुक्मिशेस्वारिणो व-  
 र्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्य-  
 रजतहेममयाः ॥ १२ ॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि-  
 मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मति-  
 गिच्छकेशरिमहापुंडरीकपुडरीकाहदास्तेषामुपरि  
 ॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तद्विष्कं-  
 भो हदाः ॥ १५ ॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥  
 तन्मध्ये योजनं पुष्करं ॥ १७ ॥ तद्विगुणा द्विद्वि-  
 गुणा हदाः पुष्कराणि च ॥ १८ ॥ तन्निवासि-  
 न्यो देव्यः श्रीहीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्यो-  
 पमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ १९ ॥ गं-  
 गासिंधुरोहिद्रोहितास्याहरिद्वारिकांतासतिासी-

तोदानारीनरकांतासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः  
सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः  
पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतु-  
र्दशनदीसहस्रपरिवृता गंगासिंधवादयो नद्यः  
॥ २३ ॥ भरतः षड्विंशतिपंचयोजनशतविस्तारः  
षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥ २४ ॥ तद्-  
द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहांताः  
॥ २५ ॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥ भरतै-  
रावतयोर्वृद्धिहासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवस-  
र्पिणीभ्यां ॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा भूमयाऽवस्थि-  
ताः ॥ २८ ॥ एकद्वित्रिपल्योपमास्थितयो हैमवत-  
कहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥  
विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३१ ॥ भरतस्य वि-  
ष्कंभो जंबूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥ द्वि-  
र्द्धातकीखंडे ॥ ३३ ॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥  
प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्याम्ले-  
च्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयो-  
ऽन्यत्र देवकुरुत्तरकुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थिती

# सच्चा जिनवाणी संग्रह—



पांचों पाण्डवोंका घोर परोपह द्वारा निर्वाण गमन ।

( पांडव पुराण )

सच्चा जिनवाणी संग्रह —



रानी केतुमती अंजनाके संबन्धमें बसन्तमाला पर वार कर रही है ।  
( अंजना नाटक )

परावरे त्रिपल्योपमांतर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्यो-  
निजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थसिद्धयाम् मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितास्त्रिषु पीतांत-  
लेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपंचद्वादशविकल्पाः कल्पो-  
पपन्नपर्यताः ॥ ३ ॥ इंद्रसामानिकत्रायस्त्रिंशत्पा-  
रिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्य-  
किल्बिषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंशल्लोकपाल-  
वर्ज्या व्यंतरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः  
॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥  
शेषाः स्पर्शरूपशब्दभनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽ-  
प्रवीचाराः ॥ ९ ॥ भवनवासिनोसुरनागविद्युत्सु  
पर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कमाराः ॥१०॥  
व्यंतराः किन्नरकिंपुरुषमहोरगगंधर्वयक्षराक्षस-  
भूतपिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्याचंद्रमसौ  
ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा  
नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालवि-  
भागः ॥ १४ ॥ वहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमा-

निकाः ॥ १६ ॥ कल्योपपन्नाः कल्पातीताश्च  
॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशानसानत्कुमार-  
माहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलांतवकापिष्ठशुक्रमहाशुक्रश  
तारसहश्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु  
त्रैवेयकेषु विजयवैजयंतजयंतापराजितेषु सर्वार्थ-  
सिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्या  
विशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोधिकाः ॥२०॥ गति-  
शरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥ २१ ॥ पीत-  
पद्मशुक्लेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्त्रैवेयके  
भ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकांतिकाः  
॥२४॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिता-  
व्याबाधारिष्ठाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्विचरमाः  
॥२६॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः  
॥२७॥ स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरो  
पम-त्रिपल्योपमार्धहीनमिताः ॥२८॥ सौधर्मैशान-  
योसागरोपमऽधिके ॥२९॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः  
सप्त ॥ ३० ॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपंचदश-  
भिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकै-



केन नवसु त्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ  
 च ॥ ३२ ॥ अपरा पत्योपममधिकं ॥ ३३ ॥  
 परतः परतः पूर्वापूर्वानंतराः ॥ ३४ ॥ नारका-  
 णां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्षसहस्राणि  
 प्रथमायां ॥ ३६ ॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥ व्यंत-  
 राणां च ॥ ३८ ॥ परापत्योपममधिकं ॥ ३९ ॥  
 ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥  
 लौकांतिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषां ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्या-  
 णि ॥ २ ॥ जीवाश्च । ३ । नित्यावस्थितान्यरू-  
 पाणि । ४ । रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आ आका-  
 शादेकद्रव्याणि । ६ । निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥  
 असंख्येयाः प्रदेशाधर्माधर्मैकजीवानां ॥ ८ ॥ आ-  
 काशस्यानंताः ॥ ९ ॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गला-  
 नां ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशोऽवगाहः  
 ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदेशादि-  
 भाज्यः पुद्गलानां । १४ । असंख्येयभागादिषु

जीवानां ॥१५॥ प्रदेश संहारविसर्पाभ्यां प्रदीप-  
 वत् ॥१६॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपका-  
 रः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीरवा-  
 ह्मनः प्राणापानाः पुद्गलानां ॥१९॥ सुखदुःखजी-  
 वितमरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवा-  
 नां ॥ २१ ॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे  
 च कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगंधवर्णवंतः पुद्गलाः  
 ॥ २३ ॥ शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतम-  
 श्छायातपोद्योतवंतश्च ॥ २४ ॥ अणवस्कंधाश्च  
 ॥ २५ ॥ भेदसंघातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥ २६ ॥ भेदादणुः  
 ॥२७॥ भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥ सद्द्रव्य-  
 लक्षणं ॥२९॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥  
 तद्भावाव्ययं नित्यं ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः  
 ॥३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्धंधः ॥ ३३ ॥ न जघन्यगु-  
 णानां ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानां ॥३५॥ द्व्यधि-  
 कादिगुणानां तु ॥३६॥ बंधेऽधिकौपारिणामिकौ  
 च ॥३७॥ गुणपर्ययवद्द्रव्यं ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥  
 सौऽनंतसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः

। ४१ । तद्भावः परिणामः । ४२ ।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनःकर्मयोगः ॥१॥ स आस्रवः ॥२॥  
शुभःपुण्यस्याशुभःपापस्य ॥३॥ सकषायाकषा-  
ययोः सांपरायिकेर्यापथयोः ॥४॥ इंद्रियकषाया-  
व्रतक्रियाः पंच चतुः पंच पंचविंशतिसंख्याः पूर्व-  
स्यभेदाः ॥५॥ तीव्रमंदज्ञाताज्ञातभावाधिकरण-  
धीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः । ६॥ अधिकरणं जीवा-  
जीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरंभसमारंभारंभयोगकृत-  
कारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः  
। ८ । निर्वतनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रि-  
भेदाः परं । ९ । तत्प्रदोषनिहवमात्सर्यान्तरायासा-  
दनोपघाता ज्ञानदर्शनावर्णयोः ॥ १० ॥ दुःख-  
शोकतापाक्रंदनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्था-  
नान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूतवृत्त्यनुकंपादानसरा-  
गसंयमादियोगः क्षांतिः शौचमिति सद्देद्यस्य  
॥१२॥ केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शन-  
मोहस्य ॥१३॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारि-

त्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारंभपरिग्रहत्वं नारकस्या-  
 युषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पा-  
 रंभपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥ स्वभावमार्दवं च  
 ॥१८॥ निःशीलव्रतित्वं च सर्वेषां ॥१९॥ सरा-  
 गसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दै-  
 वस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता-  
 विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं  
 शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसंपन्नता शी-  
 लव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्षणज्ञानोपयोगसंवेगौ श-  
 क्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणम-  
 र्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावस्यकापरिहाणि-  
 मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्व-  
 स्य ॥२४॥ परात्मनिंदाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छा-  
 दनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो  
 नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरण-  
 मंतरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

द्विसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतं ॥१॥

देशसर्वतोणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थं भावना पंच  
 पंच ॥३॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्या-  
 लोकितपानभोजनानि पंच ॥४॥ क्रोधलोभभी-  
 रुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच  
 ॥५॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरण-  
 भैक्ष्यशुद्धिसद्धर्माविसंवादाः पंच ॥ ६ ॥ स्त्रीरा-  
 गकथाश्रवणतन्मनोहरांगानिरीक्षणपूर्वरतानुस्म-  
 रणवृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच ॥७॥  
 मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरोगद्वेषवर्जनानि पंच  
 ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनं ॥९॥  
 दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्य-  
 स्थ्यानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनियेषु  
 ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थं  
 ॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥  
 असदभिधानमनृतं ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयं  
 ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥१७॥  
 निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥  
 अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदंडविरति-

सामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणा  
तिथिसंविभागव्रतसंपन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणांति  
कीं सल्लेखनां जोषिता ॥ २२ ॥ शंकाकांक्षावि-  
चिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरती-  
चाराः ॥ २३ ॥ व्रतशीलेषु पंच पंच यथा-  
क्रमं ॥ २४ ॥ बंधवधच्छेदातिभारारोपणान्नपान-  
निरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूट-  
लेखक्रियान्यासापहारसाकारमंत्रभेदाः ॥ २६ ॥  
स्तेन प्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमही-  
नाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥  
परविवाहकरणेत्वारिकापरिगृहीतापरिगृहीताग-  
मनानंगक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षे-  
त्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमा-  
णातिक्रमाः ॥ २९ ॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यातिक्रमक्षेत्र-  
वृद्धिस्मृत्यंतराधानानि ॥ ३० ॥ आनयनप्रेष्य-  
प्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥ कंदर्प  
कौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभो-  
गानर्थक्यानि ॥ ३२ ॥ योगदुःप्रणिधाना-

नादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३ ॥ अप्रत्यवेक्षि-  
ताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृ-  
त्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥ सचित्तसंबंधसंमि-  
श्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥ ३५ ॥ सचित्तनिक्षेपापि-  
धानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥ ३६ ॥  
जीवितमरणा शंसामित्रानुरागसुखानुबंधनिदा-  
नानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानं  
॥ ३८ ॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बंध-  
हेतवः ॥ १ ॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्या-  
न्पुद्गलानादत्ते स बंधः ॥ २ ॥ प्रकृतिस्थित्यनु-  
भागप्रदेशास्ताद्विधयः ॥ ३ ॥ आद्यो ज्ञानद-  
र्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रांतरायाः  
॥ ४ ॥ पंचनवद्वयष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्-  
द्विपंचभेदा यथाक्रमं ॥ ५ ॥ मतिश्रुतावधिमनः-  
पर्ययकेवलानां ॥ ६ ॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां  
निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृह्य-

॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥ दर्शनचारित्रमोह-  
 नीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडश-  
 भेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ  
 हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुन्नपुंसकवेदा  
 अनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनवि-  
 कल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥९॥ नार-  
 कतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥१०॥ गतिजातिश-  
 रीरांगोपांगनिर्माणबंधनसंघातसंस्थानसंहनन-  
 स्पर्शरसगंधवर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघातपरघातात-  
 पोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रस-  
 सुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्ति-  
 सेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नीचैश्च  
 ॥ १२ ॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणां ॥१३॥  
 आदितस्ति सृणामंतरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-  
 कोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिमोह-  
 नीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥ १६ ॥  
 त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥ अपरा  
 द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नामगोत्र-



योरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामंतमुहूर्ता ॥ २० ॥  
 विपाकोनुभवः ॥ २१ ॥ स यथानाम ॥ २२ ॥  
 ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो  
 योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्म-  
 प्रदेशेष्वनंतानंतप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्देवशुभायु-  
 र्नामगोत्राणि पुण्यं । २५ । अतोऽन्यत्पापं । २६ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे ऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

आश्रवनिरोधः संवरः ॥ १ ॥ सगुप्तिसमिति-  
 धर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा  
 निर्जरा च ॥ ३ ॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः  
 ॥ ४ ॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः  
 ॥ ५ ॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमप-  
 पस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि धर्माः ॥ ६ ॥  
 अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवर-  
 निर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्याततत्त्वानुचिं-  
 तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थ प-  
 रिपोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतो-  
 ष्णदंशमशकनाऽन्यारतिस्रीचर्यानिषद्याशय्या-

क्रोशवधयाञ्जालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुर  
 स्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ६ ॥ सूक्ष्मसांपरा-  
 यच्छद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥ एकादश  
 जिने ॥ ११ ॥ बादरसांपराये सर्वे ॥ १२ ॥  
 ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥ दर्शनमोहांतराय-  
 योरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥ चारित्रमोहे नाग्न्या-  
 रतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाञ्जासत्कार पुरस्काराः  
 ॥ १५ ॥ वेदनीये शेषाः ॥ १६ ॥ एकादयो  
 भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतिः ॥ १७ ॥  
 सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्म-  
 सांपराययथाख्यातमिति चारित्रं ॥ १८ ॥ अन-  
 शनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविवि-  
 क्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९ ॥ प्राय-  
 श्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्यु-  
 त्तरं ॥ २० ॥ नवचतुर्दशपंचद्विभेदायथाक्रमं  
 प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचनाप्रतिक्रमणतदुभय  
 विवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥  
 ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्योपा-

ध्यायतपास्विशोक्ष्यग्लानगणकुलसंघसाधुमनोज्ञ  
 नां ॥ २४ ॥ वाचनापृञ्चनानुप्रेक्षाग्नायधर्मो-  
 पदेशाः ॥ २५ ॥ बाह्याभ्यंतरोपध्योः ॥ २६ ॥  
 उत्तमसंहननस्यैकाग्रचित्तानिरोधो ध्यानमांतमु-  
 हूर्तात् ॥ २७ ॥ आर्त्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥  
 परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥ आर्त्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे  
 तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥ विप-  
 रीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥  
 निदानं च ॥ ३३ ॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्त-  
 संयतानां ॥ ३४ ॥ हिंसानृत्तस्तेयविषयसंरक्षण-  
 भ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥ ३५ ॥ आज्ञा-  
 पायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्य ॥ ३६ ॥ शुक्ले  
 चाद्ये पूर्वविदः ॥ ३७ ॥ परे केवलिनः  
 ॥ ३८ ॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-  
 व्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥ ३९ ॥ त्रैकयोगका  
 ययोगायोगानां ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवितर्कवी-  
 चारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयं ॥ ४२ ॥ वि-  
 तर्कः श्रुतं ॥ ४३ ॥ अवीचारोर्थव्यंजनयोगसंक्रांतिः

॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानंतवियोजक-  
दर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशांतमोहक्षपकक्षीण-  
मोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥  
पुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रथस्नातका निर्ग्रथाः  
॥ ४६ ॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिंगलेश्योप-  
पादस्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणांतरायक्षयाच्च केवलं  
॥ १ ॥ बंधहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्र-  
मोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां  
च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्ध-  
त्वेभ्यः ॥४॥ तदनंतरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकांतात्  
॥ ५ ॥ पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद्धंधच्छेदात्तथागति  
परिणामाच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपग-  
त्तलेपालाबुवदेरंडबीजवदग्निशिखावच्च ॥ ७ ॥  
श्रमास्तिकायाभावात् ॥ ८ ॥ क्षेत्रकालगतिलिंग-  
तीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनांतर  
संख्याल्पत्रहृत्वतः साध्याः ॥९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं, मेत्तारं कर्मभूभृतां ।

ज्ञातारं विश्वतत्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

कोटिरातं द्वादश चैव कोट्यो लक्षणाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतद्भ्रुतं पंचपदं नमामि ॥ १ ॥

अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंधियं सव्वं ।

पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा ॥ २ ॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यंजनसंधिविर्जितरेफम् ।

साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥३॥

दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थं पठिते सति ।

फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुंगवैः ॥ ४ ॥

तत्त्वार्थसूत्रकर्तारं गृद्घपिच्छोपलक्षितम् ।

वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥ ५ ॥

जं सक्कइ तं कीरइ, जं पण सक्कइ तहेव सइहणं ।

सइहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ॥ ६ ॥

तव यरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदयाकरणम् ।

अते समाहिमरणं, चउविह दुक्खं णिवारेई ॥ ७ ॥

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम तत्त्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रं सममम् ।

## कल्याणमंदिर स्तोत्र

कल्याणमंदिरमुदारमवद्यभेदि भीताभयप्रदम्  
निंदितमंग्रिपद्मं । संसारसागरनिमज्जदशेषजंतु-

पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥ १ ॥ यस्य  
 स्वयं सुरगुरुर्गरिमांबुराशेः स्तोत्रं सुविस्तृतम-  
 तिर्न विभुर्विधातुं । तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूम-  
 केतोस्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥२॥  
 सामान्यतोपि तव वर्णयितुं स्वरूपमस्मादृशाः  
 कथमधीश भवंत्यधीशाः । धृष्टोपि कोशिक-  
 शिशुयदि वा दिवांधो रूपं प्ररूपयति किं किल  
 धर्मरश्मेः ॥ ३ ॥ मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ  
 मर्त्यो नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत् । कल्पां  
 तवांतपयसः प्रगटोऽपि यस्मान्मीयेत केन जल-  
 धेननु रत्नराशिः ॥४॥ अभ्युद्यतोस्मि तव नाथ  
 जडाशयोपि कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य ।  
 बालोपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य विस्तीर्ण-  
 तां कथयति स्वधियांबुराशेः ॥५॥ ये योगिना-  
 मपि न यांति गुणास्तवेश वक्तुं कथं भवति तेषु  
 ममावकाशः । जातातदेवमसमीक्षितकारितेयं  
 जलपंति वा निजगिरा ननु पक्षिणोपि ॥ ६ ॥  
 आस्तामर्चित्यमहिमा जिन संस्तवस्ते नामापि

पाति भवतो भवतो जगंति । तीव्रा तपोपहत-  
 पांथजनान्निदाघे प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनि-  
 लोपि ॥ ७ ॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिली-  
 भवंति जंतोः क्षणेन निविडा अपि कर्मबंधाः ।  
 सद्यो भुजंग मम या इव मध्यभागमभ्यागते वन-  
 शिखंडिनि चंदनस्य ॥८॥ मुच्यंत एव मनुजाः  
 सहसा जिनेंद्र रौद्रेरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षि-  
 तेऽपि । गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे  
 चौरैरिवाशुपशवः प्रपलायमानैः ॥९॥ त्वं तार-  
 को जिन कथं भविनां त एव त्वामुद्धहंति हृदयेन  
 यदुत्तरंतः । यद्वा दृतिस्तरंतियज्जलमेष नूनमंत-  
 र्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ १० ॥ यस्मि-  
 न्हरप्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः सोपि त्वया रतिप-  
 तिः क्षपितः क्षणेन । विध्यापिता हुतभुजः पय-  
 साथ येन पीतं न किं तदपि दुर्धरवाङ्गवेन ॥११॥  
 स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपिप्रपन्नास्त्वां जंतवः  
 कथमहो हृदये दधानाः । जन्मोदधिं लघु तरंत्य-  
 तिलाघवेन चिंत्यो न हंत महतां यदि वा प्रभावः

॥ १२ ॥ क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो  
 ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौराः प्लोपत्य-  
 मुत्र यदि वा शिशिरापि लोके नीलद्रुमाणि वि-  
 पिनानि न किं हिमानी ॥ १३ ॥ त्वां योगिनो  
 जिनसदा परमात्मरूपमन्वेषयन्ति हृदयांबुजको-  
 षदेशे । पूतस्य निर्मल रुचेर्यदि वा किमन्यदक्ष-  
 स्य संभवपदं ननु कर्णिकायाः ॥ १४ ॥ ध्याना-  
 जिनेश भवतो भविनं क्षणेन देहं विहाय परमा-  
 त्मदशां व्रजन्ति । तीव्रानलादुपलभावमपास्य  
 लोके चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥ १५ ॥  
 अंतःसदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं भव्यैः कथं  
 तदपि नाशयसे शरीरं । एतत्स्वरूपमथ मध्य-  
 विवर्तिनो हि यद्विश्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः  
 ॥ १६ ॥ आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या  
 ध्यातो जिनेद्र भवतीह भवत्प्रभावः । पानीय-  
 ऋष्यमृतमित्यनुचिंत्यमान किं नाम नो विषविका-  
 रमपाकरोति ॥ १७ ॥ त्वामेव वीततमसं परवा  
 दिनेऽपि नूनं विभो हरिहरादिधिया प्रपन्नाः ।



किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शंखो नो  
 गृह्यते विविधवर्णविषयेण ॥१८॥ धर्मोपदेश-  
 समये सविधानुभावादास्तां जनो भवति ते तरु-  
 र्यशोकः । अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि  
 किंवा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ।१९। चित्रं  
 विभो कथमवाङ्मुखवृंतमेव विष्वक्पतत्यविरला  
 सुरपुष्पवृष्टिः । त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनी  
 श ! गच्छंति नूनमध एव हि वंधनानि ॥ २० ॥  
 स्थाने गभीरहृदयोदाधिसंभवायाः पीयूषतां तव  
 गिरः समुदीरयति । पीत्वा यतः परमसंमदसं-  
 गभाजो भव्या व्रजंति तरसाप्यजरामरत्वं ॥२१।  
 स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतंतो मन्ये वदंति  
 शुचयः सुरचामरौघाः । येऽस्मै नतिं विदधते  
 मुनिपुंगवाय ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः  
 ॥२२॥ श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नसिंहा-  
 सनस्थामिह भव्यशिखाडिनस्त्वां । आलोकयंति  
 रभसेन नदंतमुच्चैश्चामीकराद्रिशिरसीव नवांबु-  
 वाहं ॥२३॥ उद्गच्छता तव शितिद्युतिमंडलेन

लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्वभूव । सांनिध्यतोपि  
यदि वा तव वीतराग ! नीरागतां व्रजाति को न  
सचेतनोपि ॥ २४ ॥ भो भोः प्रमादमवधूय भ-  
जध्वमेनमागत्य निवृत्तिपुरीं प्रति सार्थवाहम् ।  
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नभि-  
नभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥२५॥ उद्द्योतितेषु भवता  
भुवनेषु नाथ तारान्वितो विधुरयं विहतांधका-  
रः । मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजात्त्रि-  
धा धृतधनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥ २६ ॥ स्वेन प्रपूरित-  
जगत्त्रयपिंडितेन कांतिप्रतापयशसामिव संच-  
येन । माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन सालत्रयेण  
भगवन्नभितो विभासि ॥ २७ ॥ दिव्यस्रजो  
जिन नमत्त्रिदशाधिपानामुत्सृज्य रत्नरचिता-  
नपि मौलिबंधान् । पादौ श्रयंति भवतो यदि  
वापरत्र त्वत्संगमे सुमनसो न रमंत एव ॥२८॥  
त्वं नाथ जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोपि यत्तारयत्य  
सुमतो निजपृष्ठलग्नान् । युक्तं हि पार्थिवनिपस्य  
सतस्तवैव चित्रं विभो यदसि कर्मविपाकशून्यः

॥ २९ ॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्गतस्त्वं  
 किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश । अज्ञानव-  
 त्यपि सदैव कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-  
 विकासहेतु ॥ ३० ॥ प्राग्भारसंभृतनभांसि र-  
 जांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ।  
 छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो ग्रस्तस्त्व-  
 मीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥ ३१ ॥ यद्गर्जदूर्जितघ-  
 नौघमदभ्रभीमभ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारं ।  
 दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे तेनैव तस्य जिन  
 दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ ३२ ॥ ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृ-  
 ताकृतिमर्त्यमुंडप्रालंबभूद्भयदवक्त्रविनिर्यदाग्निः ।  
 प्रेतव्रजः प्रति भवंतमपीरितो यः सोऽस्यभवत्प्र-  
 तिभवं भवदुःखहेतुः ॥ ३३ ॥ धन्यास्त एव  
 भवनाधिप ये त्रिसंध्यमाराधयन्ति विधिवद्विधु-  
 तान्यकृत्याः । भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः  
 पादद्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥ ३४ ॥  
 अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश मन्ये न मे  
 श्रवणगोचरतां गतोऽसि । आकर्णिते तु तव

गोत्रपवित्रमंत्रे किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति  
 ॥३५॥ जन्मांतरेऽपि त्व षादुयुगं न देव मन्ये  
 मया महितमीहितदानदक्षं । तेनेह जन्मनि मु-  
 नीश पराभवानां जातो निकेतनमहं मथिताश-  
 यानां ॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन  
 पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोसि । मर्माविधो  
 विधुरयंति हि मामनर्थाः प्रोद्यत्प्रबंधगतयः कथ-  
 मन्यथैते ॥ ३७ ॥ आकर्णितोपि महितोपि  
 निरीक्षितोपि नूनं न चेतसि मया विधृतोसि  
 भक्त्या । जातोस्मि तेन जनबांधव दुःखपात्रं  
 यस्मात्क्रियाः प्रतिफलंति न भावशून्याः ॥३८॥  
 त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य कारुण्यपु-  
 ण्यवसते वशिनां वरेण्य । भक्त्या नते मयि  
 महेश दयां विधाय दुःखांकुरोद्दलनतत्परतां  
 विधेहि ॥३९॥ निःसख्यसारशरणं शरणं शरण्य-  
 मासाद्य सादितरिपुप्रथितावदानं । त्वत्पादपंक-  
 जमपि प्राणिधानबंध्यो बंध्योस्मि चेद्भुवनपावन  
 हा हतोस्मि ॥ ४० ॥ देवेंद्रवद्य विदिताखिलव-

स्तुसार संसार तारक विभो भुवनाधिनाथ त्राय  
स्व देव करूणाहृद मां पुनीहि सीदंतमद्य भयद  
व्यसनांबुराशेः ॥४१॥ यद्यस्ति नाथ भवदंघ्रिस-  
रोरूहाणां भक्तेः फलं किमपि संततसंचितायाः ।  
तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य भूयाःस्वामी त्वमेव  
भुवनेत्र भवांतरेपि ।४२। इत्थं समाहितधियो वि  
धिवज्जिनेन्द्रसांद्रोक्षसत्पुलककंचुकितांगभागाः  
त्वद्विनिर्मलमुखांबुजवद्धलदयाः ये संस्तवं तव  
विभो रचयंति भव्याः ॥४३॥ जननयनकुमु-  
दचंद्रप्रभास्वराः स्वर्गसंपदो भुक्त्वा ते विंगलि-  
तमलनिचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यंते ॥४४॥

**कल्याणमंदिरस्तोत्र भाषा ।**

दो०—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।

बंदू परमानंदमय घटघटअंतरलीनि ॥१॥:  
निर्भय करन परम परधान । भवसमुद्रजलतारन  
यान ॥ शिवमंदिर अघहरण अनिंद । बंदहु पा-  
सचरण अरविंद ॥१॥ कमठमानभंजन वरवीर ।  
गारिमासागर गुनगंभीर । सुरगुरु पार लहै नहिं

जास । मैं अजान जंपू जस तास ॥२॥ प्रभुस्व-  
रूप अति अगम अथाह । क्यों हमसेती होय  
निवाह ॥ ज्यों दिन अंध उलूको पोत । कहि न  
सकै रवि-किरन-उदोत ॥३॥ मोहहीन जानै म-  
नमाहिं । तोहु न तुम गुन वरने जाहिं ॥ प्रलय-  
पयोधि करै जल बौन । प्रगटहिं रतन गिनै ति-  
हिं कौन ॥४॥ तुम असंख्य निर्मल गुणखान ।  
मैं मतिहीन कहूं निज बान ॥ ज्यों बालक निज  
बांह पसार । सागर परमित कहै विचार ॥५॥  
जे जोगींद्र करहिं तपखेद । तऊ न जानहिं तुम  
गुनभेद । भक्तिभाव मुझ मन अभिलाख । ज्यों  
पंछी बोलैं निज भाख ॥६॥ तुमजसमाहिमा, अ-  
गम अपार । नाम एक विभुवन-आधार ॥ आवै  
पवन पदमसर होय । ग्रीषमतपत निवारै सो-  
य ॥७॥ तुम आवत भविजन घटमाहिं कर्म-  
निबंध शिथिल है जाहिं ॥ ज्यों चंदनतरु बोल-  
हिं मोर । डरहिं भुजंग लगे चहुं ओर ॥८॥ तुम  
निरखत जन दीनदयाल । संकटतैं छूटैं तत्काल ॥

ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर । ते तज भागहिं  
देखत भोर ॥ ९ ॥ तू भविजनतारक किमि  
होहि । ते चितधार तिरहिं ले तोहि । यह ऐसैं  
कर जान स्वभाव तिरहिं मसक ज्यों गर्भित  
बाव ॥ १० ॥ जिहँ सब देव किये वश बाम ।  
तैं छिनमें जीत्यो सो काम ॥ ज्यों जल करै  
अगनिकुल हान । बडवानल पीवै सो पान ॥ ११ ॥  
तुम अनंत गरवा गुन लिये । क्योंकर भक्ति  
धरों निज हिये । है लघुरूप तिर, संसार ।  
यह प्रभु महिमा अगम अपार ॥ १२ ॥ क्रोध  
निवार कियो मन शांत । कर्मसुभट जीते  
किहिं भांत । यह पटतर देखहु संसार । नील  
विरछ ज्यों दहै तुसार ॥ १३ ॥ मुनिजनहिये  
कमल निज टोहि । सिद्धरूपसम ध्यावहिं तोहि ॥  
कमलकरणिका विन नहिं और । कमलबीज  
उपजनकी ठौर ॥ १४ ॥ जब तुव ध्यान धरै  
मुनि कोय । तब विदेह परमात्म होय ॥ जैसे  
धातु शिलातनु त्याग । कनकस्वरूप धवै जब

आग ॥ १५ ॥ जाके मन तुम करहु निवास  
 विनशि जाय क्यों विग्रह तास ॥ ज्यों महंत  
 विच आवै कोय । विग्रहमूल निवारै सोय ॥१६॥  
 करहिं विबुध जे आतमध्यान । तुम प्रभावतैं  
 होय निदान ॥ जैसे नीर सुधा अनुमान । पीवत  
 विषविकारकी हान ॥१७॥ तुम भगवंत विमल  
 गुणलीन । समलरूप मानहिं मतिहीन ॥ ज्यों  
 नीलिया रोग दृग गहै । वर्ण विवर्ण शंखसों  
 कहै ॥ १८ ॥

दोहा—निकट रहत उपदेश सुन तरुवर भयो  
 अशोक । ज्यों रवि ऊगत जीव सब, प्रगट होत  
 भुविलोक ॥ १९ ॥ सुमनवृष्टि ज्यों सुर कर-  
 हिं, हेठ बीठमुख सोहि । त्यों तुम सेवत  
 सुमनजन बंध अधोमुख होहिं ॥२०॥ उपजी तुम  
 हिय उदधितैं, वानी सुधा समान ॥ जिहँ पीवत  
 भविजन लहहिं, अजर अमरपदथान ॥ २१ ॥  
 कहहिं सार तिहुँ लोककी, ये सुरचामर दोय ।  
 भावसहित जो जिन नमैं, तिहँगति ऊरध होय



॥२२॥ सिंघासन गिरिमेरुसम, प्रभु धुनि गर-  
जत घोर । श्याम सुतनु घनरूप लखि, नाचत  
भविजन मोर ॥ २३ ॥ छविहत होत अशोक  
दल, तुम भामंडल देख । वीतरागके निकटरह  
रहत न राग विसेष ॥ २४ ॥ सीख कहै तिहुँ  
लोककों ये सुरदुंदुभिनाद । शिवपथसारथिबा-  
हजिन, भजहु तजहु परमाद ॥२५॥ तीन छत्र  
त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छविदेत । त्रिविध-  
रूप धर मनहु शशि, सेवत नखत समेत ॥२६॥

पद्मरिछंद—प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम ।  
परतापपुंज जिम शुद्ध हेम ॥ अतिधवल सुजस  
रूपा समान । तिनके गढ तीन विराजमान  
॥ २७ ॥ सेवहिं सुरेंद्र कर नमत भाल । तिन  
सीस मुकुट तज देहिं माल ॥ तुमचरणलगत  
लहलहै प्रीति । नहिं रमहिं और जन सुमन  
रीति ॥ २८ ॥ प्रभु भोगविमुख तन गरमदाह ।  
जन पार करत भवजल निवाह ॥ ज्यों माटीकल-  
श सुपक्व होय । ले भार अधोमुख तिरहिं तोय

॥ २९ ॥ तुम महाराज निरधन निराश । तज  
विभव विभव सबजगप्रकाश ॥ अक्षरस्वभाव  
सुलिखै न कोय । महिमा भगवंत अनंत सोय  
॥ ३० ॥ कर कोप कमठ निज वैर देख । तिन  
करी घूलिवरषा विशेष ॥ प्रभु तुम छाया नहिं  
भई हीन । सो भयो पापि लंपट मलीन ॥३२॥  
गरजंत घोर घन अंधकार । चमकंत विज्जु जल  
मुसलधार ॥ बरषंत कमठ धर ध्यान रुद्र ।  
दुस्तर करत निज भव समुद्र ॥ ३३ ॥

वास्तु छंद ।

मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि । भेजे तुरत  
पिशाचगण, नाथ पास उपसर्ग कारण । अग्नि  
जाल झलकंत मुख, धुनिकरत जिमि मत्तवारण ।  
कालरूप विकराल तन, मुंडमाल हित कंठ ।  
है निशंक वह रंकनिज, करै कर्म दृढगंठ ॥३४॥  
चौपाई—जे तुम चरणकमल तिहुँकाल । सेवहिं  
तज माया जंजाल ॥ भाव भगतिमन हरष  
अपार । धन्य धन्य जग तिन अवतार ॥३५॥

भवसागरमें फिरत अजान ॥ मैं तुअ सुजस  
 सुन्यो नहिं कान ॥ जो प्रभुनाममंत्र मन धरै ।  
 तासों विपति भुजंगम डरै ॥ ३६ ॥ मनवांछित  
 फल जिनपदमांहिं । मैं पूरव भव पूजे नाहिं ॥  
 मायागमन फिन्यो अज्ञान । करहिं रंकजन मुझ  
 अपमान ॥ ३७ ॥ मोहतिमिर छायो दृग मोहि ।  
 जन्मांतर देख्यो नहिं तोहि ॥ तौ दुर्जन मुझ  
 संगति गहैं । मरमछेदके कुवचन कहैं ॥ ३८ ॥  
 सुन्यो कान जस पूजे पाय । नैनन देख्यो रूप  
 अघाय ॥ भक्तिहेतु न भयो चित चाव । दुख  
 दायक किरियाविन भाव ॥ ३९ ॥ महाराज शर-  
 णागत पाल । पतितउधारण दीनदयाल । सुमि  
 रण करहुं नाय निज शीश । मुझ दुख दूर  
 करहु जगदीश ॥ ४० ॥ कर्मनिकंदनमहिमा  
 सार । अशरणशरण सुजस विसतार ॥ नहिं  
 सेये प्रभु तुमरे पाय । तो मुझ जन्म अकारथ  
 जाय । ४१ । सुरगनवंदित दयानिधान । जग-  
 तारण जगपति अनजान ॥ दुखसागरतैं मोहि

निकासि । निर्भयथान देहु सुखरासि ॥ ४२ ॥  
 मैं तुम चरणकमल गुनगाय । बहुविधि भक्ति  
 करी मनलाय ॥ जनमजनम प्रभु पाऊं तोहि ।  
 यह सेवाफल दीजै मोहि ॥ ४३ ॥

दोधकांत बेसरी छंद—षट्पद ।

इहविधि श्रीभगवंत, सुजस जे भविजन  
 भाषहिं । ते जिन पुण्यभंडार, संचि चिरपाप प्र-  
 णासहिं ॥ रोमरोम हुलसंति, अंग प्रभु गुणमन  
 ध्यावहिं । स्वर्ग संपदा भुंज वेग पंचमगति  
 पावहिं ॥ यह कल्याणमंदिर कियो, कुमुदचंद्रकी  
 बुद्धि । भाषा कहत 'बनारसी' कारण समकि  
 शुद्ध ॥ ४४ ॥

एकीभाव स्तोत्रं ।

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबंधो  
 घोरं दुःखं भवभवगतो दुर्निवारः करोति । त-  
 स्याप्यस्य त्वयि जिनरवे ! भक्तिरुन्मक्तये चेज्जे-  
 तुं शक्यो भवति न तथा कोपरस्तापहेतुः ॥१॥  
 ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वांतविध्वंसहेतुं त्वामे-

वाहुर्जिनवर चिरं तत्त्वविद्याभियुक्ताः । चेतोवा-  
से भवासि च मम स्फारमुद्भासमानस्तस्मिन्नहः  
कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥ २ ॥ आनं-  
दाश्रुस्नापितवदनं गद्गदं चाभिजल्पन्यश्चायेत  
त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमंत्रैर्भवंतं । तस्याभ्यस्ता-  
दापि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्निष्कास्यंते वि-  
विधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥ ३ ॥ प्रागेवेह  
त्रिदिवभवनादेष्यता भव्यपुण्यात्पृथिवीचक्रं  
कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदं । ध्यानद्वारं मम  
रुचिकरं स्वांतगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन वपु-  
रिदं यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥ लोकस्यैकस्त्वमसि  
भगवन्निर्निमित्तेन बंधुस्त्वय्येवासौ सकलविषया  
शक्तिरप्रयत्नीका । भक्तिस्फीतां चिरमधिवस-  
न्मामिकां चित्तशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव ततः  
क्लेशयूथं सहेथाः ॥ ५ ॥ जन्माटव्यां कथमपि  
मया देव दीर्घं भ्रमित्वा प्राप्तैवैयं तव नयकथा  
स्फारपीयूषवापी । तस्या मध्ये हिमकरहिमव्यूह-  
शीते नितांतं निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःखदा

वोपतापाः ॥६॥ पादन्यासादपि च पुनतो यात्र-  
 या ते त्रिलोकीं हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनि-  
 वासश्च पद्मः । सर्वांगेण स्पृशाति भगवंस्त्वय्यशेषं  
 मनो मे श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति  
 ॥७॥ पश्यंतं त्वद्वचनममृतं भक्तिपात्र्या पिवंतं  
 कर्मरण्यात्पुरुषमसमानंदधाम प्रविष्टं । त्वां दुर्वा-  
 रस्मरमदहरं त्वत्प्रसादैकभूमिं क्रूराकाराः कथ-  
 मिव रुजाकंटका निर्लुठंति ॥ ८ ॥ पाषाणात्मा  
 तदितरशमः केवलं रत्नमूर्तिमानस्तंभो भवंति  
 च परस्तादृशो रत्नवर्गः । दृष्टिप्राप्तो हरति स कथं  
 मानरोगं नराणां प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य  
 तच्छक्तिहेतुः ॥९॥ हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मू-  
 र्तिशैलोपवाही सद्यः पुंसां निरवधिरुजाधूलि-  
 बंधं धुनोति । ध्यानाहृतो हृदयकमलं यस्य तु  
 त्वं प्रविष्टस्तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोको-  
 पकारः ॥ १० ॥ जानासि त्वं मम भवभवे यच्च  
 यादृक्च दुःखं जातं यस्य स्मरणमपि मे शम्भव-  
 निष्पिनष्टि । त्वं सर्वेशः, सकृप इति च त्वामु-

पैतोस्मि भक्त्या यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव एष  
 प्रमाणं ॥ ११ ॥ प्रापद्द्वैवं तव नुतिपदैर्जिविकेनो-  
 पदिष्टैः पापाचारी मरणसमये सारमेयोपि सौख्यं ।  
 कः संदेहो यदुपलभते वासव श्रीप्रभुत्वं जल्पंजाप्यै-  
 र्मणिमिरमलैस्त्वन्नमस्कारचक्रं ॥१२॥ शुद्धे ज्ञाने  
 शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा भक्तिर्नो चेद-  
 नवधिसुखावंचिका कुंचिकेयं । शक्योद्घाटं भवति  
 हि कथं मुक्तिकामस्य पुंसो मुक्तिद्वारं परिदृढमहा-  
 मोहमुद्राकवाटं ॥१३॥ प्रच्छन्नः खल्वयमघमयै-  
 रंधकारैः समंतात्पंथा मुक्तेः स्थपुटितपदः क्लेश-  
 गतैरगाधैः । तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव त-  
 त्वावभासी यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारतीरत्नदी-  
 पः ॥ १४ ॥ आत्मज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरा-  
 नंदहेतुः कर्मक्षोणीपटलपिहितो योनवाप्यः प-  
 रेषां । हस्ते कुर्वत्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः  
 स्तोत्रैर्वंधप्रकृतिपुरुषोद्दामधात्रीखनित्रैः ॥१५॥  
 प्रत्युत्पन्ना नयहिमगिरेरायता चामृताब्धेर्या देव  
 त्वत्पादकमलयोः संगता भक्तिगंगा । चेतस्त-

स्यां मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालितांहः कल्माषं  
यद्भवति किमियं देव संदेहभूमिः ॥ १६ ॥ प्रादुर्भू-  
तस्थिरपदसुख त्वामनुध्यायतो मे त्वय्येवाहं स  
इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा । मिथ्यैवेयं तदपि  
तनुते तृप्तिमभ्रेषरूपां दोषात्मानोप्यभिमतफला-  
स्त्वत्प्रसादाद्भवंति ॥ १७ ॥ मिथ्यावादं मलम-  
पनुदन्सप्तभंगीतरंगैर्वागंभोधिभुवनमखिलं देव  
पर्येति यस्ते । तत्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चेतसैवा-  
चलेन । व्यातन्वंतः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवांति  
॥ १८ ॥ आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावा-  
दहृद्यः शस्त्रग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च श-  
क्यः । सर्वाङ्गेषु त्वमासि सुभगस्त्वं न शक्यः प-  
रेषां तत्किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्रैः  
॥ १९ ॥ इंद्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तथा श्ला-  
घनं ते तस्यैवेयं भवलयकरी श्लाघ्यतामातनो-  
ति । त्वं निस्तारी जननजलधेः सिद्धिकांतापति-  
स्त्वं त्वं लोकानां प्रभरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्र-  
मित्थं ॥ २० ॥ वृत्तिर्वाचामपरसदृशी न त्वम-



न्येन तुल्यः स्तुत्युद्धाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी-  
 नः क्रमंते । मैवं भूवंस्तदापि भगवन्भक्तिपीयूष-  
 पुष्टास्ते भव्यानामभिमतफलाः पारिजाता भवंति  
 ॥ २१ ॥ कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव  
 प्रसादो व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षं ।  
 आज्ञावश्यं तदापि भुवनं सन्निधिर्वैरहारी क्वैवं-  
 भूतं भुवनतिलक ! प्राभवं त्वत्परेषु ॥२२॥ देव  
 स्तोतुं त्रिदिवगणिकामंडलीगीतकीर्तिं तोतूतिं  
 त्वां सकलविषयज्ञानमूर्तिं जनो यः । तस्य क्षेमं न  
 पदमतटो जातु जाहूर्तिं पंथास्तत्त्वग्रंथस्मरण-  
 विषये नैष मोमूर्तिं मर्त्यः ॥२३॥ चित्ते कुर्वन्नि-  
 रवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं देव त्वां यः समयनि-  
 यमादादरेण स्तवीति । श्रेयोमार्गं स खलु सुकृ-  
 ती तावता पूरयित्वा कल्याणानां भवति विषयः  
 पंचधा पंचितानां ॥२४॥ भक्तिप्रह्वमहेंद्रपूजित-  
 पद त्वत्कीर्तने न क्षमाः सूक्ष्मज्ञानदृशोपि संयम-  
 मृतः के हंत मंदा वयं । अस्माभिः स्तवनच्छलेन  
 तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते स्वात्माधीनसुखैषिणां

स खलु नः कल्याणकल्पदुर्मः ॥२५॥ वादिराज  
मनु शाब्दिकलोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः  
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्य-  
सहायः ॥ २६ ॥

## एकीभावस्तोत्र भाषा ।

दोहा ।

वादिराज मुनिराजके, चरणकमल चित लाय ।  
भाषा एकीभावकी, करूं स्वपरसुखदाय ॥ १ ॥

रोलाछन्द मयवा "अहो जगत गुरुदेव सुनियो भर्ज हमारी"  
धीनतीकी चालमें ।

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी ।  
सो मुझ कर्मप्रबंध करत भव भव दुख भारी ॥  
ताहि तिहारी भक्ति जगतरवि जो निरवारै ।  
तो अब और कलेश कौन सो नाहिं विदारै ।१।  
तुम जिन जोतिस्वरूप दुरितअंधियारिनिवारी ।  
सो गणेश गुरु कहैं तत्वविद्याधनधारी ॥ मेरे  
चितधरमाहिं बसौ तेजोमय यावत । पापतिमिद  
अवकाश तहां सो क्योंकरि शवत ॥ २ ॥ आ-

नैदआँसूवदन धोय तुमसों चित सानै । गदगद  
 सुरसों सुयशमंत्र पढि पूजा ठानै ॥ ताके बहु-  
 विधि व्याधि व्याल चिरकालनिवासी । माजै  
 थानक छोड देहबांबइके वासी ॥ ३ ॥ दिवितै  
 आवनहार भये भविभागउदयबल । पहलेही सुर  
 आय कनकमय कीय महीतल ॥ मनगृहध्यान-  
 दुवार आय निवसो जगनामी । जो सुवरन तन  
 करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ४ ॥ प्रभु सब  
 जगके विनाहेतुबांधव उपकारी । निरावरन सर्वज्ञ  
 शक्ति जिनराज तिहारी ॥ भक्तिरचित ममचित्त  
 सेज नित वास करोगे । मेरे दुखसंताप देख  
 किम धीर धरोगे ॥ ५ ॥ भववनमें चिरकाल  
 भ्रम्यो कछु कहिय न जाई । तुम थुतिकथा-  
 पियूषवापिका भागन पाई ॥ शशि तुषार घन  
 सार हार शीतल नहिं जा सम । करत न्हौन  
 तामाहिं क्यों न भवताप बुझै मम ॥ ६ ॥ श्री  
 विहार परिवाह होत शुचिरूप सकल जग ।  
 कमलकनक आभावं सुरभि श्रीवास धरत पग ॥

मेरो मन सर्वग परस प्रभुको सुख पावै । अब  
 सो कौन कल्याण जो न दिन दिन ढिग आवै  
 ॥ ७ ॥ भवतज सुखपद बसे काममदसुभट  
 संहारे । जो तुमको निरखंत सदा प्रियदास ति-  
 हारे ॥ तुमवचनामृतपान भक्तिअंजुलिसों पीवै ।  
 तिन्हें भयानक क्रूररोगरिपु कैसे छीवै ॥ ८ ॥  
 मानथंभ पाषाण आन पाषाण पटंतर । ऐसे और  
 अनेक रतन दीखैं जगअंतर ॥ देखत दृष्टिप्र-  
 मान मानमद तुरत मिटावै । जो तुम निकट न  
 होय शक्ति यह क्योंकर पावै ॥ ९ ॥ प्रभुतन  
 पर्वतपरस पवन उरमें निवहै है । तासों तताछिन  
 सकल रोगरज बाहिर है है । जाके ध्यानाहूत  
 बसो उरअंबुजमाहीं । कौन जगत उपकारकरन  
 समरथ सो नाहीं ॥ १० ॥ जनमजनमके दुःख  
 सहे सब ते तुम जानो । याद किये मुझ हिये  
 लगे आयुधसे मानों । तुम दयाल जगपाल स्वामि  
 में शरन गही है । जो कछु करनो होय करो  
 परमान वही है ॥ ११ ॥ मरनसमय तुम नाम

मंत्र जीवकर्ते पायो । पापाचारी श्वान प्राण तज  
 अमर कहायो । जो मणिमाला लेय जपै तुम  
 नाम निरंतर । इंद्रसंपदा लहै कौन संशय इस  
 अंतर ॥१२॥ जो नर निर्मल ज्ञान मान शुचि  
 चारित साधै । अनवाधि सुखकी सार भक्ति कूची  
 नहिं लाधै । सो शिववांछक पुरुष मोक्षपट केम  
 उधारै । मोह मुहर दिढ करी मोक्ष मंदिरके द्वारै  
 ॥१३॥ शिवपुर केरो पंथ पापतमसो अतिष्ठा  
 यो । दुखसरूप बहु कूपखाड सों विकट बतायो  
 स्वामी सुखसों तहां कौन जन मारग लागै ।  
 प्रभुप्रवचनमणिदीप जोनके आगै आगै ॥१४॥  
 कर्मपटलभूमाहिं दबी आतमनिधि भारी । ईश्वर  
 अतिसुख होय विमुखजन नाहिं उधारै ॥ तुम  
 सेवक ततकाल ताहि निहचै कर धारै । थुति  
 कुदालसों खोद बंद भू कठिन विदारै ॥१५॥  
 स्यादवादगिरि उपजै मोक्ष सागर लों धाई । तुम  
 चरणांबुज परस भक्तिगङ्गा सुखदाई । मो चित  
 निर्मल थयो न्होन रुचिपूरव तामै । अब वह हो

न मलीन कौन जिन संशय यामें ॥१६॥ तुम  
 शिवसुखमय प्रगट करत प्रभु चिंतन तेरो । मैं  
 भगवान समान भाव यों वरतै मेरो ॥ यदपि  
 झूठ है तदपि तृप्ति निश्चल उपजावै । तुव प्रसाद  
 सकलङ्क जीव वाञ्छित फल पावै ॥१७॥ वचन  
 जलाधि तुम देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै । भंग  
 तरंगिनि विकथवादमल मलिन उथापै ॥ मन-  
 सुमेरुसों मथै ताहि जे सम्यग्ज्ञानी । परमामृत  
 सों तृपत होहिं ते चिरलों प्रानी ॥१८॥ जो  
 कुदेव छविहीन वसन भूषण अभिलाखै ॥ वैरी  
 सों भयभीत होय सो आयुध राखै ॥ तुम सुंदर  
 सर्वङ्ग शत्रु समरथ नहिं कोई । भूषण वसन ग-  
 दादि ग्रहन काहेको होई ॥१९॥ सुरपति सेवा  
 करै कहा प्रभु प्रभुता तेरी । सो सलाघना लहै  
 मिटै जगसों जगफेरी । तुम भवजलाधि जिहाज  
 तोहि शिवकंत उचरिये । तुहीं जगत-जनपाल  
 नाथथुतिकी थुति करिये ॥२०॥ वचन जाल  
 जडरूप आप चिन्मूरति भांई । तातैं थुति

आलाप नाहिं पहुँचै तुम ताँई ॥ तो भी निर्फल  
 नाहिं भक्तिरसभीने वायक । संतनको सुरतरु  
 समान वाञ्छित वरदायक ॥२१॥ कोप कभी नाहिं  
 करो प्रीति कबहू नाहिं धारो । अति उदास बे-  
 चाह चित्त जिनराज तिहारो । तदपि आन जग  
 बहै बैर तुम निकट न लहिये । यह प्रभुता जग  
 तिलक कहां तुम विन सरदाहिये ॥२२॥ सुर-  
 तिय गावैं सुर<sup>ज</sup> सर्वगति ज्ञानस्वरूपी । जो  
 तुमको थिर होहिं नमैं भविआनँदरूपी । ताहि  
 छेमपुर चलनवाट बाकी नाहिं हो है । श्रुतके  
 सुमरनमाहिं सो न कबहूँ नर मोहै ॥२३॥  
 अतुल चतुष्टयरूप तुमैं जो चित्तमैं धारै । आद-  
 रसों तिहुंकालमाहिं जगथुति विस्तारै ॥ सो  
 सुकृत शिवपंथ भक्तिरचना कर पूरै ! पंचक-  
 ल्यानक ऋद्धिपाय निहचै दुख चूरै ॥२४॥ अहो  
 जगतपति पूज्य अवधिज्ञानी मुनि हारै । तुम  
 गुनकीर्तनमाहिं कौन हम मंद विचारै ॥ थुति  
 बलसों तुमविषै देव आदर विस्तारै ! शिवसुख

पूरनहार कल्पतरु यही हमारे ॥ २५ ॥ वादि-  
 राज मुनिर्ते अनु, वैयाकरणी सारे । वादिराज  
 मुनिर्ते अनु तार्किक विद्यावारे ॥ वादिराज  
 मुनिर्ते अनु हैं काव्यनके ज्ञाता । वादिराज  
 मुनिर्ते अनु हैं भविजनके त्राता ॥ २६ ॥  
 मूल अर्थ बहुविधिकुसुम, भाषा सूत्र मँभार ।  
 भक्तिमाल भूधर करी करो कंठ सुखकार ॥१॥

श्रीधनंजयकविप्रणीतं ।

## विषाणहार स्तोत्रं ।

स्वात्मस्थितः सर्वगतः समस्त व्यापारवेदी  
 विनिवृत्तसंगः । प्रवृद्धकालोप्यजरो वरेण्यः पा-  
 यादपायात्पुरुषः पुराणः ॥ १ ॥ परैरचित्यं युग-  
 भारमेकः स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः । स्तु-  
 त्योद्य मेसौ वृषभो न भानोः किमप्रवेशे विशति  
 प्रदीपः ॥ २ ॥ तत्याज शक्रः शकनाभिमानं  
 नाहं त्यजामि स्तवनानुबंधं । स्वल्पेन बोधेन  
 ततोधिकार्यं वातायनेनेव निरूपयामि ॥ ३ ॥  
 त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो विद्वानशेषं निखि-



लैरवेद्यः । वक्तुं कियान्कीदृशमित्यशक्यः स्तु-  
 तिस्ततो शक्तिकथा तवास्तु ॥ ४ ॥ व्यापीडितं  
 बालमिवात्मदोषैरुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वं ।  
 हिताहितान्वेषणमाद्यभाजः सर्वस्य जंतोरसि  
 बालवैद्यः ॥ ५ ॥ दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा  
 नद्यश्च इत्यच्युतदर्शिताशः । सव्याजमेवं गमय-  
 त्य शक्तः क्षणेन दत्सेभिमतं नताय ॥६॥ उपैति  
 भक्त्या सुमुखः सुखानि त्वयि स्वभावाद्धिमुखश्च  
 दुःखं । सदावदातद्युतिरेकरूपस्तयोस्त्वमादर्श  
 इशवभासि ॥७ ॥ अगाधताब्धेः स यतः पयो  
 धिर्मेरोश्च तुंगाप्रकृतिः स यत्रः । द्यावापृथिव्यो  
 पृथुता तथैव व्याप त्वदीया भुवनांतराणि ॥८॥  
 तवानवस्था परमार्थतत्त्वं त्वया न गीतः पुनरा-  
 गमश्च । दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषीर्विरुद्धवृत्तोऽपि  
 समंजसस्त्वं ॥९॥ स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन्नु-  
 द्धूलितात्मा यदि नाम शंभुः । अशेत वृंदोपहतोपि  
 विष्णुः किं गृह्यते येन भवानजागः ॥१०॥ स नीर-  
 जाः म्यादपरोघवान्वा तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वं

स्वर्तोबुराशेर्महिमा न देवस्तोकापवादेन जला-  
 शयस्य ॥ ११ ॥ कर्मस्थितिं जंतुरनेकभूमिं नय-  
 त्यमुं सा च परस्परस्य । त्वं नेतृभावं हि तयो-  
 र्भवाब्धौ जिनेद्र नौनाविकयोरिवाख्यः ॥ १२ ॥  
 सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्धर्माय पापानि  
 समाचरंति । तैलाय बालाः सिकतासमूहं निपी-  
 डयंति स्फुटमत्वदीयाः ॥ १३ ॥ विषापहारं मणि-  
 मौषधानि मंत्रं समुद्दिश्य रसायनं च । भ्राम्यंत्यहो  
 न त्वमतिस्मरंति पर्यायनामानि तवैव तानि  
 ॥ १४ ॥ चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं देवः कृत-  
 श्चेतसि येन सर्वं । हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं  
 सुखेन जीवत्यपि चित्तवाह्यः ॥ १५ ॥ त्रिकालतत्त्वं  
 त्वमवैस्त्रिलोकीस्वामीति संख्यानियतेरमीषां ।  
 बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यंस्तेन्येपि चेद्व्याप्त्य-  
 दमूनपीदं ॥ १६ ॥ नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं  
 नागम्यरूपस्य तवोपकारि । तस्यैव हेतुः स्वसुख-  
 स्य भानोरुद्विभ्रतश्छत्रमिवादरेण ॥ १७ ॥ कोपेक्ष-  
 कस्त्वं क सुखोपदेशः स चेत्किमिच्छाप्रतिकूल-

वादः । क्वासौ क वा सर्वजगत्प्रियत्वं तन्नो यथात  
 थ्यमवेविजं ते ॥१८॥ तुंगाफलं यत्तदकिंचनाच्च  
 प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः । निरंभसोप्युच्चतमा-  
 दिवाद्रैर्नैकापि निर्याति धुनीपयोधेः ॥ १९ ॥  
 त्रैलोक्यसेवानियमाय दंडं दध्रे यदिंद्रो विनयेन  
 तस्य । तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं तत्कर्मयोगा-  
 द्यदि वा तवास्तु ॥ २० ॥ श्रिया परं पश्यति  
 साधु निःस्वः श्रीमान्नकश्चित्कृपणं त्वदन्यः ।  
 यथा प्रकाशस्थितमंधकारस्थायीक्षतेऽसौ न तथा  
 तमःस्थं ॥ २१ ॥ स्व वृद्धिनिःश्वासनिमेषभाजि  
 प्रत्यक्षमात्मानुभवेपि मूढः । किं चाखिलज्ञेयविव  
 र्तिबोधस्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः ॥२२॥ तस्या-  
 त्मजस्तस्य पितेति देव त्वां येवगायंति कुलं प्रका-  
 श्य । तेद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं पाणौ कृतं हेम  
 पुनस्त्यजंति ॥ २३ ॥ दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोधि-  
 भूताः सुरासुरास्तस्य महान्स लाभः । मोहस्य  
 मोहस्त्वयि को विरोद्धुर्मूलस्य नाशो बलवद्धि-  
 रोधः ॥ २४ ॥ मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेश्वरु

र्गतीनां गहनं परेण । सर्वं मया दृष्टीमिति स्मयेन  
 त्वं मा कदाचिद्भुजमालु लोके ॥ २५ ॥ स्वर्भा-  
 नुरर्कस्य हविर्भुजोभः कल्पांतवातोंबुनिधेर्विधात  
 संसारभोगस्य वियोगभावो विपक्षपूर्वाभ्युदया-  
 स्त्वदन्ये ॥ २६ ॥ अजानतस्त्वां नमतःफलं यत्त  
 ज्ञानतो न्यं न तु देवतेति । हरिन्मणिं काचधिया  
 दधानस्तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ॥ २७ ॥  
 प्रशस्तवाचश्चतुराः कषायैर्दग्धस्य देवव्यवहार-  
 माहुः । गतस्य दीपस्य हि नंदितत्वं दृष्टं कपा-  
 लस्य च मङ्गलत्वं ॥ २८ ॥ नानर्थमेकार्थमदस्त्व-  
 दुक्तंहितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः । निदोषतां  
 के न विभावयंति ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण  
 ॥ २९ ॥ न कापि वाष्ठां ववृते च वाक्ते काले  
 क्वचित्कोपि तथा नि योगः । न, पूरयाम्यंबुधिमि-  
 त्यदंशुः स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदोति ॥ ३० ॥  
 गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना बहुप्रकारा बहवस्त  
 वेति । दृष्टोयमंतः स्तवने न तेषां गुणो गुणानां  
 किमतः परोस्ति ॥ ३१ ॥ स्तुत्या परं नाभिमतं

हि भक्त्या स्मृत्या प्रगत्या च ततो भजामि । स्म-  
 रामि देवं प्रणमामि नित्यं केनाप्युपायेन फलं हि  
 साध्यं ॥ ३२॥ ततस्त्रिलोकीनगराधिदेवं नित्यं  
 परं ज्योतिरनंतिशक्तिं । अपुण्यपापं परपुण्य-  
 हेतुं नमाम्यहं वंद्यमवंदितारं ॥ ३३ ॥ अशब्द-  
 मस्पर्शमरूपगंधं त्वां नीरसं तद्विषयावबोधं ।  
 सर्वस्यमातारममेयमन्यौर्जिनेंद्रमस्मार्यमनुस्मरामि  
 ॥ ३४ ॥ अगाधमन्यैर्मनसाप्यलंघ्यं निष्किंचनं  
 प्रार्थितमर्थवद्भिः । विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं पतिं  
 जिनानां शरणं ब्रजामि ॥ ३५ ॥ त्रैलोक्यदीक्षा  
 गुरवे नमस्ते यो वर्द्धमानोपि निजोन्नतोभूत् ।  
 प्राग्गंडशैलः पुनद्रिरकल्पः पश्चान्न मेरुः कुलप-  
 र्वतोभूत् ॥ ३६ ॥ स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा न  
 बाध्यता यस्य न बाधकत्वं । न लाघवं गौरव-  
 मेकरूपं वंदे विभुं कालकलामतीतं ॥ ३७ ॥ इति  
 स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्वरं न याचे त्वमुपेक्षको-  
 सि । छायातरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्कश्छायया  
 याचितयात्मलाभः ॥ ३८ ॥ अथास्ति दित्सा

यदि वोपरोधस्त्वय्येव सक्तां दिश भक्तिबुद्धिं ।  
 करिष्यते देव तथा कृपां मे को वात्म पोष्ये सुमु-  
 खो न सूरिः ॥३९॥ वितरति विहिता यथाक-  
 थंचिज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः । त्वयि  
 नुति विषया पुनर्विशेषाद्दिशति सुखानि यशो  
 'धनंजयं' च ॥४०॥ इति ॥

### १ विष्णुहार माफा ।

दोहा—नमो नाभिनंदन बली, तत्त्वप्रकाशनहार ।  
 तुर्यकालकी आदिमें, भये प्रथम अवतार ॥१॥

काव्य वा रोलाछंद ।

निज आत्ममें लीन ज्ञानकरि व्यापत सारे ।  
 जानत सब व्यापार संग नहिं कछू तिहारे ॥  
 बहुत कालके हो पुनि जरा न देह तिहारी ।  
 ऐसे पुरुष पुरान करहु रछ्या जु हमारी ॥ १ ॥  
 परकरिकें जु अचिंत्य भार जुगको अतिभारे ।  
 सो एकाकी भयो वृषभ कीनों निसतारो ॥  
 करि न सके जोमिंद्र तवन में करिहों ताको ।

१ स्तवन ।

भानु प्रकाश न करै दीप तमहरै गुफाको ॥२॥  
 स्तवनकरनको गर्भ तज्यो सक्री बहु ज्ञानी ।  
 में नहिं तजौं कदापि स्वल्पज्ञानी शुभध्यानी ॥  
 अधिक अर्थकों कहुं यथाविधि बैठि झरोकै ।  
 जालांतरधरि अक्ष भूमिधरकों जु विलोकै ॥३॥  
 सकल जगतकों देखत अर सबके तुम ज्ञायक ।  
 तुमकों देखत नाहिं नाहिं जानत सुखदायक ॥  
 हौं किंसाक तुम नाथ और कितनाक बखानै ।  
 ताते थुति नहिं बनै असक्ती भये सयानै ॥४॥  
 बालकवत निजदोषथकी इहलोक दुखी अति ।  
 रोगरहित तुम कियो कृपाकरि देव भुवनपति ॥  
 हित अनहितकी समझिमांहि हैं मंदमती हम ।  
 सब प्राणिनके हेत नाथ तुम बालवैद सम ॥५॥  
 दाता हरता नाहिं भानु सबको बहकावत ।  
 आजकालके छलकरि नितप्रति दिवस गुमा-  
 वत ॥ हे अच्युत जो भक्त नमें तुम चरनकमल  
 कों । छिनक एकमें आप देत मनवांछित फल-

१ बांस । २ पहाड़को ।

कों ॥६॥ तुमसों सन्मुख रहै भक्तिसों सो सुख  
 पावै । जो सुभावतैं विमुख आपतैं दुखहि बढा-  
 वै । सदा नाथ अवदात एकद्युतिरूप गुसांई ।  
 इन दोन्योंके हेत स्वच्छ दरपणवत झांई ॥७॥  
 है अगाध जलनिधी समुदजल है जितनौ ही ।  
 मेरू तुंगसुभाव सिखरलों उच्च भन्यो ही ॥  
 वसुधा अर सुरलोक एहु इसभांति सई है । तेरी  
 प्रभुता देव भुवनिकुं लंघि गई है ॥ ८ ॥ है  
 अनवस्थाधर्म परम सो तत्व तुमारे । कह्यो न  
 आवागमन प्रभू मतमांहिं तिहारे ॥ दृष्ट पदारथ  
 छांडि आप इच्छति अदृष्टकों । विरुधवृत्ति  
 तव नाथ समंजस होय सृष्टकों ॥ ९ ॥ कामदेव-  
 को किया भस्म जगत्राता थे ही । लीनी भस्म  
 लपेटि नाम संभू निजदेही ॥ सूतो होय अचेत  
 विष्णु वनिताकरि हारयो । तुमकों काम न  
 गहै आप घट सदा उजारयो ॥ १० ॥ पापवान  
 वा पुन्यवान सो देव बतावै । तिनके औगुन कहै  
 नाहिं तू गुणी कहावै ॥ निज सुभावतैं अंबुराशि



निज महिमा पावै । स्तोक सरोवर कहे, कहा  
 उपमा बढि जावै ॥ ११ ॥ कर्मनकी थिति जंतु  
 अनेक करै दुखकारी । सो थिति बहु परकार  
 करै जीवनकी ख्वारी ॥ भवसमुद्रके मांहि देव  
 दोन्योंके साखी । नाविक नाव समान आप वा-  
 णीमें भाखी ॥१२॥ सुखकों तो दुख कहै गुण-  
 नकूं दोष विचारै । धर्मकरनके हेत पाप हिरदै-  
 विच धारै ॥ तेल निकासन काज धूलिकों पेलै  
 धानी । तेरे मतसों बाह्य इसे जे जीव अज्ञानी  
 ॥१३॥ विष मोचै ततकाल रोगकों हरै ततच्छन ।  
 माणि औषधी रसांण मंत्र जो होय सुलच्छन ॥  
 ए सब तेरे नाम सुबुद्धी यों मन धरिहैं । भ्रमत  
 अपरजन वृथा नहीं तुम सुमिरन करिहैं ॥१४॥  
 किंचित भी चितमाहिं आप कछु करो न स्वामी ।  
 जे राखैं चितमाहिं आपकों शुभपरिणामी ॥  
 हरतामलवत लखैं जगतकी परिणति जेती ।  
 तेरे चितके बाह्य तोउ जीवै सुखसेती ॥ १५ ॥  
 तीनलोक तिरकालमाहिं तुम जानत सारी ।

स्वामी इनकी संख्या थी तितनीहिं निहारी ॥  
 जो लोकादिक हुते अनंते साहिब मेरा । तेऽपि  
 झलकते आनि ज्ञानका ओर न तेरा ॥ १६ ॥  
 है अगम्य तवरूप करै सुरपति प्रभु सेवा । ना  
 कछु तुम उपकार हेत देवनके देवा ॥ भक्ति नि-  
 हारी नाथ इंद्रके तोषित मनको । ज्यों रवि स-  
 न्मुख छत्र करै छाया निज तनको ॥ १७ ॥ वीत  
 रागता कहां कहां उपदेश सुखाकर । सो इच्छा प्र-  
 तिकूल वचन किम होय जिनेसर । प्रतिकूली भी  
 वचन जगतकूं प्यारे अतिही । हम कछु जानी  
 नाहिं तिहारी सत्यासतिही ॥ १८ ॥ उच्चप्रकृति  
 तुम नाथ संग किंचित न धरनतैं । जो प्रापति  
 तुमथकी नाहिं सो धनेसुरनतैं ॥ उच्चप्रकृति ज-  
 लविना भूमिधर धुनी प्रकासै । जलधि नीरतैं  
 भन्यो नदी ना एक निकासै ॥ १९ ॥ तीनलोकके  
 जीव करो जिनवरकी सेवा । नियमथकी कर-  
 दंड धन्यो देवनके देवा ॥ प्रातिहार्य तौ बनै इं-  
 द्रके बनै न तेरे । अथवा तेरे बनै तिहारे निमित्त

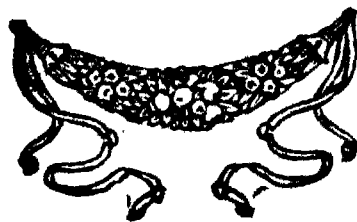
परेरे ॥ २० ॥ तेरे सेवक नाहिं इसे जे पुरुषहीन  
 धन । धनवानोंकी ओर लखत वे नाहिं लखतपन  
 जैसें तमतिथि किये लखत परकासथितीकूं । तैसें  
 सूक्त नाहिं तमथिति मंदमतीकूं ॥२१॥ निज  
 वृध स्वासोच्छ्वास प्रगट लोचन टमकारा तिनकों  
 वेदत नाहिं लोकजन मूढ विचारों ॥ सकल ज्ञेय  
 ज्ञायक जु अमूरति ज्ञान सुलच्छन । सो किमि  
 जान्यो जाय देव तव रूप विचच्छन ॥२२॥ ना-  
 भिरायके पुत्र पिता प्रभु भरततने हैं । कुलप्रका-  
 शिकें नाथ तिहारो तवन भनै हैं ॥ ते लघुधी  
 असमान गुननकों नाहिं भजै हैं । सुवरन आयो  
 हाथि जानि पाषान तजै हैं ॥२३॥ सुरामुरनको  
 जीति मोहने ढोल बजाया । तीनलोकमें किये  
 सकल वशि यों गरभाया ॥ तुम अनंत बलवंत  
 नाहिं ढिग आवन पाया । करि विरोध तुमथकी  
 मूलतै नाश कराया ॥२४॥ एक मुक्तिका मार्ग  
 देव तुमने परकास्या । गहन चतुरगतिमार्ग अन्य  
 देवनकूं भास्या ॥ 'हम सब देखनहार' इसीविधि

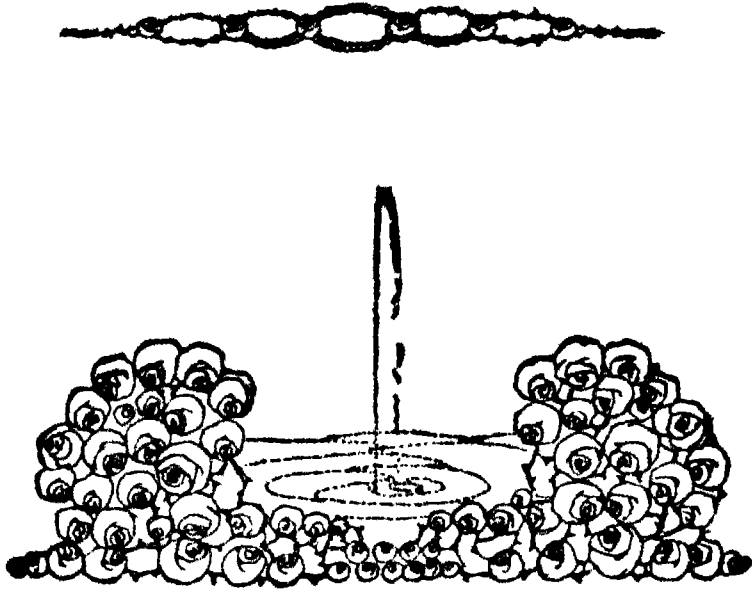
भाव सुमिरिकैं । भुज न विलोको नाथ कदाचित  
 गर्भ जु धरिकैं ॥ २५ ॥ केतुविपची अर्कतनो  
 फुनि अग्नितनो जल । अंबुनिधीअरि प्रलय  
 कालको पवन महावल ॥ जगतमाहिं जे  
 भोग वियोग विपची हैं निति । तेरो उदयो  
 है विपंचतैं रहित जगतपति ॥ २६ ॥ जाने  
 विन हू नवत आपकों जो फल पावै । नमत  
 अन्यको देव जानि सो हाथ न आवै ॥ हरित  
 मणीकूं काच, काचकूं मणी रटत है ॥ ताकी  
 बुधिमें भूल, मूल्य माणिको न घटत है ॥ २७ ॥  
 जे विवहारी जीव वचनमें कुशल सयाने । ते  
 कषायकरि दग्ध नरनकों देव बखानैं ॥ ज्यों  
 दीपक बुझि जाय ताहि कह 'नादि' भयो है । भग्न  
 घडेको कहैं कलस ए मँगल गयो है ॥ २८ ॥  
 स्यादवाद संजुक्त अर्थको प्रगट बखानत । हि-  
 तकारी तुम वचन श्रवनकरि को नहिं जानत ॥  
 दोषरहित ए देव शिरोमणि वक्ता जगगुरु । जो  
 ज्वरसेती मुक्त भयो सो कहत सरल सुर ॥

॥२९॥ विन वांछा ए वचन आपके खिरैं कदा-  
 चित । है नियोग ए कोपि जगतको करत सह-  
 जहित ॥ करै न वांछा इसी चंद्रमा पूरों जल-  
 निधि । सीतरश्मिकूं पाय उदाधि जल बढै स्व-  
 यंसिधि ॥ ३० ॥ तेरे गुण गंभीर परम पावन  
 जगमाई । बहुप्रकार प्रभु हैं अनंत कछु पार न  
 पाई ॥ तिन गुणानको अंत एक याही विधि दीसै ।  
 ते गुण तुझ ही मांहि औरमें नाहिं जगीसै ॥  
 ॥३१॥ केवल थुति ही नाहिं भक्तिपूर्वक हम  
 ध्यावत । सुमरन प्रणमन तथा भजनकर तुम  
 गुण गावत ॥ चितवन पूजन ध्यान नमनकरि  
 नित आराधैं । को उपावकरि देवसिद्धिफलको  
 हम साधैं ॥ ३२ ॥ त्रैलोकी नगराधि देव नित  
 ज्ञानप्रकाशी । परमज्योति परमात्मशक्ति अ-  
 नंती भासी ॥ पुन्य पापतैं रहित पुन्यके कारण  
 स्वामी । नमों नमों जगवंद्य अवंद्यक नाथ अ-  
 कामी ॥ ३३ ॥ रस सुपरस अर गंध रूप नहिं  
 शब्द तिहारे । इनिके विषय विचित्र भेद सब

जाननहारे । सब जीवनप्रतिपाल अन्यकरि हैं  
 अगम्यगन । सुमरनगोचर नाहिं करौं जिन तेरो  
 सुमिरन ॥ ३४ ॥ तुम अगाध जिनदेव चित्तके  
 गोचर नाहीं । निःकिंचन भी प्रभू धनेश्वर जा-  
 चत साँई ॥ भये विश्वके पार दृष्टिसों पार न  
 पावै । जिनपति एम निहारि संतजन सरनै  
 आवै ॥ ३५ ॥ नमों नमों जिनदेव जगतगुरु  
 शिक्षादायक । निजगुणसेती भई उन्नती महिमा  
 लायक ॥ पाहनखंड पहार पछें ज्यों होत और  
 गिर । ल्यों कुलपर्वत नाहिं सनातन दीर्घ भूमि-  
 धर ॥ ३६ ॥ स्वयं प्रकाशी देव रैन दिनकूं  
 नहिं बाधित । दिवस रात्रि भी छतैं आपकी  
 प्रभा प्रकाशित ॥ लाघव गौरव नाहिं एकसो  
 रूप तिहारो । कालकलातैं रहित प्रभूसूं नमन  
 हमारो ॥ ३७ ॥ इहविधि बहु परकार देव तव  
 भक्ति करी हम । जाचूं वर न कदापि दीन है  
 रागरहित तुव ॥ छाया बैठत सहज वृक्षके नीचे  
 है है । फिर छायाकों जाचत यामैं प्रापति कै है

॥ ३८ ॥ जो कुछ इच्छा होय देनकी तौ उप-  
 गारी । द्यो बुधि ऐसी करूं प्रीतिसौं भक्ति ति-  
 हारी । करो कृपा जिनदेव हमारे परि है तोषित ।  
 सनमुख अपनो जानि कौन पंडित नहिं पोषित  
 ॥३९॥ यथाकथंचित भक्ति रचै विनयीजन केई  
 तिनकूं श्रीजिनदेव मनोवांछित फल देही ॥  
 फुनि विशेष जो नमत संतजन तुमको ध्यावै ।  
 सो सुख जस 'धन-जय' प्रापति है शिवपद पावै  
 ॥४०॥ श्रावक माणिकचंद्र सुबुद्धी अर्थ बताया ।  
 सो कवि 'शांतीदास' सुगमकरि छंद बनाया ॥  
 फिरि फिरिकै ऋषिरूपचंदने करी प्रेरणा ।  
 भाषास्तोतर विषापहारकी पढो भविजना ॥४१॥





## महावीराष्टकस्तोत्र ।

शिवरिणी ।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्रिदचितः  
समं भांति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोंतरहिताः ।  
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो महा-  
वीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ( नः ) ॥१॥  
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितं जनान्को-  
पापायं प्रकटयाति वाभ्यंतरमपि । स्फुटं मूर्तिर्यस्य



प्रशामितमयी वातिविमला, महावीर० ॥ २ ॥  
 नमन्नाकेंद्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं लस-  
 त्यादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां । भवज्ज्वा-  
 लाशांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि, महावीर० ३  
 यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह क्षणादासी-  
 त्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः । लभंते सद्भ-  
 क्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा, महावीर० ॥४॥  
 कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो विचि-  
 त्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः । अजन्मापि  
 श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर्, महावीर०  
 ॥ ५ ॥ यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविम-  
 ला, बृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।  
 इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता, महा-  
 वीर० ॥ ६ ॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम  
 सुभटः कुमारावस्थायामपि निजवलाद्येन  
 विजितः । स्फुरन्नित्यानंदप्रशमपदराज्याय स  
 जिनः महावीर० ॥७॥ महामोहातंकप्रशमनप-  
 राकस्मिकभिषड् निरापेक्षो बंधुर्विदितमहिमा

मंगलकरः । शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तम-  
गुणो, महावीर० ॥ ८ ॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेंदुना कृतं ।  
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिं । ९ ।

। मंगलाष्टकं ।

श्रीमन्नप्रसुरामुरेंद्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभाभात्व-  
त्पादनखेंदवः प्रवचनांभोधींदवः स्थायिनः ।  
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः  
स्तुत्या योगिजनैश्च पंचगुरवः कुर्वतु ते मंगलम्  
॥ १ ॥ सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं  
मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः ।  
धर्मः सूक्तिमुधा च चैत्यमखिलंचैत्यालयश्चालयं,  
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वतु ते मंगलं । २ ।  
नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशति  
श्रीमंतो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश । ये  
विष्णुप्रतिविष्णुलांगलधराः सप्तोत्तराः विंशतिः  
स्रैकाल्ये प्रथितांस्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वतु ते मंग-  
लं ॥ ३ ॥ देव्योष्टौ च जयादिका द्विगुणिता वि-

द्यादिका देवताः श्रीतीर्थकरमातृकाश्च जनका  
 यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा । द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्ति-  
 थिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा दिक्पाला दश चैत्य-  
 मी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मंगलं ॥ ४ ॥ ये सर्वोष-  
 धऋद्धय सुतपसो वृद्धिं गताः पंच ये ये चाष्टांगम-  
 हानिमित्तिकुशला येषाविधाश्चारणाः । पंचज्ञा-  
 नधरास्त्रयोपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः ।  
 सप्तैते सकलार्चिता गलभृताः कुर्वन्तु ते मंगलं  
 ॥ ५ ॥ कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमहो वीरस्य  
 पावापुरे चंपायां वसुपूज्यप्रज्जिनपतेः संमेदरोले-  
 र्हतां । शेषाणामपि चोर्जयंत शिलरे नेमोश्चर-  
 स्यार्हतो । निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु  
 ते मंगलं ॥ ६ ॥ ज्योतिर्व्यंतरभावनामरगृहे मेरौ  
 कुलाद्रौ तथा जंबूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा  
 वक्षाररूप्याद्रिषु । इष्वाकारगिरौ च कुंडलनगे  
 द्वीपे च नंदीश्वरे शैले ये मनुजात्तरे जिनगृहाः  
 कुर्वन्तु ते मंगलं ॥ ७ ॥ यो गर्भावतरोत्सवो भग-  
 वतां जन्माभिषेकोत्सवो यो जातः परिनिष्क-

मेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् । यः कैवल्यपुर-  
प्रवेशमहिमा संभाविनः स्वर्गाभिः कल्याणानि  
च तानि पंच सततं कुर्वतु ते मंगलं ॥ ८ ॥

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसंप-  
त्प्रदं कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थकराणा-  
मुषः । ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थका-  
मान्विता लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाण  
लक्ष्मीरपि ॥११॥ इति मंगलाष्टकं ॥

**अकलंकस्तुति ।**

शार्दूलविक्रीडितछन्दः ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालो-  
कितं साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं  
सांगुलि । रागद्वेषभयामयांतकजरालोलत्वलो-  
भादयो नालं यत्पदलंघनाय स महादेवो मया  
वन्द्यते ॥१॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरभवा तीव्रा-  
र्चिषा वह्निना, यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने य-  
स्मात्मजो वागुहः । सोयं किं मम शंकरो भय-  
तृषारोषार्तिमोहक्षयं कृत्वा यः स तु सर्ववित्तनु-

भृतां क्षेमंकरः शंकरः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्देत्येन्द्रवक्षःस्थलं सारथ्येन धनंजयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् । नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहृतं विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महाविष्णुः सदेशो मम ॥ ३ ॥  
 उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः पात्रीदंडकमंडलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिं । आविर्भावयितुं भवंति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशां क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोषरहितो ब्रह्माकृतार्थोस्तु नः ॥ ४ ॥ यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन्, कर्ता कर्मफलं न भुंक्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथं । यज्ज्ञानं क्षणवर्तिवस्तुसकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धो मम ॥ ५ ॥

स्रग्धरा छंदः ।

ईशः किं छिन्नलिङ्गो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यान् नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च । आर्द्राजः

किंत्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मां-  
 तरायं संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपपशुः  
 कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री-  
 सुरयुवतिरसावेशविभ्रांतचेताः शंभुः खट्वां-  
 गधारी गिरिपतितनयापांगलीलानुविद्धः । वि-  
 ष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद्गोपनाथस्य मो-  
 हादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोयमेष्वा-  
 सनाथः ॥ ७ ॥ एको गृह्णति विप्रसार्य कुक्कुभां  
 चक्रे सहस्रान्मुजानेकः शेषभुजंगभोगशयनेव्या-  
 दाय निद्रायते । दृष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादे-  
 कश्चतुर्वक्त्रतामेते मुक्तिपथं वदन्ति विदुषामि-  
 त्येतदत्यद्भुतं ॥ ८ ॥ यो विश्वं वेद वेद्यं जनन  
 जलनिधेर्भगिनः पारदृश्वा पौर्वापर्याविरुद्धं वच-  
 नमनुपमं निष्कलंकं यदीयं । तं वंदे साधुबंधं  
 सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषंतं बुद्धं वा वर्द्धमानं  
 शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ९ ॥ माया  
 नास्ति जटाकपालमुकुटं चंद्रो न मूर्द्धावली,  
 खट्वांगं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रं

मुखं । कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं  
 न नृत्यं पुनः सोऽस्मान्पातु निरंजनो जिनपतिः  
 सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः ॥१०॥ नो ब्रह्मांकितभूतलं  
 न च हरेः शंभोर्न मुद्रांकितं नो चंद्रार्ककरांकितं  
 सुरपतेर्वज्रांकितं नैव च । षड्वक्त्रांकितबौद्धदे-  
 वहुतभुग्यक्षोरगैर्नांकितं नग्नं पश्यत वादिनो  
 जगदिदं जैनेंद्रमुद्रांकितं ॥ ११ ॥ मौजीदंडक-  
 मंडलुप्रभृतयो नो लांछनं ब्रह्मणो । रुद्रस्यापि  
 जटाकपालमुकुटं कोपीनखट्वांगना । विष्णो-  
 श्चक्रगदादिशंखमतुलं बुद्धस्य रक्तांबरं नग्नं  
 पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेंद्रमुद्रांकितं ॥१२॥  
 खट्वांगं नैव हस्ते न च हृदि रचिता लंबते  
 मुंडमाला भस्मांगं नैव शूलं न च गिरिदुहिता  
 नैव हस्ते कपालं । चंद्रार्द्धं नैव मूर्द्धन्यपि वृषग-  
 मनं नैव कंठे फणींद्रः तं वंदे त्यक्तदोषं भवभ-  
 यमथनं चेश्वरं देवदेवं ॥१३॥ नाहंकारवशी कृ-  
 तेनमनसा न द्वेषिणा केवलं नैरात्म्यं प्रतिपद्य  
 नश्याति जने कारुण्यबुद्ध्या मया । राज्ञः श्रीहिम-

शीतलस्य सदासि प्रायोविदग्धात्मनो बौद्धौघा  
 न्सकलान् विजित्यसघटः पादेन विस्फालितः  
 ॥ १४ ॥ किं वाद्यो भगवानमेयमहिमा देवोक-  
 लंकः कलौ काले यो जनतासुधर्मनिहितो दे-  
 वोऽकलंको जिनः । यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरी-  
 जालेप्रमेयाकुला निर्मग्ना तनुतेतरां भगवतीता-  
 रा शिरःकंपनं ॥ १५ ॥ सा तारा खलु देवता  
 भगवती मन्यापि मन्यामहे षण्मासावधिजाड्य-  
 सांख्यभगवद्भट्टाकलंकप्रभोः । वाक्कलोलपरंपरा-  
 भिरमते नूनं मनोमजनव्यापारं सहतेस्म वि-  
 स्मितमतिः संताडितेतस्ततः ॥ इति ॥

**पार्श्वनाथस्तोत्रम् ।**

भुजंगप्रयात छंदः ।

नरेंद्रं फणींद्रं सुरेंद्रं अधीसं । शतेंद्रं सु पूजै  
 भजै नाथ शीशं ॥ मुनींद्रं गणेंद्रं नमो जोडि  
 हाथं नमो देवदेवं सदा पार्श्वनाथं ॥१॥ गजेंद्रं  
 मृगेंद्रं गह्यो तू छुडावै । महा आगतेँ नागतेँ तू  
 बचावै ॥ महावीरतेँ युद्धमेँ तू जितावै । महा



रोगतैं बंधतैं तू छुडावै ॥ २ ॥ दुखीदुःखहर्ता  
 सुखीसुखकर्ता । सदासेवकोंको महानंदभर्ता  
 हरे यज्ञ राक्षस भूतं पिशाचं । विषं डांकिनी  
 विघ्नके भय अवाचं । ३ । दरिद्रीनको द्रव्यके  
 दान दीने । अपुत्रीनकों तू भले पुत्र कीने ॥  
 महासंकटोंसे निकारै विधाता । सबै संपदा सर्व  
 को देहि दाता ॥ ४ ॥ महाचोरको बज्रका भय  
 निवारै । महापौनके पुंजतैं तू उबारै ॥ महाक्रो-  
 धकी अग्निको मेघ धारा । महालोभ शैलै  
 शको वज्र भारा । ५ । महामोह अंधेरको ज्ञान  
 भानं । महाकर्मकांतारको दौं प्रधानं ॥ किये  
 नाग नागिनं अधोलोकस्वामी । हरयो मान तू  
 दैत्यको हो अकामी ॥ ६ ॥ तुही कल्पवृक्षं तुही  
 कामधेनं तुही दिव्य चिंतामणी नाग एनं । पशू  
 नर्कके दुःखतैं तू छुडावै । महास्वर्गतैं मुक्तिमें तू  
 बसावै ॥ ७ ॥ करै लोहको हेमपाषाण नामी ।  
 रटै नामसो क्यों न हो मोक्षगामी ॥ करै सेव  
 ताकी करै देवसेवा । सुनै वैन सोही लहै ज्ञान

मेवा ॥ ८ ॥ जपै जाप ताको नहीं पाप लागै ।  
 धरै ध्यान ताके सबै दोष भागै ॥ विना तोहि  
 जाने धरे भव घनेरे । तुम्हारी कृपातेँ सरैँ काज  
 मेरे ॥ ६ ॥ दोहा—

गणधर इंद्र न कर सकैँ, तुम विनती भगवान ।  
 'द्यानत' प्रीति निहारकैँ, कीजैँ आप समान ।१।

भूधरकृत पार्श्वनाथ स्तोत्र ।

दोहा—कर जिनपूजा अष्टविधि, भावभक्ति  
 जिन भाय । अब सुरेश परमेश थुति, करौँ शी-  
 श निज नाय ॥ १ ॥

चोपाई ।

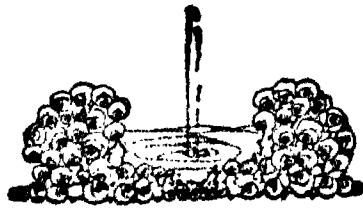
प्रभु इम जग समरथ ना कोय । जासौँ तुम  
 यश वर्णन होय ॥ चार ज्ञानधारी मुनि थकैँ ।  
 हमसे मंद कहा कर सकैँ ॥२॥ यह उर जानत  
 निश्चय हीन । जिनमहिमावर्णन हम कीन ॥  
 पर तुम भक्ति थकी वाचाल । तिसवस होय कहूं  
 गुणमाल ॥३॥ जय तीर्थकर त्रिभुवन धनी ।  
 जय चंद्रोपम चूडामनी ॥ जय जय परम धाम

दातार । कर्मकुलाचल चूरनहार ॥४॥ जय शि-  
 वकामिनिकंत महंत । अतुल अनंत चतुष्टयवंत ॥  
 जय जय आशभरण बडभाग । तपलक्ष्मीके  
 सुभग सुहाग ॥५॥ जय जय धर्मध्वजाधर धीर ।  
 स्वर्गमोक्ष दाता वरवीर ॥ जय रत्नत्रयरत्नक-  
 रंड । जय जिन तारण तरण तरंड ॥ ६ ॥ जय  
 जय समवशरणश्रृंगार । जय संशयवनदहन  
 तुषार ॥ जय जय निर्विकार निर्दोष । जय अ-  
 नंत गुणमाणिक कोष ॥ ७ ॥ जय जय ब्रह्म-  
 चर्यदल साज । काम सुभट विजयी भटराज ॥  
 जय जय मोहमहातरु-करी । जय जय मदकुं-  
 जर-केहरी ॥ ८ ॥ क्रोधमहानल-मेघप्रचंड ।  
 मानमोहधर दामिनिदंड ॥ माया-बेल-धनंजय-  
 दाह । लोभ सलिलशोषण-दिननाह ॥ ९ ॥ तुम  
 गुणसागर अगम अपार । ज्ञानजहाज न पहुंचै  
 पार ॥ तट ही तटपर डोलै सोय । कारन सिद्धि  
 तहां हीं होय ॥१०॥ तुमरी कीर्तिबेल बहु ब-  
 ढी । यत्न विना जगमंडप चढी ॥ अवर कुदेव

सुयस निज चहैं । प्रभु अपने थल ही यश लहैं  
 ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमै विन ज्ञान । कीना  
 मोहमहाविष पान ॥ तुम सेवा विषनाशक जरी ।  
 तिह मुनिजन मिल निश्चय करी ॥१२॥ जन्म-  
 जरा मिथ्या-मत-मूल । जन्म मरण-लागे तहँ  
 फूल । सो कबहूँ विन भक्ति कुठार । कटै नहीं  
 दुखफलदातार ॥ १३ ॥ कल्पसरोवर चित्रा  
 बेल । कामपोरवा नवनिधि मेल ॥ चिंतामणि  
 पारस पाषान । पुण्यपदारथ और महान ॥१४॥  
 ये सब एकजन्म-संयोग । किंचित सुखदातार  
 नियोग ॥ त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव, जन्म  
 जन्म सुखदायक देव ॥ १५ ॥ तुम जगबांधव  
 तुम जगतात । अशरणशरण विरद विख्यात ॥  
 तुम सब जीवनके रखवाल । तुम दाता तुम  
 परम दयाल ॥ १६ ॥ तुम पुनीत तुम पुरुष  
 प्रमान । तुम समदर्शी तुम सब जान ॥ जय  
 मुनि-यज्ञ-पुरुष परमेश । तुम ब्रह्मा तुम विष्णु  
 महेश ॥ १७ ॥ तुम जगभर्ता तुम जग जान ।

स्वामि स्वयंभू तुम अमलान ॥ तुम विन तीन  
 काल तिहुं लोय । नाहीं शरण जीवकां  
 होय ॥ १८ ॥ यातें अब करुणानिधि नाथ ।  
 तुम सन्मुख हम जोडें हाथ ॥ जबलों निकट  
 होय निर्वान । जगनिवास छूटै दुखदान ॥१९॥  
 तबलों तुम चरणांबुज बास । हम उर होय यही  
 अरदास ॥ और न कछु बांछा भगवान । है  
 दयालु दीजे वरदान ॥ २० ॥

दोहा—इहिविध इंद्रादिक अमर, कर बहु  
 भक्ति विधान । निज कोठे बैठे सकल, प्रभु  
 सन्मुख सुख मान ॥ २१ ॥ जीति कर्मरिपु जे  
 भये, केवल लब्धि निवास । सो श्रीपार्श्वप्रभू  
 सदा, करो विघ्नघन नाश ॥



भाषा पर्वपूजासग्रह ।

। देवपूजा भाषा ।

प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ॥  
तुम-पद-पूजा करत हूं, हमपै करुना होहि ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्र  
भगवन् ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । ओं ह्रीं अष्टादशदोष-  
रहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्रभगवन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ।  
ठः ठः । ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजि-  
नेन्द्रभगवन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव षट् ।

बहु तृषा सतायो आते दुख पायो, तुमपै आयो  
जल लायो । उत्तम गंगाजल, शुचि अतिशीतल  
प्राशुक निर्मल, गुन गायो ॥ प्रभु अंतरजामी,  
त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो । यह  
अरज सुनीजै, ल न कीजै, न्याय करीजै  
दया धरो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभग-  
वद्भ्योजन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥  
अघ जपत निरंतर, अगनिपटंतर, मो उर अं-

तर खेद करयो । लै बावन चंदन, दाहनिकंदन  
तुमपदवंदन हरप धरयो ॥ प्रभु० ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो चंदनं  
औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता  
बहुत करै । तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित,  
पूजत पंडित, प्रीति धरै ॥ प्रभु० ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो अक्ष०  
सुरनरपशुको दल, काम महाबल, बातकहत  
छल मोह लिया । ताके शर लाऊं फूल चढाऊं,  
भक्ति बढाऊं खोल हिया ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योःपुष्पं  
सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं भूख सदाही, मो  
लागै । सद घेवर बावर, लाडू बहुधर, थार क-  
नक भर, तुम आगै ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योःनैवेद्यं  
अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो  
हम, दुख पावै । तम मेटनहारा, तेज अपारा.  
दीप सँवारा. जस गावै ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्योःदीपं०

इह कर्म महावन. भूल रह्यो जन. शिवमारग  
नहिं पावत है । कृष्णागरुधूपं. अमलअनूपं.  
सिद्धस्वरूपं ध्यावत है ॥ प्रभु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिसद्गुणसहितजिनेभ्योऽष्टकर्म-  
दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

सवतैं जोरावर. अंतराय अरि. सुफल विघ्नकरि  
डारत हैं । फलपुंज विविध भर. नयन मनोहर  
श्रीजिनवरपद धारत हैं ॥ प्रभु ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो मोक्ष-  
फलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

आठों दुखदानी. आठ निशानी. तुम ढिंग  
आनि निवारन हो । दीनननिस्तारन. अधम  
उधारन. 'द्यानत' तारन. कारन हो ॥ प्रभु० ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगव-  
द्भ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाला । दोहा ।

गुण अनंत को कहिसकै. खियालीस जिनराय  
प्रगट सुगुन गिनती कहू तुम ही होहु सहाय । १ ।

चौपाई ( १६ मात्रा )

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अ-



ध्यातम नामी ॥ तीन काल विधि परगट जा-  
 नी । चार अनंतचतुष्टय ज्ञानी ॥२॥ पंच पराव-  
 र्तन परकासी । छहों दरबगुनपरजयभासी ॥  
 सातभंगवानी-परकाशक । आठों कर्म महारिपु-  
 नाशक ॥ ३ ॥ नवतत्त्वनके भाखनहारे । दश  
 लक्षणसों भविजनतारे ॥ ग्यारह प्रतिमाके उ-  
 पदेशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥ ४ ॥  
 तेरहविध चारितके दाता । चौदह मारगनाके  
 ज्ञाता ॥ पंद्रह भेद प्रमाद निवारी । सोलह  
 भावन फल अविकारी ॥ ५ ॥ तारे सत्रह अंक  
 भरत भुव । ठारै थान दान दाता तुव ॥ भाव  
 उनीस जु कहे प्रथम गुन । बीस अंक गणधर-  
 जीकी धुन ॥६॥ इकइस सर्वघातविधि जानै ।  
 बाइस बंध नवम गुणथानै ॥ तेइस निधि अरु  
 रतन नरेश्वर । सो पूजै चौबीस जिनेश्वर ॥७॥  
 नाश पचीस कषाय करी हैं । देशघाति छब्बीस  
 हरी हैं । तत्व दरब सत्ताइस देखे । मति विज्ञान  
 अठाइस पेखे ॥ ८ ॥ उनतिस अंक मनुष सब

जाने । तीस कुलाचल सर्व बखाने । इकतिस  
 पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समायिक  
 टारे ॥१॥ तेतिस सागर सुखकर आये । चौंति-  
 स भेद अलब्धि बताये ॥ पैतिस अच्छर जप  
 सुखदाई । छत्तिस कारन रीति भिटाई ॥ १० ॥  
 सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें । अठतिस पद  
 लहि नरक अपुन में ॥ उनतालीस उदीरन तेरम ।  
 चालिस भवन इंद्र पूजें नम ॥ ११ ॥ इकतालीस  
 भेद आराधन । उदै वियालिस तीर्थकर भन ॥  
 तेतालीस बंध ज्ञाता नहिं । द्वार चवालिस नर  
 चौथेमहिं ॥ १२ ॥ पैतालीस पल्यके अच्छर ।  
 छियालीस विन दोष मुनीश्वर ॥ नरक उदै न  
 छियालिस मुनिधुन । प्रकृत छियालिस नाश द-  
 शमगुन ॥ १३ ॥ छियालीस घन राजु सात भुव  
 अंक छियालिस सरसों कहि कुव । भेद छिया-  
 लिस अंतर तपवर । छियालीस पूरन गुन जिन-  
 वर ॥ १४ ॥

आडिल्ल-मिथ्यातपन निवारन चंद समान हो ।

मोहतिमिर वारनको कारन भानु हो ॥  
 कामकषाय मिटावन मेघ मुनीश हो ।  
 'द्यानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो ।१५।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रेभ्यः  
 पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

### । सरस्वतीपूजा ।

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जडरीति ।  
 भवसागरसों ले तिरै, पूजै जिनवचप्रीति ॥१॥

ओंह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर ।  
 संवौषट् । ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि । अत्र तिष्ठ  
 तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र मम  
 सन्निहितो भव भव । षषट् ।

छीरोदधिगंगा, विमल तरंगा, सलिल अभं-  
 गा, सुखसंगा । भरि कंचन झारी, धार निकारी  
 तृषा निवाहरी, हितचंगा ॥ तीर्थकरकी धुनि, ग-  
 णधरने सुनि, अंग रचे चुनि, ज्ञानभई ॥ सो  
 जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन जानी,  
 पूज्य भई ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

करपूर मैगाया, चंदन आया, केशर लाया,  
रंग भरी । शारदपद बंदों मन अभिनंदों, पाप-  
निकंदों. दाह हरी ॥ तीर्थकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।२।

सुखदास कमोदं. धारकमोदं. अति अनुमोदं  
चंदसमं । बहुभक्ति बढ़ाई. कीरति गाई. होहु  
सहाई. मात ममं ॥ तीर्थकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बहुफूलसुवासं. विमलप्रकाशं. आनंदरासं लाय  
धरे । मम काम मिटायो. शील बढायो. सुखउप-  
जायौ दोष हरे ॥ तीर्थकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पनिर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पकवान बनाया. बहुघृतलाया. सब विध भाया.  
मिष्टमहा । पूजंथुति गाऊं. प्रीति बढ़ाऊं. क्षुधा  
नशाऊं. हर्ष लहां ॥ तीर्थकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करि दीपक-जोतं. तमछय होतं. ज्योति उदोतं.  
तुमहिं चदे । तुम हो परकाशक. भरमविनाशक

हम घट भासक. ज्ञान बढै ॥ तीर्थकरकी० ॥

ओं ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभगंध दर्शोकर, पावकमें धर. घूप मनोहर  
स्वेत हैं । सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास  
कहावैं सेवत हैं ॥ तीर्थकरकी० ॥७॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।७।

बादाम छुहारी- लोंग सुपारी. श्रीफल भारी.  
ल्यावत हैं । मनवांछित दाता. मेट असाता. तुम  
गुन माता. ध्यावत हैं ॥ तीर्थकरकी० ॥८॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामीति स्वाहा ।८।

नयननसुखकारी. मृदुगुनधारी. उज्ज्वलभारी.  
मोलधरें । शुभगंधसमहारा. वसन निहारा. तुम-  
तन धारा ज्ञान करै ॥ तीर्थकरकी० ॥९॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा ।९।

जलचंदन अच्छत. फूल चरु चत दीप घूप  
अति फल लावैं । पूजाको ठानत. जो तुम जानत.  
सो नर दानत. सुख पावैं ॥ तीर्थकरकी० ॥१०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।१०।

ओंकार धुनिसार. द्वादशांगवाणी विमल ।  
 नमो भक्ति उर धार, ज्ञान करै जडता हरै ॥  
 पहलो आचारांग बखानो । पद अष्टादश  
 सहस्र प्रमानो । दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं । पद  
 छत्तीस सहस्र गुरु भाषं ॥१॥ तीजो ठाना अंग  
 सुजानं । सहस्र वियालिस पदसरधानं ॥ चौथो  
 समवायांग निहारं । चौसठ सहस्र लाख इकधारं  
 ॥२॥ पंचम व्याख्याप्रज्ञपति दरसं । दोय लाख  
 अट्टाइस सहस्रं ॥ छट्टो ज्ञातृकथा विसतारं ।  
 पांचलाख छप्पन हजारं ॥३॥ सप्तम उपासका-  
 ध्ययनंगं । सत्तर सहस्र ग्यारलाख भंगं । अष्टम  
 अंतकृतं दस ईसं । सहस्र अठाइस लाख तेईसं  
 ॥ ४ ॥ नवम अनुत्तरदश सुविशालं । लाख  
 बानवै सहस्र चवालं ॥ दशम प्रश्नव्याकरण  
 विचारं । लाख तिरानव सोल हजारं ॥ ५ ॥  
 ग्यारम सूत्रविपाकसु भाखं । एक कोड चौरासी  
 लाखं ॥ चार कोडि अरु पंद्रह लाखं । दो हजार

सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥ द्वादश दृष्टिवाद  
 पनभेदं । इकसौ आठ कोडि पन वेदं ॥ अडसट  
 लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या  
 हन हैं ॥ ७ ॥ इक सौ बारह कोडि बखानो ।  
 लाख तिरासी ऊपर जानो ॥ ठावन सहस पंच  
 अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥  
 कोडि इकावन आठ हि लाखं सहस चुरासी  
 छहसौ भाखं ॥ साढ़े इकीस सिलोक बताये ।  
 एक एक पदके ये गाये ॥ ९ ॥ घत्ता—

जा वानीके ज्ञानमें, सूझै लोक अलोक ।

‘धानत’ जग जयवंत हो, सदा देत हों धोक ॥

ओं ह्रीं श्रीं श्रोजिनमुज्जोदुभवसरस्वतोदेव्यै महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

## गुरुपूजा ।

दोहा—चहुंगति दुख सागरविषै, तारनतरनजि-  
 हाज । रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा  
 मुनिराज ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीं आचार्योंपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! भद्रावतरावतर  
 संबोषट् । ओं ह्रीं श्रीं आचार्योंपाध्यायसर्वसाधु गुरु समूह ! भद्र

तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायगुरुसमूह ! ॥  
मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

शुचि नीर निर्मल छीरदधिसम, सुगुरु चरन  
चढाइया । तिहुँधार तिहुँ गदटार स्वामी, अति  
उछाह बढाइया ॥ भवभोगतनवैराग्य धार,  
निहार शिवतप तपत हैं । तिहुं जगतनाथ  
अधार साधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जन्म० जलं निर्वपामी०  
करपूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा  
करौं । सब पापताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल  
विस्तरौं ॥ भवभोग० ॥२॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवातापविनाशनायचंदनं०  
तंदुल कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत  
हैं । गुनकार औगुनहार स्वामी, वंदना हम  
करत हैं ॥ भवभोग० ॥३॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०  
शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरु पायनि परत  
हों । निरवार मारउपाधि स्वामी, शील दृढ उर  
धरत हों ॥ भवभोग० ॥ ४ ॥



ओंहीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पे  
पकवान मिष्ट सलौन सुंदर. सुगुरुपायनि प्रीति  
सौं । धर छुधारोग विनाश स्वामी. सुथिर कीजे  
रीतिसौं ॥ ५ ॥

ओंहीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवे०  
दीपकउदोत सजोत जगमग. सुगुरुपद पूजों  
सदा । तमनाश ज्ञानउजास स्वामी. मोहि मोह  
न हो कदा ॥ भवभोग० ॥ ६ ॥

ओंहीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योमोहान्धकारविनाशनाय दीपं  
बहु अगर आदि सुगंध खेऊं. सुगुण पद पद्महिं  
खरे । दुखपुंजकाठ जलाय स्वामी. गुण अच्छय  
चितमैं धरे ॥ भवभोग० ॥ ७ ॥

ओं हीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्म दहनाय धूपं नि०  
भर थार पूग बदाम बहुविध. सुगुरुक्रम आर्गे  
धरों । मंगल महाफल करो स्वामी. जोर कर  
विनती करों ॥ भवभोग० ॥ ८ ॥

ओंहीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०  
जल गंध अक्षत फूल नेवज. दीप धूप फलावली ।

द्यानत सुगुरूपद देहु स्वामी. हमहिं तार उता-  
बलो ॥ भवभोग० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये सर्वं नि०

अथ जयमाला ।

दोहा—कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार  
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुनभंडार ॥१॥  
तीन घाटि नवकोड सब, बंदों सीस नवाय ।  
गुन तिन अट्टाईस लों, कहूं आरती गाय ॥२॥  
बेसरो छंद—एक दया पालें मुनिराजा, रागदोष  
द्वै हरन परं । तीनोंलोक प्रगट सब देखें, चारों  
आराधन निकरं ॥ पंच महाव्रत दुद्धर धारें, छहों  
दग्ब जानें सुहितं । सात भंगवानी मन लावें,  
पावें आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥ नवों पदारथ  
विधिसों भाखें, बंध दशों चूरन करनं । ग्यारह  
शंकर जानें मानें, उत्तम बारह व्रत धरनं ॥ तेरह  
भेद काठिया चूरें, चौदह गुनथानक लखियं ।  
महाप्रमाद पंचदश नाशें, सोलकषाय सबै नशियं  
४ ॥ बंधादिक सत्रह सब चूरें, ठारह जन्मन

मरन मुनं । एक समय उनईस परीसह, बीस प्ररू  
 पनिमें निपुणं । भाव उदीक इकीसों जानें, बाइस  
 अभखन त्याग करं । अहिमिंदर तेईसों वंदें, इंद्र  
 सुरग चौवीस वरं ॥५॥ पच्चीसों भावन नित  
 भावें, छब्बिस अंग उपंग पढें । सत्ताईसों विषय  
 विनाशें, अठ्ठाईसों गुण सु पढें । शीत समय सर  
 चौहटवासी, ग्रीषमगिरिशिर जोग धरं । वर्षा वृक्ष  
 तरें थिर ठाढे, आठ करम हनि सिद्ध वरं ॥६॥  
 दोहा—कहों कहालों भेद में, बुध थोरी गुन भूर ।  
 'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति करो भरपूर ॥ ७ ॥  
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

### । अकृतिम चैत्यालयपूजा ।

आठ किरौड रु छप्पन लाख । सहस सत्यावण  
 चतुशत भाख ॥ जोड इक्यासी जिनवर थान ।  
 तीनलोक आह्वान करान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचासल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः  
 शतैकाशीति अकृतिमजिनचैत्यालयानि अत्र अवतरत अवतरत ।सं-  
 शौषट ।

क्षीरोदधिनीरं उज्ज्वल सारं. छान सुचीरं.  
भरि झारी । अति मधुर लखावन. परम सु पा-  
वन. तृषा बुझावन गुण भारी ॥ वसुकोटि सु  
छप्पन लाख सत्ताणव. सहस चारसत इक्यासी ।  
जिनगेह अकीर्तिम तिहुँजगभीतर. पूजत पद  
ले अविनाशी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतै-  
काशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिर पावन. चंदन बावन. तापबुझावन  
घसि लीनो । धरि कनक कटोरी द्वै करजोरी.  
तुमपद ओरी चित दीनो ॥ वसु० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःश-  
तैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

बहुभांति अनोखे. तंदुल चोखे. लखि निरदोखे  
हम लीने । धरि कंचनथाली. तुमगुणमाली.  
पुंजविशाली करदीने ॥ वसु० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःश-  
तैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

शुभ पुष्प सुजाती है बहुभांती. अलि लिप-

टाती लेय वरं । धरि कनकरकेवी. करगह लेवी.  
तुमपद जुगकी भेट धरं ॥ वसु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःश-  
तैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

खुरमा जु गिंदौडा, बरफी पेडा, घेवर मोदक  
भरि थारी । विधिपूर्वक कीने, घृतपयभीने. खँड  
में लीने, सुखकारी ॥ वसु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःश-  
तैकाशीति अकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीतिस्वाहा ॥

मिथ्यात महातम, छाय रह्यो हम, निजभव  
परणति. नाहिं सूझै । इहकारण पाकें दीप सजा  
कैं, थाल धराकैं. हम पूजैं ॥ वसु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः  
शतैकाशीति अकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा

दशगंध कुटाकैं, घूप बनाकैं, निजकर लेकैं  
धरि ज्वाला । तसु धूम उडाई, दशदिश छाई,  
बहु महकाई, अति आला ॥ वसु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः  
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्योधूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ताप्यारे, द्राख  
वरं । इन आदि अनोखे लखि निरदोखे, था-  
पलजोखे, भेट धरं ॥ वसु० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशलक्षसप्तनवतिसहस्रचतु-  
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल चंदन तंदुल कुसुम रु नेवज, दीप धूप  
फल, थाल रचौं ॥ जयघोष कराऊं, बीन बजा-  
ऊं, अर्घ चढाऊं खूब नचौं ॥ वसु० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशलक्षसप्तनवतिसहस्रचतु-  
शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ प्रत्येक अर्घ । चौपाई ।

अधोलोक जिन आगमसाख । सात कोडि  
अरु बहतर लाख ॥ श्रीजिनभवनमहा छवि  
देइ । ते सब पूजौं वसुविध लेइ ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अधोलोकसंबन्धिसप्तकोटिद्विसप्ततिलक्षाकृत्रिम श्रीजिनचै-  
त्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मध्यलोकजिनमंदिरठाठ । साढे चारशतक  
अरु आठ ॥ ते सब पूजौं अर्घ चढाय । दनवच  
तन त्रयजोग मिलाय ॥ २ ॥

ओं ह्रीं मध्यलोकसंबन्धिचतुःशताष्ट्यं चाशत् श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्चं  
आडिल्ल—ऊर्ध्वलोकके मांहे भवनजिनजानिये ।

लाखचुरासी सहस सत्याणव मानिये ॥

तापै धरि तेईस जजौं शिर नायकै ।

कंचन थाल मभार जलादिक लायकै ।

ओं ह्रीं ३ ध्वलोकसंबन्धिचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति श्री-  
जिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं ॥ ३ ॥

वसुकोटि छप्पनलाख ऊपर, सहस सत्याणव  
मानिये । सतच्यारपै गिनले इक्यासी, भवन  
जिनवर जानिये ॥ तिहुँलोकभीतर सासते, सुर  
असुर नर पूजा करै । तिन भवनकों हम अर्घ  
लेकै, पूजि हैं जगदुख हरै ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्यष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः शतै-  
काशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घ्यनिर्बपामीतिस्वाहा

दोहा—अब वरणों जयमालिका सुनो भव्य  
चितलाय । जिनमंदिर तिहुँलोकके, देहु सकल  
दरसाय ॥ १ ॥

पद्दरि छंद ।

जय अमल अनादि अनंत जान । अनिमित

जु अकीर्तम अचल थान ॥ जय अजय अखंड  
 अरूपधार । षट्द्रव्य नहीं दीसै लगार ॥ २ ॥  
 जय निराकार अविकार होय । राजत अनंत  
 परदेश सोय ॥ जे शुद्ध सुगुण अवगाह पाय ।  
 दशदिशामांहिं इहविध लखाय ॥ ३ ॥ यह  
 भेद अलोकाकाश जान । तामध्य लोक नभ  
 तीन मान ॥ स्वयमेव बन्यो अविचल अनंत ।  
 अविनाशि अनादि जु कहत संत ॥ ४ ॥ पुरषा  
 अकार ठाढो निहार । कटि हाथ धारि द्वै पग  
 पसार ॥ दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर । राजू  
 जु सात भाख्यो निचोर ॥ ५ ॥ जय पूर्व अपर  
 दिश घाटबाधि । सुन कथन कहूं ताको जु सा-  
 धि ॥ लखि श्वभ्रतलें राजू जु सात । मधिलो-  
 क एक राजू रहात ॥ ६ ॥ फिर ब्रह्मसुरग राजू  
 जु पांच । भूसिद्ध एक राजू जु सांच ॥ दश  
 चार ऊंच राजू गिनाय । षट्द्रव्य लये चतुकोण  
 पाय ॥ ७ ॥ तसु वातवलय लपटाय तीन । इह  
 निराधार लखियो प्रवीन ॥ त्रसनाडी तामधि



जान खास । चतुकोन एक राजू जु व्यास ॥८॥  
 राजू उत्तंग चौदह प्रमान । लखि स्वयंसिद्ध  
 रचना महान ॥ तामध्य जीव त्रस आदि देय ।  
 निज थान पाय तिष्ठैं भलेय ॥९॥ लखि अधो  
 भागमें श्वभ्रथान । गिन सात कहे आगम प्रमान ॥  
 षट थानमाहिं नारकि बसेय । इक श्वभ्रभाग  
 फिर तीन भेय ॥ १० ॥ तसु अधोभाग नारकि  
 रहाय । फुनि ऊर्ध्वभाग द्वय थान पाय ॥ बस  
 रहे भवन व्यंतर जु देव । पुर हर्म्य छजै रचना  
 स्वमेव ॥ ११ ॥ तिंह थान गेह जिनराज भाख ।  
 गिन सातकोटि बहतारि जु लाख ते भवन नमों  
 मन वचन काय । गति श्वभ्रहरनहारे लखाय  
 ॥ १२ ॥ पुनि मध्यलोक गोला अकार । लखि  
 दीप उदाधि रचना विचार ॥ गिन असंख्यात  
 भाखे जु संत । लखि संभुरमन सबके जु अंत  
 ॥ १३ ॥ इक राजुव्यासमें सर्व जान । मधिलोक  
 तनों इह कथन मान ॥ मबमध्यदीप जंबू गिनेय  
 त्रयदशम रुचिकवर नाम लेथ ॥ १४ ॥ इन तेरहमें

जिनधाम जान । शतचार अठावन है प्रमान ॥  
 स्वर्ग देव असुर नर आय आय । पद पूज जांय  
 शिर नाय नाय ॥ १५ ॥ जय उर्ध्वलोकसुर  
 कल्पवास । तिहँ थान छजै जिन भवन खास ॥  
 जय लाख चुरासीपै लखेय । जय सहससत्याणव  
 और ठेय ॥ १६ ॥ जय वीसतीन फुनि जोड  
 देय । जिनभवन अकीर्तम जान लेय ॥ प्रति-  
 भवन एक रचना कहाय । जिनविंब एकसत  
 आठ पाय ॥ १७ ॥ शतपंच धनुष उन्नत लसाय ।  
 पदमासनजुत वर ध्यान लाय ॥ शिर तीनछत्र  
 शोभित विशाल । त्रय पादपीठ मणिजडित लाल  
 ॥ १८ ॥ भामंडलकी छवि कौन गाय । फुनि  
 चँवर दुरत चौसठि लखाय ॥ जय दुंदुभिरव  
 अदभुत सुनाय । जय पुष्पवृष्टि गंधोदकाय ॥  
 ॥ १९ ॥ जय तरु अशोक शोभा भलेय । मंगल  
 विभूति राजत अमेय । घट तूप छजै मणिमाल  
 पाय । घटधूम्र धूम दिग सर्व छाय ॥ २० ॥ जय-  
 केतुपंक्ति सोहै महान । गंधर्वदेवगन करत गान ॥

सुर जनमलेत लखि अवधि पाय । तिहँ थान  
 प्रथम पूजन कराय ॥ जिनगेहतणो वरनन अ-  
 पार । हम तुच्छबुद्धि किम लहत पार ॥ जय  
 देव जिनेसुर जगत भूप । नमि 'नेम' मंगै निज  
 देहरूप ॥ २२ ॥

ओं ह्रीं त्रैलोक्यसंबन्ध्याष्टकोटिषट्पंचाशलक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः  
 शतैकाशीतिअकृत्रिमश्रोजिनचैत्यालयेध्यांअर्घ्यनिर्वपामीतिस्वाहा ॥

दोहा -तिनलोकमें सासते श्रीजिनभवन विचार !

मनव भननकरि शुद्धता पूजों अरत उतार ॥

तिहुं जग भीतर श्रीजिनमंदिर, बने अकी-  
 र्तम अति सुखदाय । नगसुर खग करि वंदनीक  
 जे तिनको भविजन पाठ कराय ॥ धनधान्या  
 दिक संपति तिनके, पुत्रपौत्र सुखहोत भलाय ॥  
 चक्री सुर खग इंद्र होयके. करम नाश शिवपुर  
 सुख थाय ॥ २४ ॥



## सिद्धपूजा ।

मडिल्ल छंद ।

अष्टकरमकरि नष्ट अष्ट गुण पायकै ।

अष्टमवसुधामाहिं विराजे जायकै ॥

ऐसे सिद्ध अनंत महंत मनायकै ।

संवौषट् आह्वान करूं हरषायकै ॥१॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र ममसन्निहितो भव भव । वषट् ।

छंद त्रिभंगी ।

हिमवनगतगंगा आदि अभंगा, तीर्थ उत्तंगा  
सरवंगा । आनिय सुरसंगा सलिलसुरंगा, करि  
मनचंगा भरि भृंगा ॥ त्रिभुवनके स्वामी त्रिभु-  
वननामी, अंतरजामी अभिरामी । शिवपुरवि-  
श्रामी निजनिधि पामी, सिद्धजजामी सिरनामी ।

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधि-  
पतये जलं निर्वापामीति स्वाहा ॥

हरिचंदन लायो कपूर मिलायो, बहुमहकायो  
मनभायो । जलसंगघसायो रंगसुहायो, चरन-  
चढ़ायो हरषायो ॥ त्रिभु० ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिप-  
तये चंदनं निर्बपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

तंदुल उजियारे शशिदुतिहारे, कोमल प्यारे  
अनियारे । तुषखंडनिकारे जलसु पखारे, पुंज  
तुमारे ढिग धारे ॥ त्रिभु० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिप-  
तये अक्षतान् निर्बपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

सुरतरुकी बारी, प्रीतिविहारी, किरिया प्यारी  
गुलजारी । भरि कंचन थारी फूल सँवारी, तुम  
पदढारी अति सारी ॥ त्रिभु० ॥४॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिप-  
तये पुष्पं निर्बपामीति स्वाहा ॥

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अम्रत लाजे क्षुत  
भाजे । बहु मोदक छाजे, घेवर खाजे, पूजन  
काजे करि ताजे ॥ त्रिभु० ॥५॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिप-  
तये नैवेद्यं निर्बपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

आपापरभासै ज्ञानप्रभासै, चित्तविकासै तम  
नासै । ऐसे विध खासे दीप उजासे, धरि तुम  
पासे उल्लासे ॥ त्रिभु० ॥६॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रामय सर्वकर्मविनिमुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये  
दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

चुंबक अलिमाला गंधविशाला, चंदनकाला  
गुरु बाला । तस चूर्णं रसाला करि ततकाला  
अभिज्वालामें डाला ॥ त्रिभु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्री अनाहतपराक्रामाय सर्व कर्म विनिमुक्ताय सिद्धचक्राधिप  
तये धूपं निर्वपामीनि स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख झुहारा  
सहकारा । ऋतु ऋतुका न्यारा सत्फलसारा,  
अपरंपारा लैधारा ॥ त्रि० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रामाय सर्वकर्मविनिमुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये  
फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जल फल वसुवृंदा अरघअमंदा, जजत अनंदा  
के कंदा । मेटो भवफंदा सब दुखदंदा, 'हीरा-  
चंदा' तुव बंदा ॥ त्रि० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहत पराक्रामाय सर्वकर्म विनिमुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये  
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—ध्यानदहनविधिदारुदहि, पायो पद निर-  
वान । पंचभावजुतथिर थये, नमों सिद्ध भगवान् ॥

सच्चा जिनवाणी संग्रह—



धवलसेठको एक देव गदासे मार रहा है ।

( श्रीपाल पुराण )

सच्चा जिनवाणी संग्रह—



मैनासुन्दरी पितासे कर्मोंकी प्रधानता पर विवाद कर रही हैं ।  
( भ्रूपाल पुराण )



त्रोटकछंद—सुख सम्यकदर्शन ज्ञान लहा ।  
 अगुरु-लघु सूक्ष्मवीर्य महा । अवगाह अबाध  
 अघायक हो । सब सिद्ध नमों सुखदायक हो ॥२॥  
 असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजै । भुवनेन्द्र स्वगेन्द्र  
 गणेन्द्र भजै ॥ जर जामनमर्ण मिटायक हो ।  
 सब० ॥ ३ ॥ अमलं अचलं अकलं अकुलं ।  
 अछलं असलं अरलं अतुलं ॥ अरलं सरलं  
 शिवनायक हो । सब० ॥ ४ ॥ अजरं अमरं  
 अधरं सुधरं । अडरं अहरं अमरं अधरं ॥ अपरं  
 असरं सब लायक हो । सब० ॥ ५ ॥ वृषवृंद  
 अमंद न निंद लहैं । निरदंद अफंद सुछंद रहैं ॥  
 नितआनंदवृंद विधायक हो । सब० ॥ ६ ॥  
 भगवंत सुसंत अनंत गुणी । जयवंत महंत  
 नमंत मुनी ॥ जगजंतु तणे अघघायक हो ।  
 सब० ॥७॥ अकलंक अटंक शुभंकर हो । निर  
 डंक निशंक शिवंकर हो ॥ अभयंकर शंकर  
 क्षायक हो । सब० ॥ ८ ॥ अतरंग अरंग  
 असंग सदा । भवभंग अभंग उतंग सदा ॥

सरवंग अनंग नसायक हो । सब० ॥ ९ ॥ बह  
 मंड जु मंडलमंडन हो । तिहुँदंडप्रचंड विहंडन  
 हो । चिद पिंड अखंड अकायक हो । सब० ॥ १० ॥  
 निरभोग सुभोग वियोग हरे । निरजोग अरोग  
 अशोग धरे ॥ भ्रमभंजन तीक्षण सायक हो ।  
 सब० ॥ ११ ॥ जय लक्ष अलक्ष सुलक्ष्यक हो ।  
 जय दक्षक पक्षक रक्षक हो ॥ पण अक्ष प्रतक्ष  
 स्वपायक हो । सब० ॥ १२ ॥ निरभेद अखेद  
 अछेद सही । निरवेद अवेदन वेद नहीं ॥ सब  
 लोक अलोकहि ज्ञायक हो । सब० ॥ १३ ॥ अम  
 लीक अदीन अरीन हने । निजलीन अधीन  
 अछीन बने ॥ जमको घनधातु बचायक हो ।  
 सब० ॥ १४ ॥ न अहार निहार विहार कबै ।  
 अविकार अपार उदार सबै ॥ जगजीवनके मन  
 भायक हो । सब० ॥ १५ ॥ असमंध अधंद  
 अरंध भये । निरबंध अखंध अगंध ठये । अमनं  
 अतनं निरवायक हो । सब० ॥ १६ ॥ अविरुद्ध  
 अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू । अति शुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध

विभू ॥ परमात्म पूरन पायक हो । सब० ॥१७॥  
 सब इष्ट अभीष्ट विशिष्ट हितू । उत्किष्ट वरिष्ट  
 गरिष्ट मितू ॥ शिवतिष्ठत सर्व सहायक हो ।  
 सब० ॥ १८ ॥ जय श्रीघर श्रीवर श्रीवर हो ।  
 जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो ॥ जय रिद्धि  
 सुसिद्धि-बढायक हो । सब० ॥ १९ ॥  
 दोहा—सिद्ध सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त  
 नभमान । 'हिराचंद' तातैं जजै, करहु सकल  
 कल्याण ॥ २० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधि-  
 पतये अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

( यहांपर विसर्जन भी करना चाहिये )

अडिल्ल—सिद्ध जजैं तिनको नहिं आवै आपदा ।  
 पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख संपदा ॥ इंद्र चंद्र  
 धरणेंद्र नरेंद्र जु होयकैं । जावैं मुकतिमभार  
 करम सब खोयकैं ॥ २४ ॥

( इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत् ) समाप्त ।

## । समुच्चयचौवीसी पूजा ।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पदम  
सुपास जिनराय । चंद पुहुप शीतल श्रियांस  
नमि, वासुपूज्य पूजितसुरराय ॥ विमल अनंत  
धर्मजसउज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय ।  
मुनिसुव्रत नमि नेमि पासप्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प  
चढाय ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह ! अत्र अवतर  
भवतर । संवौषट् । ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिन-  
समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतचतु  
र्विंशतिजिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

मुनिमनसम उज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा ।  
भरि कनकटोरी धीर दीनी धार धरा ॥  
चौवीसों श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही ।  
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०  
गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी । जिनच-  
रनन देत चढाय, भवआताप हरी । चौवीसों०  
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं नि० १७

तंदुल सित सोमसमान, सुंदर अनियारे । मुक-  
ताफलकी उनमान, पुंज धरों प्यारे ॥ चौवीसों०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥३॥

वरकंज कदंब कुरंड, सुमन सुगंध भरे । जिन  
अग्र धरों गुनमंड, कामकलंक हरे । चौवीसों०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि०

मनमोदनमोदक आदि, सुंदर सद्य बने । रस-  
पूरित प्रासुक स्वाद, जजत लुधादि हने । चौ०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥५॥

तमखंडन दीप जगाय, धारों तुम आगें । सब  
तिमिर मोहक्षयजाय, ज्ञानकला जागें ॥ चौवी०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि०॥६॥

दशगंध हुताशनमांहि, हे प्रभु खेवत हों । मिस  
धूमकरम जरिजांहि, तुमपद सेवत हों । चौवी०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥७॥

शुचि पक्क सुरस फल सार, सबऋतुके ल्यायो ।  
देखत दृगमनकों प्यार, पूजत सुख पायो । चौ०

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरांतेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥८॥

जलफलआठोंशुचिसार, ताको अर्घ करों तुमको  
अरपों भवतार, भवतरि मोच्छ वरों ॥ चौवीसों •  
षों हों श्रीबृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्गपामीति

जयमाला । दोहा-

श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाथ हित हेत ।  
गाऊं गुणमाला अबै, अजर अमरपददेत ॥१॥  
घत्ता ।

जय भवतमभंजन जनमनकंजन, रंजन दिन-  
मनि स्वच्छ करा । शिवमगपरकाशक अरिगन  
नाशक, चौवीसों जिनराज वरा ॥२॥  
पद्दरि छंद ।

जय ऋषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित  
जीत वसुअरि तुरंत । जय संभव भवभय करत  
चूर । जय अभिनंदन आनंदपूर ॥ ३ ॥ जय  
सुमति सुमतिदायक दयाल । जय पद्मपद्म-  
दुतितनरसाल ॥ जय जय सुपास भवपासनाश  
जय चंद चंदतनदुतिप्रकाश ॥ ४ ॥ जय पुष्प-  
दंत दुतिदंत सेत । जय शीतल शीतलगुन-  
निकेत ॥ जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज । जय

वासवपूजित वासुपुञ्ज ॥ ५ ॥ जय विमल  
विमलपद-देनहार । जय जय अनंत गुनगन  
अपार ॥ जय धर्म धर्म शिवशर्म देत । जय  
शांति शांति पुष्टी करेत ॥ ६ ॥ जय कुंथु कुंथु  
वादिक् रखेय । जय अर जिन वसुअरि छय-  
करेय ॥ जय मल्लि मल्ल हत मोहमल्ल । जय मुनि  
सुव्रत व्रतशल्ल दल्ल ॥ ७ ॥ जय नमि नित वास-  
वनुत सपेम । जय नेमनाथ बृषचक्रनेम ॥ जय  
पारसनाथ अनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवन-  
गर साथ ॥ ८ ॥

घत्तानंद छंद ।

चौवीस जिमंदा आनंदकंदा पापनिकंदा सुख  
कारी । तिनपदजुगचंदा उदय अमंदा, वासव  
वंदा हितकारी ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहः  
सोरठा-मुक्तिमुक्तिदातार, चौवीसों जिनराजवर ।  
तिनपद मनवचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥

इत्याशीर्वादः । ( पुष्पांजलि छिपेत् )

अथ श्रीआदिनाथजिन पूजा ।

नाभिराय मरुदेविके नंदन, आदिनाथ स्वामी  
महाराज । सर्वारथसिद्धितैं आप पधारे, मध्यम-  
लोकमांहिं जिनराज ॥ इंद्रदेव सब मिलकर  
आये, जन्म महोत्सव करने काज । आह्वानन  
सब विधि मिलकरके, अपने कर पूजें प्रभु पांय ॥

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथजिनेंद्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अथ अष्टक ।

क्षीरोदाधिको उज्वल जल ले, श्रीजिनवर पद  
पूजन जाय । जन्म जरा दुख मेटन कारन,  
ल्याय चढाऊं प्रभुजीके पांय ॥ श्रीआदिनाथके  
चरण कमलपर, वलि वलि जाऊं मनवचकाय ।  
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मैं पूजों  
प्रभु पांय ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।

मलयागिरि चंदन दाह निकंदन, कंचन शारी  
मैं भर ल्याय । श्रीजीके चरण चढावो भविजन,



भव आताप तुरत मिटि जाय ॥ श्री आदि० ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

सुभशालि अखंडित सौरभमंडित, प्रासुक  
जलसों धोकर ल्याय । श्रीजीके चरण चढावो  
भविजन अक्षयपदकों तुरत उपाय । श्रीआदि० ।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपा०

कमल केतुकी बेल चमेली, श्रीगुलाबके पुष्प  
मंगाय । श्रीजीके चरण चढावो भविजन, का-  
मवाण तुरत नसिजाय ॥ श्रीआदि० ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविच्छांसनाय पुष्पं नि०

नेवज लीना तुरत रस भीना, श्री जिनवर  
आगे धरवाय । थाल भराऊं क्षुधा नसाऊं ल्याऊं  
प्रभुके मंगल गाय ॥ श्रीआदि० ।

ओं ह्रीं श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं निर्व०

जगमग जगमग होत दशोदिस, ज्योति रही  
मंदिरमें छाय । श्रीजीके सन्मुख करत आरती,  
मोहतिमिर नासै दुखदाय । श्रीआ० ॥

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्रायमोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व०

अगर कपूर सुगंध मनोहर चंदन कूट सुगंध

मिलाय । श्रीजीके सन्मुख खये धुपायन, कर्म  
जरे चहुंगति मिटि जाय । श्रीआदि० ।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छ-  
हारा ल्याय । महामोक्षफल पावन कारन, ल्याय  
चढाऊं प्रभुजके पांय । श्रीआदि० ।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०

शुचि निरमल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु  
ले मन हरषाय । दीप धूप फल अर्घ सुलेकर,  
नाचत ताल मृदंग बजाय । श्रीआदि० ।

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं नि०

पंचकल्याणक ।

सर्वारथसिद्धितै चये, मरुदेवी उर आय ।

दोज असित अषाढकी, जजूं तिहारे पाय ॥

ओं ह्रीं श्रीआषाढकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्री आदि-  
नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

चैतबदी नौमी दिना, जन्म्या श्रीभगवान ।

सुरपति उत्सव अति कन्या, मैं पूजौं धरध्यान ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीआदिजिनाथ अर्घं

तृणवत् ऋधि सब छांडिके, तप धान्यो बनजाय ।  
नौमी चैत्र असेतकी, जजूं तिहारे पाय ।

ओं हीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीधादिजिनाय-  
अर्घं निर्गपामीति स्वाहा ।

फाल्गुन वदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।  
इंद्र आय पूजा करी, में पूजों यह थान ॥

ओं हीं फाल्गुणकृष्ण एकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्रीधादि-  
जिनाय अर्घं निर्गपामीति स्वाहा ।

माघ चतुर्दशि कृष्णकी, मोक्ष गये भगवान ।  
भवि जीवोंको बोधिके, पहुंचे शिवपुर थान ॥

ओं हीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीधादि-  
जिनाय अर्घं निर्गपामीति स्वाहा ।

जयमाला

आदीश्वर महाराज में विनती तुमसे करूं । चारों  
गतिके मांहिं में दुखपायो सो सुनो । अष्टकर्म में  
हूं एकलौ, यह दुष्ट महादुख देत हो । कबहूं  
इतर निगोदमें मोकूं पटकत करत अचेत हो ॥  
म्हारी दीनतणी सुन वीनती ॥ १ ॥ प्रभु कब-  
हुंक पटक्यो नरकमें, जठै जीव महादुख पाय

हो । नित उठि निरदई नारकी. जठै करत पर-  
 स्पर घात हो । म्हारी० ॥२॥ प्रभु नरकतणा दुख  
 अब कहूं जठै करै परस्पर घात हो । कोइयक बांध्यो  
 खंभसों, पापी दे मुद्गरकी मार हो । कोइयक  
 काटें करोतसों, पापी अंगतणी दोय फाड हो ।  
 म्हारी० ॥३॥ प्रभु यह विधि दुख भुगत्या घणा.  
 फिर गति पाई तिरयंच हो । हिरणा बकरा  
 बाल्ला पशु दीन गरीब अनाथ हो । म्हारी० ॥४॥  
 प्रभु में ऊंट बलद भैंसा भयो, ज्यांपै लदियो  
 भार अपार हो । नहिं चाल्यो जठै गिर परच्यो,  
 पापी दे सोटनकी मार हो ॥ म्हारी० ॥५॥ प्रभु  
 कोइयक पुण्यसंजोगसूं में तो पायो स्वर्गनिवास  
 हो । देवांगना संग रमि रह्यो जठै भोगनिको  
 परिताप हो ॥ म्हारी० ॥ ६ ॥ प्रभु संग अप्सरा  
 रमि रह्यो कर कर अति अनुराग हो । कबहुंक  
 नंदनवन विषै प्रभु कबहुँक वन-गृह मांहि हो ।  
 म्हारी० ॥७॥ प्रभु यह विधि काल गमायकै,  
 फिर माला गई मुरझाय हो । देव थिती सब घट

गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो । सोच क-  
 रंता तन खिर पड्यो, फिर उपज्यो गरभमें जाय  
 हो । म्हारी० ॥८॥ प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूं,  
 जठै सकडाईकी ठौर हो ॥ हलन चलन नहिं  
 करसक्यो जठै सघन कीच घनघोर हो। म्हारी० ॥९॥  
 माता खावै चरपरो फिर लागै तन संताप हो ।  
 प्रभु जो जननी तातो भखै, फेर उपजै तन सं-  
 ताप हो ॥ म्हारी० ॥१०॥ ओंधे मुख झूल्यो रह्यो  
 फेर निकसन कौन उपाय हो ॥ कठिन कठिन  
 कर नीसन्यो, जैसे निसरै जंतीमें तार हो । म्हारी०  
 ॥११॥ प्रभु फिर निकसतही धरत्यां पड्यो फिर  
 लागी भूख अपार हो । रोय रोय विलख्यो घणो  
 दुख वेदनको नहिं पार हो ॥ म्हारी० ॥ १२ ॥  
 प्रभु दुख मे टन समरथ धनी, यातैं लागूं तिहारे  
 पांय हो । सेवक अरज करै प्रभू ! मोकूं भवो-  
 दधि पार उतार हो ॥ म्हारी० ॥ १३ ॥  
 श्रीजीकी महिमा अगम है. कोइ न पावै पार ।  
 मैं मति अल्प अज्ञान हो. कौन करै विस्तार ॥

इति श्रीमादिनाथ जिनेदाय महाव्ये निर्बपामीति स्वाहा ।

विनती ऋषभ जिनेशकी. जो पढसी मनलाय ।  
सुरगोंमें संशय नहीं निश्चै शिवपुर जाय ॥

इत्याशीर्वादः । समाप्त ।

## श्रीचंद्रप्रभजिनपूजा ।

छप्पय—अनौष्ठय यमकालंकार तथा शब्दालंकार शांतरस ।

चारुचरन आचरन, चरन चितहरनचिहनचर ।

चंदचंदतनचरित, चंदथल चहत चतुर नर ॥

चतुक चंड चकचूरि, चारि चिदचक्र गुनाकर ।

चंचल चलितसुरेश, चूलनुत चक्र धनुरधर ॥

चरअचरहितू तारनतरन, सुनत चहकि चिर-

नंद शुचि । जिनचंदचरन चरच्यो चहत,

चितचकोर नचि रच्चि रुचि ॥ १ ॥

दोहा—धनुष डेढसौ तुंग तन, महासेन नृपनंद ।

मातुलछमनाउर जये, थापों चंदजिनंद ॥ २ ॥

ओं हीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अक्षतर अक्षतर । संवौषट् ।

ओं हीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं हीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सच्चिहितो भव भव । वषट् ।

## अष्टक ।

बाल धानतरायकृत मंदीश्वराष्टककी अष्टपदी तथा होलीकी  
तालमें, तथा गरवा आदि अनेक चालोंमें ।

गंगाहदनिरमल नीर, हाटकभृंगभरा ।

तुम चरन जजों वरवीर, मेठो जनमजरा ॥

श्रीचंदनाथदुति चंद, चरनन चंद लगै ।

मनवचतन जजत अमंद, आतमजोति जगै ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०॥

श्रीखंडकपूर सुचंग, केशररंग भरी । घासि प्रासु-  
कजलके संग, भवआताप हरी ॥श्रीचंद्र०॥२॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनं निर्व० ।

तंदुलसित सोमसमान, समलय अनियारे ।

दिय पुंज मनोहर आन, तुमपदतर प्यारे ।श्री०॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामी०

सुरद्रुमके सुमन सुरंग. गंधित अलि आवै ।

तासों पद पूजत चंग. कामविथा जावै ॥ श्री०॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविश्वंसनाय पुष्पं निर्गपा०

नेवज नानापरकार. इंद्रियबलकारी ।

सो लै पद पूजों सार. आकुलता हारी ॥श्री०॥५॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय शुधारोगविनाशनाय नेत्रेद्यं निर्वापा०

तमभंजन दीप सँवार. तुम ढिग धारतु हों ।

मम तिमिरमोह निरवार. यह गुण धारतु हों। श्री०।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वा०

दसगंधहुतासनमांहिं. हे प्रभु खेवतु हों ।

मम करम दुष्ट जरि जांहिं. यातैं सेवतु हों । श्री०॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वापामीति०

अति उत्तम फल सु मँगाय. तुम गुण गावतु हों ।

पूजों तनमन हरषाय. विघन नशावतु हों । श्री०।

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वापामीति०

सजि आठों दरब पुनीत. आठों अंग नमों ।

पूजों अष्टमजिन मीत. अष्टम अवनि गमों । श्री०

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वापामीति०

पंचकल्याणक । छंद तोटक ( वर्ण १२ )

कलि पंचमचैत सुहात अली । गरभागममंडल

मोद भरी ॥ हरि हर्षित पूजत मातु पिता ।

हम ध्यावत पावत शर्मसिता ॥१॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यांगर्भमंगलप्राप्तयश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घं

कलि पौष इकादशि जन्म लयो । तव लोकविषै



सुखथोक भयो ॥ सुरईस जजै गिरशीश तबै ।  
हम पूजत हैं नुत शीस अबै ॥२॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय  
अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

तप दुद्धर श्रीधर आप धरा । कलिपौष इग्यारसि  
पर्व वरा ॥ निजध्यानविषै लबलीन भये । धनि  
सो दिन पूजत विघ्न गये ॥३॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभ-  
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

वर केवल भानु उद्योत कियो । तिहुँलोकतणों  
भ्रम भेट दियो ॥ कलि फाल्गुणसप्तमि इंद्र जजै  
हम पूजहिं सर्व कलंक भजै ॥४॥

ओं ह्रीं फाल्गुणकृष्णसप्तम्यां केवलज्ञानमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिने-  
न्द्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

सित फाल्गुन सप्तमि मुक्ति गये ॥ गुणवंत अनंत  
अबाध भये ॥ हरि आय जजे तित मोदधरं ।  
हम पूजत ही सब पाप हरे ॥५॥

ओं ह्रीं फाल्गुणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिने-  
न्द्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

दौहा--हे मृगांकअंकित चरण. तुम गुण अगम  
अपार । गणधरसे नहिं पार लहिं. तौ को वर-  
नत सार ॥ १ ॥ पै तुम भगति हिये मम, प्रेरै  
अति उमगाय । तातैं गाऊं सुगुण तुम. तुम ही  
होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धरि ( १६ मात्रा )

जय चंद्रजिनेंद्र दयानिधान । भवकाननहानन  
दौं प्रमान ॥ जय गरभजनममंगल दिनंद । भवि-  
जीवविकाशन शर्मकंद ॥ ३ ॥ दशलक्षपूर्वकी  
आयु पाय । मनवांछित सुख भोगे जिनाय ॥  
लखि कारण ह्वै जगतैं उदास । चिंत्यो अनुप्रेक्षा  
सुख निवास ॥ ४ ॥ तित लौकांतिक बोध्यो  
नियोग । हरि शिविका साजि धरियो अभोग ।  
तापै तुम चढि जिनचंदराय । ताछिनकी शोभा  
को कहाय ॥५॥ जिनअंग सेत सित चमर द्वार ।  
सित छत्र शीस गलगुलकहार ॥ सित रतन  
जाडित भूषण विचित्र । सित चंद्रचरण चरचैं

पवित्र ॥६॥ सित तनद्युति नाकाधीस आप ।  
 सित शिविका कांधे धरि सुचाप ॥ सित सुजस  
 सुरेश नरेश सर्व । सित चितमें चिंतत जात  
 पर्व ॥ ७ ॥ सित चंद्रनगरतें निकसि नाथ ।  
 सित वनमें पहुंचे सकल साथ ॥ सितशिलाशि-  
 रोमणि स्वच्छछाँह । सित तप तित धारयो तुम  
 जिनाह ॥ ८ ॥ सित पयको पारण परमसार ।  
 सित चंद्रदत्त दीनों उदार ॥ सित करमें सो पय-  
 धार देत । मानों बांधत भवसिंधु सेत ॥९॥ मानों  
 सुपुण्य धारा प्रतच्छ । तित अचरज पन सुर  
 किय ततच्छ ॥ फिर जाय गहन सित तपकरंत  
 सित केवलज्योति जग्यो अनंत ॥ १० ॥ लहि  
 समवसरनरचना महान । जाके देखत सब पाप  
 हान ॥ जहँ तरु अशोक शोभै उतंग । सब  
 शोकतनो चूरै प्रसंग ॥ ११ ॥ सुर सुमनवृष्टि  
 नभतें सुहात । मनु मन्मथ तज हथियार  
 जात ॥ बानी जिनमुखसौं खिरत सार । मनु  
 तत्वप्रकाशन मुकुर धार ॥ १२ ॥ जहँ चौसठ

वमर अमर दुरंत । मनु सुजस मेघ झरि लगिय  
 तत ॥ सिंहासन है जँह कमल जुक्त । मनु शिव-  
 सरवरको कमलशुक्त ॥ १३ ॥ दुंदुभि जित  
 बाजत मधुर सार । मनु करमजीतको है नगार ॥  
 शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण । मनु रतन तीन  
 त्रयताप हर्ण ॥ १४ ॥ तनप्रभातनां मंडल  
 सुहात । भवि देखत निजभव सात रात ॥ मनु  
 दर्पणद्युति यह जगमगाय । भविजन भव मुख  
 देखत सु आय ॥ १५ ॥ इत्यादि विभूति अनेक  
 जान । बाहिज दीसत महिमा महान ॥ ताको  
 वरणत नहिं लहत पार । तौ अंतरंग को कहै  
 सार ॥ १६ ॥ अनअंत गुणनिजुत करि विहार ।  
 धरमोपदेश दे भव्य तार ॥ फिर जोगनिरोधि  
 अघाति हान । सम्मेदथकी लिय मुकतिथान ॥ १७  
 वृन्दावन वंदत शीश नाय । तुम जानत हो मम  
 उर जु भाय ॥ तातें का कहौं सु बार बार । मन-  
 बांछित कारज सार सार ॥ १८ ॥

छन्द घत्तानन्द ।

जय चंदजिनंदा, आनंदकंदा, भवभयभंजन  
राजै हैं । रागादिक द्वंदा, हरि सब फंदा, मुकति  
माहिं थिति साजै हैं ॥

ओं ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्बपामीति स्वाहा ।

छन्द चौबोला ।

आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन  
जिनचंद जजें । ताके भवभवके अघ भाजें  
मुक्तसारसुख ताहि सजें ॥ २० ॥ जमके त्रास  
मिटै सब ताके, सकल अमंगल दूर भजें । वृंदा  
वन ऐसो लखि पूजत, जातें शिवपुरि राज रजें ।

इत्याशीर्वादः । परिपुष्यांजलिं क्षिपेत् । इतिश्री चन्दजिनपूजा ॥

## श्रीवासुपूज्य जिनपूजा ।

छंद रूपकवित्त ।

श्रीमतवासुपूज्य जिनवरपद, पूजनहेत हिये  
उमगाय । थापों मनवचतन शुचि करिकै, जि-  
नकी पाटलदेव्या माय ॥ महिष चिह्न पद लसै  
मनोहर, लाल वरन तन समतादाय । सो करु-

नानिधि कृपादिष्टकरि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ  
आय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र भवतर भवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ॥

अष्टक ।

छन्द जोगीरासा । आंचलीबंध "जिनपदपूजो लवलाई ।"

गंगाजल भरि कनककुंभमें, प्रासुक गंध मि-  
लाई । करम कलंक विनाशन कारन, धार देत  
हरपाई ॥ जिनपद० ॥ वासुपूज वसुपूजतनुज-  
पद, वासव सेवत आई । बालब्रह्मचारी लखि  
जिनको, शिवतिय सनमुख धाई ॥जिन०॥१॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

कृष्णागरु मलयागिर चंदन, केशरसंग घ-  
साई । भवआताप विनाशनकारण, पूजो पद  
चित लाई ॥ वासु० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वापा०

देवजीर सुखदास शुद्ध वर, सुवरनथार भरा-  
ई । पुंजधरत तुम चरननआगे, तुरिय अखय  
पदपाई ॥ वासु० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वापामी०

पारिजात संतानकल्पतरु, -जनित सुमन बहु  
लाई । मीनकेतुमदभंजनकारन, तुम पदपद्म  
चढाई ॥ वासु० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामवाणविष्ठांसनाय पुष्पं निर्वापा०

नव्यगव्यआदिकरसपूरित, नेवज तुरित उ-  
पाई । क्षुधारोग-निवारनकारन, तुम्हें जजों  
शिरनाई ॥ वासु० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वा०

दीपकजोत उदोत होत वर, दशदिशमें छवि  
छाई । तिमिरमोहनाशक तुमको लखि, जजों  
चरन हरषाई ॥ वासु० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वा०

दशविध गंधमनोहर लेकर, वातहोत्रमें डाई ।  
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूम सु धूम उडाई ॥  
॥ वासु० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वापामीति०

सुरस सुपक्क सुपावन फल लै, कंचनथार भ-

राई । मोच्छ महाफलदायक लखि प्रभु, भेट  
धरों गुनगाई ॥ वासु० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति०

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग  
नमाई । शिवपदराज हेत हे श्रीपति ! निकट  
धरों यह लाई ॥ वासु० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामी०

पंचकल्याणक । छंद पाईता ( मात्रा १४ )

कलि छट्ट असाढ़ सुहायो । गरभागम मंगल  
पायो ॥ दशमें दिवितें इत आये । शतइंद्र जजे  
सिर नाये ॥ १ ॥

ओं ह्रीं आपाढ़कृष्णबुध्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजिने-  
न्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कलि चौदश फागुन जानों । जनमें जगदीश  
महानों । हरि मेर जजे तब जाई । हम पूजत  
हैं चितलाई ॥ २ ॥

ओं ह्रीं फाल्गुणकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्य-  
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

तिथि चौदस फागुन श्यामा । धरियो तप



श्रीअभिरामा ॥ नृप सुंदरके पय पायो । हम  
पूजत अतिसख थायो ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपमंगलप्राप्ताय धीवासुपूज्यजि-  
नेन्द्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

वदि भादव दोइज सोहै । लहि केवल आतम  
जो है ॥ अनअंत गुनाकर स्वामी । नित बंदों  
त्रिभुवन नामी ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयायां केवलज्ञानमंडिताय धीवासुपूज्य  
जिनेंद्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

सितभादव चौदशि लीनों । निरवान सुथान  
प्रवीनों ॥ पुर चंपाथानकसेती । हम पूजत नि-  
जहित हेती ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय धीवासुपूज्यजि-  
नेंद्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

चंपापुरमें पंचवर, कल्याणक तुम पाय ।

सत्तर धनु तन शोभनो, जै जै जै जिनराय ॥१॥

छंद मोतियदाम ( वर्ण १२ )

महासुखसागर आगर ज्ञान । अनंत सुखामृतभुक्त महान ॥ महा-  
दलमंडित खंडितकाम । रमाशिवसंग सदा विसराम ॥ २ ॥ सुरिंद  
फनिंद खर्गिंद नरिंद । मुनिंद जजै नित पादरविंद ॥ प्रभू तुव

अंतरभाव विराग । सुबालहितै व्रतशीलसों राग ॥ ३ ॥ कियो नहि  
 राज उदाससरूप । सुभावन भावतभातमरूप । अनित्य शरीर  
 प्रपंच समस्त । चिदात्म निस्थ सुखाश्रित वस्त ॥ ४ ॥ अशर्न नही  
 कोउ शर्न सहाय । जहां जिय भोगत कर्मविपाय ॥ निजातम के  
 परमेसुर शर्न । नही इनके विन आपदहर्न ॥ ५ ॥ जगत्त जया जल-  
 बुदबुद येव । सदा जिय एक लहै फलमेव ॥ अनेक प्रकार धरी यह  
 देह । भमें भवकानन आनन नेह ॥ ६ ॥ अपावन सात कुधात  
 भरीय । चिदात्म शुद्धसुभाव धरीय ॥ धरै इनसो जब नेह तबेव ।  
 सुभावत कर्म तवै वसुमेव ॥ ७ ॥ जबै तनभोग जगत्तउदास । धरै  
 तव संवर निर्जरआस ॥ करै जब कर्मकलंक विनाश । लहै तब  
 मोक्ष महासुखराश ॥ ८ ॥ तथा यह लोक नराकृत निस्त । विलोकि  
 बते षटद्रव्यविचित्त ॥ सुभातम जानन बोधविहीन । धरै किन  
 तत्वप्रतीत प्रवीन ॥ ९ ॥ जिनागमज्ञानरु संजमभाव । सबै निज-  
 ज्ञान विना विरसाव ॥ सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल । सुभाव सबै  
 जिहते शिव हाल ॥ १० ॥ लयो सब जोग सुपुण्य वशाय । कहो  
 किमि दीजिय ताहि गंवाय ॥ विचारत यों लवकांतिक आय ।  
 नमे पदपंकज पुष्प चढ़ाय ॥ ११ ॥ कहो प्रभु धन्य कियो सुवि-  
 चार । प्रबोधि सु येम कियो जु विहार ॥ तवै सौधर्मतनों हरि  
 आय रच्यौ शिविका चढ़ि आप जिनाय ॥ १२ ॥ धरे तप पाय  
 सुकेवलबोध । दियो उपदेश सुभव्य संबोध ॥ लयो फिर मोच्छ  
 महासुखराश । नमै नित भक्त सोई सुखआस ॥ १३ ॥

घत्तानन्द ।

नित वासव ईदत, पापनिर्दत, वासुपुज्य व्रत ब्रह्मपती ।  
 भयसंकलखंडित आनंदमंडित जै जै जै जैवत जती ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्बपामीति स्वाहा ॥१४॥

सोरठा ।

वासुपूजपद् सार, जजौं दरबविधि भावसौं ।

सो पावें सुखसार, भुक्ति मुक्तिको जो परम ॥१५॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजाल क्षिपेत् ।

इति श्रीवासुपूज्यजिनपूजा समाप्त ॥

## श्रीअनन्तनाथ जिनिपूजा ।

अडिल-बाझि अभ्यंतर त्यागि परिग्रह जति  
भये । बहुजन हित शिवपंथ दिखायो हरि नये ॥  
ऐसे अनंत जिनेश पाय नमि हूं सदां । आहा-  
ननविधि करूं त्रिविध करिके मुदा ॥

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संबोषट् ।

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

नाराच छंद

क्षीर नीर हीर गौर सोम शीत धारया । मिश्र  
गंध रत्न भृंग पाप नाश कारया ॥ अनन्तनाथ  
पाय सेव मोख्य सौख्य दाय है । अनन्तकाल  
श्रमज्वाल पूजतैं नसाय है ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मनामृत्युविजराशनाय जलं०

कुंकुमादि चंदनादि गंध शीत कारया । सं-  
भयेन अंतकेन भूरि ताप हारया ॥ अनंतनाथ०

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि०

स्वेत इंदु कुंद हार खंड ना अखितही । दुर्ति  
खंडकार पुंज धारिये पवित्त ही ॥ अनंतनाथ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

सरोपुनीत पुष्पसार पंथ वर्ण ल्यावही । गंध  
लुब्ध भृंगवृंद शब्द धारि आवही ॥ अनंत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥

मोदकादि घेवरादि मिष्ट स्वादसार ही । हेम-  
थाल धारि भव्य दुष्ट भूख टारही ॥ अनंत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥

रत्न दीप तेज भान हेमपात्र धारिये । भवांध-  
कार दुःखभार मूलतै निवारिये ॥ अनंतनाथ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय मोहांधकार विनाशनाय दापं नि० ॥

देवदारु कृष्ण सार चंदनादि ल्यावही । दशांग  
घूप धूम्रगंध भृंगवृंद धावही ॥ अनंतनाथ० ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० स्वाहा ॥

श्रीफलादि खारिकादि हेमथालमें भरे । सुष्ट

मिष्ट गंधसार चक्खि नासिका हरे ॥ अनंत० ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनायजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० स्वाहा ॥

छप्पय ।

सलिल शीत अति स्वच्छ मिष्ट चंदन मलया-  
गर । तंदुल सोम समान पुष्प सुरतरुके ला  
वर ॥ चरु उत्तम अति मिष्टपुष्ट रसना मनभा-  
वन । मणि दीपक तगहरन घूप दृष्णागर पाव-  
न ॥ लहि फल उत्तम कण्डाल भरि, अरव  
'रामचंद्र' इम करै । श्रीअनंतनाथके चरण जुग,  
बहुविधि अरचै शिव वरै ॥

ओं ह्रीं श्रीअनंतनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वयामी०

पंचकल्याणक ।

दोहा--पुष्पोत्तरतै चय लियो, 'सूर्यादे' उर आय ।

कार्तिक पडिवा कृष्ण ही, जजहूं तूर बजाय ॥१॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णप्रतिपदायां गर्भमङ्गलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

जेठ असित द्वादशिविषै, जनम सुराधिप जान ।

सनपन करि सुरागिर जजे, जजहूं जनमकल्याण ॥

ओं ह्रीं जेष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममङ्गलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

जगतराज्य तृणवत तज्यो, द्वादशि जेठ असेत ।

लौकांतिक सुरपति जजे, मैं जजहूं शिवहेत ॥३॥

ओं ह्रीं जेष्ठकृष्णद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

चैत अमावसि अरि हने, घातिकर्म दुखदाय ।

कह्यो धर्म केवलि भये, जजूं चरण सुखदाय ॥४॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

चैत अमावसि शिव गये, हनि अघाति भगवान ।

सुरनरखगपति मिलि जजे, जजहुं मोक्षकल्याण ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीअनंत० अर्घं० ॥

जयमाला ।

दोहा--काल अनंतानंत भव, जीव अनंतानंत ।

जिन उतपति व्यय ध्रुव कही, नमूऽनंत भगवंत

( बाल—त्रिभुवनगुरु स्वामीजीकी )

जय अनन्त जिनेश्वरजी, पुष्पोत्तरतै स्वरजी, सिंघसेन नरसुरके

बध सुत भये जी ॥ 'सूर्यदे' माताजी जग पुण्य विख्याताजी.

तिनके जगत्राता गर्भविधै थयेजी ॥२॥ कातिक अंधियारीजी,

परिवा अत्रिकारीजी, साकेत मभारि कल्याणक हरि कियोजी ।

षटमास अगारेजी, मणि स्वर्ण घनेरेजी, वरषे नृपकेरे मंदिर धन

जयोजी ॥३॥ द्वादशि अंधियारीजी, जनमे हितकारीजी, प्रभु जेठ-

मभारि सुरासुर भायकैजी । सुरगिरि लै आयेजी, भव मंगल

गायेजी, अभिवेक रचाये पूजे ध्यायकैजी ॥४॥ फिर पितुघर

कायेजी, नचि तू बजायेजी, अंग नमाये मातपिता तबैजी ।

सन हेम महा छबिजी, पंचास धनू रविजी, लखि तीस कहे कबि  
 आयु भई सबैजी ॥५॥ नृपपदवी धारीजी, लखि पणदह सारीजी,  
 सब अनीति विचारि तपोवनकुं गयेजी, यदि जेठ दुवादसिजी,  
 तप देखि स्वरा रिषिजी, पद पूजि नये नसि पाप सबे गयेजी  
 ॥६॥ षष्ठम करि पूरोजी, भोजन हित सूरोजी, पुर धर्म सनूरो  
 आवत देखिकैजी, नव भक्तिथकी पयजी, विसाख तहां दयजी,  
 मणिविष्टि अखय करि सुरगण पेखिकैजी ॥७॥ धरि ध्यान सुकल  
 सबजी, चउ घाति हनै जबजी, सुर आय मिले सब ज्ञान कल्याण  
 ही जी । यदि चैत अमावसिजी, जखि भुक्ति तुहे वसिजी, सम-  
 वादि रच्यौ तसु उपमा भी नहींजी । समवादि जिते भविजी,  
 सुनि धर्म तिरे सबजी, प्रभु आयु रही जब मास तणी तबै जी ।  
 संमेद पधारेजी, सब जोग संघारेजी, समभाव विथारि धरी  
 शिवतिय जबैजी ॥ वसु गुण जुत भूषितजी, भव छारि बसे  
 तितजी, सुख मगन भये जित मावस चैतकीजी । सुर सब मिलि  
 आयेजी, शिव मंगल गायेजी, बहु पुण्य उपाय चले तुम गुणत  
 कीजी ॥१०॥ गुणवृन्द तुम्हारेजी, बुध कान उचारेजी, गणदेव  
 निहारे पै वचना कहैजी । “चन्द्रराम” करै धुतिजी, वसु अंगथकी  
 नुतिजी, गुण पूरन द्यो मति मर्म तुहे लहैजी ॥११॥ प्रभु अरज  
 हमारीजी, सुनिज्यो सुखकारीजी, भवमें दुखमारी निवारौ हो  
 धणीजी । तुम सरन सहार्इजी, जगके सुखदारैजी शिवदे पितुमारै  
 कहो कबलौ धणीजी ॥१२॥

घसा—इति गुणगण सारं, अमल अपारं, जिय अनंतके हिय धरई ।  
 हनि जरमरणावलि, नासिभवावलि, सिवसुन्दरि ततछिन चरई ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्तनाथ जिनेन्द्राय महाघ्नं निर्वपामीति स्वाहा ।

## श्रीशांतिनाथजिनपूजा ।

मत्स्यगयन्द छन्द ( तथा जमकालंकार )

या भवकाननमें चतुरानन पापपनानन घेरि  
हमेरी । आतमजानन मानन ठानन, बानन होन  
दई सठ मेरी । तामदभानन आपहि हो, यह  
छानन आन न आननटेरी । आन गही शरना-  
गतको अब, श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौपट् ।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । षपट् ।

अएक ।

छन्द त्रिमंगी अनुप्रासक । ( मात्रा ३२ जगनवर्जित )

हिमागिरिगतगंगा, धार अभंगा प्रासुक संग्गा,  
भरि भृंगा । जरमरनमृतंगा, नाशि अवंगा,  
पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥ श्रीशांतिजिनेशं, नुत-  
शकेशं, वृषचकेशं चकेशं । हनि अरिचकेशं हे  
गुनधेशं दयामृतेशं मकेशं ॥ १ ॥

श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ॥



वर बावनचंदन, कदलीनंदन, घनआनंदन  
सहित घसों । भवतापनिकंदन, एरानंदन, बंदि  
अमंदन, चरनबसों ॥ श्रीशांति० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ।

हिमकरकरिलज्जत, मलयसुसज्जत, अच्छत-  
ज्जत भरि थारी । दुखदारिद गज्जत सदपद-  
सज्जत, भवभय भज्जत अति भारी ॥ श्री० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये भक्षतान् निर्व० ।

मंदार सरोजं, कदली जोजं, पुंज भरोजं,  
मलयभरं । भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी,  
मदनविदारी धीरधरं । श्रीशांति० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व० ।

पकवान नवीने, पावन कीने, षटरसभीने,  
सुखदाई । मनमोदनहारे, छुधाविदारे, आगें  
धारे गुनगाई ॥ श्रीशांति० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ।

तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेयविकाशे  
सुखरासे । दीपक उजियारा यातैं धारा, मोह-  
निवारा निजभासे ॥ श्रीशांति० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाथ दीपं नर्वि० ।

चंदन करपूरं, करि वरचूरं, पावक भूरं, माहि  
जुरं । तसु धूम उडावै नाचत जावै, अलि गुं-  
जावै मधुरसुरं ॥ श्रीशांति० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति० ।

बादाम खजूरं, दाडिम पूरं, निंबुक भूरं, ले  
आयो । तासों पद जज्जों शिवफल सज्जों, नि-  
जरसरज्जों उमगायो । श्रीशांति० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षरुलप्राप्तये फलं निर्व० स्वाहा ।

वसुद्रव्य सँवारी, तुमढिगधारी, आनँदकारी  
दृगप्यारी । तुम हो भवतारी करुनाधारी, यातैं  
थारी शरनारी ॥ श्रीशांति० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति० ।

पंचकल्याणक । सुन्दरी तथाद्रुतविलंबितछंद ।

असित सातयँ भादव जानिये । गरभमंगल  
तादिन मानिये ॥ सचि कियो जननी पद चर्च-  
नं । हम करें इत ये पद अर्चनं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजि-  
नेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जनम जेठ चतुर्दशि श्याम है । सकलइंद्र  
सुआगत धाम है ॥ गजपुरे गज साजि सबै  
तबैं । गिरि जजे इत में जजिहों अबैं ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिने-  
न्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

भवशरीर सुभोग असार हैं । इमि विचार  
तबैं तप धार हैं ॥ भ्रमर चौदशि जेठ सुहावनी ।  
धरमहेत जजौं गुन पावनी ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजि-  
नेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुकलपौष दशैं सुखराश है । परम-केवल-ज्ञान  
प्रकाश है ॥ भवसमुद्र-उधारन देवकी । हम  
करैं नित मंगल सेवकी ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय  
अर्घं निर्वपामीति स्ताहा ॥

असित चौदस जेठ हने अरी । गिरि समेद-  
थकी शिवतियवरी । सकल इंद्र जजैं तित  
आयकैं । हम जजैं इत मस्तक नायकैं ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशांतिनाथजिने-  
न्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

छन्द रथोद्धता; इन्द्रवत्सा तथा चन्द्रवर्त्म ( वर्ण ११, लाटानुप्रास )

शांतिशांतिगुण-मंडिते सदा । जाहि ध्यावत  
सुपांडिते सदा ॥ मैं तिन्हें भगतिमंडिते सदा ।  
पूजि हों कलुषहंडिते सदा ॥१॥ मोच्छहेत तुम  
ही दयाल हो । हे जिनेश गुनरत्नमाल हो । मैं  
अबै सुगुनदाम ही धरों । ध्यावतैं तुरित मुक्ति  
ती वरों ॥ २ ॥

छंद पद्दरि ( १६ मात्रा )

जय शांतिनाथ चिद्रूपराज । भवसागरमें अद-  
भुत जहाज ॥ तुम तज सरवारथसिद्ध थान । सर-  
वारथजुत गजपुर महान । १ ॥ तित जनम लियो  
आनंदधार । हरि ततछिन आयो राजद्वार ॥  
इंद्रानी जाय प्रसूति-थान । तुमको करमें ले  
हरष मान ॥ २ ॥ हरि गोद देय सो मोद धार ।  
सिर चमर अमर ढारत अपार ॥ गिरिराज  
जाय तित शिलापांड । तापैं थाप्यो अभिषेक  
मांड ॥ ३ ॥ तित पंचम उदाधितनों सुवार । सुर कर  
कर करि ल्याये उदार ॥ तब इंद्र सहसकर करि

अनंद । तुम शिर धारा डान्यो सुनंद ॥ अघ  
 घघ घघ घघ धुनि होत घोर । भभ भभ भभ  
 धध धध कलशशोर ॥ दमदम दमदम बाजत  
 मृदंग । झन नन नन नन नन नन नूपुरंग ॥५॥ तन  
 नन नन नन नन तनन तान । घन नन नन  
 घंटा करत ध्वान ॥ ताथेइ थेइ थेइ थेइ थेइ सु-  
 चाल । जुत नाचत नावल तुमहिं भाल ॥ ६ ॥  
 चट चट चट अटपट नटत नाट । झट झट झट  
 हट नट शट विराट ॥ इमि नाचत राचत भगत  
 रंग । सुर लेत जहां आनंद संग ॥७॥ इत्यादि  
 अतुल मंगल सुठाट । तित बन्यो जहां सुरगिरि  
 विराट ॥ पुनि करि नियोग पितुसदन आय ।  
 हरि सौंप्यो तुम तित वृद्ध थाय ॥ ८ ॥ पुनि  
 राजमाहिं लहि चक्ररत्न । भोग्यो छखंड करि  
 धरमजत्न ॥ पुनि तपधरि केवलरिद्धि पाय !  
 भविजीवनकों शिवमग बताय ॥ ९ ॥ शिवपुर  
 पहुंचे तुम हे जिनेश । गुनमंडित अतुल अनंत  
 भेष ॥ मैं घ्यावतु हौं नित शीशनाय । हमरी

भवबाधा हरि जिनाय ॥ १० ॥ सेवक अपनो  
निज जान जान । करुणाकरि भौभय भान भान ॥  
यह विघनमूलतरु खंड खंड । चितचिंतित आ-  
नंद मंड मंड ॥ ११ ॥

घसानन्द छन्द ( मात्रा ३१ )

श्रीशांतिमहंता, शिवतियकंता, सुगुनअनंता  
भगवंता । भवभ्रमन हनंता, सौख्य अनंता  
दातारं तारनवंता ॥ १ ॥

ओं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णाघ्नं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

छंद रूपक सवेया ( मात्रा ३१ )

शांतिनाथ जिनके पदपंकज, जो भवि पूजै  
मनवचकाय । जनमजनमके पातक ताके, तत  
छिन तजिकै जाय पलाय ॥ मनवांछितसुखपावै  
सोनर, बांचै भगतिभावअति लाय ॥ तातैं वृंदा-  
वन' नित बंदै, जातैं शिवपुरराजकराय ॥ १ ॥

इत्याशीवांदः ॥ पुष्पांजलि क्षिपेत् ॥

**श्रीपरिव्रजनाथ जिनपूजा ।**

गीताछंद०-वर स्वर्गप्राणतकों विहाय, सुमात

वामा, सुत भये । अश्वसेनके पारस जिनेश्वर,  
चरन जिनके सुर नये ॥ नवहाथ उन्नत तन  
विराजै, उरग लच्छन पद लसैं । थापूं तुम्हें जिन  
आय तिष्ठो, करम मेरे सब नसैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संबोध् ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ॐ ॐ ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषद् ॥

अथाष्टक—छंद नाराच ।

क्षीरसोमके समान अंबुसार लाइये । हेमपात्र  
धारिकें सु आपको चढाइये । पार्श्वनाथदेव सेव  
आपकी करूं सदा । दीजिये निवास मोक्ष भू-  
लिये नहीं कदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये ।

आप चर्न चर्च मोहतापको हनीजिये । पार्श्व०॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चंदनंनिर्वपामी०

फेन चंदके समान अक्षतान् लाइकें, चर्नके  
समीप सार पुंजको रचाइकें ॥ पार्श्वनाथदेव०॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामी०

केवडा गुलाब और केतकी चुनायकें, धार  
चर्नके समीप कामको नसाइकें ॥ पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पनिर्वपामी ॥

घेवरादि बावरादि मिष्ट सद्यमें सने, आप  
चर्न चर्चते क्षुधादिरोगको हनै ॥ पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुद्रोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामी ॥

लाय रत्नदीपको सनेहपूरके भरूं, वातिका  
कपूर बारि मोह ध्वांत्तकूं हरूं ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि० ॥

धूपगंध लेयकें सुअग्निसंग जारिये, तास धूप  
के सुसंग अष्टकर्म बारिये ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामी ॥ ७ ॥

स्वारिकादि चिरभटादि रत्नथालमें भरूं, हर्ष  
धारिकें जजूं सुमोक्ष सुखको वरूं ॥ पार्श्व० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामी ॥ ८ ॥

नीरगंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिये, दीप  
धूप श्रीफलादि अर्घतैं जजीजिये ॥ पार्श्व० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामी ॥ ९ ॥

पंच कल्याणक । छंदचाल ।



शुभप्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।  
वैशाखतनी दुतिकारी, हम पूजें विघ्न निवारी ॥

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीपार्ष्वनाथ० अ०

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष वि-  
ख्याता । श्यामा तन अद्भुत राजै, रवि कोटिक  
तेज सु लाजै ॥२॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्ष्वनाथ० अर्थ ॥

कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावन  
भाई । अपने कर लोंच सु कीना, हम पूजें चरन  
जजीना ॥३॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीपार्ष्वनाथ० अर्थ

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ।  
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवनको सुख  
दीना ॥४॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णैचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्ष्वनाथ० अर्थ

सित सातें सावन आई, शिवनारि वरी जिन-  
राई । सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष  
कल्याना ॥५॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपार्ष्वनाथ० अर्थ

अथ जयमाला । छंद ।

पारसनाथ जिनेंद्रतने वच, पौनभखी जरतें  
सुन पाये । करचो सरधान लहचो पद आन भयो  
पद्मावति शेष कहाये ॥ नाम प्रताप टरै संताप  
सु, भव्यनको शिवशरम दिखाये । हैं विश्वसेनके  
नंद भले, गुणगावत हैं तुमरे हरखाये ॥१॥

दोहा—केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव  
हाथ । लक्षण उरग निहारपग, बंदौं पारसनाथ ॥

पद्धरी छंद

रची नगरी छहमास अगार । बने चहुँ गोपुर  
शोभ अपार ॥ सु कोटतनी रचना छवि देत ।  
कँगूरनपै लहकै बहुकेत ॥ ३ ॥ बनारसकी  
रचना जु अपार । करी बहुभांति धनेश तयार ।  
तहां विश्वसेन नरेंद्र उदार । करै सुख वाम सुदे  
पटनार ॥ ४ ॥ तज्यो तुम प्रानत नाम विमान  
भये तिनके वर नंदन आन । तबै सुरइंद नियो-  
गन आय । गिरिंद करी विधि न्हौन सु जाय  
॥५॥ पिता-घर सौंपि गये निज धाम । कुंवेर

वरै वसु जाम सु काम ॥ बढै जिन दंजि मयंक  
 समान । रमै बहु बालक निर्जर आन ॥६॥ भये  
 जब अष्टम वर्ष कुमार । धरे अणुव्रत महासुख-  
 कार ॥ पिता जब आनकरी अरदास । करौ  
 तुम ब्याह वरै मम आस ॥७॥ करी तब नाहिं  
 रहे जगचंद । किये तुम काम कषाय जु मंद ॥ चढे  
 गजराज कुमारन संग । सु देखत गंगतनी सु तरं-  
 ग । ८ । लख्यो इक रंक करै तप घोर । चहंदिशि  
 भगनि बलै अति जोर ॥ कहै जिननाथ अरे  
 सुन भ्रात । करै बहु जीवनकी मत घात ॥९॥  
 भयो तब कोप कहै कित जीव । जले तब नाग  
 दिखाय सजीव ॥ लख्यो यह कारण भावन भाया  
 नये दिव ब्रह्मरिषीसुर आय ॥ १० ॥ तबहि  
 सुर चारप्रकार नियोग । धरी शिविका निज  
 कंध मनोग ॥ कियो वनमाहि निवास जिनंद ।  
 धरे व्रत चारित आनंद कंद ॥ ११ ॥ गहे तहँ  
 अष्टमके उपवास । गये धनदत्त तने जु अवास ॥  
 दयो पयदान महासुखकार । भयी पनवृष्टि तहां

तिहिं, बार ॥ १२ ॥ गये तब काननमाहिं  
 दयाल । धरयो तुम योग सबहिं अघटाल ॥ तबै  
 वह धूम सुकेत अयान । भयो कमठाचरको सुर  
 आन ॥ १३ ॥ करै नभ गौन लखे तुम धीर ।  
 जु पूरब वैर विचार गहीर ॥ कियो उपसर्ग भया  
 नक घोर । चली बहु तीक्षण पवन झकोर  
 ॥ १४ ॥ रह्यो दसहूं दिशिमें तप छाया । लगी  
 बहु अग्नि लखी नहिं जाय ॥ सुरुंडनके, विन  
 मुंड दिखाय । पडै जल मूसलधार अथाय ॥ १५ ॥  
 तबै पैदमावति-कंथ धनिंद । चले जुग आय  
 जहां जिनचंद ॥ भग्यो तब रंकें सु देखत हाल ।  
 लह्यो तब केवल ज्ञान विशाल ॥ १६ ॥ दियो  
 उपदेश महा हितकार । सुभव्यन बोधि समेद  
 पधार ॥ सुवर्णभद्र जहँ कूट प्रसिद्ध । वरी शिव  
 नारि लही वसुरिद्ध ॥ १७ ॥ जजूं तुम चरन  
 दुहूं कर जोर । प्रभू लखिये अब ही मम ओर ॥  
 कहै बखतावर रत्न बनाय । जिनेश हमें भवपार  
 लगाय ॥ १८ ॥ घत्ता-

जय पारस देवं सुरकृत सेवं, वंदत चर्न सुना-  
गपती । करुणाके धारी परउपगारी, शिवसुख-  
कारी कर्महती ॥ १९ ॥

ओं ह्रींश्रोपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णाघर्निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—जो पूजै मनलाय भव्य पारस प्रभु  
नितही । ताके दुख सब जांय भीत व्यापै नहिं  
कितही ॥ सुख संपति अधिकाय पुत्र मित्रादिक  
सारे । अनुक्रमसों शिव लहै, रतन इमि कहै  
पुकारे ॥ २० ॥ इत्याशीर्वादः ( पुष्पांजलि )

दीपावली-श्रीवर्द्धमानजिनपूजा ।

मत्तगयंद ।

श्रीमतवीरहरैभवपीर, भरैसुखसीरअनाकुल-  
ताई । केहरि अंक अरीकरदंक, नये हरिपंकति  
मौलि सु आई ॥ में तुमको इत थापतुहौं प्रभु,  
भक्ति समेत हिये हरखाई । हे करुणाधनधारक  
देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्र ! अत्र मय सज्जितो अय मय । अयट् ॥

अष्टक ।

( दानतरायकृत नंदोश्वराष्टकादिक अनेक रागोंमें बजती है )

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनभृंग भरों ।

प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करों ॥

श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मतिनायक हो ।

जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ॥

मलयागिरचंदनसार, केसरसंग घसों । प्रभु

भवआतापनिवार, पूजत हिय हुलसों । श्रीवीर० ।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चंदनं नि० ॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी । त-

सुपुंजधरों अविरुद्ध, पावों शिवनगरी । श्रीवीर० ।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ॥

सुरतरुके सुमन समेत, सुमन सुमनप्यारे । सो

मनमथभंजनहेत, पूजों पद थारे ॥ श्रीवीर० ॥४॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी । पद

जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी । श्रीवीर० ।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ॥

तमुखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हों । तुम  
पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हों ॥श्रीवीर०  
ओं हीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय मोहाघकारविनाशनाय दीपं नि० ॥

हरिचंदन अगर कपूर, चूर सुगंध करा । तुम  
पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ॥श्रीवीर०॥  
ओं हीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि० ॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरों । शिव-  
फलहित हे जिनराय, तुमढिग भेट धरों ॥श्री०॥  
ओं हीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ॥

जलफल वसु सजि हिमथार, तनमनमोद धरों ।  
गुण गाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरों । श्रीवीर०  
ओं हीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ॥

पंचकल्याणक । रागटप्पा ।

मोहि राखो हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरा-  
यजी, मोहि राखो० ॥ गरभ साढ सित छट्ट  
लियो थिति, त्रिशलाउरअघ हरना । सुरसुरपति  
तितसेव करी नित, में पूजों भवतरना । मोहि०  
ओं हीं आषाढ शुक्लपष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय  
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

जनम चैतसित तेरसके दिन, कुंडलपुर कम-  
वरना । सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, में पूजों  
भवहरना ॥ मोहिराखो हो० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्तये श्रीमहावीरजिनेन्द्राय  
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

मँगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप  
आचरना । नृप कुमारघर पारन कीनों, में पूजों  
तुम चरना । मोहिराखो हो० ॥

ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिने-  
न्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुकलदर्श वैशाखदिवस अरि, घात चतुक  
छयकरना ॥ केवललहि भवि भवसर तारे. जजों  
चरन सुख भरना । मोहि० ॥

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्तये श्रीमहावीरजिनेन्द्राय  
अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतें  
घरना । गनफनिष्टुं जजे तित बहुविध, में  
पूजों भयहरना । मोहि० ॥५॥

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णामाश्र्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-  
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।



सच्चा जिनवाणी संग्रह—



पाँचों पाण्डवोंका घोर परोषह द्वारा निर्वाण गमन ।

( पांडव पुराण )

सच्चा जिनवाणी संग्रह—



रानी केतुमती अंजनाके संबन्धमें बसन्तमाला पर वार कर  
रही है । ( अंजना नाटक )

जयमाला । छंद हरिगीता २८ मात्रा ।

गनधर अशनिधर, चक्रधर, हरधर, गदाधर  
वरवदा । अरु चापधर, विद्यासुधर तिरसूलधर  
सेवहिं सदा ॥ दुखहरन आनंदभरन तारन, त-  
रन चरन रसाल हैं । सुकुमाल गुनमनिमाल उ-  
न्नत, -भालकी जयमाल हैं ॥ १ ॥

छंद घस्तानन्द ।

जय त्रिशलीनंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन,  
चंदवरं । भवतापनिकंदन, तनकनमंदन, रहित  
सपंदन नयन धरं ॥ २ ॥

छंद त्रोटक ।

जय केवलभानुकलासदनं । भविकोकंविकाशन  
कंदवनं ॥ जगजीतमहारिपुमोहहरं । रज ज्ञानदृ  
गावरचूरकरं ॥१॥ गर्भादिकमंगलमंडित हो ।  
दुखदारिद्रकोनितखांडित हो ॥ जगमाहितुमी  
सतपंडित हो । तुमहीभवभाव-विहंडितहो ॥२॥  
हरिवंशसरोजनकों रविहो । बलवंतमहंततुमी  
कपि दो ॥ लहि केवलधर्मप्रकाशकियो । अबलों

सोइमारगराजति यो ॥३॥ पुनि आपतने गुण  
 माहिंसही । सुरमग्नरहेजितनेसबही ॥ तिनकी  
 वनिता गुनगावत हैं । लयमाननिसों मनभावत  
 हैं ॥४॥ पुनि नाचत रंग उमंग-भरी । तुअ भक्ति  
 विषै पग एम धरी ॥ झननं झननं झननं झननं ।  
 सुरलेत तहां तननं तननं ॥ ५ ॥ घननं  
 घननं घनघंट बजै । दमदं दमदं मिरदंग सजै ॥  
 गगनांगनगर्भगता सुगता । ततता ततता अतता  
 वितता ॥६॥ धृगतां धृगतां गति बाजत है । सुर-  
 ताल रसाल जु छाजत है ॥ सननं सननं सननं  
 नभमें । इकरूप अनेक जु धारि भ्रमें ॥७॥ कइ  
 नारिसुवीनबजावति हैं । तुमरो जस उज्जल  
 गावति हैं ॥ करतालविषै करताल धरें । सुर-  
 ताल विशाल जु नाद करें ॥ ८ ॥ इन आदि  
 अनेक उछाह भरी । सुरभक्ति करै प्रभुजी  
 तुमरी ॥ तुमही जगजीवनके पितु हो । तुमही  
 विनकारनतैं हितु हो ॥ ९ ॥ तुमही सब विघ्न  
 विनाशन हो । तुमही निज आनँदभासन हो ॥

तुमही चितचिंततदायक हो, जगमाहिं तुमी  
 सब लायक हो ॥ १० ॥ तुमरे पनमंगलमाहिं  
 सही । जिय उत्तमपुन्यलियो सब ही ॥ हमको  
 तुमरी सरनागत है । तुमरे गुनमें मन पागत है  
 ॥११॥ प्रभु मोहिय आप सदा बसिये । जबलों  
 वसुकर्म नहीं नसिये ॥ तबलों तुम ध्यानहिये  
 वरतों । तबलों श्रुतचिंतन चित्तरतो ॥ १२ ॥  
 तबलों व्रत चारित चाहतु हों । तबलों शुभ-  
 भाव सुगाहतु हों ॥ तबलों सतसंगति नित्त  
 रहौ । तबलों मम संजम चित्त गहो ॥ १३ ॥  
 जबलों नहिं नाश करों अरिको । शिवनारिवरों  
 समता धरिको ॥ यह द्यो तबलों हमको जिनजी ।  
 हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ॥ १४ ॥

घसानंद ।

श्रीवीरजिनेशा नमित सुरेशा, नागनरेशा  
 भगति भरा । 'वृंदावन' ध्यावै विघन नशावै  
 वांछित पावै शर्म वरा ॥ १५ ॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजै धरि प्रीति ।  
वृंदावन सो चतुर नर लहै मुक्ति नवनीत ॥१६॥

इत्याशीर्वादः परिपुष्यांजलिं क्षिपेत् ।

### निर्वाणक्षेत्र पूजा ।

सोरठा-परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक  
शिव गये । सिद्धभूमि निशदीस, मनवचतन  
पूजा करौं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र भवतरतभवतरत  
संवौषट् । ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत  
तिष्ठत । ठः ठः । ओं ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र  
मम सन्निहितानि भवत भवत । वषट् ।

गीता छंद ।

शुचि छीरदधि सम नीर निरमल, कनकझारीमें  
भरौं । संसारवारउतारस्वामी, जोरकर विनती-  
करौं ॥ संमेदगढ गिरनार चंपा, पावापुरि कैला-  
सकों । पूजां सदा चौबीसजिननिर्वाण भूमिनि-  
वासकों ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं निर्व० स्वाहा ।१।

केशर कपूर सुगंध चंदन सलिल शीतल

विस्तरौ । भवतापको संताप मेटो, जोरकर वि-  
नती करौं ॥ संमेद० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं निर्म० ॥ २ ॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनंद-  
धरि तरौं ॥ औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोर-  
कर विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् नि० ॥ ३ ॥

शुभ फूलरास सुवासवासित, खेद सब मनकी  
हरौं । दुखधामकामविनाश मेरो, जोरकर  
विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं निर्बपामीति० ॥

नेवज अनेकप्रकार जोग, मनोग धरि भय  
परिहरौं । यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोरकर  
विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥ ५ ॥

दीपकप्रकाशउजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहिं  
डरौं । संशयविमोहविभरम तमहुर, जोरकर  
विनती करौं ॥ संमेद० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्ब० ॥ ६ ॥

शुभघूप परमअनूप पावन, भानपावन आचरौ ।  
सब करमपुंज जलाय दीज्यौ, जोरकर विनती  
करौ ॥ संमेद० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो घूपं निर्व० ॥ ७ ॥

बहुफलमँगाय चढाय उत्तम, चारगतिसों नि-  
रवरौ । निहचै मुकति फल देहु मोकौं जोरकर  
विनती करौ ॥ संमेद० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा

जल गधं अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन  
धरौ । 'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोरकर  
विनती करौ ॥ संमेद० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपा० ॥९॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—श्रीचौवीसजिनेश, गिरिकैलाशादिक  
नमों । तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं ॥

बौपाई १६ मात्रा ।

नमों ऋषभकैलासपहारं । नेमिनाथ गिरनार  
निहारं ॥ वासुपूज्य चंपापुर बंदौं । सनमति पा-  
वापुर अभिनंदौं ॥२॥ बंदौं अजितअजितपद-



दाता । बंदों संभव भवदुखघाता ॥ बंदों अभि-  
 नंदन गणनायक । बंदों सुमति सुमतिके दायक ॥  
 बंदों पदममुकति पदमाकर । बंदुं सुपास आश-  
 पासाहर । बंदों चंद्रप्रभ प्रभुचंदा । बंदों सुविधि  
 सुविधिनिधि कंदा ॥४॥ बंदों शीतल अघतप-  
 शीतल । बंदुं श्रियांस श्रियांस महीतल ॥ बंदों  
 विमल विमल उपयोगी । बंदुं अनंत अनंत सुख  
 भोगी ॥५॥ बंदों धर्म धर्म-विस्तारा । बंदों शांति  
 शांतिमनधारा ॥ बंदों कुंथु कुंथु-रखवालं । बंदों  
 अर अरिहर गुणमालं ॥६॥ बंदों मल्लि काम-  
 मलचूरन । बंदों मुनिसुव्रत व्रतपूरन ॥ बंदों  
 नमि जिन नमितसुरासुर । बंदों पास पासभ्रम-  
 जगहर ॥७॥ बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर । शिखर  
 सम्मेदमहागिरि भूपर । एकबार बंदै जो कोई ।  
 ताहिनरकपशुगति नहिं होई ॥ ८ ॥ नरपाति-  
 नृप सुरशक्र कहावै । तिहुंजग भोगभोगिशिव  
 पावै ॥ विघनविनाशन मंगलकारी । गुणविलास  
 बंदों भवतारी ॥ ९ ॥

घत्ता—जो तीरथ जावै पाप मिटावै, ध्यावै गावै  
भगति करै । ताको जस कहिये संपति लहिये,  
गिरिके गुण को बुध उचरै ॥ १० ॥

गों हीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामी० ॥

### १. निर्वर्णिकांड [ गथा ]

अट्टाबयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो ।  
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिब्बुदो महावीरो ॥१  
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुर वंदिदा धुदकिले-  
सा । सम्मेदे गिरि सिहरे णिब्वाण० ॥२॥ वर-  
दत्तो य वरंगोसायरदत्तोय तारवरणयरे । आहु-  
ट्टयकोडीओ णिब्वाण० ॥३॥ णेमिसामि पज्ज-  
ण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो । वाहत्तरिको-  
डीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥ रामसुआ  
वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ । पावा-  
गिरिवरसिहरे णिब्वाण० ॥५॥ पंडुसुआतिण्णि-  
जणा दविडणरिंदाण अट्टकोडीओ । सत्तुंजय-  
गिरिसिहरे णिब्वाण० ॥ ६ ॥ संते जे बलभहा  
जदुबणरिंदाण अट्टकोडीओ । गजपंथे गिरि

सिहरे णिव्वाण० ॥७॥ रामहणू सुग्गीओ गव-  
यगवाक्खो थ णीलमहणीलो । णवणवदीको-  
डीओत्तुंगीगिरिणिब्बुदे वंदे ॥ ८ ॥ णंगाणंग-  
कुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । सुवणा-  
गिरिवरसिहरे णिव्वाण० ॥ ९ ॥ दहमुहरायस्स  
सुआ कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया । रेवाउहयत्त-  
डग्गे णिव्वाण० ॥१०॥ रेवाणडूए तीरे पच्छिम-  
भायम्मि सिद्धवरकूडे । दो चक्की दह कप्पे आहुट्ट  
यकोडिणिब्बुदे वंदे ॥ ११ ॥ वडवाणीवरण-  
यरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंद-  
जीदकुंभयणो णिव्वाण० ॥ १२ ॥ पावागिरि-  
वरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चिउरो ।  
घलणाणईतडग्गे णिव्वाण० ॥१३॥ फलहोडी-  
वरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे । गुरु-  
दत्ताइमुणिंदा णिव्वाण० ॥१४॥ णायकुमारमु-  
णिंदो बालि महाबालि चैव अज्जेया । अट्टावय-  
गिरिसिहरे णिव्वाण० ॥१५॥ अच्चलपुरवरणयरे  
ईसाणे भायमेठगिरिसिहरे । आहुट्टयकोडीओ

णिव्वाण० ॥१६॥ वंसत्थलवणणियरे पच्छिम  
 भायम्मि कुंथुगिरिसिहरे । कुलदेसभूषणमुणी  
 णिव्वाण० ॥१७॥ जसरहरायस्स सुआ पंचस-  
 याइं कलिंगदेसम्मि । कोडिसिलाकोडिमुणी  
 णिव्वाण० ॥१८॥ पासस्स, समवसरणे सहिया  
 वरदत्तमुणिवरा पंच । रिस्सिदे गिरिसिहरे  
 णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥ १९॥

अथ अइसयखेत्तकंडं—अतिशयक्षेत्रकांडं ।

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे ।  
 अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि  
 ॥ १ ॥ बाहूबलि तह वंदमि पोयणपुरहत्थिणा-  
 पुरे वंदे । सांति कुंथव अरिहो वाणारसिए सुपा-  
 सपासं च ॥ २ ॥ महुराए अहिच्छित्ते वीरं पासं  
 तहेव वंदामि । जंबुमुणिंदो वंदे णिव्बुइपत्तोवि  
 जंबुवणगहणे ॥ ३ ॥ पंचकल्लाणठाणइं जाणवि  
 संजादमज्झलोयम्मि । मणवयणकायसुद्धी सव्वं  
 सिरसा णमस्सामि ॥ ४ ॥ अग्गलदेवं वंदामि  
 वरणयरे णिवडकुंडली वंदे । पासं सिवपुरि

बंदमि होलागिरिसंखदेवमि ॥ ५ ॥ गोमटदेवं  
 बंदमि पंचसयं धणुहदेहउच्चंतं । देवा कुणंति बुट्टी  
 केसरिकुसुमाण तस्स उवरिमि ॥६॥ णिव्वाण  
 ठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसए सहिया ।  
 संजादमिच्चलोए सब्बे सिरसा णमस्सामि ॥७॥  
 जो जण पढइ तियालं णिव्बुइकंडंपि भावसुद्धीए ।  
 भुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहइणिव्वाणं ॥

। अथ निर्वाणकांड भाषा ।

दोहा-चीतराग बंदौं सदा, भावसहित सिरनाय ।  
 कहूं कांड निर्वाणकी भाषा सुगमबनाय ॥ १ ॥  
 चौ०--अष्टापद आदीश्वरस्वामि । वासुपूज्य  
 चंपापुरिनामि ॥ नेमिनाथस्वामी गिरनार ।  
 बंदौं भावभगतिउरधार ॥२॥ चरम तीर्थकरचरम  
 शरीर । पावापुरि स्वामी महावीर ॥ शिखरस-  
 मेद जिनेसुर बीस । भावसहित बंदौं निशदीस  
 ॥ ३ ॥ वरदतराय रुइंद मुनिंद । सायरदत्त  
 आदिगुणवृंद ॥ नगरतारवर मुनि उठकोडि ।  
 बंदौं भावसहित कर जोडि ॥ ४ ॥ श्रीगिरनार

शिखर विख्यात । कोडि बहत्तर अरु सौ सात  
 संबु प्रदुम्न कुमर द्वै भाय । अनिरुध आदि नमूं  
 तसु पाय ॥ ५ ॥ रामचंद्रके सुत द्वै वीर । लाड-  
 नरिंद आदि गुणधीर ॥ पांचकोडि मुनि मुक्ति  
 मझार पावागिरि बंदौं निरधार ॥ ६ ॥ पांडव  
 तीन द्रविडराजान । आठकोडि मुनि मुक्ति  
 पयान ॥ श्रीशत्रुंजयगिरिके सीस । भावसहित  
 बंदौं निशदीस ॥७॥ जे बलभद्र मुक्तिमें गये ।  
 आठकोडि मुनि औरहु भये ॥ श्रीगजपंथ  
 शिखर सुविशाल । तिनके चरण नमूं तिहुंकाल  
 ॥८॥ राम हणू सुग्रीव सुडील । गवगवाख्य  
 नील महानील ॥ कोडि निन्याणव मुक्तिपयान ।  
 तुंगीगिरि बंदौं धरिध्यान ॥ ९ ॥ नंग अनंग  
 कुमार सुजान । पांचकोडि अरु अर्ध प्रमान ॥  
 मुक्तिगये सोनागिरिशीश । ते बंदौं त्रिभुवनपति  
 ईस ॥ १० ॥ रावणके सुत आदिकुमार । मुक्ति  
 गये रेवातट सार ॥ कोटि पंच अरु लाख पचास  
 ते बंदौं धरि परम हुलास ॥ ११ ॥ रेवानदी

सिद्धवर कूट । पश्चिम दिशा देह जहँ छूट ॥  
 द्वै चक्री दश कामकुमार । ऊँठकोडि बंदों भव  
 पार ॥ १२ ॥ बडवानी बडनयर सुचंग । दक्षिण  
 दिशि गिरिचूल उत्तंग ॥ इंद्रजीत अरु कुंभ जु  
 कर्ण । ते बंदों भवसायरतर्ण ॥ १३ ॥ सुवरण  
 भद्र आदि मुनिचार । पावागिरिवर-शिस्वर-  
 मँझार ॥ चेलना नदीतीरके पास । मुक्तिगये  
 बंदों नित तास ॥ १४ ॥ फलहोडी बडगाम  
 अनूप । पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप ॥ गुरु  
 दत्तादि मुनीसुर जहां । मुक्ति गये बंदों नित  
 तहां ॥ १५ ॥ बाल महाबाल मुनि दोय । नाग  
 कुमार मिले त्रय होय । श्रीअष्टापद मुक्तिमँ-  
 झार । ते बंदोंनित सुरत सँभार ॥ १६ ॥ अचला  
 पुरकी दिश ईसान । तहां मेदूगिरि नाम प्रधान ॥  
 साढे तीन कोडि मुनिराय । तिनके चरण नमूं  
 चितलाय ॥ १७ ॥ वंसस्थल वनके ढिग होय ।  
 पश्चिमदिशा कुंथुगिरि सोय ॥ कूलभूषण

। साढे तीन किरोड़ । २ वर्त्तमान एलचपुर ।

दिशिभूषण नाम । त्रिन्के चरणमि करुं  
 प्रणाम ॥१८॥ जसरथराजाके सुत केहे । देश  
 कर्लिंग पांचसौ लहे ॥ कोटिशिला मुनि कोटि  
 प्रमान बंदन करुं जोर जुगपान ॥ १९ ॥ सम-  
 वसरण श्री पार्श्वजिनंद । रेसिंदीगिरि नयनानंदाः  
 वरदत्तादि पंच ऋषिराज । ते बंदौं नित धरम  
 जिहाज ॥ २० ॥ तीन्लोकके तीरथ जहां ।  
 नित प्रसी बंदन कीजै ब्रह्मा ॥ मनवचकायस-  
 हित सिर नाय । बंदन करहिं भविक गुणगाय  
 ॥ २१ ॥ संवत्त सतरहसौ इकताल । आश्विन  
 सुदि दशमी सुविशाल । 'भैया' बंदन करहिं  
 त्रिकाल जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥२२॥ इति

। महावीराष्टक भाष्य ।

जिन्होंकी प्रज्ञामें, मुकुरसम चैतन्य जड भी,  
 स्थिती ध्रुव्योत्पत्ती युत भूलकते साथ सबही ।  
 जगत ज्ञाता ज्ञान प्रकटकरता सूर्यसम जो, महा-  
 वीरस्वामी दरश हमको दें प्रगट वे ॥ १ ॥  
 जिन्होंके दो चक्षू पलक अरु लाली रहित हो,



जनोंको दर्शाते, हृदयगत क्रोधातिलयको ।  
 जिन्होंकी शांतात्मा अतिविमलमूर्ती स्फुटमहा,  
 महावीर० ॥२॥ नमंते इंद्रोंके, मुकुटमणिकी कांति  
 धरता, जिन्होंके चणोंका युग, ललित, संतप्त  
 जनको भवाग्नीका हर्ता, स्मरण करते ही सुजल  
 है, महावीर० ॥३॥ जिन्होंकी पूजासे, मुदित-  
 मन हो मेंढक जबै, हुआ स्वर्गी ताही, समय  
 गुणधारी अतिसुखी । लहैं जो मुक्तीके सुख  
 भगत तो विस्मय कहा ? महावीर० ॥ ४ ॥ तपे  
 सोने ज्योंभी, रहित वपुसे, ज्ञानगृह हैं, अकेले  
 नाना भी, नृपतिवर सिद्धार्थ सुत हैं । न जन्मे  
 भी श्रीमान्, भवरत नहीं अद्भुतगती, महा-  
 वीर० ॥५॥ जिन्होंकी वाग्गंगा, अमल नयक-  
 छोल धरती, न्हाती लोगोंको, सुविमल महा  
 ज्ञानजलसे । अभी भी सेते हैं, बुधजन महाहंस  
 जिसको, महावीर० ॥ ६ ॥ त्रिलोकीका जेता  
 मदनभट जो दुर्जय महा, युवावस्थामें भी, वह  
 दलित कीना स्वबलसे । प्रकाशी मुक्तीके, अति-

सुसुखदाता जिनविभू, महावीर० ॥७॥ महा-  
मोहव्याधी, हरण करता वैद्य सहज, विना  
इच्छा बंधू, प्रथितजगकल्याण करता । सहारा  
भव्योंको सकलजगमें उत्तम गुणी, महावीर  
स्वामी दरश हमको दें प्रगट वे ॥ ८ ॥

संस्कृत वीराष्टक रच्यो, भागचंद्र रुचिवान ।  
तस भाषा अनुवाद यह, पढि पावै निर्वान ॥

अथ सप्तर्षि पूजा ।

छप्पय ।

प्रथम नाथ श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर ।  
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुंदर चौथो वर ॥  
पंचम श्री जयवान विनयलालस षष्ठम भनि ।  
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्रधाम गनि ॥  
ये सातों चारणऋद्धिधर, करुं तासपदथापना ।  
मैं पूजूं मनवचनकायकरि, जो सुख चाहूं आपना  
ओं हों चारणर्द्धिधरश्रीसप्तर्षीश्वर ! अत्र अवतरत अवतरत ।  
संवौषट् अत्र तिष्ठतः तिष्ठतः । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव  
भव । वषट् ।

शुभतीर्थउद्भव जल अनूपम मिष्ट शीतल  
लायकै ॥ भवतृषा कंदनिकंदकारण, शुद्ध घट  
भरवायकै ॥ मन्वादिचारण्यत्रुद्धिधारक, मुनिन-  
की पूजा करूं । ता करें पातिक हरे सारे, सकल  
आनंद विस्तरूं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वस्वरमन्वनिचयसर्वसुन्दरजयधानविनयलालसजय-  
मित्रर्षिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१ ॥

श्रीखंड कदलीनंद केशर, मंद मंद घिसायकै ।  
तसगंध प्रसरित दिगादिगंतर, भरकटोरी ला-  
यकै । मन्वादि० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अति धवल अक्षत खंड-वर्जित, मिष्ट राजन  
भोगके ॥ कलधौत थारा भरत सुंदर चुनित  
शुभ उपयोगके ॥ मन्वादि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

बहुवर्णसुवरण सुमन आछे, अमल कमल गुला-  
वके । केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निजकर  
चावके ॥ मन्वादि० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

पकवान नानाभांति चातुर, रचित शुद्ध नये  
नये । सदामिष्टलाडूआदिभरबहु, पुरटके थारा  
लये ॥ मन्वादि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

कलधौत दीपक जडित नाना, भरित गोघृतसा  
रसों । अति ज्वलितजगमगज्योतिजाकी, तिमि  
रनाशनहार सों ॥ मन्वादि० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

दिक्चक्र गंधित होत जाकर, धूप दश अंगी  
कही । सो लाय मनवनाकाय-शुद्ध. लगायकर  
खेऊं सही ॥ मन्वादि० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

वर दास्र खारक अमिति प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुना-  
यकें । द्रावडी दाडिम चारु पुंगी, थाल भर भर  
लायकें ॥ मन्वादि० ॥

ओं ह्रीं मन्वादिसप्तर्षिभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जलगंधअक्षतपुष्पचरुवर, दीप धूप सु लावना

फल ललित आठों द्रव्यमिश्रित, अर्घ कीजे  
पावना ॥ मन्वादि० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादिसप्तर्षिभ्योः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

अथ जयमाला । छंद त्रिभंगी ।

बंदूं ऋषिराजा, धर्मजहाजा, निजपरकाजा, करत  
भले । करुणाके धारी, गगनविहारी, दुखअप-  
हारी, भरम दले ॥ काटत जमफंदा, भविजन  
बृंदा, करत अनंदा चरणनमें । जो पूजैं ध्यावैं  
मंगल गावैं, फेर न आवै भववनमें ॥ १ ॥

छंद पद्धरी—जय श्रीमनु मुनिराजा महंत । त्रस  
थावरकी रक्षा करंत ॥ जय मिथ्यातमनाशक  
पतंग । करुणारसपूरित अंग अंग ॥ २ ॥ जय  
श्रीस्वरमनु अकलंकरूप । पदसेवकरत नित  
अमर भूप ॥ जय पंच अक्ष जीते महान । तप  
तपत देह कंचनसमान ॥ ३ ॥ जय निचय सप्त  
तत्त्वार्थभास । तप-रमातनों तनमें प्रकाश ॥ जय  
विषयरोध संबोध भान । परणतिके नाशन  
अचल ध्यान ॥४॥ जय जयहिं सर्वसुंदर दयाल ।

लखि इंद्रजालवत जगतजाल ॥ जय तृष्णा-  
 हारी रमण राम । निज परणतिमें पायो विशाम  
 ॥ ५ ॥ जय आनंदघन कल्याणरूप । कल्याण  
 करत सबको अनूप ॥ जय मद नाशन जयवान  
 देव । निरमद विरचित सब करत सेव ॥ ६ ॥  
 जय जयहिं विनयलालस अमान । सब शत्रु  
 मित्र जानत समान ॥ जय कृशितकाय तपके  
 प्रभाव । छवि छटा उडति आनंददाय ॥ ७ ॥  
 जयमित्र सकल जगके सुमित्र । अनगिनत  
 अधम कीने पवित्र ॥ जग चंद्रवदन राजीव-नैन ।  
 कबहूं विकथा बोलत न बैन ॥ ८ ॥ जय सातों  
 मुनिवर एकसंग । नित गगन-गमन करते  
 अभंग ॥ जय आये मथुरापुरमँझार । तँह मरी  
 रोगको अति प्रचार ॥ ९ ॥ जय जय तिन  
 चरणनिके प्रशाद । सब मरी देवकृत भई बाद ॥  
 जय लोक करै निर्भय समस्त । हम नमत सदा  
 नित जोड हस्त ॥ १० ॥ जय ग्रीषनक्रतु परवत  
 मँझार । नित करत अतापन योगसार ॥ जय

तृषापरीषह करत जेर । कहुं रंच चलत नहिं  
 मनसुमेर ॥११॥ जय मूलअठाइसगुणनधार ।  
 तप उग्र तपत आनंदकार ॥ जय वर्षाऋतुमें  
 वृक्षतीर । तहँ अति शीतल भेलत समीर ।१२।  
 जय शीतकाल चौपटमँभार । कै नदीसरोवर  
 तट विचार ॥ जय निवसत ध्यानारूढ होय ।  
 रंचक नहिं मटकत रोम कोय ॥ १३ ॥ जय  
 मृतकासन वज्रासनीय । गोदूहन इत्यादिक  
 गनीय ॥ जय आसन नाना भांति धार ।  
 उपसर्ग सहत ममता निवार ॥१४॥ जय जपत  
 तिहारो नाम कोय । लख पुत्रपौत्र कुलवृद्धि  
 होय ॥ जय भरे लक्ष अतिशय भँडार । दारिद्र  
 तनो दुख होय छार ॥ १५ ॥ जय चोरअग्नि  
 डाकिन पिशाच । अरु ईति भीति सब नसत  
 सांच ॥ जय तुम सुमरत मुखलहत लोक । सुर  
 असुर नवत पद देत धोक ॥ १६ ॥  
 छंद रोला—ये सातों मुनिराज, महातप लक्ष्मी  
 धारी । परम पूज्य पद धरे, सकल जगके हित-

कारी । जो मन वचन शुद्ध होय सेवै औ ध्यावै  
 सो जन मनरँगलाल अष्टाद्धिनको पावै ॥१७॥  
 दोहा—नमन करत चरनन परत. अहो गरीब  
 निवाज । पंच परावर्तननितै. निरवारो ऋषि-  
 राज ॥ १८ ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वादि सप्तर्षिभ्यो पूर्णार्घिं निर्वपामीति स्वाहा ।

### अथ पंचमेरुपूजा ।

गीता छंद ।

तीर्थकरोके न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा ।  
 तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरुनकी सदा ॥  
 दो जलधि ढाईदीपमें सब, गनत मूल विराजही ।  
 पूजों असीजिनधामप्रतिमा, होहि सुख दुख  
 भाजही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरु संबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावत-  
 रावतर संवौषट् । ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रति-  
 मासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्या-  
 लयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

चौपाई आंचलोबद्ध ( १५ मात्रा )

सीतलमिष्टसुवास मिलाय, जलसों पूजों श्रीजिन



राय । महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

पांचों मेरु असी जिनधाम, सबप्रतिमाको करों प्र-

नाम । महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो जलं नि० ॥१॥

जलकेशरकरपूर मिलाय, गंधसों पूजों श्री-

जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परमसुख

होय ॥ पांचों० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो चंदनं नि० ॥२॥

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छतसों पूजों

जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम सुख

होय ॥ पांचों० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्योऽक्षतान् नि० ॥

वरन अनेक रहे महकाय, फूलनसों पूजों

जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम सुख

होय ॥ पांचों० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो पुष्पं नि० ॥४॥

मनवांछित बहु तुरत बनाय, चरुसों पूजों

श्री जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम

सुख होय ॥ पांचों० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥५॥

तुमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय, दीपसों पूजों  
श्री जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम  
सुख होय ॥ पांचों० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो दीपं नि० ॥६॥

खेऊँ अगर अमल अधिकाय, धूपसों पूजों  
श्रीजिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परम  
सुख होय ॥ पांचों० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो धूपं नि० ॥७॥

सुरस सुवर्ण सुगंध सुहाय, फलसों पूजों श्री-  
जिनराय । महा सुख होय, देखे नाथ परमसुख  
होय ॥ पांचों० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्यो फलं नि० ॥८॥

आठ दरवमय अरघ बनाय, द्यानत पूजों श्री  
जिनराय । महासुख होय, देखे नाथ परमसुख  
होय ॥ पांचों० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसंबंधिजिनचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

अथ जयमाला । सौरठा ।

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मंदर कहा ।

विद्युन्माली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥१॥

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै, भद्रशाल वन  
भूपर छाजै । चैत्यालय चारों सुखकारी, मनवच  
तन वंदना हमारी ॥ २ ॥ ऊपर पांचशतकपर  
सोहै, नंदनवन देखत मन मोहै ॥ चैत्यालय ०३।  
साढे बासठ सहस उंचाई, वन सुमनस सोभै अ-  
धिकाई ॥ चै० ॥४॥ ऊंचा योजन सहस छतीसं,  
पांडुकवन सोहै गिरिसीसं । चै० ॥५॥ चारों मेरु  
समान बखानै, भूपर भद्रसाल चहुं जानै । चै-  
त्यालय सोलह सुखकारी, मदवचतन वंदना  
हमारी ॥ ६ ॥ ऊंचे पांच शतकपर भाखे, चारों  
नंदनवन अभिलाखे । चैत्यालय सोलह सुखका-  
री, मनवचतन वंदना हमारी ॥ ७ ॥ साढे पच  
पन सहस उतंगी, वन सौमनस चार बहुरंगी ॥  
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन वंदना  
हमारी ॥८॥ उच्च अठाइस सहस बताये, पांडुक  
चारों वन शुभ गाये । चैत्यालय सोलह सुखकारी  
मनवचतन वंदना हमारी ॥ ९ ॥ सुरनर चारन

वदनं आवैं, सो शोभा हम किह मुख गावैं ।  
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मनवचतन वंदना  
हमारी ॥ १० ॥

पंचमेरुकी आरती, पढै सुनै जो कोय ।  
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥

ओं ह्रीं पंचमेरु संबंधि जिनचैत्यालयस्थ जिनचिंबेभ्योऽर्घ्यं ॥

( अर्घके बाद विसर्जन करना चाहिये )

**नंदीश्वर पूजा संस्कृत ।**

स्थानासनार्ध्यप्रतिपत्तियोग्यं, सद्भावसन्मान  
जलादिभिश्च । लक्ष्मीसुतागमनवीर्यसुदर्भगर्भैः  
संस्थापयामि भुवनाधिपतिं जिनेंद्रं ॥

ओं ह्रीं नन्दीश्वरदीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थप्रतिमासमूह ! अत्र  
अगतर अगतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्नि-  
हितो भव भव षट् ।

तीर्थोदकैर्मणिसुवर्णघटोपनीतैः पीठे पवित्रव-  
पुषि प्रविकल्पितार्थैः । नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः  
समर्चये चाष्टदिनानि भक्त्या ॥

ओं ह्रीं नन्दीश्वर द्वीपे पूर्वादिग्भागे एक अंजनगिरि-चतुर्दधिसुखा-  
ष्टरित्करेति त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वापामीति स्नाहा ।

ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं  
निर्वपामीति स्वाहा । ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिग्भागे त्रयो-  
दशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा । ओं ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे  
उत्तरदिग्भागे त्रयोदशजिनालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीखंडकपूर्सुकुंकुमाद्यैर्गंधैः सुगंधीकृतदि-  
ग्विभागैः । नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये  
चाष्टदिनानि० ॥ चंदनं ॥ साल्यक्षतरैक्षतदर्धिगात्रैः  
सुनिर्मलैश्चंद्रकरावदातैः । नन्दीश्वरद्वीपजिना-  
लयार्चाः समर्चये चाष्टदिनानि० अक्षतान् ॥  
अंभोजनीलोत्पलपारिजातैः कदंबकुंदादितरु-  
प्रसूतैः । नन्दीश्वरद्वीपजिनालयार्चाः समर्चये  
चाष्टदिनानि० । पुष्पं ॥ नैवेद्यकैः कांचनपात्र-  
संस्थैर्न्यस्तैरुदस्तैर्हरिनासुहस्तैः ॥ नन्दीश्वर-  
द्वीपजिनालयार्चाः० ॥ नैवेद्यं ॥ दीपोत्करै-  
र्ध्वस्ततमोवितानैरुद्योतिताशेषपदार्थजातैः ॥ नं-  
दीश्वर द्वीपजिनालयार्चाः० ॥ द्वीपं ॥ कर्पूरकृ-  
ष्णागरुचंदनाद्यैर्धूपैर्विचित्रैर्वरंगंधयुक्तैः । नन्दी०  
॥ धूपं ॥ लवंगनारिङ्गकपित्थपूगश्रीमोचचोचा-  
दिफलैः पवित्रैः । नन्दी० ॥ फलं ॥ श्रीचंदना

व्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभ-  
 क्त्या । यजे त्रिकालोद्भवजैनविंबान् भक्त्या  
 स्वकर्मक्षयहेतवेऽहं ॥ अर्घं ॥ श्रीचंदनाढ्याक्ष-  
 ततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांजलिना सुभक्त्या ।  
 सद्भावनावासजिनालयस्थान् जिनेन्द्रविंबान्प्रयजे  
 मनोज्ञान् ।

ओं ह्रीं भावनामरजिनालयेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-  
 लिना सुभक्त्या । जंब्वाख्यद्वीपस्थजिनालय-  
 स्थान् जिनेन्द्रविंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं जम्बूद्वीपस्थजिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-  
 लिना सुभक्त्या । श्रीधातकीखंडजिनालयस्थान्  
 जिनेन्द्रविंबान् प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं धातकीखंडद्वीपस्थजिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशे पुष्पांज-  
 लिना सुभक्त्या । श्रीपुष्करद्वीपाजिनालयस्थान्  
 जिनेन्द्रविंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं पुष्कराब्दद्वीपस्थजिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्घपामीति० ॥

श्रीचंदनाब्द्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-  
लिना सुभक्त्या । सत्कुंडलाद्रिस्थजिनालयस्थान  
जिनेंद्रविंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कुंडलाद्रिस्थजिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्घपामीति० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-  
लिना सुभक्त्या । श्रीमन्नगे वै रुचिके हि संस्थान्  
जिनेंद्रविंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं रुचिकगिरिस्थजिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्घपामीति० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-  
लिना सुभक्त्या । सद्द्व्यंतराणां निलयेषुसंस्थान्  
जिनेंद्रविंबान्प्रयजे मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं अष्टप्रकारव्यन्तरदेवानां गृहेषु जिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्घ० ॥

श्रीचंदनाढ्याक्षततोयमिश्रैर्विकाशिपुष्पांज-  
लिना सुभक्त्या । चंद्रार्कताराग्रतऋक्षज्योति-  
ष्काणां यजे वै जिनावबवयान् ॥

ओं ह्रीं पंचप्रकारज्योतिष्काणां देवानां जिनालयविंबेभ्योऽर्घं निर्घ० ॥

कल्पेषु कल्पातिगकेषु चैव देवालयस्थान् जिन-

देवविंबान् । सन्नीरगंधाक्षतमुख्यद्रव्यैर्यजे मनो-  
वाक्त्तनुभिर्मनोज्ञान् ॥

ओं ह्रीं कल्पकल्पातीतसुरविमानस्थजिनविंबेभ्योऽर्घं निर्व० ॥

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकी-  
गतान् । वंदे भावनव्यंतरद्युतिवरस्वर्गामरावा-  
सगान् ॥ सद्गंधाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीप-  
धूपैः फलैर्द्रव्यैर्नीरमुखैर्नमामि सततं दुष्कर्मणां  
शांतये ॥

ओं ह्रीं कृत्याकृत्रिमजिनालयस्थजिनविंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति० ।

वर्षेषु वर्षांतरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंद-  
रषु । यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे  
जिनपुंगवानां ॥ अवनितलगतानां कृत्रिमा-  
कृत्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानां  
इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां जिनवरनि-  
लयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ जम्बूधातकिपु-  
ष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवाश्चंद्राम्भोजशिखं-  
डिकंठकनकप्रावृद्धनाभाजिनाः । सम्यग्ज्ञान-  
चरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मैधना । भूतानागत-



वर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥ श्रीम-  
 न्मेरौ कुलाद्रौ रजतागिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे ।  
 वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुंडले मानुषांके  
 इष्वाकारेजनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्ग-  
 लोके, ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि  
 चैत्यालयानि ॥ द्वौ कुंदेंदुतुषारहारधवलौ द्वा-  
 विंद्रनीलप्रभौ द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ  
 च प्रियंगुप्रभौ । शेषाः षोडश जन्ममृत्युरहिताः  
 संतप्तहेमप्रभास्ते संज्ञानदिवाकरा सुरनुताः सि-  
 द्धिं प्रयच्छंतु नः । नोकोडिसया पणवीसा तेप-  
 णलक्खाण सहससत्ताईसा । नौसेते पडियाला  
 जिणपडियाला जिणपडिमाकिट्टिमा बंदे ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयस्थजिनविंबेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

अतोतचतुर्विंशतितीर्थकरनामानि ।

निर्वाणसागरराभिख्यो माधुर्यो विमलप्रभः ।  
 शुद्धवाक् श्रीधरो धीरो दत्तनाथोऽमलप्रभुः । १।  
 उद्धराह्वोग्निनाथश्च संयमः शिवनायकः । पु-  
 ष्पांजलिर्जगत्पूज्यस्तथा शिवगणाधिपः ॥ २ ॥

उत्साही ज्ञाननेता च महनीयो जिनोत्तमः ।  
 विमलेश्वरनामान्यो यथार्थश्च यशोधरः ॥ ३ ॥  
 कर्मसंज्ञोऽपरो ज्ञान-मतिः शुद्धमतिस्तथा । श्री-  
 भद्रपदकांतश्चातीता एते जिनाधिपाः ॥ ४ ॥  
 नमस्कृतसुराधीशैर्महीपतिभिरर्चिताः । बंदिता  
 धरणेंद्राद्यैः संतु नः सिद्धिहेतवे ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं नमोऽस्तुविंशतितीर्थकरेभ्योऽर्घं निर्ब्रह्मीति स्वाहा ॥

वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थकरनामानि ।

ऋषभोऽजतनामा च संभवश्चाभिनंदनः ।  
 सुमतिः पद्मभासश्च सुपाश्वो जिनसत्तमः ॥१॥  
 चन्द्राभः पुष्पदंतश्च शीतलो भगवान्मुनिः ।  
 श्रेयांसो वासुपूज्यश्च विमलो विमल द्युतिः ॥२॥  
 अनन्तो धर्मनामा च शांतिकुंत्यौ जिनोत्तमौ ।  
 अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३॥  
 हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । ध्वंस्तो-  
 पसर्गदैत्यारिः पाश्वो नागेंद्रपूजितः ॥४॥ कर्मा-  
 तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः । एते सुरा-  
 सुरांघेण पूजिता विमलात्वेषः ॥ ५ ॥ पूजिता

भरताद्यैश्च भूपेद्रैभूरिभूतिभिः । चतुर्विधस्य  
संघस्य शांतिं कुर्वतु शाश्वतीं ॥६॥

ॐ ह्रीं वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥  
अनागततीर्थकरनामानि ।

तीर्थकृच्च महापद्मः सूरदेवो जिनाधिपः । सुपा-  
र्श्वनामधेयोऽन्योयथार्थश्च स्वयंप्रभुः ॥१॥ सर्वा  
त्मभूतइत्यन्यो देवदेवप्रभोदयः । उदयः प्रश्न-  
कीर्तिश्चजयकीर्तिश्च सुव्रतः ॥ अरश्च पुण्यमू-  
र्तिश्च निष्कषायो जिनेश्वरः । विमलो निर्मला-  
भिरुयश्चित्रगुप्तो वरः स्मृतः ॥३॥ समाधिगुप्त-  
नामान्यौ स्वयंभूरनिवर्तकः । जयो विमलसं-  
ज्ञश्च दिव्यपाद इतीरितः ॥४॥ चरमोऽनतवी-  
र्योऽमीवीर्यधैर्यादिसद्गुणाः । चतुर्विंशतिसं-  
ख्याता भविष्यतीर्थकारिणः ॥५॥

ॐ ह्रीं अनागतचतुर्विंशतिजिनेभ्योर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

कंपिह्लाणयरीमंडणस्स विमलस्स विमलणाणस्स ।  
आरत्तिय वरसमये णच्चंति अमररमणीओ ॥

‘छंद-अमररमणीउ णच्चंति जिणमंदिरं ।’ वि-  
विहवरतालतूरहिं सुचंगमपुरं ॥ जडियबहुरय-

षचामीयरं पत्तयं । जोइयं सुंदरं जिणघ आर-  
 त्तियं ॥२॥ रुणभडंकारणेवरघचलणुट्टिया । मो-  
 तियादाम वच्छच्छले संठिया ॥ गीय गायंते  
 णच्चंति जिणमंदिरं । जोइयं सुंदरं ॥ ३ ॥ केश-  
 भरिक्कुसुमपय सरसढोलंतिया । वयण छणइंद  
 समकंतवियसंतिया कमलदलणयणजिणवयण  
 पेखंतिया । जोइयं सुंदरं ॥४॥ इंदधरिणिंदज  
 क्खेंदवोहंतिया । मिलिव सुर असुर घणरासि  
 खेलंतिया । के वि सियचमर जिणविंब ढोलं-  
 तिया । जोइयं ० ।

गाथा—णंदीसुरम्मि दीवे वावण्णजिणालयेसु  
 पडिमाणं । अट्टाहिवरपव्वे इंदो आरत्तियं कुणई ॥

छंद--इद्र आरत्तियं कुणइ जिणमंदिरं, रयण-  
 मणिकिरणकमलेहि वरसुंदरं । गीय गायंति  
 णच्चंति वरणाडियं, तूर वज्जंति णाणाविहप्पाडियं

गाथा-एक्केकम्मि य जिणहरे चउचउ सोलहवा-  
 बीओ । जोयणलक्खपमाणं अट्टमणंदीसुरं  
 दीवे ॥ ८ ॥

अङ्गुलं दीवणं दीसुरं भासुरं चैत्यचैत्यालये बन्दि  
अमरासुरं । देवदेवी उ जह धम्मसंतोसिया, पं-  
चमं गीय गायंति रसपोसिया ॥

गाथा--दिव्वेहिं खीरणीरेहिं गंधड्ढाइहिं कुसु-  
ममालाहिं । सव्वसुरलोयसहिया पुज्जा आरंभए  
इंदो ॥ १० ॥

इंदसोहम्मिसग्गाववज्जोसयं, आयऊसज्जि ऐरा-  
वयं वरगयं । सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं पूजाकरा,  
मिलिं पडिवक्खया तस्स तिहु देसया ।

गाथा--कंसालतालतिवली, झल्लरभर भेरिवेषु-  
विण्णाओ । वज्जंति भावसहिया भव्वेहिं एउ-  
ज्जिया सव्वे ॥

छंद--सव्वदव्वेहिं भव्वेहिं करताडियं, सहए सं-  
झिगणझिगणणिद्धाडयं । गिझिनिझं झिगिनिझं  
वज्जये झल्लरी, एच्चये इंदइंदायणी सुंदरी ।  
णयणकज्जलसलायामयं दिण्णयं, हेमहीरालयं  
कुंडलं, कंकणं ॥ झंझणं झंकरं तं पिये एवरं,  
जिणघआरत्तिय जोइयं सुंदरं ॥ दिट्ठिणासग्गि

अंगुलियदावंतिया, खिणहिं खिण खिणहिं जिण-  
विंब जोइत्तिया ॥ णारिणच्चंति गायंति कोइल-  
सुरं, जिणघ० ॥ रुणुञ्जुणंकारणे वरघकरकंकणं  
णाइ जंपंति जिणणाहवे बहुगुणं ॥ जुवइ ण-  
च्चंति सुमरंति ण उ णियघरं जिणघआरत्तियं  
जोइयं सुंदरं ॥ कंठकदलीह मणिहार झुलंतऊ,  
जिणइ थुइ थुई सो णाय संतुट्टऊ ॥ विविहको-  
ऊहलं रयहि णारीधरं, जिणघ आरत्तियं जोइयं  
सुंदरं ॥ १७ ॥

घत्ता-आरत्तिय जोवइ कम्मइ धोवइ, सग्गा-  
वग्ग हलहु लहइ । जं जं मण भावइ तं सुह  
पावइ, दीणु वि कासुण भासुणइ ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरदीपे पूर्वापश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिना-  
लयेभ्यो अर्घं निर्वपामोति स्वाहा ॥

यावंति जिनचैत्यानि, विद्यंते भुवनत्रये ।  
तावंति सततं भक्त्या, त्रिःपरीत्य नमाम्यहं ॥

( इत्याशीर्वादः )

## नंदीश्वरद्वीप-अष्टाह्निका पूजा

सरब पर्वमें बडो अठाई परब है । नंदीश्वर सुर  
जांहिं लेय वसु दरब है ॥ हमें सकति सो नाहिं  
इहां करि थापना । पूजें जिनग्रह प्रतिमा है हित  
आपना ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनंदीश्वर द्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह !  
अत्र अबतर अघतर । संवौषट् । ओं ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपे द्विपंचास-  
ज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं  
श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह अत्र मम  
सच्चिहितो भव भव षषट् ।

कंचनमणिमय भृंगार, तीरथ नीरभरा ।  
तिहुं धार दयी निरवार, जामन मरन जरा ॥  
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करों ।  
वसुदिनप्रति में अभिराम, आनंदभावधरों ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनंदीश्वरद्वीपेपूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचासज्जिनाल-  
यस्थजिनप्रति मास्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामोति०

भवतपहर शीतल वाच, सो चंदन नाहीं । प्रभु  
यह गुन कीजै सांच, आयो तुम ठाहीं । नंदी०  
चंदन० ॥२॥ उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे

सोहै । सब जीते अक्षसमाज, तुमसम अरु  
 को है ॥ नंदी० ॥ अक्षतान् ॥ ३ ॥ तुम काम विना  
 शक देव, ध्याऊं फूलनसौं । लहुं शीललच्छमी  
 एव, छूटों सूलनसौं ॥ नंदी० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ नेवज  
 इंद्रियबलकार. सो तुमने चूरा । चरु तुम ढिग  
 सोहै सार. अचरज है पूरा ॥ नंदी० ॥ नैवेद्यं । ५ ।  
 दीपककी ज्योति प्रकाश. तुम तन मांहिं लसै ।  
 टूटै करमनकी राशि. ज्ञानकणी दरसै ॥ नंदी०  
 ॥ दीपं ॥ ६ ॥ कृष्णागरुधूपसुवास. दशदिशि  
 नारि वरै । अति हरषभाव परकाश. मानों नृत्य  
 करै ॥ नंदी० ॥ धूपं ॥ ७ ॥ बहुविधिफल ले  
 तिहुंकाल. आनंद राचत हैं ॥ तुम शिवफल देहु  
 दयाल. तुहि हम जाचत हैं ॥ नंदी० ॥ फलं ॥ ८ ॥  
 यह अरघ कियो निजहेत. तुमको अरपतु हों ।  
 'द्यानत' कीज्यो शिवखेत. भूमि समरपतु हों  
 ॥ नंदी० अर्घं ॥ ९ ॥

मथ जयमाला ।

दोहा—कातिक फागुन साढके. अंत आठदिन



माहिं । नंदीश्वर सुरजात हैं.हम पूजें इह ठाहिं ।  
 एकसौ त्रेसठ कोडि जोजनमहा । लाख चौरासि  
 एक एक दिशमें लहा ॥ अट्टमों दीप नंदीश्वरं  
 भास्वरं । भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं । २।  
 चार दिशि चार अंजनगिरि राजहीं । सहस  
 चौरासिया एकदिश छाजहीं ॥ ढोलसम गोल  
 ऊपर तले सुंदरं ॥ भौन० ॥ ३ ॥ एक इक चार  
 दिशि चार शुभ बावरी । एक इक लाख जोजन  
 अमल जलभरी ॥ चहुंदिशि चार वन लाख  
 जोजन वरं । भौन० ॥ ४ ॥ सोल वापीनमधि  
 सोल गिरि दधिमुखं । सहस दश महा जोजन  
 लखतही सुखं । बावरीकौन दोमाहिदो रति  
 करं । भौन० ॥ ५ ॥ शौल बत्तीस इक सहस  
 जोजन कहे । चार सोलै मिलें सर्व बावन लहे ॥  
 एक इक सीसपर एक जिनमंदिरं भौन० ॥ ६ ॥  
 बिंव अठ एकसौ रतनमयी सोहही । देवदेवी  
 सरव नयनमनमोहही ॥ पांचसै धनुष तन  
 पद्म-आसन परं । भौन० ॥ ७ ॥ लाल नख मुख

नयन स्याम अरु स्वेत हैं । स्यामरंग भोंह सिर  
 केश छविदेत हैं ॥ वचन बोलत मनो हँसत  
 कालुषहरं । भौन० ॥ ८ ॥ कोटि शशि-भान-  
 दुति तेज छिप जात है । महा वैराग परिणाम  
 ठहरात है ॥ बयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक  
 धरं ॥ भौन० ॥ ९ ॥

सो०--नंदीश्वर जिनधाम.प्रतिमा महिमाको कहै ।  
 द्यानंत लीनो नाम.यही भगति शिवसुखकरै ॥

### । अथ सोलहकारणपूजा

सोलहकारण भाय तीर्थकर जे भय । हरषे इंद्र  
 अपार मेरुपै ले गये ॥ पूजाकरिनिजधन्यलख्यौ  
 बहु चासों । हमहू षोडशकारण भावैं भावसों । १।

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतरत अवतरत  
 संवौषट् । ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठत  
 तिष्ठत । ङः ङः । ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ।

कंचनझारी निरमल नीर, पूजों जिनवर गुन-  
 गंभीर । परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु  
 हो ॥ दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थ-

कल्पददाय । परमगुरु हो, जय जय नाथ परम  
गुरु हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योजन्ममृत्युविनाशनायजलं  
चंदन घसों कपूर मिलाय, पूजों श्रीजिनवरके  
पाय । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥  
दरश० ॥२॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योसंसारतापविनाशनाय चं०  
तंदुल धवल सुगंध अनूप । पूजों जिनवर  
तिहुं जगभूप । परमगुरु हो, जय जय नाथ  
परमगुरु हो ॥ दरशविशुद्धि० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये भक्षतान् मि०  
फूल सुगंध मधुपगुंजार । पूजों जिनवर जग  
आधार । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु  
हो ॥ दरशवि० ॥४॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामवाणविध्वंसनायपु०  
सदनेवज बहुविध पकवान । पूजों श्रीजिन-  
वर गुणखान । परमगुरु हो, जय जय नाथ पर-  
मगुरु हो ॥ दरशवि० ॥५॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यःसुधारोगविनाशनाय ने०

दीपकजोति तिमिर छयकार, पूजूं श्रीजिन  
केवलधार । परमगुरु हो, जय जय नाथ परम-  
गुरु हो ॥ दरशवि० ॥६॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यःमोहांधकारविनाशनायही०

अगर कपूर गंध शुभस्वये । श्रीजिनवर आर्गे  
महकेय । परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु  
हो ॥ दरश० ॥७॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

श्रीफल आदि बहुत फलसार, पूजौं जिन वां-  
छितदातार । परमगुरु हो, जय जय नाथ परम-  
गुरु हो ॥ दरशवि० ॥८॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०

जल फल आठों दरब चढाय । 'द्यानत' वरत  
करों मनलाय । परमगुरु हो, जय जय नाथ  
परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्योऽनर्घापदप्राप्तये अर्घ्यं नि०

अथ जयमाला ।

दोहा-षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।

पाप पुण्य सब नाशकै, ज्ञानभानपरकास ॥१॥

बौपार्द १६ मात्रा ।

दरशविशुद्धि धरै जो कोई ताको आवाग-  
मन न होई ॥ विनय महा धरै जो प्रानी । शिव  
वनिताकी सखी बखानी ।२। शीलसदादिठ जो  
नर पालें । सो अवरनकी आपद टालें ॥ ज्ञाना-  
भ्यास करै मनमाहीं । ताके मोहमहातम नाही  
॥३॥ जो संवेगभाव विस्तारै । सुरगमुकतिपद  
आप निहारै ॥ दान देय मन हरषविशेखै । इह  
भव जस परभव सुख देखै ॥४॥ जो तप तपै स्वपै  
अभिलाषा । चूरै करमशिखर गुरु भाषा ॥ साधु  
समाधि सदा मनलावै । तिहुंजगभोग भोगि  
शिव जावै ॥५॥ निशिदिन वैयावृत्य करैया । सो  
निहचै भवनीर तिरैया ॥ जो अरंहंतभगति मन  
आनै । सो जन विषय कषाय न जानै ।६। जो आ-  
चारज भगति करै है । सो निरमल आचार धरै  
है ॥ बहुश्रुतवंतभगति जो करई । सोनर संपू-  
रन श्रुत धरई ॥ ७ ॥ प्रवचन भगति करै जो

ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानंददाता ॥ षट् आवश्यक  
 नितं जो साधै । सो ही रत्नत्रय आराधै ॥ ८ ॥  
 धरमप्रभाव करै जे ज्ञानी । तिन शिवमारग रीति  
 पिछानी ॥ वत्सल अंग सदा जो ध्यावै । सो  
 तीर्थकर पदवी पावै ॥ ९ ॥ दोहा—

एही सोलहभावना, सहित धरै व्रत जोय ।  
 देव इन्द्र नरवंद्यपद, दानत, शिवपद होय । १०।  
 ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः पूर्णार्चनिर्वपामीति स्वाहा

### अथ दशलक्षणधर्मपूजा ।

उत्तम छिमा मारदव आरजवभाव हैं । सौत्र  
 सत्य संजम तप त्याग उपाव हैं ॥ आकिंचन  
 ब्रमचरज धरम दश सार हैं । चहुंगतिदुखतैं  
 काढि मुक्ति करतार हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र अबतर अवतर । संबौषट्  
 ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ओं ह्रीं  
 वत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि ।  
 भवआताप निवार, दसलच्छन पूजौं सदा ॥१॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामादेवाजं वशीचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन-  
ब्रह्मचर्यं दशलक्षणधर्मभ्यो जलं निर्वापामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चंदन केशर गार, होय सुवास दशोंदिशा । भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय चंदनं निर्वापामीति स्वाहा

अमल अखंडितसार, तंदुल चंद्रसमान शुभ । भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वापामीति स्वाहा

फूल अनेक प्रकार, महकें ऊरधलोकलों ॥ भव०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वापामीति स्वाहा ॥४॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षट्ससंजुगत । भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वापामीति स्वाहा ॥

बाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वापामीति स्वाहा ॥६॥

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगंधता ॥ भव०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वापामीति स्वाहा ॥७॥

फलकी जाति अपार, ब्राननयतमनमोहने । भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वापामीति स्वाहा ॥८॥

आठोंदरव सँवार, द्यानत अधिक उछाहसों । भ०

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय निर्वापामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

अंग पूजा । सोरठा ।

पीडें दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करें ।

धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजै पीतमा ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीता छंद ।

उत्तमछिमा गहोरे भाई । इहभव जस परभव  
सुखदाई ॥ गाली सुनि मन खेद न आनो ।  
गुनको औगुन कहै अयानो ॥ कहि है अयानो  
वस्तु छीनै, बांध मार बहुविध करै । घरतैं निका-  
रै तन विदारै, वैर जो न तहां धरै ॥ तैं करम  
पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा । अति  
क्रोधअगनि बुझाय प्राणी, साम्यजल ले सीयरा  
ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्मो गाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मान महाविषरूप, करहिं नीचगति जगतमें ।  
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ॥२॥  
उत्तम मार्दवगुन मनमाना । मानकरनका कौन  
ठिकाना । वस्यो निगोदमाहितैं आया । दमरी  
रूंकन भाग बिकाया ॥ रूंकन बिकाया कर्मव-  
शतैं, देव इकइंद्री भया । उत्तम मुआ चांडाल  
हूवा, भूप कीडोंमें गया ॥ जीतव्य-जोबन धन-  
गुमान कहा करै जलबुदबुदा । करि विनय बहु

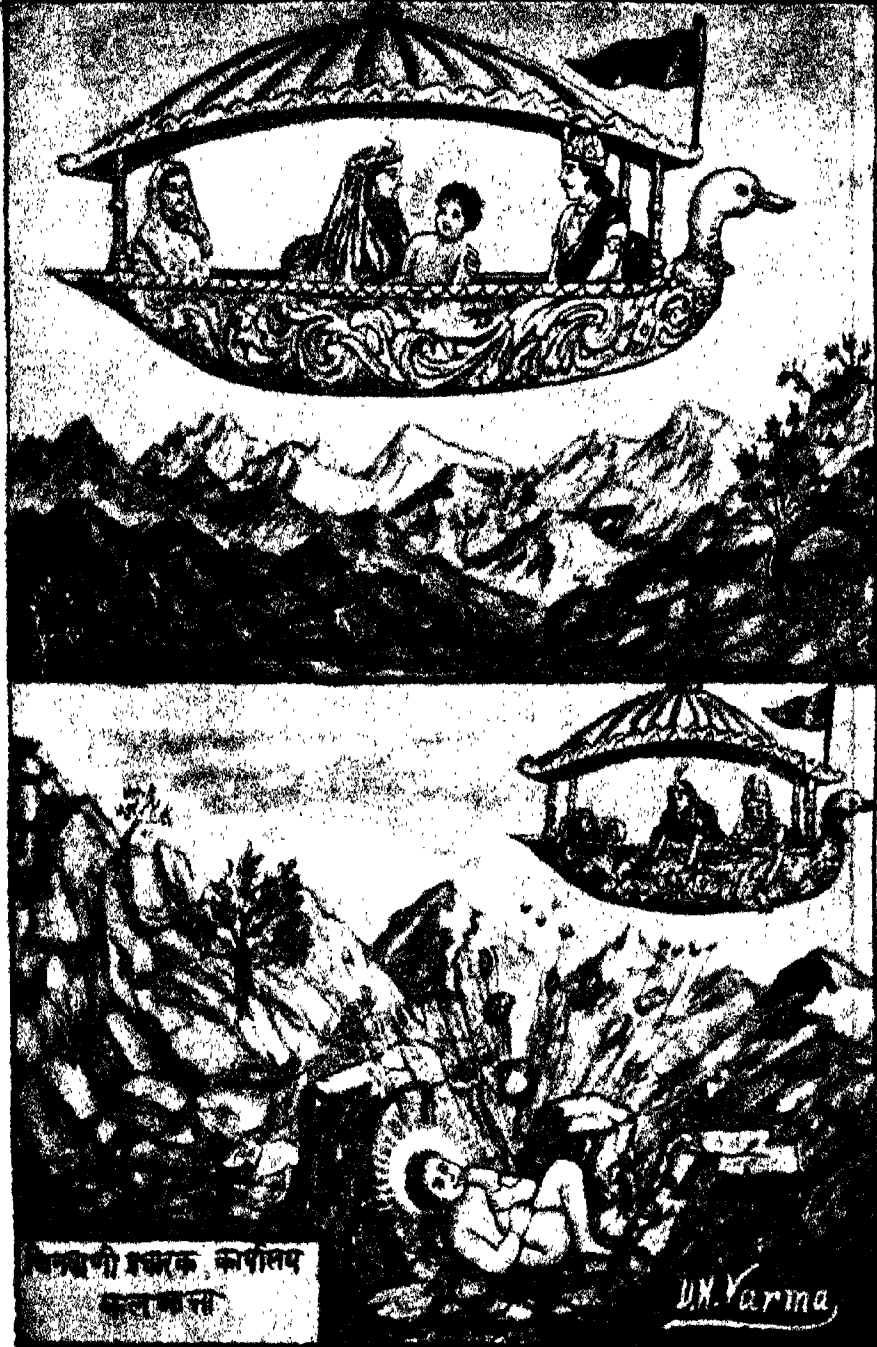


## सच्चा जिनवाणी संग्रह—



श्रीपालको गिरफ्तार करके पहरेदार लिये जा रहे हैं, गुण-  
माला बिलाप कर रही हैं। (श्रीपाल पुराण)

सच्चा जिनवाणी संग्रह —



हनुमान जन्म—गिरते ही शिला चूर्ण की ।

गुणि बडे जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥ २ ॥

ओं ह्रीं उत्तममार्जवधर्मांगाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना बसै ।  
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा ॥३॥

उत्तम आर्जवरीति बखानी । रंचक दगा  
बहुत दुखदानी । मनमें है सो वचन उचारिये ।  
वचन होय सो तनसों करिये ॥ करिये सरल  
तिहुं जोग अपने, देख निरमल आरसी । मुख  
करै जैसा लखै तैसा कपटप्रीति अँगारसी ॥  
नहिं लहै लछमी अधिक छलकरि, करमबंध  
विशेषता । भयत्याग दूध बिलाव पीवै, आपदा  
नहिं देखता ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं उत्तमार्जवधर्मांगाय अर्घंनिर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

कठिन वचन मति बोल, परनिंदा अरु झूठ तज ।  
सांच जवाहर खोल, सतवादी जगमें सुखी ॥४॥  
उत्तम सत्यवरत पालीजै परविश्वासघात नहिं  
कीजै ॥ सांचे झूठे मानव देखो, आपनपूत स्व-  
पास न पेखो ॥ पेखो तिहायत पुरुष सांचेको

दरब सब दीजिये । मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा  
 सांचगुण लख लीजिये ॥ ऊंचे सिंहासन बैठि  
 वसुनृप, धरमका भूपति भया । वसु भूठसेती  
 नरक पहुंचा, सुरगमें नारद गया ॥४॥

ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसौं ।  
 शौच सदा निरदोष, धरम बडो संसारमें ॥४॥  
 उत्तम शौच सर्व जग जाना । लोभपापको बाप  
 बखाना । आसापास महादुख दानी । सुखपावै  
 संतोषी प्राणी ॥ प्राणी सदा शुचि शीलजपतप  
 ज्ञानध्यानप्रभावतैं । नित गङ्गजमुन समुद्र न्हा-  
 ये, अशुचि दोष सुभावतैं ॥ ऊपर अमल मल  
 भन्यो भीतर, कौनविध घट शुचि कहै । बहु देह  
 सुगुन थैली, शौच गुन साधू लहै ॥५॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेद्री मन वश करो ।  
 संजमरतन सँभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं ।६।  
 उत्तम संजम गहु मन मेरे । भवभवके भागें अघ

तेरे ॥ सुरग नरकपशुगतिमें नाहीं, आलसहरन  
करन सुख ठांहीं ॥ ठांहीं पृथी जल आग मारु-  
त रूख त्रस करुना धरो । सपरसन रसना घान  
नैना, कान मन सब वश करो । जिस बिना नहिं  
जिनराज सीभे, तू रूल्यो जगकीचमें । इक घरी  
मत विसरो करो नित, आव जममुख बीचमें ॥

ओं ह्रीं उत्तमसंयमधर्मांगाय निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तप चाहें सुरराय, करमसिखरको वज्र है ।  
द्वादसविधि सुखदाय, क्यों न करै निज संकति  
सम ॥ ७ ॥ उत्तम तप सबमांहीं बखाना । कर-  
मशैलको वज्र समाना ॥ वस्यो अनादिनिगोद-  
मँभारा भूविकलत्रय पशुतन धारा । धारा म-  
नुष तन महादुर्लभ, सुकुल आव निरोगता ॥  
श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषयपयोगता ॥  
अति महादुरलभ त्याग विषय कषाय जो तप  
आदरै ॥ नरभवअनूपमकनकघरपर माणिमयी  
कलसा धरै ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति

दान चार परकार, चारसघंको दीजिये ।  
 धन विजुरी उनहार, नरभवलाहो लीजिये ॥८॥  
 उत्तमत्याग कह्यो जगसारा । औषध शास्त्र अभय  
 आहारा ॥ निहचै रागरोष निरवारै । ज्ञाता दोनों  
 दान सँभारै दोनों सँभारै कूपजल सम, दरब  
 घरमें परनियां ॥ निज हाथ दीजै साथ लीजै,  
 खाय खोया बह गया । धनि साध शास्त्र अभय  
 दिवैया, त्याग राग विरोधकों ॥ विन दाम  
 श्रावक साध दोन्यों, लहैं नाहीं बोधकों ॥९॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्माय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

परिगह चौविस भेद त्याग करें मुनिराजजी ।  
 त्रिसनाभाव उद्धेद घटती जान घटाइये ॥१॥  
 उत्तम आकिंचन गुण जानौ । परिगहचिंता दुख  
 ही मानौ ॥ फांस तनकसी तनमें सालै । चाह  
 लँगोटीकी दुख भालै ॥ भालै न समता सुख  
 कभोनर बिना मुनिमुद्रा धरे । धनि नगनपर  
 तन-नगन ठाडे-सुर असुर पायनि परै ॥ घर  
 माहिं त्रिसना जो घटावै रुचि नहीं संसारसों ।

बहुधन बुरा हू भला कहिये. लीनपरउपगारसौं ॥

ओं ह्रीं उत्तमाकिंचन्यधर्मागाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

शीलबाड नौ राख. ब्रह्मभाव अन्तर लखो ।  
करि दोनों अभिलाख. करहु सफल नरभव सदा ॥  
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ । माता बहिन सुता  
पहिचानौ ॥ सहैं बानवरषा बहु सूरे । टिकै न  
नैन-वाण लखि कूरे ॥ कूरे तियाके अशुचितनमें  
कामरोगी रति करै । बहु मृतक सडहिं मसान-  
माहीं. काक ज्यों चौंचें भरै ॥ संसारमें विषबेल  
नारी. तजि गये जोगीश्वरा । 'द्यानत' धरमद-  
शपैँडि चढिकै. शिवमहलमें पग धरा ॥ १० ॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मवयधर्मागाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

अथ समुच्चय जयमाला । दोहा ।

दोहा—दशलच्छन बंदों सदा. मन वांछित फल  
दाय । कहूं आरती भारती. हमपर होहु सहाय ॥

बेसरी छंद ।

उत्तमछिमा जहां मन होई. अंतरबाहिर शत्रु  
न कोई । उत्तममार्दव विनय प्रकासै. नानाभेद

ज्ञान सब भासै ॥२॥ उत्तमआर्जव कपट मिटावै ।  
दुरगति त्यागि सुगति उपजावै ॥ उत्तम शौच  
लोभपरिहारी, संतोषी गुणरतन भंडारी । उत्तम  
सत्यवचन मुख बोलै । सो प्रानी संसार न डोलै  
॥ ३ ॥ उत्तमसंजम पालै ज्ञाता । नरभव सफल  
करै, लेसाता ॥ ४ ॥ उत्तम तप निरवांछित  
पालै । सो नर करमशत्रुकों टालै । उत्तमत्याग  
करै जो कोई । भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई । ५ ।  
उत्तमआकिंचनव्रत धारै । परमसमाधि दशा  
विसतारै ॥ उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै । नरसुर  
सहित मुक्तिफल पावै ॥ ६ ॥

दोहा-करै करमकी निरजरा, भयपींजरा विनाशि  
अजरअमरपदको लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवाज्वशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्र-  
ह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

। संस्कृत स्वयंभूस्तोत्र ।

येन स्वयंबोधमयेन लोका आश्वासिता केचन  
चित्तकार्ये । प्रबोधिना केचन मोक्षमार्गे तमादि



नाथं प्रणमामि नित्यं ॥ १ ॥ इंद्रादिभिः क्षीरस-  
मुद्रतोयैः संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः । यः  
कामजेता जनसौख्यकारी तं शुद्धभावादजितं  
नमामि ॥ २ ॥ ध्यानप्रबंधप्रभवेन येन निहत्य  
कर्मप्रकृतीः समस्ताः । मुक्तिस्वरूपां पदवीं प्रपेदे  
तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥ ३ ॥ स्वप्ने यदीया  
जननी क्षपायां गजादिवह्यंतमिदं ददर्श ।  
यत्तात इत्याह गुरुः परोयं नौमि प्रमोदादभिनं-  
दनं तं ॥ ४ ॥ कुवादिवदं जयता महांतं नयप्र-  
माणैर्वचनैर्जगत्सु । जैनमतं विस्तरितं च येन तं  
देवदेवं सुमतिं नमामि ॥ ५ ॥ यस्यावतारे सति  
पितृधिष्ण्ये ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात् । धना-  
धिपः षण्णवमासपूर्वं पद्मप्रभं तं प्रणमामि  
साधुं ॥ ६ ॥ नरेन्द्रसर्पेश्वरनाकनाथैर्वाणी भवती  
जगृहे स्वचित्ते । यस्यात्म बोधः प्रथितः सभाया-  
महं सुपार्श्वं ननु तं नमामि ॥ ७ ॥ सत्प्रातिहार्या-  
तिशयप्रपन्नो गुणप्रवीणो हतदोषसंगः । यो लोक-  
मोहांधतमः प्रदीश्वंद्रप्रभं तं प्रणमामि भावात्

॥ ८ ॥ गुप्तित्रयं पंच महाव्रतानि पंचोपदिष्टा  
 समितिश्च येन । बभाण यो द्वादशधा तपांसि तं  
 पुष्पदंतं प्रणमामि देवं ॥ ९ ॥ ब्रह्मव्रतांतो जिन  
 नायकेनोत्तमक्षमादिर्दशधापि धर्मः । येन प्रयुक्तो  
 व्रतबंधबुद्ध्या तं शीतलं तीर्थकरं नमामि । १० ।  
 गणै जनानंदकरे धरांते विध्वस्तकोपे प्रशमैक-  
 चित्तं । यो द्वादशांगं श्रुतमादिदेश श्रेयांसमा-  
 नौमि जिनं तमीशं ॥ ११ ॥ मुक्त्यंगनाया रचिता  
 विशाला रत्नत्रयीशेखरता च येन । यत्कंठमा-  
 साद्य बभूव श्रेष्ठा तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात्  
 ॥ १२ ॥ ज्ञानी विवेकी परमस्वरूपी ध्यानी  
 व्रती प्राणिहितोपदेशी । मिथ्यात्वघाती शिवसौ-  
 ख्यभोजी बभूव यस्तं विमलं नमामि ॥ १३ ॥  
 आभ्यंतरं दाह्यमनेकधा यः परिग्रहं सर्वमपाच-  
 कार । यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां वंदे जिन  
 तं प्रणमाभ्यनंतं ॥ १४ ॥ सार्द्धं पदार्था नव  
 सप्त तत्त्वैः पंचास्तिकायाश्च न कालकायाः ॥  
 षड्द्रव्यनिर्णीतिरलोकयुक्तिर्येनोदिता तं प्रण-

मामि धर्मं ॥ १५ ॥ यश्चक्रवर्ती भुवि पंचमो-  
भूच्छ्रीनंदनो द्वादशको गुणानां । निधिप्रभुः  
षोडशको जिनेंद्रस्तं शांतिनाथं प्रणमामि भेदात्  
॥१६॥ प्रशंसितो यो न विभर्ति हर्षं विराधितो  
यो न करोति रोषं । शीलव्रताद् ब्रह्मपदं गतो  
यस्तं कुंथुनाथं प्रणमामि हर्षात् ॥ १७ ॥ यः सं-  
स्तुतो यः प्रणतः सभायां यः सेवितोऽंतर्गणपूर-  
णाय । पदच्युतैः केवलिभिर्जिनस्य देवाधिदेवं  
प्रणमाम्यरं तं ॥ १८ ॥ रत्नत्रयं पूर्वभवांतरे यो  
व्रतं पवित्रं कृतवानशेषं । कायेन वाचा मनसा  
विशुद्ध्या, तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥१९॥  
ब्रुवन्नमः सिद्धपदाय वाक्य, -मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव  
लोचं । लौकांतिकेभ्यः स्तवनं निशम्य, वंदे जि-  
नेशं मुनिसुव्रतं तं ॥ २० ॥ विद्यावतं तीर्थकरा-  
य तस्मा, -याहारदानं ददतो विशेषात् । गृहे नृ-  
पस्याजनि रत्नवृष्टिः स्तौमि प्रणामान्नयतो नमिं  
तं ॥२१॥ राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं  
चकारापुनरागमाय । सर्वेषु जीवेषु दयां दधान-

स्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या ॥ २२ ॥ सर्पा-  
धिराजाः कमठारितोयै, -र्ध्यानास्थितस्यैव फणा-  
वितानैः । यस्योपसर्गं निरवर्तयत्तं, नमामि पार्श्वं  
महतादरेण ॥ २३ ॥ भवार्णवे जंतुसमूहमेन,  
माकर्षयामास हि धर्मपोतात् । मज्जंतमुद्वीक्ष्य य  
एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहंतं ॥ २४ ॥  
यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोपस्कृतं  
सर्वज्ञध्वनिसंभवं त्रिकरणव्यापारशुद्ध्यानिशं ।  
भव्यानां जयमालया विमलया पुष्पांजलिं दापय-  
न्नित्यं संश्रियमातनोति सकलं स्वर्गापवर्गस्थितिं ।

स्वयंभू स्तोत्र भाष्य ।

चौपाई ।

राजविषै जुगलनि सुख कियो । राज त्याग भुवि  
शिवपद लियो ॥ स्वयंबोध स्वंभू भगवान । बंदौं  
आदिनाथ गुणखान ॥ १ ॥ इंद्र छीरसागरजल  
लाय । मेरु न्हाये गाय बजाय ॥ मदनविना-  
शक सुख करतार । बंदौं अजित अजितपदकार  
२ ॥ शुक्ल ध्यानकरि करमविनाशि । घाति

अघातिसकल दुखराशि । लह्यो मुक्तिपदसुख  
 अधिकार । बंदों संभव भवदुख टार ॥ ३ ॥  
 माता पच्छिम रयनमंझार । सुपने सोलह देखे  
 सार ॥ भूप पूछि फल सुनि हरषाय । बंदों अभि  
 नंदन मनलाय ॥ ४ ॥ सब कुवादवादी सरदार ।  
 जीते स्यादवादधुनिधार ॥ जैनधरमपरकाशक  
 स्वाम । सुमातैदेवपद करहुं प्रनाम ॥ ५ ॥ गर्भ  
 अगाऊ धनपति आय । करी नगर शोभा अधि-  
 काय ॥ बरसे रतन पंचदश मास । नमों पदम-  
 प्रभु सुखकी रास ॥ ६ ॥ इंद फनिंद नरिंद त्रिका-  
 ल । बानी सुनि सुनि होहिं खुस्याल ॥ द्वादश-  
 सभा ज्ञानदातार । नमों सुपारसनाथ निहार  
 ॥ ७ ॥ सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं । दोष  
 अठारह कोऊ नाहिं ॥ मोह महातमनाशक  
 दीप । नमों चंद्रप्रभ राख समीप ॥ ८ ॥ द्वादश  
 विध तप करम विनाश । तेरहभेद चरित पर-  
 काश ॥ निज अनिच्छ भवि इच्छकदान । बंदों  
 पहुपदंत मनआन ॥ ९ ॥ भविसुखदाय सुरगतै

आय । दशविध धरम कह्यो जिनराय ॥ आप  
 समान सबनि सुख देह । बंदौं शीतल धर्मसनेह  
 ॥१०॥ समता सुधा कोपविष नाश । द्वादशांग  
 वानी परकाश ॥ चारसंघ-आनँद-दातार । नमों  
 श्रियांस जिनेश्वर सार ॥ ११ ॥ रतनत्रयचिर-  
 मुकुटविशाल । सोभै कंठ सुगुन मनिमाल ॥  
 मुक्तिनार भरता भगवान । वासुपूज्य वंदौं धर  
 ध्यान ॥ १२ ॥ परम समाधि-स्वरूप जिनेश ।  
 ज्ञानी ध्यानी हित उपदेश ॥ कर्मनाशि शिवसुख  
 विलसंत । वंदौं विमलनाथ भगवंत ॥ १३ ॥  
 अंतर बाहिर परिगह डारि । परम दिगंबरव्रत  
 को धारि ॥ सर्वजीवहित-राह दिखाय । नमों  
 अनंत वचनमनलाय ॥ १४ ॥ सात तत्व पंचा-  
 सतिकाय । अरथ नवों छदरब बहुभाय ॥ लोक  
 अलोक सकल परकास । वंदौं धर्मनाथ अवि-  
 नाश ॥ १५ ॥ पंचम चक्रवरति निधिभोग ।  
 कामदेव द्वादशम मनोग ॥ शांतिकरन सोलम  
 जिनराय । शांतिनाथ वंदौं हरस्वाय ॥ १६ ॥

बहुथुति करे हरष नहिं होय । निंदे दोष गहैं  
 नहिं कोय । शीलवान परब्रह्मस्वरूप । बंदौं कुंथु  
 नाथ शिवभूप ॥ १७ ॥ द्वादशगण पूजैं सुखदाय  
 थुति बंदना करैं अधिकाय ॥ जाकी निजथुति  
 कबहुं न होय । बंदौं अरजिनवर-पद दोय । १८ ।  
 परभव रतनत्रय-अनुराग । इह भव ब्याहसमय  
 वैराग ॥ बालब्रह्मपूरनव्रतधार । बंदौं मलिनाथ  
 जिनसार ॥ १९ ॥ विन उपदेश स्वयं वैराग ।  
 थुति लोकांत करै पगलाग ॥ नमः सिद्ध कहि  
 सब व्रत लेहिं । बंदौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं  
 ॥ २० ॥ श्रावक विद्यावंत निहार । भगतिभाव  
 सों दियो अहार ॥ बरसी रतनराशि ततकाल ।  
 बंदौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥ सब जीवन  
 की बंदी छोर । रागरोष द्वै बंधन तोर ॥ रज-  
 माति ताजि शिवतियसों मिले । नेमिनाथ बंदौं  
 सुखनिले ॥ २२ ॥ दैत्यकियो उपसर्ग अपार ।  
 ध्यान देखि आयो फनिधार ॥ गयो कमठ शठ  
 मुख कर श्याम । नमों मेरुसम पारसस्वाम । २३ ।

भवसागरतैं जीव अपार । धरमपोतमें धरे  
निहार ॥ डूबत काढे दया विचार । वर्द्धमान  
वंदौं बहुबार ॥ २४ ॥

दोहा—चौवीसौं पदकमलजुग, वंदौं मनवचकाय  
'द्यानत' पढै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥

। अथ रत्नत्रयपूजा भाषा ।

दोहा ।

चहुंगतिफनिविषहरनमणि दुखपात्रकजलधार ।  
शिवसुखसुधासरोवरी, सम्यकत्रयी निहार ॥१॥

ओं ह्रीं सम्यकरत्नत्रयधर्म ! अत्र अवतर अवतर । संवोषट् ।

ओं ह्रीं सम्यकरत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं सम्यकरत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक सोरठा ।

क्षीरोदाधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।  
जनमरोगानिरवार, सम्यकरत्नत्रय भजूं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यकरत्नत्रयाय जन्म रोगविनाशनाय जलं निर्वपामीति०

चंदनकेसरगारि, परिमलमहासुरंगमय । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यकरत्नत्रयाय भवातापविनाशनायचन्दनं निर्वपामीति । २ ।

तंदुलअमलचितार, वासमतीसुखदासके । जन्म०



ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति । ३ ।

महर्के फूलअपार, अलिगुंजैज्योथुतिकरें । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयायकामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति । ४ ।

लाडूबहु विस्तार चीकनमिष्टसुगंधयुत । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति । ५ ।

दीपरतनमयसार जोतप्रकाशैजगतभैं । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयायमोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति । ६ ।

धूपसुवासविथार चंदनअगर कपूरकी । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति ॥ ७ ॥

फलशोभाअधिकार लोंगछुहारेजायफल । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति ॥ ८ ॥

आठदरबनिरधार उत्तमसोंउत्तमलिये । जन्म०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति ॥ ९ ॥

सम्यकदरशनज्ञान व्रतशिवमगतीनोंमयी । ज०

पारउतारनयान द्यानत पूजोंव्रतसहित । ज०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

दर्शन पूजा ।

दोहा—सिद्ध अष्टगुनमय प्रगट मुक्तजीवसोपान  
ज्ञानचरित जिहँविन अफल सम्यकदर्शप्रधान ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शने ! अत्र अवतर अवतर संबोद्ध ।

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शने ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शने ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा-नीर सुगंध अपार त्रिषाहुरै मलछय करै ॥

सम्यक्दर्शनसार आठ अंग पूजौ सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसर घनसार तापहरै सीतलकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अञ्जतअनूपनिहार दारिदनाशैसुखभरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवासउदार खेदहरैमनशुचिकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

नेवजविविधिप्रकार लुधाहरैथिरताकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

दीपज्योतितमहार घटपटपरकाशैमहा । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

धूप घ्रानसुखकार रोगविघनजडताहरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफलआदिविथारं निहचैसुरशिवफलकरै । स०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

जलगंधाक्षतचारु, दीपधूपफलफूलचरु । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

जयमाला ।

दोहा--आप आप निहचै लखै, तत्त्वप्रीति व्योहार ।  
रहितदोष पञ्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछंद

सम्यकदरशनरतन गहीजै । जिनवचमें संदेह  
न कीजै । इहभव विभवचाह दुखदानी । पर-  
भवभोग चहै मत्र प्राणी ॥ प्राणी गिलान न  
करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ॥  
परदोष ढकिये धरम डिगतेको, सुथिर कर  
हरखिये ॥ चहुँसंघको वात्सल्य कीजै, धरमकी  
परभावना । गुन आठसों गुन आठ लहिकें,  
इहां फेर न आवना ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टांगसहितपंचविंशतिदोषरहितसम्यग्दर्शनायपूर्णार्घ्यनि०

ज्ञान पूजा ।

दोहा--पंचभेद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशनभान ।  
मोह-तपन-हर-चंद्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर । संबोध ।

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।

सोरठा ।

नीरसुगंध अपार, तृषा हरै मल छय करै ।  
सम्यक्ज्ञान विचार, आठभेद पूजों सदा ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

जलकेसरघनसार, तापहरै शीतलकरै । सम्य०

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

अक्षत अनुप निहार, दारिद नाशै सुख करै ।स०

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

पहुपसुवासउदारखेदहरैमनशुचिकरै ।स० पुष्पं

नेवजविविधप्रकार, छुधाहरैथिरता करै ।स० नै०

दीपजोतितमहार, घटपटपरकाशैमहा । स० दीपं

धूपघ्नानसुखकार, रोगविघनजडता हरै ।स० धूपं

श्रीफलआदिविथारनिहचैसुरशिवफलकरै ।स० फ

जलगंधाक्षतचारु, दीपधूपफलफूलचरु । स० अर्घ

अथ जयमाला ।

दोहा—आपआपजानै नियत, ग्रंथपठन व्यौहार ।

संसय विभ्रम मोह विन, अष्टअंग गुनकार ॥१॥

बौपार्ह मिश्रित गीता छंद ।

सम्यकज्ञानरतनमनभाया, आगम तीजानेन  
बताया । अच्छर शुद्ध अर्थ पहिचानो, अच्छर  
अरथ उभय सँग जानो ॥ जानो सुकालपठन  
जिनागम, नाम गुरुन छिपाइये । तपरीति गहि  
बहु मौन देकें, विनयगुन चितलाइये ॥ ये आठ  
भेद करम उछेदक, ज्ञान दर्पन देखना । इसज्ञान-  
हीसों भरत सीझा और सब पटपेखना ॥ २ ॥  
ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

चारित्र पूजा ।

दोहा-विषयरोग औषध महा, दवकषायजलधार ।  
तीर्थकर जाकौ धरै, सम्यकचारितसार ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संशौषद्  
ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ओं ह्रीं  
त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा ।

नीरसुगंधअपार, तृषा हरै मल छय करै ।

सम्यक चारितसार, तेरहविध पूजों सदा ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

जलकेशरघनसार, तापहरैशीतलकरै । सम्यक०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अच्छतअनूपनिहार, दारिदनाशैसुखभरै । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वापामीति स्वाहा ।

पहुपसुवासउदार, खेदहरैमनशुचिकरै । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्यं निर्वापामीति स्वाहा ।४।

नेवजविविधप्रकार, छुधाहरै थिरता करै । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वापामीति स्वाहा ॥

दीपजोति तमहार, घटपटपरकाशैमहां । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीपं निर्वापामीति स्वाहा ।६।

धूप घ्रान सुखकार, रोगविघनजडताहरै । स०॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वापामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफलआदिविथार, निहचैसुरशिवफलकरै । स०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वापामीति स्वाहा ।८।

जलगंधाक्षतचारु, दीपधूपफलफूलचरु । सम्य०

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घं निर्वापामीति स्वाहा ।९।

अथ जयमाला ।

दोहा-आपआपथिरनियतनय, तपसंजम व्योहार

स्वपरदया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछंद ।

सम्यक्चारित रतन सँभालौ, पांचपाप तजि

के व्रत पालौ । पंचसमिति त्रयगुपति गहीजै,  
 नरभव सफल करहु तन छीजै ॥ छीजै सदा  
 तनको जतन यह एक संजम पालिये । बहु  
 रूल्यो नरक निगोदमाहीं, विषकषायनि टा-  
 लिये ॥ शुभकरमजोग सुघाट आयो, पार हो  
 दिन जात है 'घानत' धरमकी नाव बैठो, शि-  
 वपुरी कुशलात है ॥२॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविं सम्यकचारित्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

अथ समुच्चय जयमाला । दोहा—

सम्यकदरशन-ज्ञानव्रत, इन विन मुकति न होय ।  
 अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जलैं दबलोय ।१।  
 चौपाई १६ मात्रा ।

जापै ध्यान सुथिर बन आवै । ताके करमबंध  
 कट जावै ॥ तासों शिवतिय प्रीति बढावै । जो  
 सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ २ ॥ ताको चहुंगतिके  
 दुख नाहीं । सो न परै भवसागरमाहीं ॥ जनम  
 जरामृत दोष मिटावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्या-  
 वै ॥३॥ सोई दशलच्छनको साथै । सो सोलह  
 कारण आराधै ॥ सो परमात्मपद उपजावै । जो

सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥४॥ सोई शक्रचक्रिपद  
 लेई । तीनलोकके सुख विलसेई ॥ सो रागादिक  
 भाव बहावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ५ ॥  
 सोई लोकालोक निहारै । परमानंददशा विस-  
 तारै ॥ आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यक  
 रतनत्रय ध्यावै ॥ ६ ॥

एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय ।  
 तीन भेद व्योहार सब, द्यानतको सुखदाय । ७ ।  
 ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनसम्यग्ज्ञानसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्वपामी० ॥

( अघंके बाद विसर्जन करना चाहिये )

### । श्रीसम्मैदाचल पूजा ।

दोहा-सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उतकृष्टसुथान  
 शिखरसमेद सदा नमों, होयपापकी हान ॥१॥  
 अगणित मुनि जहँतें गये.लोकशिखरके तीर ।  
 तिनके पदपंकज नमूं.नाशैं भवकी पीर ॥ २ ॥  
 अडिल--है उज्वल वह क्षेत्र सुअति निरमलसही ।  
 परम पुनीत सुठौर महा गुणकी मही ।  
 सकल सिद्धिदातार महा रमणीक है ।



बंदों निज सुखहेतु अचल पद देत है ॥३॥  
 सोरठा-सिखरसमेद महान, जगमें तीर्थप्रधान है ।  
 महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किमि कहों ॥  
 सुंदरी छंद-सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है । अति  
 सु उज्वल तीर्थ महान है ॥ करहिं भक्ति सु जे  
 गुण गायकें । वरहिं सुर शिवके सुख जायकें ॥  
 अडिल्ल-सुर हरि नर इन आदि और बंदन  
 करें । भवसागरतैं तिरैं, नहीं भवमें परैं । सफल  
 होय तिन जन्म शिखर दरशन करें, जनमजन-  
 मके पाप सकल छिनमें टरैं ॥ ६ ॥

पद्दरीछंद--श्रीतीर्थकर जिनवर जु बीश । अरु  
 मुनि असंख्य सब गुणन ईश ॥ पहुँचे जहँतैं कैव-  
 ल्य धाम । तिनकों अब मेरी है प्रणाम ॥ ७ ॥

गोतिका छंद

सम्मेदगढ है तीर्थ भारी सबहिकों उज्वल  
 करै । चिरकालके जे कर्म लागे दर्शतैं छिनमें  
 टरै ॥ है परमपावन पुण्यदायक अतुलमहिमा  
 जानिये । अरु है अनूप सरूप गिरिवर तास  
 पूजन ठानिये ॥८॥

दोहा-श्रीसम्मेदशिखर सदा, पूजौं मनवचकाय ।

हरत चतुर्गतिदुःस्वकों, मनवांछित फलदाय ॥

ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर । संबोध ।

ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र अत्र । तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः । ओं ह्रीं  
सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक ।

अडिल्ल-क्षीरोदधिसम नीर सुनिरमललीजिये ।

कनक कलशमें भरकें धारा दीजिये ॥

पूजौं शिखरसमेद सुमनवचकाय जी ।

नरकादिक दुख टरें अचलपद पायजी ॥

ओं ह्रीं विंशतितोर्थकगायसंख्यातमुनिसिद्धपदप्राप्तेभ्यो सम्मेदशि-  
खरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामी० ॥

पयसों घसि मलयागिरिचंदन लाइये । केसरि

आदि कपूर सुगंध मिलाइये ॥ पूजौं शिखरस-

मेद० ॥ नरका० चंदनं ॥ २ ॥ तंदुल धवल सु-

वासित उज्वल धोयकै । हेमरतनके थार भरों

शुचि होयकै ॥ पूजौं शिखरसमेद० । अक्षतान् ।

॥ ३ ॥ सुरतरुके सम पुष्प अनूपम लीजिये ।

कामदाहदुखहरणचरण प्रभु दीजिये ॥ पूजौं शि-

खरसमेद० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ कनकथार नैवेद्य सु

षट्सतै भरे । देखत क्षुधा पलाय सुजिन आगै  
 धरे ॥ पूजों शिखरसमेद० । नरकादि० । नैवेद्यं०  
 ॥५॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति प्रकाश है ।  
 पूजत होत सुज्ञान मोहतम नाश है ॥ पूजोंशि-  
 खरसमेद० । नरका० । दीपं ॥ ६ ॥ दशविध धूप  
 अनूप अगनिमें खेवहूं । अष्टकर्मको नाश होत  
 सुख लेवहूं ॥ पूजों शिखरसमेद० ॥ नरका० ॥  
 धूपं ॥७॥ एला लोंग सुपारी श्रीफल ल्याइये ।  
 फल चढाय सुख वांछ मोक्षफल पाइये । पूजों  
 शिखर० । नरकादि० । फलं० ॥ ८ ॥ जल  
 गंधाक्षतपुष्प सुनेवज लीजिये । दीप धूप फल  
 लेकर अर्घ्य सु दीजिये ॥ पूजोंशि- खरसमेद ॥  
 नरका० । अर्घ्य ॥ ९ ॥

पद्धति छंद ।

श्रीविंशति तीर्थकर जिनेंद्र । अरु असंख्यात  
 जहँतैं मुनेंद्र ॥ तिनकों करजोरि करों प्रणाम ।  
 जिनको पूजों तजि सकल काम ॥ महार्घ्यं० ॥  
 अडिल्ल-जे नर परम सुभावनतैं पूजा करें ।

हरि हलि चक्री होंय राज छह खंडकरें फेरि  
होंय धरणेंद्र इंद्रपदवी धरें । नानाविध सुखभोगि  
बहुरि शिवतिय वरें ॥

इत्याशीर्वादः ( पुष्पांजलिं क्षिपेत् ) छंद जोगीरासा ।

श्रीसम्मोदशिखरगिरि उन्नत, शोभा अधिक प्रमा-  
नों । विंशति तिहिंपर कूट मनोहर, अदभुत रचना  
जानो ॥ श्रीतीर्थंकर बीस तहांतें, शिवपुर पहुंचे  
जाई । तिनके पदपंकज जुग पूजों, अर्घ प्रत्येक  
चढाई ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नं० २४ अजितनाथ सिद्धवरकूट ।

प्रथम सिद्धिवरकूट सुजानों, आनंद मंगलदाई ।  
अजितनाथ जहँतें शिव पहुंचे पूजोंमनवचकाई  
कोडि जु अस्सी एक अरब मुनि, चौवन लाख  
जु गाई । कर्म काटि निर्वाण पधारे, तिनकों  
अर्घ चढाई ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मोदशिखरसिद्धक्षेत्रसिद्धवरकूटतें, अजितनाथजिनेंद्रादि  
मुनि एक अर्ब अस्सीकोटि चौवनलाख सिद्धपद प्राप्तेभ्यः सिद्धक्षे-  
त्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० १४ संभवनाथ धवलकूट ।

धवलदत्त है कूट दूसरो, सब जियको सुखकारी ।  
श्रीसंभवप्रभु मुक्ति पधारे पापतिमिरकों टारी ॥  
धवलदत्त दे आदि मुनी, नवकोडाकोडी जानो  
लाख बहत्तरि सहस वियालिस, पंचशतक ऋषि  
मानो ॥ कर्मनाशकरि शिवपुर पहुंचे, बदों शीशं  
नवाई । तिनके पदजुग जजहुं भावसों, हरषि २  
चितलाई ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रधवलकूटतै सम्भवनाथजिनेंद्रादि  
मुनि नौकोडाकोडीबहत्तरलाखव्यालीसहजारपांचसौसिद्धपदप्रा-  
प्तेभ्यःसिद्धक्षेत्रेभ्यो अघं निर्वपामोति स्वाहा ॥

नं० १६ अभिनंदननाथ आनन्दकूट ।

चौपाई—आनँदकूट महासुखदाय । अभिनंदन  
प्रभु शिवपुर जाय ॥ कोडाकोडि बहत्तरजान ।  
सत्तर कोडिलखछत्तिस मान ॥ सहस वियालिस  
शतक जु सात । कहे जिनागममें इह भांत ॥  
ये ऋषि कर्म काटि शिवगये । तिनके पदजुग  
पूजत भये ॥

ओं ह्रीं सम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रे आनंदकूटतैश्रीअभिनंदनजिनेंद्रादि

मुनि बहत्तरकोडाकोडीसत्तरकोडिछत्तीसलाखव्यालीसहजार सा-  
तसौसिद्धपद प्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० १६ सुमतिनाथ अविचलकूट । अडिह ।

अविचल चौथो कूट महासुख धामजी । जहँतें  
सुमतिजिनेश गये निर्वाणजी ॥ कोडाकोडी एक  
मुनीश्वर जानिये । कोटि चुरासी लाख बह-  
त्तरि मानिये ॥ सहस इक्यासी और सातसौ  
गाइये । कर्म काटि शिवगये तिन्हें शिर नाइये  
सो थानक मैं पूजूं मनवचकायजी । पाप दूर  
हो जांय अचलपदपायजी ॥

ओं हीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रअविचलकूटतैसुमतिनाथजिनेद्रादि  
मुनि एक कोडाकोडी चौरासीकोडि बहत्तरलाख इक्यासीहजार  
सातसौ सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीतिस्वाहा ।

नं० ८ पद्मप्रभ मोहनकूट । अडिह—

मोहन कूट महान परम सुंदर कह्यो । पद्मप्रभ  
जिनराज जहां शिवपुर लह्यो ॥ कोटि निन्या-  
वन लाख सतासी जानिये । सहस तियालिस  
और मुनीश्वर मानिये ॥ सप्त सैंकरा सत्तर  
ऊपर वीस जू । मोक्ष गए मुनि तिन्हें नमूं नित

शीस जू ॥ कहै जवाहरलाल दायकर जोरि कै  
आविनाशी पद दे प्रभु कर्मन तोरि कै ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मोदशिखरसिद्धक्षेत्रमोहनकूटतै पद्मप्रभजिनेन्द्रादिमुनि  
निन्यानवे कोडि सतासीलाख तेतालोसहजार सातसौ नब्बे  
सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निवंपामीति स्वाहा ॥

नं० २२ सुपार्श्वनाथ प्रभासकूट । सोरठा—

कूट प्रभास महान, सुंदर जनमन-मोहनो ।  
श्रीसुपार्श्वभगवान, मुक्ति गये अघ नाशिकै ॥  
कोडाकोडि उनचास, कोडि चुरासी जानिये ।  
लाख बहत्तर खास, सात सहस हैं सात सौ ॥  
और कहे व्यालीस, जहँतैं मुनि मुक्ती गए ।  
तिनहिं नमैं नित शीश, दासजवाहर जोरकर ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मोदशिखरसिद्धक्षेत्रप्रभासकूटतै श्रीसुपार्श्वनाथजि-  
नेन्द्रादिमुनि उनचास कोडाकोडि चौरासीकोडि बहत्तरलाख सात  
हजार सातसौ बियालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घं  
निवंपामीति स्वाहा ॥

नं० ६ चंद्रप्रभ ललितकूट ।

दोहा-पावन परम उत्तंग है, ललितकूट है नाम  
चंद्रप्रभ शिवको गये, बंदों आठों जाम ॥  
कोडाकोडी जानिये, चौरासी ऋषिमान ।

कोडि बहत्तर अरु कहे, अस्सीलाख प्रमान ॥  
सहस चुरासी पंचशत, पचपन कहे मुनिंद ।  
बसुकरमनको नाशकर, पायो सुखको कंद ।  
ललितकूटतें शिवगये, बंदौं शीश नवाय ।  
जिनपद पूजां भावसों, निजहित अर्घ चढाय ॥

ओं ह्रीं श्रोसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रललितकूटतै चंद्रप्रभजिनेंद्रादि  
मुनि चौरासोकोडाकोडोबहत्तरकोडिअसीलाख चौरासीहजार पां-  
चसौ पचपन सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति०

न० ७ पुष्पदंत सुप्रभकूट । पद्मधरी छंद ।

श्री सुप्रभकूट सु नाम जान । जहँ पुष्पदंतको  
मुकति थान ॥ मुनि कोडाकोडि कहे जु भाख ।  
नव ऊपर नवधर कहे लाख ॥ शतचारि कहे  
अरु सहससात । ऋषिअस्सी और कहे विख्या-  
त ॥ मुनि मोक्षगण हनि कर्मजाल । वंदौं कर-  
जोरि नमाय भाल ॥

ओं ह्रीं श्रोसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुप्रभकूटतै पुष्पदन्तजिनेंद्रादि  
मुनि एककोडाकोडीनिन्यानवेलाख सातहजार चारसौ अस्सी  
सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

न० १२ शीतलनाथ विद्युतकूट । सुन्दरी छंद—

सुभग विद्युतकूट सु जानिये । परम अदभुत



तापर मानिये ॥ गये शिवपुर शीतलनाथजी ।  
 नमहुँ तिन इह करधर माथजी ॥ मुनि जु कोडा  
 कोडि अठारहू । मुनि जु कोडि वियालिस जा-  
 नहू ॥ कहे और जु लाखबत्तीस जू । सहसव्या-  
 लिस कहे यतीश जू ॥ अवर नौसौ पांच जु जा-  
 निये । गए मुनि शिवपुरको मानिये ॥ करहिं  
 जे पूजा मन लायकैं । धरहिं जन्म न भवमें  
 आयकैं ॥

मों हीं श्रीसम्पद्शिखरसिद्धक्षेत्रविद्युत्कूटतै श्रीशीतलनाथजि-  
 नेंद्रादि मुनि अठारहकोडाकोडी व्यालीसकोडि बत्तीसलाखव्या-  
 लीसहजार नौसौ पांच सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं०

नं० ६ श्रेयांसनाथ संकुलकूट । जोगीरासा—

कूट जु संकुल परममनोहर, श्री श्रेयान् जिन-  
 राई । कर्मनाशकर शिवपुर पहुंचे, वंदौं मनवच  
 काई ॥ छ्यानव कोडाकोडी जानो, छ्यानवको-  
 डि प्रमानो ॥ लाख छ्यानवे सहस मुनीश्वर,  
 साढे नव अब जानो ॥ ता ऊपर व्यालीस कहे हैं  
 श्रीमुनिके गुण गावैं ॥ त्रिविधयोग करि जो  
 कोह पूजै, सहजानंद तहँ पावैं ॥ सिद्ध नमों मुख

दायक जगमें, आनँदमंगलदाई । जजौं भावसों  
 चरण जिनेश्वर, हाथजोड शिरनाई ॥ परम मनो-  
 हर थान सु पावन, देखत विघन पलाई ॥ तीन  
 काल नित नमत जवाहर मेटो भवभटकाई ।  
 जहँतें जे मुनिसिद्ध भये हैं, तिनको शरण  
 गहाई । जापदको तुम प्राप्त भए हो सो पद देहु  
 मिलाई ॥११॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसंकुलकूटै श्रीश्रेयांसनाथजि-  
 नेंद्रादिमुनिछथानवेकोडाकोडी छथानवेकोडि छथानवेलाखनव-  
 हजार पांचसौवियालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्योअर्घं०  
 नं० २३ विमलनाथ सुवीरकुलकूट । कुसुमलताछंद ।

श्रीसुवीरकुलकूटपरम सुंदर सुखदाई, विम-  
 लनाथ भगवान जहां पंचमगति पाई । कोडि सु  
 सत्तर सातलाख षटसहस्र जु गाई, सात सतक  
 मुनि और वियालिस जानो भाई ॥ दोहा—  
 अष्टकर्मको नष्टकर, मुनि अष्टमछिति पाय ।  
 तिनप्रति अर्घ चढावहू, जनम मरण दुखजाय ॥  
 विमलदेव निरमल करण, सब जीवन सुखदाय ।  
 मोतीसुत वंदत चरण, हाथ जोर शिरनाय ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रस्वयंभूकूटतै श्रीजिननाथाजे  
नेंद्रादि मुनि सत्तरकोडि सातलाख छहहजार सातसौब्यालीस  
सिद्ध पदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० १३ अनंतनाथ स्वयंभूकूट । अडिल्ल—

कूट स्वयंभू नाम परम सुंदर कह्यो । प्रभु अ-  
नंत जिननाथ जहां शिवपद लह्यो ॥ मुनि जु  
कोडाकोडि छ्यानवे जानिये । सत्तर कोडि जु  
सत्तरलाख प्रमानिये ॥ सत्तर सहस जु और  
मुनीश्वर गाइये । सात सतक ता ऊपर तिनको  
ध्याइये ॥ कहैं जवाहरलाल सुनो मनलायकैं ।  
गिरिवरकों नित पूजो अति सुखपायकैं ॥  
सो०-पूजत विघन पलाय, ऋद्धिसिद्धि आनँद  
कैर सुरशिवको सुखदाय, जो मनवच पूजा करै ॥  
ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रस्वयंभूकूटतै अनंतनाथजिनेंद्रादि  
मुनि छ्यानवेकोडाकोडी सत्तरकोडि सत्तरलाख सत्तरहजार सा-  
तसौ सिद्धपद प्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति० ।

नं १८ धर्मनाथ सुदत्तकूट । चौपाई—

कूट सुदत्त महाशुभ जान । श्रीजिनधर्मनाथको  
थान ॥ मुनि कोडाकोडी उनईस । और कहे  
ऋषि कोडि उनीश ॥ लाखजु नव नवसहस सु-

जान । सात शतक पंचावन मान ॥ मोक्ष गये  
 वे कर्मनचूर । दिवसरु रयन नमों भरपूर ॥  
 महिमा जाकी अतुल अनूप । ध्यावत वर इंद्रा-  
 दिक भूप ॥ शोभत महा अचलपद पाय । पूजों  
 आनंद मंगलगाय ॥ दोहा—परमपुनीत पवित्र  
 अति, पूजत शत सुरराय । तिह थानककों देख  
 कर, मोतीसुत गुणगाय ॥ पावन परम सुहावनो,  
 सब जीवन सुखदाय । सेवत सुरहरि नर सकल  
 भनवांछित पद पाय ॥

षों हीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुदत्तकूटतैधर्मनाथजिनेंद्रादिमुनि  
 षष्ठीस कोडाकोडो उत्रीसकोडि नौलाख नौहजार सातसौ पंच  
 षवे सिद्धपदप्राप्तेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्बाहा ॥

नं० २० शान्तिनाथ-शांतिप्रमकूट । सुगीतिका छंद ।

श्रीशांतिप्रभ है कूट सुंदर अति पवित्र सु-  
 जानिये । श्रीशांतिनाथ जिनेंद्रजहँतै, परम-  
 धाम प्रमानिये ॥ नवजु कोडाकोडि मुनिवर  
 लाख नव अब जानिये । नौ सहस नवसै मुनि  
 निन्यानव, हृदयमें धर मानिये ॥ दोहा—  
 कर्मनाश शिवको गए, तिन प्रसि अर्घ चढाय ।

**त्रिविधयोग करि पूज हैं मनवांछित फलपाय ॥**

ओं हों श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रशांतिप्रभकूटतै शांतिनाथजिने-  
न्द्रादिमुनि नौकोडाकोड़ी नोळाख नोहजार नौसै निन्यानवे सिद्ध-  
पदप्राप्तभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

नं० २ कुन्थुनाथ ज्ञानधरकूट । गीतिका छंद ।

ज्ञानधर शुभकूट सुंदर, परम मनमोहन सही  
जहँतैं प्रभु श्रीकुंथु स्वामी, गये शिवपुरकी मही  
कोडा सु कोडि छ्यानवें, मुनि कोडिछ्यानव  
जानिये । अर लाखबत्तिस सहसछ्यानव, शतक  
सात प्रमानिये ॥

और कहे व्यालीस मुनि, सुमिरों हिये मझार ।  
तिनपद पूजों भावसों, करै जु भवदाधिपार ॥

ओं हों श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रज्ञानधरकूटतै श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्रा  
दिमुनि छ्यानवे कोडाकोड़ी छ्यानवे कोडि बत्तीसलाखछ्यानवे  
हजार सातसौ बियालीस सिद्धपदप्राप्तभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं०

नं० ४ भरनाथ नाटककूट । दोहा—

कूट जु नाटक परमशुभ, शोभा अपरंपार ।  
जहँतैं अरजिनराजजी, पढ़ंचे मुक्ति-मझार ॥  
कोडिनिन्यानव जानि मुनि लाखनिन्यानव और  
कहे सहस निन्यानवें बंदों कर जुग जोर ॥ अष्ट

कर्मको नष्टकरि, मुनि अष्टमक्षिति पाय । तेगुरु  
मो हिरदै बसो, भवदधि पार लगाय ॥

सोरठा-तारणतरण जिहाज, भवसमुद्रके  
बीचमें । पकरो मेरी बांह, डूबतसे राखो मुझे ॥  
अष्टकरम दुख दाय, ते तुमने चूरे सबै । केवल-  
ज्ञान उपाय, अविनाशी पद पाइयो ॥ मोती  
सुत गुणगाय, चरणन शीश नवायकै । मेटो  
भवभटकाय, मांगत अब बरदान यो ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रनाटककूटतै अरनाथजिनेन्द्रादि-  
मुनि निन्यानवैकोडि निन्यानवेलाख निन्यानवै हजार सिद्धपदप्रा-  
प्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नं० ५ मल्लिनाथ सम्बलकूट । सुन्दरी छंद ।

कूट सम्बल परमपवित्र जू । गये शिवपुर  
मल्लिजिनेश जू ॥ मुनि जु छ्यानवकोडि प्रमा-  
निये । पदजजतहिरदय सुख आनिये ॥ मोती-  
दामछंद-भजौ प्रभुनाम सदा सुखरूप, जजौ म-  
नमैधरभाव अनूप । टरै अघपातिक जाहिसुदूर,  
सदा जिनको सुख आनँदपूर ॥ डरै ज्यों नाग  
गरुडको देखि, भजै गजजुत्य जु सिंहहि पेखि ।

तुमनाम प्रभू दुखहरण सदा, सुखपूर अनूप  
 होय मुदा ॥ तुमदेव सदा अशरणशरणं, भट  
 मोहबली प्रभुजी हरणं । तुम शरणगही हम  
 आय अबैं, मुझ कर्मबली दिढ चूर सबैं ॥

मौं ह्रीं श्रीसम्मोदशिखरसिद्धक्षेत्रसम्बलकूटतै श्रीमल्लिनाथजिने-  
 न्द्रादि छद्यानवेकोडि मुनिसिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रभ्योऽर्घनिर्व०

नं० ६ मुनिसुव्रतनाथ निर्जरकूट । मदअवलिप्तकपोलछंद-

मुनिसुव्रत जिननाथ सदा आनंदके दाई ।  
 सुंदर निर्जरकूट जहांतैं शिवपुर जाई । निन्या-  
 नवकोडाकोडि कहे मुनि कोडि सत्याना ॥  
 नवलख जोडि मुनिंद कहे नौसौ निन्न्याना ॥  
 सोरठा-कर्मनाशि ऋषिराज, पंचमगतिके सुख ल  
 है । तारणतरणजिहाज, मो दुख दूर करो सकल ।  
 भुजंगप्रयात ।

बली मोहकी फौज प्रभुजी भगाई, जग्यो  
 ज्ञानपंचम महासुखदाई । समोशरण धरणेंद्रने  
 तब बनायो, तबै देव सुरपाति सबै शीसनायो ॥  
 जयो जय जिनेंद्र सुशब्दं उचारी, भए आज  
 दरशन सबै सुखकारी । गए सर्व पातिक प्रभू

दूरहीतैं, जबै दर्श कीने प्रभू दूरहीतैं ॥ सुनी  
नाथ श्रवनो जु तेरी बड़ाई, गही शरण हमने  
तुम्हारी सुहाई । बली कर्म नाशे जबै मुक्ति पाई  
तिन्हें हाथ जोरें सदा शीश नाई ॥

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रनिर्जरकूटतै मुनिसुव्रतनाथजिने-  
न्द्रादिमुनि निन्यानवैकोड़ाकोड़ी सत्तानवे कोडि नौलाख नौसौ-  
निन्यानवै सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति० ॥

नं० ३ नमिनाथ मित्रधरकूट । जोगीरासा ।

कूट मित्रधर परममनोहर, सुंदर अति छवि-  
दाई । श्रीनमिनाथ जिनेश्वर जहतैं, अविनाशी  
पदपाई ॥ नौसौ कोडाकोडी मुनिवर, एक अ-  
रब ऋषि जानो । लाखपैंतालिस सात सहस  
अरु, नौसै व्यालिस मानो ॥ दोहा—

वसु करमनको नाश कर, अविनाशी पदपाय ।

पूजों चरणसरोजकों, मनवांछितफलदाय ।२०।

ओं ह्रीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रमित्रधरकूटतै नमिनाथजिनेन्द्रा-  
दिमुनि नौसौकोड़ाकोड़ी एकअरब पैंतालिसलाख सातहजार  
नौसौ व्यालिस सिद्धपदप्राप्तेभ्यो सिद्धक्षेत्रेभ्योऽर्घं निर्वपामीति०

नं० २६ पार्श्वनाथ । सुवर्णभद्रकूट ।

दोहा—सुवर्णभद्र जु कूटपै, श्रीप्रभुपारसनाथ ।



जहँतैं शिवपुरको गये, नमोजोरिजुगहाथ ॥  
 त्रिभंगीछंद-मुनि कोडिवियासी लाख चुरासी,  
 शिवपुरवासी सुखदाई । सहसहि पैतालिस सात  
 सौ व्यालिस, तजिके आलस गुणगाई ॥ भवद-  
 दधितैं तारण पतित उधारण, सबदुखहारण  
 सुख कीजै । यह अरज हमारी सुनित्रिपुरारी  
 शिवपदभारी मो दीजै ॥

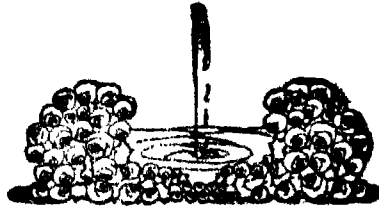
छंद--यह दर्शनकूट अनंतलह्यो । फलषोडशकोटि  
 उपास कह्यो । जगमें यह तीर्थ कह्यो भारी ।  
 दर्शन करि पाप कटैं सारी ॥

मोतीदाम छंद--टरैं गति वंदत नर्क तिर्यंच ।  
 कबहुं दुखको नहिं पावै रंच ॥ यही शिवको  
 जगमें है द्वार । अरे नर वंदो कहत 'जवार' ॥  
 दोहा-पारशप्रभुके नामतैं, विघन दूरि टरि जाय ।  
 ऋद्धिसिद्धिनिधितासको, मिलिहैनिसिदिनआय

ओं हीं श्रीसम्मेदशिखरसिद्धक्षेत्रसुवर्णकूटतै श्रीपार्श्वनाथादिमुनि  
 धियासी करोड़ चुरासीलाखपैतालिसहजारसातसौधियाबीस  
 सिद्धपदप्राप्तेभ्यः सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्ल-जे नर परमसुभावनतें पूजा करें । हरि  
हलि चक्री होंय राज्य षटखँड करें ॥ फेरि होंय  
धरणेंद्र इंद्रपदवी धरें, नानाविधि सुख भोगि  
बहुरि शिवतिय वरें ॥

अथाशीर्वादः ( पुष्पांजलिं क्षिपेत् )



। श्रीगिरिनारक्षेत्रे पूजा ।

दोहा—वंदों नेमि जिनेश पद, नेमि-धर्म-दातार  
नेम धुरंधर परम गुरु, भविजन सुख कर्तार ॥

जिनवाणीको प्रणमिकर गुरु गणधर उरधार॥  
 सिद्धक्षेत्र पूजा रचौं, सब जीवन हितकार ।  
 उर्जयंत गिरिनाम तस, कह्यो जगत विख्यात ।  
 गिरिनारी तासों कहत, देखत मन हर्षात ॥३॥

द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी छंद ।

गिरिसुउन्नत सुभगाकार है । पंचकूट उत्तंग  
 सुधार है ॥ वन मनोहर शिला सुहावनी । लखत  
 सुंदर मनको भावनी । अवर कूट अनेक बने  
 तहां । सिद्ध थान सु अति सुंदर जहां ॥ देखि  
 भविजन मन हर्षावते । सकल जन वंदनको  
 आवते ॥ ५ ॥

त्रिमंगी छंद ।

तहँ नेमकुमारा व्रत धारा, कर्म विदारा शिव  
 पाई । मुनि कोडि बहत्तर सात शतक धर  
 तागिरिऊपर सुखदाई ॥ है शिवपुरवासी  
 गुणके राशी विधिथिति नाशी ऋद्धिधरा । तिनके  
 गुणगाऊं पूज रचाऊं मन हर्षाऊं सिद्धिकरा ॥६॥  
 दोहा—एसे क्षेत्र महान तिहिं, पूजों मनबचकाय ।  
 थापना त्रयवार कर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारसिद्धक्षेत्रे अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारसिद्धक्षेत्रे ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ङः ङः ।

ओं ह्रीं श्री गिरिनारसिद्धक्षेत्रे अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

अष्टक कवित्त ।

लेकर नीर सुक्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक  
लाई । दे त्रय धार जजों चरणा हरना मम जन्म  
जरा दुखदाई ॥ नेमिपती तज राजमती भये  
बालयती तहँतैं शिवपाई ॥ कोडि बहत्तरि  
सातसौ सिद्ध मुनीश भये सुजजों हरपाई ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारसिद्धक्षेत्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

चंदनगारि मिलाय सुगंध सु, ल्याय कटोरीमें  
धरना । मोहमहातममेटनकाज सु चर्चतु हों  
तुम्हरे चरना ॥ नेम० ॥ चंदनं ॥ अक्षत उज्वल-  
ल्याय धरों, तहँ पुंज करो मनको हर्षाई । देहु  
अखयपद प्रभु करुणाकर, फेर न या भववास क-  
राई । नेमि० ॥ अक्षतान् ॥ फूल गुलाब चमेली बेल  
कदंब सु चंपक बीन सु ल्याई । प्राशुकपुष्प लवंग  
चढाय सु गाय प्रभू गुणकाम नशाई ॥ नेम० ॥  
पुष्प ॥ नेवज नव्य करों भरथाल सुकंचन भा-

जनमे धर भाई । मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह  
 रोग चुधा हरियो जिनराई ॥ नेम० ॥ नैवेद्यं ॥  
 घूप दशांग सुगंधमई कर खेवहु अग्निमझार  
 सुहाई । शीघ्रहि अर्ज सुनो जिनजी मम कर्म  
 महाबन देउ जराई ॥नेम०॥धूपं॥ ले फल सार  
 सुगंधमई रसनाहृद नेत्रनको सुखदाई । क्षेपत  
 हों तुम्हरे चरणा प्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई  
 नेम० ॥ फलं ॥ ले वसु द्रव्यसु अर्घ करों धर  
 थाल सुमध्य महा हरषाई । पूजत हों तुमरे चर-  
 णा हरिये वसुकर्मबली दुखदाई । नेम०॥ अर्घ ॥  
 दोहा—पूजत हों वसुद्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय  
 निजहितहेतु सुहावनो, पूरण अर्घ चढ़ाय ॥  
 पूर्णार्घ ॥ १० ॥

पंच कल्याणक अर्घ । छंद पाइता ।

कार्तिक सुदिकी छठि जानो । गर्भागम तादिन  
 मानो ॥ उत इंद्र जजैं उस थानी । इत पूजत  
 हम हरषानी ॥ १ ॥

ओं ह्रीं कार्तिकशुक्लाषष्ठ्यां गर्भमंगल प्राप्ताय नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ  
 श्रावणसुदि छठि सुखकारी । तब जम्म महो-

त्सव धारी । सुरराज सुमेर न्हवाई । हम  
पूजत इत सुखपाई ॥ २ ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यांजन्ममंगलमंडितायनेमिनाथजिनै०अर्घ

सित सावनकी छठि प्यारी । तादिन प्रभु दीक्षा  
धारी ॥ तपघोर वीर तहँ करना । हम पूजत  
तिनके चरणा ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठीदिने दीक्षामंगलप्राप्तायनेमिनाथजिनै०अर्घ

एकम सुदि आश्विन भाषा । तब केवल ज्ञान  
प्रकाशा ॥ हरि समवसरण तब कीना । हम  
पूजत इत सुख लीना ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं आश्विनशुक्लापूर्तिपदि केवलज्ञानप्राप्तायनेमिनाथजिनै०अर्घ

सित अष्टमि मास अषाढा । तब योग प्रभूने  
छाडा । जिन लई मोक्ष ठकुराई । इत पूजत  
चरणा भाई ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलप्राप्तये नेमिनाथजिनै० अर्घ

अडिल्ल-कोडि बहत्तरि सप्त सैकडा जानिये ।  
मुनिवर मुक्ति गये तहँतै सु प्रमाणिये ॥ पूजो  
तिनके चरण सु ननबचकायकै । वसुविध  
द्रव्यमिलायसुगायबजायकै ॥ पूर्णार्घि० ॥

जयमाला । दोहा ।

सिद्धक्षेत्र गिरनार शुभ, सब जीवन सुखदाय ।  
कहाँ बासु जयमालिका, सुनतहि पाप नशाय ॥

पद्वरी छंद ।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान । गिरिनारि सुगिरि  
उन्नत बखान ॥ तहं झूनागढ़ है नगर सार ।  
सौराष्ट्रदेशके मधिविथार ॥२॥ तिस झूनागढ़  
से चले सोइ । समभूमि कोस वर तीन होइ ॥  
दरवाजेसे चल कोस आध । इक नदी बहत है  
जल अगाध ॥३॥ पर्वत उत्तरदक्षिण सु दोय ।  
मधि बहत नदी उज्वल सु तोय ॥ ता नदीमध्य  
कइ कुंड जान । दोनों तट मंदिर बने मान ॥४॥  
तहं वैरागी वैष्णव रहाय । भिक्षाकारण तीरथ  
कराय ॥ इक कोस तहां यह मच्यो ख्याल । आ-  
गैं इक वरनदि बहत नाल ॥ ५ ॥ तहं श्रावक-  
जन करते सनान । धो द्रव्य चलत आगैं मुजा-  
न ॥ फिर मृगीकुंड इक नाम जान । तहँ वैरा-  
गिनके बने थान ॥ ६ ॥ वैष्णव तीरथ जहँ र-

च्यो सोइ । वैष्णव पूजत आनंद होइ ॥ आगैं  
 चल डेढ सु कोस जाव । फिर छोटे पर्वतको च-  
 ढाव ॥ ७ ॥ तहँ तीन कुंड सोहैं महान । श्री-  
 जिनके युग मंदिर बखान ॥ मंदिर दिगंबरी  
 दोय जान । श्वेतांबरके बहुते प्रमान ॥८॥ जहँ  
 बनी धर्मशाला सु जोय । जलकुंड तहां निर्मल  
 सु तोय ॥ तहँ श्वेतांबरगण दिशां जाय । ताकुं-  
 डमार्हि नितही नहाय ॥ ९ ॥ फिर आगैं पर्वत  
 पर चढाउ । चढि प्रथम कूटको चले जाउ ॥  
 तहँ दर्शन कर आगैं सु जाय । तहँ दुतिय टोंक  
 के दर्श पाय ॥१०॥ तहं नेमनाथके चरण जान  
 फिर है उतार भारी महान ॥ तहं चढकर पंचम  
 टोंक जाय । अति कठिन चढाव तहां लखाय  
 ॥११॥ श्रीनेमनाथका मुक्ति थान । देखत नय-  
 नों अति हर्षमान ॥ इक विंब चरनयुग तहां  
 जान । भवि करत वंदना हर्ष ठान ॥१२॥ कोउ  
 करते जय जय भक्ति लाइ । कोऊ श्रुति पढ़ते  
 तहँ सुनाय ॥ तुम त्रिभुवनपति त्रैलोक्यपाल ।



मम दुःख दूर कीजै दयाल ॥ १३ ॥ तुम राज-  
 ऋद्धि भुगती न कोइ । यह अथिररूप संसार  
 जोइ ॥ तज मातपिता घर कुटुम द्वार । तज  
 राजमतीसी सती नार ॥ १४ ॥ द्वादशभावन  
 भाई निदान । पशुबंदि छोड दे अभय दान ।  
 शोसावनमें दीक्षा सुधार । तप करके कर्म किये  
 सुछार ॥ १५ ॥ ताही बन केवल ऋद्धि पाय ।  
 इंद्रादिक पूजे चरण आय ॥ तहँ समवसरण रचि-  
 यो विशाल । मणिपंच वर्णकर अति रसाल ॥ १६ ॥  
 तहँ वेदी कोट सभा अनूप । दरवाजे भूमि बनी  
 सुरूप ॥ वसुप्रातिहार्य छत्रादि सार । वर द्वादश  
 सभा बनी अपार ॥ १७ ॥ करके विहार देशों  
 मझार । भवि जीव करे भवसिंधु पार ॥ पुन  
 टोंक पंचमीको सुजाय । शिव नाथ लह्यो आनंद  
 पाय ॥ १८ ॥ सो पूजनीक वह थान जान । वंदत  
 जन तिनके पाप हान ॥ तहँतैं सु बहचर कोडि  
 और । मुनि सातशतक सब कहे जोर ॥ १९ ॥  
 उस पर्वतसों सब मोक्ष पाय । सब भूमि सु पूजन

योग्य थाय ॥ तहँ देश देशके भव्य आय ।  
 वंदन कर बहु आनंद पाय ॥ २० ॥ पूजन कर  
 कीने पाप नाश । बहु पुण्यबंध कीनो प्रकाश ॥  
 यह ऐसो क्षेत्र महान जान । हम करी वंदना  
 हर्ष ठान ॥ २१ ॥ उनईस शतक उनतीस जान ।  
 संवत अष्टमि सित फाग मान ॥ सब संग सहित  
 वंदन कराय । पूजा कीनी आनंद पाय ॥ २२ ॥  
 अब दुःख दूर कीजै दयाल । कहै 'चंद्र' कृपा  
 कीजे कृपाल ॥ मैं अल्पबुद्धि जयमाल गाय ।  
 भवि जीव शुद्ध लीज्यो बनाय ॥ २३ ॥  
 घत्ता—तुम दयाविशाला सब क्षितिपाला, तुमगु-  
 णमाला कंठ धरी । ते भव्य विशाला तज जग-  
 जाला, नावत भाला मुक्तिवरी ॥ २४ ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरनारसिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । समाप्त ।

। श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्र पूजा ।

उत्सव किय पनवार जहँ, सुरगणयुत हरि आय ।  
 जजौं सुथल वसुपूज्यसुत, चंपापुर हर्षाय ॥१॥  
 ॐ ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्र अत्राष्टराक्षर । संवोषद् ।

ओं ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ॐ ॐ ।

ओं ह्रीं श्री चंपापुर सिद्धक्षेत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक । चाल नंदीश्वरपूजनकी ।

सम अमिय विगतत्रस वारि, लै हिम कुंभ भरा  
लख सुखद त्रिगदहरतार, दै त्रय धार धरा ॥

श्रीवासुपूज्य जिनराय, निर्वृतिथान प्रिया । १ ।

चंपापुर थल सुखदाय, पूजों हर्ष हिया ॥

ओं ह्रीं श्रीचंपापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ॥

कश्मीरी केशर सार, अति ही पवित्र खरी ।

शीतल चंदनसँग सार लै भव तापहरी ॥ श्री०

॥ चंदनं ॥ मणिद्युतिसम खंडविहीन, तंदुल लै

नीके । सौरभ युत नव वर बीन, शालि महानीके

॥ श्रीवासुपूज्य० ॥ अक्षतान् ॥ ३ ॥ अलि

लुभन सुभन दृग घ्राण, सुमन जु सुरद्रुमके ।

लै वाहिम अर्जुनवान, सुमन दमन झुमके ॥

श्रीवासुपूज्य० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ रस पुरित तुरित

पकवान, पक्व यथोक्त घृती । क्षुधगदमदप्रद-

मन जान, लै विध युक्तकृती ॥ श्रीवासुपूज्य० ॥

नैवेद्यं ॥ ५ ॥ तमअज्ञप्रनाशक सूर, शिवमग-

परकाशी । लै रत्नद्वीप द्युतिपूर, अनुपम सुख-  
 राशी ॥ श्रीवासुपूज्य जिन० ॥ दीपं ॥ ६ ॥  
 बर परिमल द्रव्य अनूप, सोध पवित्र करी ।  
 तस चूरण कर कर धूप, लै विधिकुंज हरी ॥ श्री  
 वासुपूज्य० ॥ धूपं ॥ ७ ॥ फल पक्क मधुररसवान,  
 प्रासुक बहुविधके । लखि सुखद रसनदृगघ्नान,  
 ले प्रद पद सिधके ॥ श्रीवासु० ॥ फलं ॥ ८ ॥  
 जलफलवसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमथारी ॥  
 वसुअंग धरापर ल्याय, प्रमुदित चितधारी । श्री-  
 वासुपूज्य० ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा-भये द्वादशम तीर्थपति, चंपापुर निर्वाण ।  
 तिनगुणकी जयमाल कछु, कहों श्रवण सुखदान ॥

पद्मरि छंद ।

जय जय श्रीचंपापुर सुधाम । जहँ राजत नृप  
 वसुपूज नाम ॥ जय पौन पत्यसै धर्महीन । भव  
 भ्रमन दुःखमय लख प्रवीन । १ । उर करुणाधर  
 मो तम विद्यार । उपजे किरणावलिधर अपार ॥

श्री वासुपूज्य तिनके जु बाल । द्वादशम तीर्थ-  
 कर्ता विशाल ॥२॥ भवभोग देहतेँ विरत होय ।  
 वय बालमाहिं ही नाथ सोय ॥ सिद्धन नमि  
 महाव्रत भार लीन । तप द्वादशविध उग्रोग्र  
 कीन ॥ ३ ॥ तहँ मोक्ष सप्तत्रय आयु येह । दश  
 प्रकृति पूर्व ही क्षय करेह ॥ श्रेणीजु क्षपक आ-  
 रूढ होय । गुण नवमभाग नवमाहिं सोय ॥४॥  
 सोलह वसु इक इक षट इकेय । इक इक इक  
 इम इन क्रम सहेय ॥ पुनि दशमथान इक लोभ  
 टार । द्वादशमथान सोलह विडार ॥ ५ ॥ ह्वै  
 अनंत चतुष्टय युक्त स्वाम । पायो सब सुखद  
 सयोग ठाम ॥ तहँ काल त्रिगोचर सर्व ज्ञेय ।  
 युगपत हि समय इकमहि लखेय ॥ ६ ॥ कछु  
 काल दुविध वृष अभिय वृष्टि । कर पोषे भवि  
 भुविधान्यसृष्टि ॥ इक मास आयु अवशेष जान ॥  
 जिन योगनकी सुप्रवृत्ति हान ॥ ७ ॥ ताहीथल  
 तृतिशितध्यान ध्याय । चतुदशमथान निवसे  
 जिनाय ॥ तहँ दुचरम समयमझार ईश । प्रकृती

जु बहत्तर तिनहि पीस ॥ ८ ॥ तेरह नठ चरम  
 समयमझार । करके श्रीजगतेश्वर प्रहार ॥ अष्टमि  
 अवनी इक समयमद्ध । निवसे पाकर निज  
 अचल रिद्ध ॥ ९ ॥ युत गुण वसु प्रमुख अमित  
 गुणेश । है रहे सदा ही इमहि वेश ॥ तबहीतैं  
 सो थानक पवित्र । त्रैलोक्यपूज्य गायो विचित्र  
 ॥ १० ॥ मैं तसु रज निज मस्तक लगाय । बंदों  
 पुन पुन भुवि शीश नाथ ॥ ताही पद बांछा  
 उरमझार । धर अन्य चाहबुद्धी विडार ॥ ११ ॥  
 दोहा--श्रीचंपापुर जो पुरुष, पूजै मन वच काय ।  
 वर्णि 'दौल' सो पाय ही, सुख संपति अधिकाय ।

इत्याशीर्वादः ।

### श्रीपावापुर-सिद्धक्षेत्र पूजा १

जिहिं पावापुर छित अघति, हत सन्मति जगदीश  
 भये सिद्ध शुभथान सो, जजों नाथ निज शीश ॥

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।

ओं ह्रीं श्रीपावापुर सिद्धक्षेत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट्

शुचि सलिल शीतौ कलिलरीतौ श्रमन चीतो लै  
जिसो ॥ भर कनक झारी त्रिगद हारी दै  
त्रिधारी जिततृषो ॥ वर पद्मवन भर पद्मसरवर  
बहिर पावाग्राम ही । शिवधाम सन्मत स्वामि  
पायो, जजों सो सुखदा मही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धक्षेत्रेभ्यो वीरनाथजिनेन्द्रस्य जन्मजरामृत्यु  
विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

भव भ्रमन भ्रमत अशर्म तपकी, तपन कर तप  
ताइयो । तसु बलयकंदन मलय-चंदन, उदक  
सँग घिस ल्याइयो ॥ वरपद्म० ॥ चंदनं० ॥ तंदुल  
नवीन अखंड लीने, ले महीने ऊजरे । मणिकुंद  
इंदु तुषार द्युति-जित, कनरकावीमें धरे ॥ वर०  
॥ अक्षतान् ॥ मकरंदलोभन सुमन शोभन  
सुरभि चोभन लेय जी । मद समर हरवर अमर  
तरुके, घ्रान-दृग हरखेय जी ॥ वरपद्म० ॥ पुष्पं० ॥  
नैवेद्य पावन छुध मिटावन सेव्य भावन युत  
किया । रस मिष्ट पूरति इष्ट सूसति लेयकर प्रमु

हित हिया ॥ वरपद्म० ॥ नैवेद्यं० ॥ तमअङ्ग  
 नाशक स्वपरभाशक ज्ञेय परकाशक सही ।  
 हिमपात्रमें धर मौल्यविन वर द्योतधर मणि  
 दीपही ॥ वर० ॥ दीपं ॥ आमोदकारी वस्तुसारी  
 विध दुचारी-जारनी । तसु तूप कर कर धूप  
 ले दश दिश-सुरभि-विस्तारनी ॥ वरपद्म० ॥ धूपं ॥  
 कल भक्क पक्क सुचक्य सोहन, सुक्क जनमन मोहने  
 वर सुरस पूरित त्वरित मधुरत लेयकर अति  
 सोहने ॥ वरपद्म० ॥ फलं ॥ जल गंध आदि  
 मिलाय वसुविध थारस्वर्ण भरायकें । मन प्रमुद  
 भाव उपाय कर ले आय अर्घ बनायकें  
 ॥ वरपद्म० ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—चरम तीर्थकरतार श्री-वर्द्धमान जगपाल ।  
 कलमलदलविधविकल है, गाऊंतिन जयमाला ॥

पद्मरि छंद ।

जयजय सुवीर जिन मुक्तिथान पावापुरवनसर  
 शोभवान ॥ जे सित अषाड छट स्वर्गधाम ।  
 तज पुष्पोत्तर सुविमान ठाम ॥ १ ॥ कुंडलपुर



मिद्धारथ नृपेश । आये त्रिशला जननी उरेश ॥  
 सित चैत्र त्रयोदशि युत त्रिज्ञान । जनमे तम  
 अज्ञ-निवार भान ॥ २ ॥ पूर्वाह्न धवल चउदिश  
 दिनेश । किय नह्वन कनकगिरि-शिर सुरेश ॥  
 वय वर्ष तीस पद कुमरकाल । सुख दिव्य भोग  
 भुगतेविशाल ॥ ३ ॥ मारगसिर अलि दशमी प-  
 वित्र । चढ चंद्रप्रभा शिविका विचित्र ॥ चलि  
 पुरसों सिद्धन शीशनाय । धान्यो संजम वर श-  
 र्मदाय । ४ ॥ गतवर्ष दुदश कर तप-विधान । दिन  
 शित वैशाख दशैं महान ॥ रिजुकूला सरिता  
 तट स्व सोध । उपजायो जिनवर चरम बोध  
 ॥ ५ ॥ तब ही हरि आज्ञा शिर चढाय । रचि  
 समवसरण वर धनदराय ॥ चउसंघ प्रभृति  
 गौतम गनेश । युत तीस वरष विहरे जिनेश ॥  
 ॥ ६ ॥ भविजीवदेशना विविध देत । आये वर  
 पावानगर खेत ॥ कार्तिक अलि अंतिम दिवस  
 इश । कर योग निरोध अघातिपीस ॥ ७ ॥ ह्वै  
 अकल अमल इक समयमाहिं । पंचम गति

पाई श्रीजिनाह ॥ तब सुरपति जिनरवि अस्त  
 जान । आये तुरंत चढि निज विमान ॥ ८ ॥  
 कर वपु अरचा थुति विविध भाँत । लै विविध  
 द्रव्य परिमल विख्यात ॥ तब ही अगनींद्र  
 नवाय शीश । संस्कार देहकी त्रिजगदीश । ९।  
 कर भस्म वंदना निज महीय । निवसे प्रभु गुन  
 चितवन स्वहीय । पुनि नर मुनि गनपति आय  
 आय । बंदी सो रज शिर नाय नाय । १०। तब  
 हीसों सो दिन पूज्य मान । पूजत जिनगृह जन  
 हर्ष मान ॥ में पुन पुन तिस भुवि शीशधार ।  
 बंदों तिन गुणधर उर मझार ॥ ११ ॥ तिनही  
 का अब भी तीर्थ एह । बरतत दायक अति  
 शर्म गेह ॥ अरु दुखमकाल अवसान ताहि ।  
 वतैगो भवतिथिहर सदाहि ॥ १२ ॥

कुसुमलता उंद ।

श्रीसन्मति जिन अंध्रिपद्म युगजजै भव्य जो मन  
 वच काय । ताके जन्म जन्म संचित अघ जावहिं  
 इक छिन माहिं पलाय ॥ धनधान्यादिक शर्म

इंद्रपद लहै सो शर्म अतीन्द्री थाय । अजर  
अमर अविनाशी शिवथल वणों दौल रहै शिर  
नाय ॥ १३ ॥

ओं ह्रीं श्रीपावापुरसिद्धश्रेष्ठेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

## आरती-संग्रह ।

पंचपरमेष्ठी आदिकी आरती ।

इहविधि मंगल आरति कीजै, पंच परमपद  
भज सुख लीजै ॥टेक॥ पहली आरती श्रीजि-  
नराजा । भव-दधिपारउतारजिहाजा ॥ इहविध०  
॥ १ ॥ दूसरि आरति सिद्धनकेरी । सुमरन  
करत मिटै भक्तेरी ॥ इहविध० ॥ २ ॥ तीजी  
आरति सूर मुनिंदा । जनममरनदुख दूर करिं-  
दा ॥ इहविध० ॥ ३ ॥ चौथी आरति श्रीउव-  
झाया । दर्शन देखत पाप पलाया ॥ ४ ॥ पांच-  
मि आरति साधु तिहारी । कुमति-विनाशन  
शिव-अधिकारी ॥ इहविध० ॥ ५ ॥ छट्टी ग्या-  
रहप्रतिमा धारी । श्रावक बंदों आनँदकारी ॥

इहविध० ॥ ६ ॥ सातमि आरति श्रीजिनवानो  
'द्यानत' सुरगमुकति सुखदानी ॥ इहविध० ॥ ७ ॥

। आरती श्रीजिनराजकी ।

आरति श्रीजिनराज तिहारी, करमदलन  
संतन हितकारी ॥ टेक ॥ सुरनरअसुर करत  
तुम सेवा । तुमही सब देवनके देवा ॥ आरति  
श्री० ॥ १ ॥ पंचमहाव्रत दुद्धर धारे । रागरोष  
परिणाम विदारे ॥ आरति श्री० ॥ २ ॥ भवभय  
भीत शरन जे आये । ते परमारथपंथ लगाये ॥  
आरति श्री० ॥ ३ ॥ जो तुम नाथ जपै मन-  
माहीं । जनममरनभय ताको नाहीं ॥ आरति  
श्री० ॥ ४ ॥ समवसरनसंपूरन शोभा । जीते  
क्रोधमानछललोभा ॥ आरति श्री० ॥ ५ ॥ तुम  
गुण हम कैसे करि गावैं । गणधर कहत पार  
नहिं पावैं ॥ आरति० ॥ ६ ॥ करुणासागर करुणा  
कीजे । 'द्यानत' सेवकको सुख दीजे ॥ आ० ॥

आरती श्रीमुनिराजकी ।

आरति कीजै श्रीमुनिराजकी, अधमउधारन

आतमकाजकी ॥ आरति कीजै० ॥ टक ॥ जा  
 लच्छीके सब अभिलाखी । सो साधन करदम-  
 वत नाखी ॥ आरति कीजै० ॥ १ ॥ सब जग जीत  
 लियो जिन नारी । सो साधन नागनिवत छारी  
 ॥ आरति० ॥ २ ॥ विषयन सब जगजिय वश  
 कीने । ते साधन विषवत तज दीने ॥ आरति०  
 ॥ ३ ॥ भुविको राज चहत सब प्रानी । जीरन  
 तृणवत त्यागत ध्यानी ॥ आरति० ॥ ४ ॥ शत्रु  
 मित्र दुखसुख सम मानै । लाभ अलाभ बराबर  
 जानै ॥ आरति० ॥ ५ ॥ छहोंकायपीहरव्रत धारें  
 सबको आप समान निहारें ॥ आरति० ॥ ६ ॥  
 इह आरती पढै जो गावै । 'द्यानत' सुरगमुक-  
 ति सुख पावै ॥ आरति कीजै० ॥ ७ ॥

निश्चय आरती ।

इहविध आरति करौं प्रभु तेरी । अमल अवा-  
 धित निज गुणकेरी ॥ टक ॥ अचल अखंड  
 अतुल अविनाशी । लोकालोक सकल परकाशी  
 ॥ इहविध० ॥ १ ॥ ज्ञानदरससुखबल गुणधारी ।

परमात्म अविकल अविकारी ॥इहविध०॥२॥  
 क्रोधआदि रागादि न तेरे । जनम ज्वरामृत कर्म  
 न नेरे ॥इहविध०॥३॥ अवपु अबंध करणसुख-  
 नासी ॥ अभय अनाकुल शिवपदवासी ॥इह०  
 ॥४॥ रूप न रेख न भेख न कोई । चिन्मूरति  
 प्रभु तुम ही होई ॥इहविध०॥५॥ अलख अनादि  
 अनंत अरोगी । सिद्ध विशुद्ध सुआत्मभोगी  
 इहविध० ॥६॥ गुन अनंत किम वचन ब्रतावैं ।  
 दीपचंद भवि भावन भावैं ॥ इहविध० ॥ ७ ॥

आत्माकी आरती

करौं आरती आत्म देवा, गुणपरजाय अनंत  
 अभेवा ॥ करौं० ॥ टेक ॥ जामें सब जग जो  
 जगमाहीं । वसत जगतमें जगसम नाही ॥करौं०  
 ॥ १ ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावैं । साधु सकल  
 जिहँको गुण गावैं । करौं ॥२॥ विन जाने जिय  
 चिरभव डोले । जिहँ जाने ते शिवपट खोले ॥  
 करौं० ॥ ३ ॥ ब्रती अविरती विधव्योहारा ।  
 सो तिहुँकालकरमसों न्यारा ॥ करौं० ॥ ४ ॥

गुरुशिख उभय वचनकरि कहिये । वचनातीत  
दशा तस लहिये ॥ करौं० ॥ ५ ॥ स्वपरभेदको  
खेद उछेदा । आप आपमें आप निवेदा । करौं०  
॥ ६ ॥ सो परमात्म शिव-सुखदाता । होहि  
'विहारीदास' विख्याता ॥ करौं० ॥ ७ ॥

आरती श्रीवर्द्धमानजीकी ।

करौं आरती वर्द्धमानकी । पावापुर निरवान  
थानकी । करौं० ॥ टेक ॥ राग-विना सब जग  
जन तारे । द्वेष विना सब करम विदारे ॥ करौं०  
॥ १ ॥ शील-धुरंधर शिव-तियभोगी । मनवच-  
कायन कहिये योगी ॥ करौं० ॥ २ ॥ रतनत्रय  
निधि परिगह-हारी । ज्ञानसुधाभोजनव्रतधारी ॥  
करौं० ॥ ३ ॥ लोक अलोक व्याप निजमाही ।  
सुखमय इंद्रिय सुखदुख नाहीं ॥ करौं० ॥ ४ ॥  
पंचकल्याणकपूज्य विरागी । विमलदिगंबर  
अंबर-लगागी ॥ करौं० ॥ ५ ॥ गुणमनि-भूषण  
भूषित स्वामी । जगतउदास जगंतरस्वामी ॥  
करौं० ॥ ६ ॥ कहै कहां लौं तुम सब जानौ ।

‘द्यानत’ की अभिलाष प्रमानौ ॥ ७ ॥

। आरता निश्चयआत्माका ।

चौपाई ।

मंगलिआरती आतमराम । तनमंदिर मन  
उत्तम ठान ॥ मंगल० ॥ टेक ॥ समरसजलचंदन  
आनंद । तंदुल तत्त्वस्वरूप अमंद ॥ मंगल० ॥  
॥ १ ॥ समयसारफूलनकी माल । अनुभव-सुख  
नेवज भरि थाल ॥ मंगल० ॥ २ ॥ दीपकज्ञान  
ध्यानकी धूप । निरमलभाव महाफलरूप ॥ मं०  
॥ ३ ॥ सुगुण भविकजन इकरँगलीन । निहचै  
नवधा भक्ति प्रवीन ॥ मंगल० ॥ ४ ॥ धुनि  
उतसाह सु अनहद गान । परम समाधिनिरत  
परधान ॥ मंगल० ॥ ५ ॥ बाहिज आतमभाव  
बहावै । अंतर है परमातम ध्यावै ॥ मंगल० ॥  
॥ ६ ॥ साहब सेवकभेद मिटाय । ‘द्यानत’ एक-  
मेक होजाय । मंगल० ॥ ७ ॥

उपर्युक्त आरतियोंमेंसे इच्छानुसार एक या दो आरती बोलकर  
नीचे लिखा श्लोक, दोहा और मन्त्र पढ़कर आरतीको मस्तकपर  
बढ़ावे ।



दीप धूप चढ़ानेके मंत्रादि

ध्वस्तोद्यमांधीकृतविश्वविश्वमोहांधकारप्रतिघात  
दीपान् । दीपैः कनत्कांचनभाजनस्थैर्जिनेन्द्र-  
सिद्धांतयतीन् यजेऽहम् ॥ दोहा—

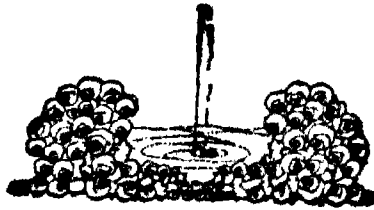
स्वपरप्रकाशनज्योति अति, दीपक तमकर हीन  
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥१॥

ओं हीं मोहतिमिरविनाशनाय देवशास्त्रगुरुभ्यो दीपंनिवपा० स्वाहा  
धूप चढ़ाते समय अथवा धूपकी आशिका लेते समय नीचे  
लिखा श्लोक, दोहा और मंत्र बोलना चाहिये ।

दुष्टाष्टकर्मन्धनपुष्टज्वालसंधूपने भासुरधूमकेतून्  
धूपैर्विधूतान्य सुगंधिगधैर्जिनेन्द्रसिद्धांतयतीन्  
यजेऽहम् ॥ दोहा—

अग्निमाहिं परिमलदहन, चंदनादि गुणलीन ।  
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥२॥

ओं हीं अष्टकर्मविनाशनाय देवशास्त्रगुरुभ्यो धूपं निर्वपा० स्वाहा ॥



तुम परमपावन देव जिन अरि, रजरहस्य  
 विनाशनं । तुम ज्ञान-दृग जलवीच त्रिभुवन  
 कमलवत प्रतिभासनं ॥ आनंद निर्जज अनंत  
 अन्य, अर्चित संतत परनये । बल अतुलकलित  
 स्वभावतै नहिं, खलितगुन अमिलित थये ॥  
 सब रागरुषहन परम श्रवन, स्वभावघननिर्मल  
 दशा । इच्छारहित भविहित खिरत वच, सुनत  
 ही भ्रमतमनशां । एकांतगहनसुदहन स्यात्पद  
 बहनमय निजपर दया । जाके प्रसाद विषाद  
 विन मुनिजन सपदि शिवपद लहा ॥ २ ॥ भू-  
 षनवसनसुमनादिविनतन, ध्यानमयमुद्रा दिपै ।  
 नासाग्रनयन सुपलक हलय न, तेज लखि खग-  
 गन छिपै ॥ पुनि वदननिरखत प्रशमजल, वर-  
 खत सुहरखतउर धरा ! बुधि स्वपर परखत  
 पुन्य आकर, कलिकलिल दरखत जरा ॥ ३ ॥  
 इत्यादि बहिरंतर असाधरन, सुविभव निधान

जी । इंद्रादिवंदपदारविंद, अनिंद तुम भगवान  
 जी ॥ मैं चिरदुखी परचाहतेँ, तवधर्म नियत न  
 उर धरचो ॥ परदेव सेवकरी बहुत, नहिं काज  
 एकहु तहँ सरचो ॥ ४ ॥ अब भागचंद उदय  
 भयौ मैं शरन आयो तुम-तनी । इक दीजिये  
 बरदान तुम जस, स्वपददायक बुधमनी ॥ पर-  
 माहिं इष्ट-अनिष्ट-मति-तजि, मगन निजगुनमें  
 रहौं । दृग-ज्ञान-चरन समस्त पाऊं, 'भागचंद'  
 न पर चहौं ॥ ५ ॥

४

त्रिभुवनगुरुस्वामीजी, करुणानिधिनामीजी  
 सुनि अंतरजामी, मेरी वीनतीजी ॥ १ ॥ मैं  
 दास तिहाराजी, दुखिया बहु भाराजी । दुख  
 मेटनहारा तुम जादौंपतीजी ॥ २ ॥ भरम्यौ  
 संसाराजी, चिरविपत्ति-भँडाराजी । कहिं सार  
 न सार, चहूँगति डोलियाजी ॥ ३ ॥ दुखमेरु  
 समानाजी, सुख सरसों-दानाजी । अब जान  
 धरिं ज्ञानतसाजू तोलियाजी ॥ ४ ॥ थावर-तन

पायाजी, भ्रस नाम घरायाजी । कृमि कुंथु कहा-  
या, मरि भँवरा हुवाजी ॥ पशुकाया सारीजी,  
नानाविधधारीजी । जलचारी थलचारी, उडन  
पखेरुवाजी ॥६॥ नरकनके माहींजी, दुखओर  
न कहींजी । अत्रि घोर जहां है, सरिता स्वार  
कीजी ॥ ७ ॥ पुनि असुर सहारैजी, निज वैर  
विचारैजी । मिल बांधै अरु मारै, निरदय नार  
कीजी ॥८॥ मानुष अवतारैजी, रह्यो गरभ मझा-  
रैजी । रटि रोयो जनमत, विरियां में घनोजी  
॥९॥ जोबन तन रोगीजी, कै विरह वियोगी  
जी । फिर भोगी बहुविध, विरधपनाकी वेदना  
जी ॥१०॥ सुरपदवी पाईजी, रंभा उरलाईजी ।  
तहां देखि पराई, संपति झूरियोजी ॥११॥ माला  
मुरझानीजी, जब आरति ठानीजी । थिति पूरन  
जानी, मरत विसूरियोजी ॥१२॥ यौं दुख भव  
केरा जी, भुगते बहुतेराजी । प्रभु ! मेरे कहते  
पार न है कहींजी ॥ १३ ॥ मिथ्यामदमाता नी  
चाही नित साताजी । सुखदाता जगत्राता, तुम

जाने नहींजी ॥१४॥ प्रभु भागनि पायेजी, गुन  
 श्रवण सुहायेजी । तकि आया सब सेवककी,  
 विपदा हरौजी ॥ १५ ॥ भववास बसेराजी, फिर  
 होय न फेराजी । सुख पावै जन तेरा, स्वामी सो  
 करौंजी ॥ १६ ॥ तुम शरन सहाईजी, तुम स-  
 ज्जन भाईजी । तुम माई तुम्हीं बाप दया मुझ  
 लीजिये जी ॥ १७ ॥ भूधर करजोरै जी ठाढो  
 प्रभु ओरै जी । निजदास निहारौ, निरभय की-  
 जियेजी ॥ १८ ॥

५ । ढाल—परमादी ।

अहो जगतगुरु एक, सुनियो अरज हमारी ।  
 तुम हो दीनदयाल में दुखिया संसारी ॥ १ ॥  
 इस भववनमें बादि, काल अनादि गमायो ।  
 भ्रम्यो चहूंगतिमांहि, सुख नहिं दुख बहु पायो  
 ॥२॥ कर्म महारिपु जोर, एक न कान करैजी ।  
 मनमाने दुख देहिं, काहूसों न डरैजी ॥३॥ कबहूँ  
 इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावै । सुरनरपशु  
 गतिमांहि बहुविधि नाच नचावै ॥ ४ ॥ प्रभु

इनको परसंग भवभवमाहिं बुरोजी जे दुख  
 देखे देव तुमसों नाहि दुरोजी ॥५॥ एक जन-  
 मकी बात कहि न सकौं सुनि स्वामी । तुम  
 अनंत परजाय जानतु अंतरजामी ॥ ६ ॥ मैं  
 तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे । कियो बहुत  
 बेहाल सुनियो साहिब मेरे ॥७॥ ज्ञान महानिधि  
 लूटि रंक निबलकरि डारयो । इनही तुम मुझ  
 माहिं हेजिन अंतर पारयो ॥८॥ पाप पुन्य मयि  
 दोय पायनि बेड़ी डारी । तनकाराग्रहमाहिं  
 मोहि दियो दुख भारी ॥९॥ इनको नैक विगार  
 मैं कछु नाहिं कियोजी । विनकारन जगवंद्य  
 बहुविध वैर लियोजी ॥ १० ॥ अब आयौ तुम  
 पास सुन जिन सुजस तिहारौ । नीतिनिपुन  
 जगराय, कीजै न्याव हमारो ॥११॥ दुष्टन देहु  
 निकाल साधनकों रखि लीजै । विनवै “भूधर-  
 दास” हे प्रभु ढील न कीजै ॥ १२ ॥

६ । चौपाई ।

प्रभु इस जग समरथ ना कोय । जासौं तुम

जस वर्णन होय ॥ चार ज्ञानधारी मुनि थकैं ।  
सो मतिमंद कहा कहि सकैं ॥ १ ॥ यह उर जा-  
नत निश्चय कीन । जिनमहिमा वर्णन हम हीन ॥  
पर तुम भक्तिथकी वाचाल । तिस वस हो, गाऊं  
गुणमाल ॥ २ ॥ जय तीर्थकर त्रिभुवनधनी ।  
जय चंद्रोपम चूडामनी ॥ जय जय परम धरम-  
दातार । कर्मकुलाचल-चूरनहार ॥ ३ ॥ जय  
शिवकामिनिकंत महंत । अतुल अनंत चतुष्टय-  
वंत ॥ जय जय आश-भरन बडभाग । तपल  
छमीके सुभग सुहाग ॥ ४ ॥ जयजय धर्मध्वजा-  
धर धीर । स्वर्ग-मोक्षदाता वर वीर ॥ जय रत्न-  
त्रय रतनकरंड । जय जिन तारन-तरन तरंड  
॥ ५ ॥ जय जय समवसरनशृंगार । जय संश-  
यवन-दहन-तुषार ॥ जयजय निर्विकार निर्दोष ।  
जय अनंतगुणमाणिककोष ॥ ६ ॥ जय जय  
ब्रह्मचर्य दल साज । कामसुभटविजयी भटराज ॥  
जय जय मोहमहातरु करी । जय जय मदकुंजर  
केहरी ॥ ७ ॥ क्रोधमहानलमेध प्रचंड । मान-

१हीधर दामिनिदंड ॥ मायाबेलि धनंजय-दाह  
 लोभसलिलशोषण-दिननाह ॥ ८ ॥ तुम गुण-  
 सागर अगम अपार । ज्ञान-जहाज न पहुंचै  
 पार ॥ तट ही तट पर डोलै सोय । कारज सि-  
 द्ध तहां नहिं होय ॥९॥ तुम्हरी कीर्तिबेल बहु  
 बढी । यत्न विना जगमंडप चढी ॥ और कु-  
 देव सुयस निज चहैं । प्रभु अपने थल ही यश  
 लहैं ॥ १० ॥ जगत जीव घूमैं विन ज्ञान । की-  
 नों मोहमहा विषपान ॥ तुम सेवा विषनाशक  
 जरी । यह मुनिजन मिलि निश्चय करी ॥११॥  
 जन्म-लता मिथ्यामत मूल । जन्म मरण लागैं  
 तहँ फूल ॥ सो कबहूँ विन भक्ति कुठार । कटै  
 नहीं दुखफलदातार ॥१२॥ कल्पतरूवर चित्रा-  
 बेलि । कामपोरषा नवनिधि मेलि ॥ चिंतामणि  
 पारस पाषान । पुण्य पदारथ और महान ॥१३॥  
 ये सब एक जन्म संजोग । किंचित सुखदातार  
 नियोग ॥ त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव । जन्म  
 जन्म सुखदायक देव ॥ १४ ॥ तुम जगबांधव



तुम जगतात । अशरण शरण विरद विख्यात ॥  
 तुम सब जीवनके रखवाल । तुम दाता तुम प-  
 रम दयाल ॥१५॥ तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान  
 तुम समदर्शी तुम सब-जान ॥ जय जिन यज्ञ  
 पुरुष परमेश । तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥१६॥  
 तुम जगभर्ता तुम जगजान । स्वामि स्वयंभू  
 तुम अमलान ॥ तुम विन तीन काल तिहुँ लोय ।  
 नाहीं शरण जीवको कोय ॥ १७ ॥ यातैं अब  
 करुणानिधि नाथ । तुम सन्मुख हम जोडैं हाथ ॥  
 जबलौं निकट होय निर्वान । जगनिवास छूटै  
 दुखदान ॥१८॥ तबलौं तुम चरणांबुज बास ।  
 हम उर होउ यही अरदास ॥ और न कछु बांता  
 भगवान । हो दयाल दीजे वरदान ॥ १९ ॥

### ७ शैर

हे दीनबंधु श्रीपति करुणानिधानजी । यह  
 मेरी विथा क्यों न हरो बार क्या लगी ॥टेक॥  
 मालिक हो दो जहानके जिनराज आपही ।

ऐवो हुनर हमारो कुछ तुमसे छिपा नहीं ॥ बे-  
 जानमें गुनाह मुझसे बन गया सही । ककरीके  
 चोरको कटार मारिये नहीं ॥ हो० ॥ १ ॥ दु-  
 खदर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही । मु-  
 शकिल कहर बहरसे लिया है भुजा गही ॥ जस  
 वेद औ पुरानमें प्रमान है यही । आनंदकंद  
 श्रीजिनंद देव है तुही ॥ हो० ॥ २ ॥ हाथीपै  
 चढी जाती थी सुलोचना सती । गंगामें ग्राहने  
 गही गजराजकी गती ॥ उस वक्तमें पुकार  
 किया था तुम्हें सती । भय टारकें उबार लिया  
 है कृपापती ॥ हो० ॥ ३ ॥ पावक प्रचंड कुंडमें  
 उमंड जब रहा । सीतासे शपथ लेनेको तब  
 रामने कहा ॥ तुम ध्यानधार जानकी पग धार-  
 ती तहां । तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कौल ल-  
 हलहा ॥ हो० ॥ ४ ॥ जब वीर द्रौपदीका दुःशास-  
 ने था गहा । सबही सभाके लोग थे कहते हहा  
 हहा ॥ इस वक्त भीर पीरमें तुमने करी सहा ।  
 परदा ढका सतीका सृजस जक्तमें रहा ॥ हो०

॥५॥ श्रीपालको सागरविषै जब सेठ गिराया ।  
 उनकी रमासे रमनेको आया वो बेहया ॥ उस  
 वक्तके संकटमें सती तुमको जो ध्याया । दुख-  
 दंदफंद मेटके आनंद बढाया ॥ हो० ॥ ६ ॥  
 हरिषेनकी माताको जहां सौत सताया । रथ जै-  
 नका तेरा चलै पीछें यों बताया ॥ उस वक्तके  
 अनसनमें सती तुमको जो ध्याया । चक्रीस हो  
 सुत उसकेने रथजैन चलाया ॥ हो० ॥ ७ ॥  
 सम्यक्तशुद्ध शीलवति चंदना सती । जिसके  
 नगीच लगती थी जाहिर रती रती । बेरीमें  
 परी थी तुम्हें जब ध्यावती हती । तब वीर धी-  
 रने हरी दुखदंदकी गती ॥ हो० ॥ ८ ॥ जब  
 अंजना सतीको हुआ गर्भ उजारा । तब सासने  
 कलंक लगाकर घरसे निकारा ॥ बनावर्गके उपसर्ग-  
 में तब तुमको चितारा । प्रभुभक्त व्यक्त जानि-  
 के भय देव निवारा ॥ हो० ॥ ९ ॥ सोमासे कहा  
 जो तु सती शील विशाला । तो कुंभतैं निकाल  
 भलाई नाग जु काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके

सति हाथ जब डाला । तत्काल ही वह नाग  
हुआ फूलकी माला ॥ हो० ॥ १० ॥ जब कुष्ठ  
रोग था हुआ श्रीपालराजको । मैना सती तब  
आपको पूजा इलाजको ॥ तत्काल ही सुंदर कि-  
या श्रीपाल राजको । वह राजरोग भाग गया  
मुक्तराजको ॥ हो० ॥ ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन-  
को मृषा दोष लगाया । रानीके कहे भूपने सू-  
लीपै चढाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने निज ध्या-  
नमें ध्याया । सूलीसे उतारुस्को सिंहासनपै बि-  
ठया ॥ हो० ॥ १२ ॥ जब सेठ सुधन्नाजीको  
वापीमें गिराया । ऊपरसे दुष्ट फिर उसे वह मा-  
रने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपने-  
में ध्याया । तत्कालही जंजालसे तब उसको  
बचाया ॥ हो० ॥ १३ ॥ इक सेठके घरमें किया  
दारिद्रने डेरा । भोजनका ठिकाना भि न था  
साँभ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने जब ध्यान  
में घेरा । घर उसकेमें तब कर दिया लक्ष्मीका  
सेरा ॥ हो० ॥ १४ ॥ बलि वादमें मुनिराज

सों जब पार ना पाया । तब रातको तलवार ले  
 शठ मारने आया । मुनिराजने निजध्यानमें  
 मन लीन लगाया । उस वक्त हो प्रत्यक्ष तहां  
 देव बचाया ॥ हो० ॥ १५ ॥ जब रामने हनुमंत  
 को गढ़लंक पठाया । सीताकी खबर लेनेको सह  
 सैन्य सिधाया ॥ मग बीच दो मुनिराजकी लख  
 आगमें काया । झट वारि मूसलधारसे उपसर्ग  
 बुझाया ॥ हो० ॥ १६ ॥ जिननाथहीको माथ  
 नवाता था उदारा । घेरेमें पडा था वह कुलिश  
 करण विचारा ॥ उसवक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें  
 चितारा । रघुवीरने सब पीर तहां तुरत निवारा  
 ॥ हो० ॥ १७ ॥ रणपाल कुंवरके पडीथी पांवमे  
 बेरी । उसवक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सबेरी ॥  
 तत्काल ही सुकुमालकी सब झड़ पडी बेरी ।  
 तुम राजकुंवरकी सभी दुखदंद निवेरी ॥ हो० ॥  
 ॥ १८ ॥ जब सेठके नंदनको डसा नाग जु  
 कारा । उसवक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा ॥  
 तत्काल ही उस बालका विष भूरि उतारा ॥

वह जाग उठा सोके मानों सेज सकारा ॥हो०॥  
 ॥१९॥ मुनिमानतुंगको दर्ई जब भूपने पीरा ।  
 तालेमें किया बंद भरी लोहजँजीरा ॥ मुनिईश  
 ने आदीशकी थुति की है गंभीरा । चक्रेश्वरी  
 तब आनिके झट दूर की पीरा ॥ हो० ॥ २० ॥  
 शिवकोटिने हट था किया सामंतभद्रसों ॥शिव  
 पिंडकी बंदन करौं शंकों अभद्रसों ॥ उस वक्त  
 स्वयंभू रचा गुरु भावभद्रसों । जिनचंद्रकी  
 प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्रसों ॥ हो० ॥ २१ ॥  
 सूवेने तुम्हें आनिके फल आम चढाया । मेंडक  
 ले चला फूल भरा भक्तिका भाया ॥ तुम दोनों  
 को अभिराम स्वर्गधाम बसाया हम आपसे  
 दातारको लख आज ही पाया ॥ हो० ॥२२॥  
 कपि स्वान सिंह नेवला अज वैल विचारे । तिर्यच  
 जिन्हें रंच न था बोध चितारे ॥ इत्यादिको सुर  
 धाम दे शिवधाममें धारे । हम आपसे दातारको  
 प्रभु आज निहारे ॥ हो० ॥ २३ ॥ तुम ही  
 अनंत जंतुका भय भीर निवारा । वेदोपुराणमें

गुरू गणधरने उचारा । हम आपकी सरनाग-  
 तीमें आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष  
 इच्छिताकारा ॥ हो ० ॥ २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त भक्त  
 जक्त मुक्तके दानी । आनंद कंद वृंदको हो मुक्त  
 के दानी ॥ मोहि दीन जान दीनबंधु पातक  
 भानी । संसार विषम खार तार अंतर जामी ॥  
 ॥ हो ० ॥ २५ ॥ करुणानिधान वानकी अब क्यों  
 न निहारो । दानी अनंतदानके दाता हो सँभारो ।  
 वृषचंदनंद बृंदका उपसर्ग निवारो । संसार  
 विषम खारसे प्रभु पार उतारौ ॥ हो दीन बंधु  
 श्रीपति करुणानिधानजी । अब मेरी विथा क्यों  
 ना हरो बार क्या लगी ॥ २६ ॥

८

दोहा—जासुधर्मपरभावसों, संकट कटत अनंत ।  
 मंगलमूरति देव सो, जैवंतौ अरहंत ॥ १ ॥  
 हे करुणानिधि सुजनको, कष्टविषै लखिलेत ।  
 तजि विलंब दुखनष्ट किय, अब विलंब किहहेत ।

तब विलंब नहिं कियो, दियो नमिको रजता  
 बल । तब विलंब नहिं कियो मेघवाहन लंका-  
 थल ॥ तब विलंब नहिं कियो, शेठसुत दारिद  
 भंजे । तब विलंब नहिं कियो, नागजुग सुरपद  
 रंजे ॥ इमि चूरि भूरि दुख भक्तके, सुख पूरे शिव-  
 तियवरन । प्रभु मोर दुःख नाशनविषै, अब विलं-  
 ब कारन कवन ॥ ३ ॥ तब विलंब नहिं कियो, सिया  
 पावक जल कीन्हौं । तब विलंब नहिं कियो,  
 चंदना शृंखल छीन्हौं । तब विलंब नहिं कियो,  
 चीर द्रौपदिको बाढ्यो । तब विलंब नहिं कियो  
 सुलोचन गंगा काढ्यो ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ४ ॥  
 तब विलंब नहिं कियो, सांप किय कुसुम सु  
 माला । तब विलंब नहिं कियो, उर्मिला सुरथ  
 निकाला ॥ तब विलंब नहिं कियो शीलबल  
 फाटक खुल्ले । तब विलंब नहिं कियो अंजना  
 वन मन फुल्ले । इमि० । प्रभु० ॥ ५ ॥ तब वि-  
 लंब नहिं कियो शेठ सिंहासन दीन्हौं । तब



विलंब नहिं कियो, सिंधु श्रीपाल कढीन्हौं ॥  
 तब विलंब नहिं कियो, प्रतिज्ञा वजूकर्ण पल ।  
 तब विलंब नहिं कियो, सुधन्ना काढि वापि थल  
 ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ६ ॥ तब विलंब नहिं कियो  
 कंस भय त्रिजुग उवारे । तब विलंब नहिं कियो,  
 कृष्णसुत शिलाउधारे ॥ तब विलंब नहिं कियो  
 खड्ग मुनिराज बचायो । तब विलंब नहिं कियो  
 नीरमातंग उचायो ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ७ ॥ तब  
 विलंब नहिं कियो, शोठ सुत निरविष कीन्हौं ।  
 तब विलंब नहिं कियो, मानतुँगबंध हरीन्हौं ॥  
 तब विलंब नहिं कियो, वादिमुनिकोढ़ मिटायो ।  
 तब विलंब नहिं कियो, कुमुद निजपास  
 कटायौ ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ८ ॥ तब विलंब  
 नहिं कियो अंजना चोर उवारयो । तब  
 विलंब नहिं कियो पूरवा भील सुधारयो ॥  
 तब विलंब नहिं कियो, गृद्धपक्षी सुंदर  
 तन । तब विलंब नहिं कियो, भेक दिय सुर  
 अद्भुत धन ॥ इमि० । प्रभु० ॥ ९ ॥ इहविधि दुख

निरवार, सारसुख प्रापति कीन्हों । अपनो दास  
 निहारि, भक्तवत्सल गुन चीन्हों ॥ अब विलंब  
 किहिं हेत, कृपाकर इहां लगाई । कहा सुनो अ  
 रदास नाहिं, त्रिभुवनके राई ॥ जनवृंद सु मन-  
 वचतन अबै, गही नाथ तुम पदशरन । सुधि  
 हें दयाल मम हालपै, कर मंगल मंगलकरन ॥



### पुकारपञ्चीसि ।

दोहा—जे या भव संमारमें, भुगतैं दुःख अपार ।  
 तिन पुकारपञ्चीसिका, करौं कवित इक ढार ॥

तेईसा छंद ।

श्रीजिनराज गरीब निवाज सुधारन काज  
 सबै सुखदाई । दीनदयाल बडे प्रतिपाल दया

गुणमाल सदा शिर नाई ॥ दुर्गति टारन पाप  
 निवारन हो भवितारनको भवताई । बारहिंबार  
 पुकारतु हों जनकी विनती सुनिये जिनराई । १।  
 जन्मजरामरणो त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल  
 अनाई । तासु नसावनको तुम नाम सुन्यो  
 हम वैद्य महासुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारन  
 को तुम्हरेपद सेवतु हौ चितल्याई । बारहि । २।  
 जो इक द्वै भवको दुख होय तो राख रहों मनको  
 समुझाई । यह चिरकाल कुहाल भयो अबलों  
 कहूँ अंत परचो न दिखाई ॥ मोपर या जगमांहिं  
 कलेश परे दुख घोर सहे नहिं जाई । बारहिबार०  
 ॥ ३ ॥ देख दुखीपर होत दयाल सु है इक  
 ग्रामपती शिरनाई । हो तुम नाथ त्रिलोकपती  
 तुमसे हम अर्ज करें शिरनाई ॥ मो दुख दूर  
 करो भवके वसु कर्मनतैं प्रभु लेहु छुडाई ॥ बार०  
 ॥ ४ ॥ कर्म बडे रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन  
 दशा कर पाई । दुःख अनंत दिये हमको हर  
 भांतिन भांतिन दोष लगाई ॥ मैं इन वैरिनके

वश है करिके भटक्यो सु कह्यो नहिं जाई ।  
 बारहिं० ॥५॥ मैं इस ही भव काननमें भटक्यो  
 चिरकाल सुहाल गमाई । किंचित ही तिलसे  
 सुखको बहुभांति उपाय करे ललचाई ॥ चार  
 गतें चिर मैं भटक्यो जंहुँ मेरु समान महा  
 दुखदाई । बारहिं० ॥६॥ नित्य निगोद अनादि  
 रह्यो त्रसके तनकी जहुँ दुर्लभताई । ज्यों क्रम  
 साँ निकस्यो तिहँतैं त्यो इतर निगोद रह्यो चिर  
 छाई ॥ सूक्ष्म बादर नाम भयो जबही इहभाँति  
 धरी परजाई । बारहिं० ॥ ७ ॥ जबही पृथिवी  
 जल तेज भयो पुनि मारुत होय वनस्पतिकारै ।  
 देह अघात धरी जब सूक्ष्म घातत वादर  
 दीरघताई ॥ एक उदै परतेक भयो साधा-  
 रण एक निगोद बसाई । बारहिं० ॥ ८ ॥  
 इंद्रिय एक रही चिर, मैं कब लब्धि उदै स्वउप-  
 शमताई । वे त्रय चार धरी जब इंद्रिय देह उदय  
 विकलत्रय आई ॥ पंचन आदि किधौं पर्यंत  
 धरी इन इंद्रियके त्रसकाई । बारहिं० ॥ ९ ॥

काय धरी पशुकी बहुवार भई जलजंतुनकी  
 परजाई । जो पलमांहि आकाश रह्यो चिर होय  
 पखेरू पंख लगाई ॥ मैं जितनी परजाय धरीं  
 तिनके बरणे कहुं पार न पाई । बारहि० ॥१०॥ नर्क  
 मभार लियो अवतार पर्यो दुखभार न कोई स  
 हाई । जो तियके सुखहेत किये अघ ते सबनरक-  
 नमें सुधि आई ॥ ते तियके तिनकी पुतली हमरे  
 हियरा करि लाल भिराई ॥ बारहि० ॥११॥ रत्न-  
 प्रभा सु मही जहँ है अरु शर्कर रेत उन्हार ब-  
 ताई । पंकप्रभा जु धुआँवत है तमसी सु प्रभासु  
 महातमताई ॥ जो जन लाख जु आयसपिंड  
 तहां इकही छिनमें गलजाई ॥ बारहि० ॥१२॥  
 जे अघ घात महा—दुखदायक मैं विषयारसके  
 फल पाई । काटत हैं जबही निर्दय तबही सरि  
 ता महि देत बहाई ॥ देवअदेवकुमार जहाँ विच  
 पूरव बैर चितावत जाई ॥ बारहि० ॥१३॥ जो  
 नरदेह मिली क्रमसों करि गर्भ कुवास महादुख  
 दाई । जे नवमास कलेश सहे मलमूत्र अहार

महा जयताई ॥ ये दुख देखि जबै निकस्यो पुनि  
रोवत बालपने दुखदाई । बारहि० ॥१४॥ यौव-  
नमें तनरोग भयो कवहूं विरहानल व्याकुलताउं ।  
मानविषै रसभोग चख्यो उन्मत्त भयो सुख  
मानत ताही । आय गयोछनमें विरधापन यह  
नरभव इहभांति गमाउं ॥ बारहि० ॥१५॥ देव भ-  
यो सुरलोकविषै तब मोहि रह्यो परियां उर लाई ।  
पाय विभूति बढे सुरकी परसंपति देखत झूरत  
जाई ॥ माल जबै मुरझाय रही थिति पूरण जा-  
नि तबै विललाई ॥ बारहि० ॥१६॥ जे दुखमें  
भुगते भवके तिनके वरणे कहूं पार न पाई ।  
काल अनादिन आदि भयो तहँ में दुखभाजन  
हो अघमाहीं ॥ सो दुख जानत हो तुमही जब  
ही इहभांति धरी पर्यायी । बारहि० ॥ १७ ॥  
कर्म अकाज करे हमरे हमको चिरकाल भये  
दुखदाई । मैं न विगाड़ कियो इनको विनकारण  
पाप भये अरि आई ॥ मात पिता तुमहो जगके  
तुम छांडि फिराद करों कहँ जाई । बारहि० ॥

॥१८॥ सो तुमसों सब दुःख कहों प्रभु जानत  
 हो तुम पीर पराई । मैं इनको सत्संग कियो दिन  
 हूं दिन आवत मोहि बुराई ॥ ज्ञानमहानिधि  
 लूट लियो इन रंक कियो इहभांति हरई । बा-  
 रहि० ॥ १९ ॥ मैं प्रभु एक सरूप सह्यो सब यह  
 इन दुष्टनकी कुटिलाई । पाप रु पुन्य दुहूं निज  
 मारगमें हमको यह फाँसि लगाई । मोहि थकाय  
 दियो जगसों विरहानल देह दहै न बुभाई ॥  
 बाराहे० ॥ २० ॥ यह विनती सुन सेवककी निज  
 मारगमें प्रभु लेहु लगाई ॥ मैं तुव दास रह्यो  
 तुमरे सँग लाज करो शरणागति आई ॥ मैं तुव  
 दास उदास भयो तुमरी गुणमाल सदा उर लाई  
 ॥ बाराहे० ॥ २१ ॥ देर करो मत श्रीकरुणानिधि  
 जू पतिराखनहार निकाई । योग जुरे क्रमसों  
 प्रभुजी यह न्याय हजूर भयो तुम आई ॥ आन  
 रह्यो शरणागति हों तुमरी सुनके तिहुँलोक  
 बड़ाई ॥ बाराहेबार० ॥ २२ ॥ मैं प्रभुजी तुम्ह-  
 री समहू इन अंतर पार कियो दुसराई । न्याय

न अंत करचो हमारो न मिली हमको तुमसी  
 ठकुराई ॥ संतन राखि करो अपने ढिग दुष्टनि  
 देहु निकास बहाई । वारहि० ॥ २३ ॥ दुष्टनकी  
 जु कुसंगतिमें हमको कलु जान परी न निकाई ।  
 सेवक साहबको दुविधा न रहै प्रभुजी करिये  
 जु भलाई ॥ फेर नमों जु करों अरजी जस ।  
 जाहिर जान परै जगताई ॥ वारहि० ॥ २४ ॥  
 यह विनती प्रभुके शरणागति जे नर चित्त  
 लगाय करेंगे । जे जगमें अपराध करै अघ ते  
 क्षणमात्रभरेमें हरेंगे ॥ जे गति नीच निवास  
 सदा अवतार सुधी स्वरलोक धरेंगे । देवीदास  
 कहै क्रमसां पुनि ते भवसागर पार तरेंगे ॥ २५ ॥

## बारहभावन भगौतीदासकृत

चौपाई ।

पंच परमपद वंदन करों । मनवचभाव-सहित  
 उर धरों ॥ बारहभावन पावन जान । भाऊं  
 आत्म गुण पहिचान ॥ १ ॥ थिर नहिं



दीखै नयनों वस्त । देहादिक अरु रूप  
 समस्त ॥ थिर विन नेह कौनसों करों । अथिर  
 देख ममता परिहरों ॥ २ ॥ अशरण तोहि  
 शरण नहिं कोय । तीनलोकमें दृगधर जोय ॥  
 कोइ न तेरा राखनहार । कर्मनवश चेतन  
 निरधार ॥ ३ ॥ अरु संसारभावना एह । पर-  
 द्रव्यनसों करै जु नेह ॥ तू चेतन वे जड सरवंग ।  
 तातैं तजहु परायो संग ॥ ४ ॥ जीव अकेला  
 फिरै त्रिकाल । ऊरध मध्यभुवन पाताल ॥ दूजा  
 कोइ न तेरे साथ । सदा अकेलो भ्रमै अनाथ ॥  
 ॥ ५ ॥ भिन्न सदा पुदगलतैं रहै । भर्मबुद्धितैं  
 जडता गहै ॥ वे रूपी पुदगलके खंध । तू वि-  
 नमूरति सदा अवंध ॥ ६ ॥ अशुचि देख देहा-  
 दिक अंग । कौन कुवस्तु लगी तां संग ॥ अस्थी  
 मांस रुधिरगदगोह । मल मूत्रनि लखि तजहु  
 सनेह ॥ ७ ॥ आस्रव परसों करै जु प्रीत । तातैं  
 बंध बडहि विपरीत ॥ पुदगल तोहि अपनपो  
 नाहिं । तू चेतन वे जड सब आँहि ॥ ८ ॥ संवर

परको रोकन भाव । सुख होवेको यही उपाव ।  
 आवैं नेहीं नये जहँ कर्म । पिछले रुकि प्रगटै  
 निज धर्म ॥ ९ ॥ थिति पूरी है खिर खिर  
 जाहिं । निर्जर भाव अधिक अधिकाहिं । निर्मल  
 होय चिदानंद आप । मिटै सहस परसंग मिलाप  
 ॥ १० ॥ लोकमांहि तेरो कछु नाहिं । लोक  
 अन्य तू अन्य लखाहिं ॥ वह सब षटद्रव्यनको  
 धाम । तू चिन्मूरति आतमराम ॥ ११ ॥ दुर्लभ  
 परको रोकन भाव । सो तो दुर्लभ है सुनु राव ।  
 जो तेरो है ज्ञान अनंत । सो नहिं दुर्लभ सुनो  
 महंत ॥ १२ ॥ धर्मस्वभाव आपही जान । आप  
 स्वभाव धर्म सोइ मान । जब वह धर्म प्रगट  
 तोहि होय । तब परमात्म पद लख सोय ॥  
 येही बारह भावन सार । तीर्थकर भावहिं निर-  
 धार ॥ है वैराग्य महाव्रत लेहि, तब भवभ्रमण  
 जलांजुलि देहि ॥ १४ ॥ भैया भावहु भाव अ-  
 नूप । भावत होहु तुरत शिवभूय ॥ सुख अनंत  
 विलसो निश दीश । इम भाख्यो स्वामी जगदीश

रति बारहभावना भैया भगवतीदासकृत संपूर्ण ॥

## बारहभावना भूधरदासकृत ।

दोहा—

राजा राणा छत्रपति, हाथिनके असवार  
मरना सबको एकदिन, अपनी अपनी बार ॥

अपनी अपनी बार सर्व प्राणी जु अवशि मर जावै ।

अन्य समस्त पदार्थ जगमें कोऊ थिर न रहावै ॥

ये परवस्तु मोहवश मनमें रागरु द्वेष बढावै ।

तार्ते परमें रागरोष तज जो उत्तम पद पावै ॥ १ ॥

दलबलदेई देवता, मात पिता परिवार !

मरती विरियां जीवको, कोई न राखनहार ॥

कोई न राखनहार जावके जब अंतिम दिन आवै ।

शौषध यंत्र मंत्रकी शरना गहे भि कोई न बचावै ॥

रत्नत्रय धर्म हि इक सगना यही सर्व जन गावै ।

तार्ते सबकी सगन छार गहु धर्म मुक्तिपद पावै ॥ २ ॥

दामविना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान ।

कहूं न सुख संसारमें, सब जग देख्यो छान ॥

सब जग देख्यो छान, सबहि प्राणी अति दुःख जु पावै ।

कर्म बली नट चारुं गतिमें, बहु विध नाच नचावै ॥

गद् विन तन पावै तो धन नहि, धन पा तुरत नसावै ।

तार्ते भवतन-भोग-राग तज शिवमग लहि शिव जावै ॥ ३ ॥

आप अकेलो अवतरै, मरै अकेलो होय ।

युं कबहूं इस जीवको, साथी सगा न कोय ॥

साथी सगा न कोइ मरनकर जब परभवमें जायै ।  
 मात पिता सुत दारा प्रिय जन कोइ न साथी आवै ॥  
 पुण्य पाप या धर्म हि साथी, तन धन यही रहावै ।  
 सुख दुख सबही इकला भुगतै इकला चहुंगति धावै ॥ ४ ॥

जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपनो कोय ।  
 घर संपति पर प्रगट ये, पर हैं परिजन लोय ॥

पर हैं परिजन लोय होय नहिं वस्तु जाति कुल धारा ।  
 मोहकर्मवश परको अपने ससझै सोइ गँवारा ॥  
 तू है दर्शन ज्ञानमयो चैतन्य आतमा न्यारा ।  
 तातैं पर जड़ त्याग आप गहि जो होवै निस्तारा ॥ ५ ॥

दिपै चामचादरमठी, हाड पींजरा देह ।  
 भीतर या सम जगतमें, अवर नहीं धिनगेह ॥

अवर नहीं धिनगेह देहसम अशुचि पदारथ कोई ।  
 अस्थिमांसमलमूत्र अशुचि सब याही तनतैं होई ।  
 बंदन केशर आदि वस्तु तन परसत शुचिता खोवै ।  
 ऐसे तनमें राचि रह्यो तब कैसे शिवमग जोवै ॥ ६ ॥

सोरठा ।

मोहनींदके जोर, जगवासी धूमै सदा ।  
 कर्मचोर चहुँओर, सरबस लूटैं सुध नहीं ॥

गीता ।

नहीं सुख या जीवको यह कर्म आस्रव नित करै ।  
 मन वचन तनके योगतैं नित शुभ अशुभ कर्महि वरै ॥  
 तिन करमके बंधन भये तिन उदयतैं सुख दुख लही ।  
 तातैं मिथ्यात प्रमाद आदिक नजहु जातैं शिब गहो ॥ ७ ॥

सतगुरु देय जगाय, मोहनींद जब उपशमै ।  
तब कल्लु बनहिं उपाय, कर्मचोर आवत रुकै ॥

रुकै तब ही कर्म आखव किये संवर चावसों ॥

अरु महाव्रत पन समिति गुप्ती तीन दश वृष भावसों ॥

परिषह सहन अरु भावना चित चितये नित ही सही ।

तार्ते जु होवै कर्म संवर यही जिनधुनिमें कही ॥ ८ ॥

दोहा ।

ज्ञानदीपतपतेल घर, घर शोधै भ्रम छोर ।  
याविध विन निकसै नहीं, पैठे पूरब चोर ॥

पैठे पूरब चोर कर्म सब रहे देह घरमाहीं ।

बारह त्रिध तप अग्नि जलाये कर्मचोर जल जाहीं ॥

उदयभोग सविपाक निर्जरा पकै आम तरु डाली ।

तपसों ह्वै अविपाक पकावै पालविषै जिम भाली ॥ ९ ॥

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार ।  
प्रबल पंच इंद्री-विजय, धार निर्जरा सार ॥

धार निर्जरा सार सार संवर पूर्वक जो हो है ।

वही निर्जरा सार कही अविपाक निर्जरा सो है ॥

उदय भये फल देय निजगै सो सविपाक कहावै ।

शासों जियका काज न सरि है सो सब व्यर्थ हि जावै ॥ १० ॥

चौदह राजु उत्तंग नभ, लोक पुरुष संठान ।  
तामै जीव अनादितैं, भरमत हैं विन ज्ञान ॥

भरमत हैं विन ज्ञान लोकमें कभी न हित उपजाया ।

पंच परावृत करने करते सम्यकज्ञान न पाया ॥

अब तू मोहकर्मको हरकर तज सब जगकी आसा ।  
 जिगपद ध्याय लोकशिर ऊपर करले निज थिर बासा ॥ ११ ॥  
 धनकनकंचन राजसुख, सबहि सुलभकर जान ।  
 दुर्लभ है संसारमें, एक जथारथ ज्ञान ॥  
 एक जथारथ ज्ञान सु दुर्लभ है जगमें अधिकाना ।  
 थावर त्रस दुर्लभ निगोदतै नरतन संगति पाना ॥  
 कुल ध्रावक रत्नत्रय दुर्लभ अरु षष्ठम गुन थाना ।  
 सबतै दुर्लभ आतम ज्ञान सु जो जगमांहि प्रधाना ॥ १२ ॥

जाचे सुरतरु देय सुख, चिंतत चिंतारै न ।  
 विन जाचे विन चिंतये धर्म सकल सुख दैन ॥  
 धर्म सकल सुखदैन रैन दिन भवि जीवन मन आता ।  
 षट् दर्शन ईसा मूसा महमदका मत न सुहाता ॥  
 घांतराग सर्वज्ञ देव गुरु धर्म अहिंसा जानो ।  
 अनेकांत सिद्धांत सप्त तत्त्वनको कर सरधानो ॥ १३ ॥  
 दोहा—भूधर कविकृत भावना, द्वादश जगपरधान ।  
 तापर इक अल्पज्ञने छंद रचे हित जान ॥ १४ ॥  
 इति बारह भावना भूधरदासकृत ।

**बारह भावना कुधजनकृत ।**

गीता छंद ।

जेती जगतमें वस्तु तेती अथिर परणमती सदा ।  
 परणमनराखन नाहिं समरथ इंद्र चक्री मुनि  
 कदा ॥ सुतनारि यौवन और तन धन जान दा-

मिनि दमकसा । ममता न कीजे धारि समता-  
 मानि जलमें नमकसा ॥१॥ चेतन अचेतन स-  
 ब परिग्रह हुआ अपनी थिति लहैं । सो रहैं आ-  
 प करार माफिक अधिक राखे ना रहैं ॥ अब  
 शरण काकी लेयगा जब इंद्र नाही रहत हैं ।  
 शरण तो इक धर्म आतम जाहि मुनिजन गह-  
 त हैं ॥ २ ॥ सुर नर नरक पशु सकल हेरे कर्म  
 चरे बन रहे । सुख शासता नहिं भासता सब  
 विपतिमें अतिसन रहे ॥ दुख मानसी तो देवग-  
 तिमें नारकी दुख ही भरै । तिर्यच मनुज वियोग  
 रोगी शोक संकटमें जरै ॥ ३ ॥ क्यों भूलता  
 शठ फूलता है देव परिकरथोकको । लाया कहां  
 लेजायगा क्या फौज भूषण रोक को ॥ जनमत  
 मरत तुझ एकलेको काल केता होगया ।  
 संग और नाही लगे तेरे सीख मेरी सुन भया  
 ॥ ४ ॥ इंद्रीनतैं जाना न जावै तू चिदानंद अ-  
 लक्ष है । स्वसंवेदन करत अनुभव होत तब  
 परत्यक्ष है ॥ तन अन्य जड जानो सरूपी तू

अरूपी सत्य है । कर भेदज्ञान सो ध्यान धर  
 निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख  
 राचा फिरै नाचा रूपसुंदरतन लहा । मलमूत्र  
 भांडा भरा गाढा तू न जानै भ्रम गहा ॥ क्यों  
 सूग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरै ।  
 तुहि काल गटकै नाहिं अटकै छोड तुझको गिर  
 परै ॥६॥ कोइ स्वरा अरु कोइ बुरा नहिं वस्तु  
 विविध स्वभाव है । तू वृथा विकल्प ठान उरमें  
 करत राग उपाव है ॥ यूं भाव आस्रव बनत तू  
 ही द्रव्य आस्रव सुन कथा । तुझ हेतुसे पुद्गल  
 करम न निमित्त हो देते व्यथा ॥७॥ तन भोग  
 जगत सरूप लख डर भविक गुर शरणा लिया  
 सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्षि रुचि सन्मुख  
 भया ॥ इंद्री अनिंद्री दाबि लीनी त्रस रु थावर  
 बँध तजा । तब कर्म आस्रव द्वार रोकै ध्यान  
 निजमें जा सजा ॥ ८ ॥ तज शल्य तीनों बरत  
 लीनो बाह्यभ्यंतर तपतपा । उपसर्ग सुरनर जड  
 पशुकृत सहा निज आतम जपा ॥ तब कर्म



रसविन होन लगे द्रव्यभावन निर्जरा । सब कर्म  
 हरकै मोक्ष वरकै रहत चेतन ऊजरा ॥६॥ विच  
 लोक नंतालोक मांहीं लोकमें द्रव सब भरा ।  
 सब भिन्नभिन्न अनादिरचना निमितकारणकी  
 धरा ॥ जिनदेव भाषा तिन प्रकाशा भर्मनाशा  
 सुन गिरा । सुर मनुष तिर्यक नारकी हुइ उर्ध्व  
 मध्य अधोधरा ॥ १० ॥ अनंतकाल निगोद  
 अटका त्रस थावर तनधरा । भू वारितेजव-  
 यार व्हैकै बेइंद्रिय त्रस अवतरा ॥ फिर हो ति-  
 इंद्री वा चौइंद्री पंचेंद्री मनविन बना । मनयुत  
 मनुषगतिहोन दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥  
 १११ जिय ! न्हान धोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं  
 जपजपा । तपनग्न रहना धर्म नाहीं धर्म नाहीं  
 तपतपा ॥ वर धर्म निज आत्म स्वभावी ताहि  
 विन सब निष्फला । बुधजन धरम निज धार  
 लींना तिनहिं कीना सब भला ॥ दोहा—  
 अथिराशरणसंसार है एकत्वअनित्यहि जान ।  
 अशुचि आस्रव संवरा निर्जर लोक बखान ॥

बोध रु दुर्लभ धरम ये, बारह भावन जान ।  
इनको भावै जो मदा, क्यों न लहै निर्वान ।१४।

### वैराग्यभावना ।

वज्रनाभि चक्रवर्तीकी । दोहा—

बीज राख फल भोगवै, ज्यों किसान जगमाहिं  
त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म विसारै नाहिं ॥

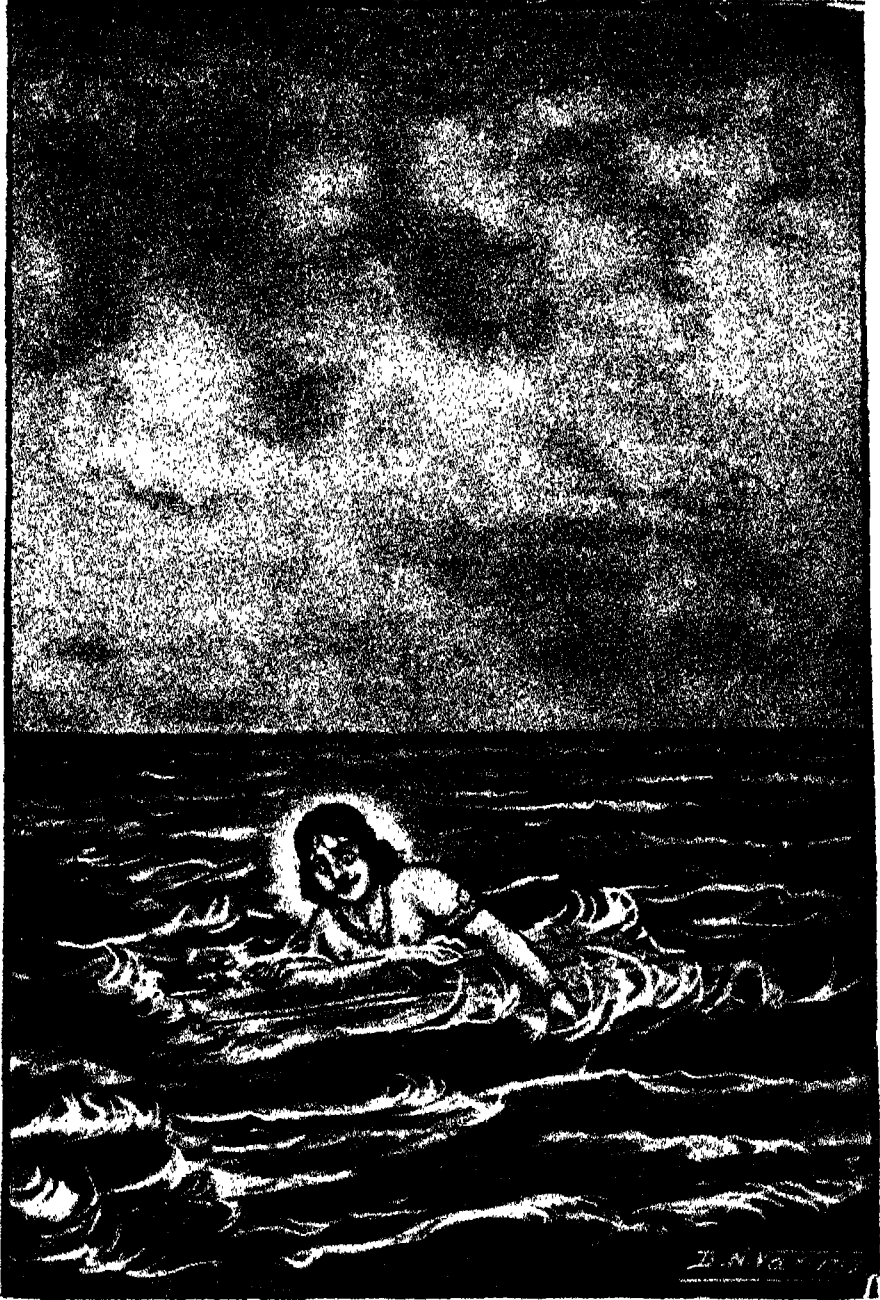
जोगीरासा वा नरेंद्र छंद ।

इहविध राज करै नरनायक, भोगै पुण्य विशा-  
लो । सुखसागरमें रमत निरंतर, जात न जान्यो  
कालो ॥ एक दिवस शुभ कर्मसँजोगे क्षेमंकर  
मुनि बंदे । देखि सिरीगुरुके पदपंकज, लोचन  
अलि आनंदे ॥ २ ॥ तीन प्रदक्षिण दे शिर  
नायो, कर पूजा थुति कीनी । साधुसमीप  
विनय कर बैठ्यो, चरननमें दिठि दीनी ॥ गुरु  
उपदेश्यो धर्मशिरोमणि, सुन राजा वैरागे ।  
राजरमा वनितादिक जे रस, ते रस बेरस लागे  
।३। मुनिसूरजकथनीकिरणावलि, लगत भरम  
बुधि भागी । भवतनभोगस्वरूप विचान्यो, परम

धरम अनुरागी ॥ इह संसार महावन भीतर,  
 भ्रमते ओर न आवै । जामन मरन जरा दोँ  
 दाझै जीव महादुख पावै ॥ ४ ॥ कबहूँ जाय  
 नरक थिति भुंजै, छेदन भेदन भारी । कबहूँ  
 पशु परजाय धरै तहँ, बध बंधन भयकारी ॥  
 सुरगतिमें परसंपत्ति देखे राग उदय दुख होई ।  
 मानुषयोनि अनेक विपतिमय, सर्व सुखी नहिं  
 कोई ॥ ५ ॥ कोई इष्ट वियोगी विलखै, कोइ अ-  
 निष्ट संयोगी । कोई दीन दरिद्रि विगूचे, कोई  
 तनके रोगी ॥ किसही घर कलिहारी नारी कै  
 बैरी सम भाई । किसहीके दुख बाहिर दीखै,  
 किस ही उर दुचितार्ई ॥ ६ ॥ कोई पुत्र विना  
 नित झूरै, होय मरै तब रोवै । खोटी संततिसों  
 दुख उपजै, क्यों प्राणी मुख सोवै ॥ पुण्य उदय  
 जिनके तिनके भी नाहिं सदा सुख साता । यह  
 जगवास जथारथ-देखे, सब दीखै दुखदाता  
 ॥ ७ ॥ जो संसारविषै सुख होता, तीर्थकर क्यों  
 त्यागै । काहेको शिवसाधन करते, संजयसों

अनुरागै ॥ देह अपावन अथिर धिनावन यामै  
 सार न कोई । सागरके जलसों शुचि कीजै तो  
 भी शुद्ध न होई ॥८॥ सात कुधातुभरी मल-  
 मूरत चाम लपेटी सोहै । अंतर देखत या सम  
 जगमें अवर अपावन को है ॥ नवमलद्वार स्रयें  
 निशिवासर नाम लिये धिन आवै । व्याधि  
 उपाधि अनेक जहां तह कौन सुधी सुख पावै  
 ॥ ६ ॥ पोषत तो दुख दोष करै अति सोपत  
 सुख उपजावै । दुर्जनदेहस्वभाव बराबर मूरख  
 प्रीति बढावै ॥ राचनजोग स्वरूप न याको वि  
 रचनजोग सही है । यह तन पाय महातप कीजै  
 यामै सार यही है । १०। भोग बुरे भवरोग बढा-  
 वै बैरी हैं जग जीके । बेरस होंय विपाक समय  
 अति सेवत लागै नीके ॥ वज्रअग्नि विषसे  
 विषधरसे ये अधिके दुखदाई । धर्मरतनके चोर  
 चपल अति दुर्गतिपंथ सहाई ॥ ११ ॥ मोहउ-  
 दय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जानै ।  
 ज्यों कोई जन खाय धतूरा सो सब कंचन मानै ॥

## सच्चा जिनवाणी संग्रह—



श्रीपाल समुद्रको भुजाओंस तैर कर पार कर रहे हैं।

(श्रीपाल पुराण)

मृच्छा जिनवाणी संग्रह—



मैनासुन्दरी श्रीपालको परदेश जानेसे रोक रही है ।

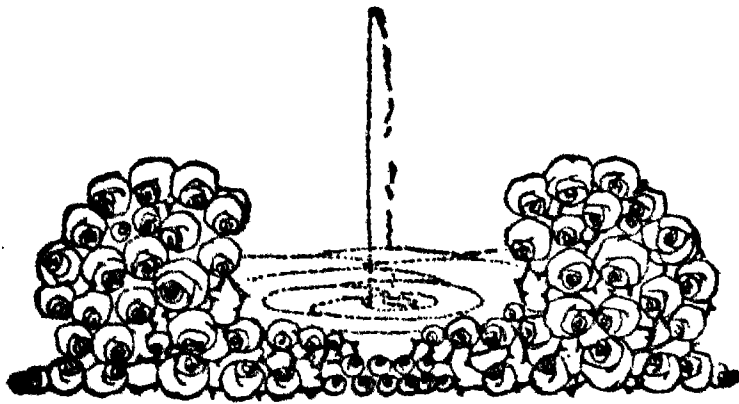
( श्रीपाल पुराण )

ज्यों ज्यों भोग सँजोग मनोहर मनवाँछित जन  
पावै । तृष्णा नागिन त्यों त्यों डंकै लहर जह-  
रकी आवै ॥ १२ ॥ मै चक्रीपद पाय निरंतर  
भोगे भोग घनेरे । तौ भी तनक भये नहिं पूरन  
भोग मनोरथ मेरे ॥ राजसमाज महा अधका-  
रण वैरबढावनहारा । वेश्यासम लछमी अति  
चंचल याका कौन पत्यारा ॥ १३ ॥ मोहमहा-  
रिपु बैर विचार्यो जगजिय संकट दारे ।  
घरकाराग्रह वनिता बेडी परिजन जन रखवा-  
रे ॥ सम्यकदर्शन ज्ञानचरण तप ये जियके हि-  
तकारी । येही सार असार और सब यह चक्री  
चितधारी ॥ १४ ॥ छोड़े चौदह रत्न नवोंनिधि  
अरु छोड़े संग सार्थी । कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े  
चौरासी लख हाथी ॥ इत्यादिक संपति बहुतेरी  
जीरणतृणसम त्यागी । नीति विचार नियोगी  
सुतकों राज दियो बड़भागी ॥ १५ ॥ होय  
निशल्य अनेक नृपति संग भूषण वसन उतारो ।  
श्रीगुरु चरणधरी जिनमुद्रा पंच महाव्रत धार

धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम, धनि यह  
धीरजधारी । ऐसी संपत्ति छोड बसे वन, तिन  
पद धोक हमारी ॥ १६ ॥ दोहा—

परिगहपोट उतार सब, लीनो चारित पंथ ।  
निज स्वभावमै थिर भये, वज्रनाभिनिश्रंथ ॥

इति श्री वज्रनाभि चक्रवर्तीकी वंराग्य भावना ।





**। कारहमावना जयचंद्रजीकृत**  
 दोहा—द्रव्यरूपकरि सर्वथिर, परजय थिर हैं  
 कौन । द्रव्यदृष्टि आपा लखो, पर्जय नयकरि  
 गौन ॥ १ ॥ शुद्धातम अरु पंच गुरु, जगमें  
 सरनौ दोय । मोह उदय जियके वृथा, आन  
 कल्पना होय ॥ २ ॥ परद्रव्यनतैं प्रीति जो, है  
 संसार अबोध । ताको फल गति चारमें, भ्रमण  
 कह्यो श्रुत शोध ॥ ३ ॥ परमारथतैं आतमा, एक  
 रूप ही जोय । कर्मनिमित विकल्प घने, तिन  
 नासे शिव होय ॥ ४ ॥ अपने अपने सत्वकूं,  
 सर्व वस्तु विलसाय । ऐसैं चितवै जीव तब,  
 परतैं ममत न थाय ॥ ५ ॥ निर्मल अपनी  
 आतमा, देह अपावन गेह । जानि भव्य निज  
 भावको, यासों तजो सनेह ॥ ६ ॥ आतम केवल  
 ज्ञानमय, निश्चय-दृष्टि निहार । सब विभाव परि  
 णाममय, आस्रव भाव विडार ॥ ७ ॥ निज  
 स्वरूपमें लीनता, निश्चय संवर जानि । समिति  
 गुप्ति संजम धरम, धरै पापकी हानि ॥ ८ ॥

संवरमय है आत्मा, पूर्व कर्म भड़ जाय । निज  
 स्वरूपको पायकर, लोक शिखर जब थाय ॥६॥  
 लोकस्वरूप विचारिकै, आत्मरूप निहार । पर-  
 मारथ व्यवहार मुणि, मिथ्याभाव निवारि । १०।  
 बोधि आपका भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहिं ।  
 भवमैं प्रापति कठिन है, यह व्यवहार कहाहिं । ११।  
 दर्शनज्ञानमय चेतना, आत्मधर्म वखानि ।  
 दयाक्षमादिक रत्नत्रय, यामैं गर्भित जान । १२।

### शैलहकारण भावना ।

चौपाई ।

आठदोषमद आठ मलीन, छह अनायतन  
 शठता तीन । ये पचीस मल वर्जित होय, दर्श-  
 विशुद्धिभावना सोय ॥ १ ॥ रत्नत्रयधारी मुनि-  
 राय, दर्शनज्ञान चरित समुदाय । इनकी विनय  
 विषै परवीन, दुतिय भावना सो अमलीन ॥२॥  
 शीलधारि धारै समचेत, सहस अठारह अंग स-  
 मेत । अतीचार नहिं लागै जहां, तृतीय भावना  
 कहिये तहां ॥ ३ ॥ आगमकथित अरथ अव-

धार, यथाशक्ति निजबुधि अनुसार । करै निरं-  
 तर ज्ञान अभ्यास, तुरिय भावना कहिये तास । ४  
 दोहा—धर्म धर्मके फलविषै, परतैं प्रीति विशेष ।  
 यही भावना पंचमी, लिखी जिनागम देख । ५।

चौपाई ।

औषधि अभय ज्ञान आहार, महादान ये चार  
 प्रकार । शक्ति समान सदा निर्वहै, छठी भावना  
 धारक वहै ॥ ६ ॥ अनसन आदि मुक्ति दातार,  
 उत्तम तप बारह परकार । बल अनुसार करै जो  
 कोय, सो सातमी भावना होय ॥ ७ ॥ यतीवर्ग  
 को कारन पाय, विघन होत जो करै सहाय ।  
 साधु समाधि कहावै सोय, यही भावना अष्टमि  
 होय ॥ ८ ॥ दशविध साधु जिनागम कहे, पथ  
 पीडित रागादिक गहे । तिनकी जो सेवा सत-  
 कार, यही भावना नौमी सार ॥ ९ ॥ परमपूज्य  
 आत्म अरहंत, अतुल अनंत चतुष्टयवंत ।  
 तिनकी श्रुति नित पूजा भाव, दशमि भावना  
 भवजलनाव ॥ १० ॥ जिनवरकथित अर्थ अव-

तार, रचना करै अनेक प्रकार । आचारजकी  
 भक्ति विधान, एकादशमि भावना जान ॥११॥  
 विद्यादायक विद्यालीन, गुणगरिष्ट पाठक पर-  
 वीन । तिनके चरन सदा चित रहै बहु श्रुत  
 भक्ति बारमी यहै ॥१२॥ भगवतभाषित अरथ  
 अनूप, गणधरग्रंथित ग्रंथ स्वरूप । तहां भक्ति  
 बरतै अमलान, प्रवचनभक्ति तेरमी जान  
 ॥ १३ ॥ षट आवश्यक क्रिया विधान, तिनकी  
 कबहूँ करै न हान । सावधान बरतै थित चित्त,  
 सो चौदहवीं परम पवित्त ॥ १४ ॥ कर जपतप  
 पूजाव्रत भाव. प्रगट करै जिनधर्मप्रभाव । सोई  
 मारगपरभावना. यही पंचदशमी भावना ॥१५॥  
 चार प्रकार संघसों प्रीति. राखै गाय वत्सकी  
 रीति । यह सोलहमी सब सुखदान. प्रवचन  
 वातसत्य अभिधान ॥ दोहा—

सोलह कारन भावना. परम पुण्यको खेत ।  
 भिन्न भिन्न अरु सोलहों. तीर्थकरपद देत ॥  
 बंध प्रकृति जिनमतविषै. कही एक सो बीस ।

सौ सतरह मिथ्यातमें. बांधत हैं निशदांस ॥  
 तीर्थकर आहार द्विक. तीन प्रकृति ये जान ।  
 इनको बंध मिथ्यातमें. कह्यो नहीं भगवान ॥  
 तातैं तीर्थकर प्रकृति. तीनों समकित माहिं ।  
 सोलहकारणसों बंधैं. शिवको निश्चय जाहिं ॥

सोरठा ।

पूज्यपाद मुनिराय. श्री सरवारथ सिद्धिमें ।  
 कह्यो कथन इस न्याय. देख लीजिये सुब्रधिजन ।

बारहभावना मंगतराय कृत ।

दोहा छंद ।

वंदूं श्री अरहंतपद, वीतराग विज्ञान ।  
 वरणूं बारह भावना, जगजीवनहित जान ॥१॥

विशुपद छंद ।

कहां गये चक्री जिन जीता, भरतखंड सारा ।  
 कहां गये वह राम रुलछमन, जिन रावन मारा ॥  
 कहां कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपति सग-  
 री । कहां गये वह रंगमहल अरु, सुवरनकी  
 नगरी ॥ २ ॥ नहीं रहे वह लोभी कौरव जूझ

मरे रनमें । गये राज तज पांडव वनको, अगि-  
न लगी तनमें ॥ मोहनीदसे उठ रे चेतन, तुझे  
जगावनको । हो दयाल उपदेश करें गुरु, बारह  
भावनको ॥ ३ ॥

१ । अधिर भावना ।

सूरज चांद छिपै निकलै ऋतु, फिर फिर कर  
आवै । प्यारी आयू ऐसी बीतै, पता नहीं पावै ॥  
पर्वतपतितनदी सरिता जल बहकर नहिं हटता,  
स्वाम चलत यों घटै काठ ज्यों, आरेसों कटता  
॥ ४ ॥ ओसबूंद ज्यों गलै धूपमें, वा अंजुलि  
पानी । छिन छिन यौवन छीन होत है क्या  
समझै प्रानी ॥ इंद्रजाल आकाश नगर सम  
जगमंपति सारी । अधिर रूप संसार विचारो  
सब नर अरु नारी ॥ ५ ॥

२ । अशरण भावना ।

कालसिंहने मृगचेतनको. घेरा भव वनमें ।  
नहीं बचावनहारा कोई. यों समझो मनमें ॥  
मंत्र यंत्र सेना धन संपत्ति, राज पाट छूटै ।

वश नहिं चलता काल लुटेरा. काय नगरि लूटै ।  
 चक्ररतन हलधरसा भाई. काम नहीं आया ।  
 एक तीरके लगत कृष्णकी विनश गई काया ॥  
 देव धर्म गुरु शरण जगतमें. और नहीं कोई ।  
 भ्रमसे फिरै भटकता चेतन. यूँही उमर खोई ॥

३ । संसार भावना ।

जनममरन अरु जरारोगसे. सदा दुखी रहता ।  
 द्रव्य क्षेत्र अरु कालभावभव. परिवर्तन सहता ॥  
 छेदन भेदन नरक पशूगति. बध बंधन सहना ।  
 रागउदयसे दुखसुरगतिमें. कहां सुखी रहना ॥  
 भोगि पुण्यफल हो इकइंद्री. क्या इसमें लाली ।  
 कुतवाली दिनचार वही फिर. खुरपा अरु जाली  
 मानुषजन्म अनेक विपतिमय. कहीं न सुख देखा  
 पंचमगति सुख मिलै शुभाशुभको मेटो लेखा ॥

४ । एकत्व भावना ।

जन्मै मरै अकेला चेतन. सुखदुखका भोगी ।  
 और किसीका क्या इक दिन यह. देह जुदी  
 होगी ॥ कमला चलत न पैड जाय मरघट तक

परिवारा । अपने अपने सुखको रोवें. पिता पुत्र  
 दारा ॥ १० ॥ ज्यों मेलमें पंथीजन मिलि नेह  
 फिरै धरते । ज्यों तरवरपै रैन वसेरा पंछी आ  
 करते ॥ कोस कोई दोकोस कोई उड फिर थक  
 थक हारै । जाय अकेला हंस संगमें. कोइ न  
 पर मारै ॥ ११ ॥

५ । भिन्न भावना ।

मोहरूप मृगतृष्णा जगमें मिथ्या जल चमकै ।  
 मृग चेतन नित भ्रममें उठ उठ, दौड़ें थक थककै ॥  
 जल नहिं पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता ।  
 वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता । १२ ।  
 तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड तू ज्ञानी ।  
 मिलेअनादि यतनतैं विछुडै, ज्यों पय अरु पानी ॥  
 रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना ।  
 जौलों पौरुष थकै न तौलों उद्यमसों चरना ॥

६ । अर्शाचि भावना ।

तू नित पोखै यह सूखै ज्यों, धोवै त्यां मैली ।  
 निश दिन करै उपाय देहका, रोगदशा फैली ॥



मातपितारज वीरज मिलकर, बनी देह तेरी ।  
 मांस हाड नश लहू राधकी, प्रघट व्याधि घेरी ॥  
 काना पौंडा पड़ा हाथ यह चूसै तौ रोवै ।  
 फलै अनंत जु धर्म ध्यानकी, भूमिविषै बोवै ।  
 केसर चंदन पुष्प सुगंधित, वस्तु देख सारी ।  
 देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ॥

७ । आस्रव भावना ।

ज्यों सरजल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मनको ।  
 दर्बित जीव प्रदेश गहै जब पुदगल भरमनको ॥  
 भावित आस्रवभाव शुभाशुभ, निशदिन चेतनको  
 पाप पुण्यके दोनों करता, कारण बंधनको ।१६।  
 पन मिथ्यात योग पंद्रह द्वादश अविरत जानो  
 पंचरु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो ॥  
 मोहभावकी ममता टारै, पर परणत खोते ।  
 करै मोखका यतन निरास्रव, ज्ञानी जन होंते ॥

८ । संवर भावना ।

ज्यों मोरीमें डाट लगावै, तब जल रुक जाना ।  
 ज्यों आस्रवको रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाता ॥

पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर वचन काय मनको  
 दशविधधर्म परीषहवाइस, बारह भावनको ।१८।  
 यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रवको खोते  
 सुपन दशामे जागो चेतन, कहां पडे सोते ॥  
 भाव शुभाशुभ रहित शुद्धभावनसंवर पावै ।  
 डांट लगत यह नाव पडी मझधार पार जावै ॥

६ । निर्जराभावना ।

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पडै भारी ।  
 संवर रोकै, कर्म निर्जरा, ह्वै सोखनहारी ॥  
 उदयभोग सविपाकसमय, पक जाय आम डाली ।  
 दूजी है अविपाक पकावै, पालविषै माली ॥  
 पहली सबके होय नहीं, कुछ सरै काम तेरा ।  
 दूजी करै जु उद्यम करके, मिटै जगत फेरा ॥  
 संवर सहित करो तप प्राणी, मिलै मुक्त रानी ।  
 इस दुलहिनकी यही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥

१० । लोक भावना ।

लोक अलोक अकाश माहिं थिर, निराधार जानो ।  
 पुरुषरूप कर कटी भये षट, द्रव्यनसों मानों ॥

इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है ।  
 जीवरु पुदगल नाचै यामै, कर्म उपाधी है ॥२३॥  
 पापपुन्यसों जीव जगतमें, नित सुखदुख भरता  
 अपनी करनी आप भरै शिर, औरनके धरता ॥  
 मोहकर्मको नाश मेटकर, सब जगकी आसा ।  
 निज पदमें थिर होय लोकके, शीश करो बासा ॥

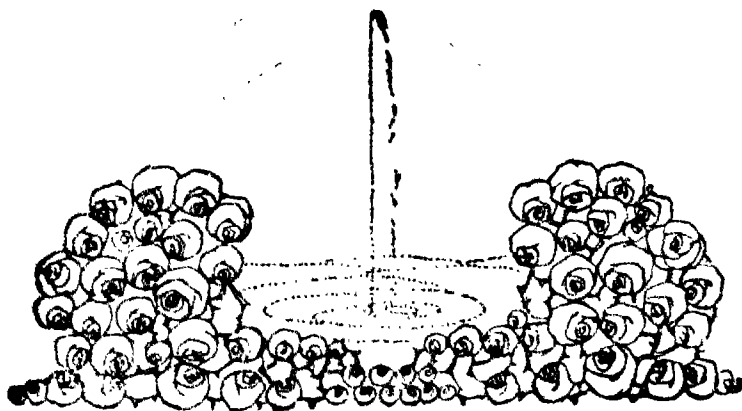
११ । बोधिदुरलभ भावना ।

दुर्लभ है निगोदसे थावर, अरु त्रसगति पानी ।  
 नरकायाको सुरपति तरसै सो दुर्लभ प्राणी ॥  
 उत्तम देश सुसंगति दुर्लभ, श्रावककुल पाना ।  
 दुर्लभ सम्यक दुर्लभ संयम, पंचम गुणठाना ॥  
 दुर्लभ रत्नत्रय आराधन दीक्षाका धरना ।  
 दुर्लभ मुनिवरको व्रत पालन, शुद्धभाव करना ॥  
 दुर्लभसे दुर्लभ है चेतन, बोधिज्ञान पावै ।  
 पाकर केवलज्ञान नहीं फिर इस भवमें आवै ॥

१२ । धर्मभावना ।

षट् दरशन अरु बौद्ध रु नास्तिकने जगको लूटा  
 मूसा ईसा और मुहम्मदका मजहब भूटा ॥

हो सुछंद सब पाप करै सिर, करताके लावै ।  
कोई छिनक कोई करतासे, जगमें भटकावै ॥  
वीतराग सर्वइ दोष विन, श्रीजिनकी बानी ।  
सप्त तत्वका वर्णन जाँमें, सबको सुखदानी ॥  
इनका चितवन बार बार कर, श्रद्धा उर धरना ।  
मंगल इसी जतनतैं इकदिन, भवसागरतरना ॥  
॥ इति सुलतानपुरनिवासी मंगतरायजीकृत बारह भावना ॥



## भाक्किनाद्वात्रिंशत्तिका ।

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं द्विष्टेषु जीवेषु कृपा-  
 परत्वं । मध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा  
 विदधातु देव ! ॥ १ ॥ शरीरतः कर्तुमनंतशक्तिं  
 विभिन्नमात्मानमपास्तदोषं । जिनेन्द्र कोषादिव  
 खड्गयष्टिं तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥ २ ॥  
 दुःखे सुखे वैरिणि बंधुवर्गे योगे वियोगे भुवने  
 वने वा । निराकृताशेषममत्वबुद्धेः समं मनो मे-  
 स्तु सदापि नाथ ॥ ३ ॥ मुनीश ! लीनाविव की-  
 लिताविव स्थिरौ निखाताविव विंबिताविव ।  
 पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा तमोधुना नौहृदि  
 दीपकाविव ॥ ४ ॥ एकेंद्रियाद्या यदि देव ! देहि  
 नः प्रमादतः संचग्ता इतस्ततः । क्षता विभिन्ना  
 मिलिता निपीडिता-स्तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं  
 तदा ॥ ५ ॥ विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्तिना मया  
 कषायाक्षवशेन दुर्धिया । चारित्रशुद्धेर्यदकारि  
 लोपनं तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥ ६ ॥  
 विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं, मनोवचःकायकषाय-

निर्मितं । निहन्मि पापं भवदुःखकारणं भिषग्विषं  
मंत्रगुणैरिवाखिलं ॥७॥ अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यति  
क्रमं जिनातिचारं सुचरित्रकर्मणः । व्यधामना-  
चारमपि प्रमादतः प्रतिक्रम तस्य करोमि शुद्धये  
।८। क्षतिं मनःशुद्धिविधेरतिक्रमं व्यक्तिक्रमं शी-  
लवृत्तेर्विलंघनं । प्रभोऽचितारं विषयेषु वर्तनं वदं-  
त्यनाचारमिहातिसक्ततां ॥९॥ यदर्थमात्रापद-  
वाक्यहीनं मया प्रमादाद्यदि किंचनोक्तं । तन्मे  
क्षमित्वा विदधातु देवी सरस्वती केवलबोधल-  
ब्धिं ॥ १० ॥ बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः  
स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः । चिंतामणिं  
चिंतितवस्तुदाने त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवि  
॥ ११ ॥ यः स्मर्यते सर्वमुनींद्रवृंदैर्यः स्तूयते  
सर्वनरामरेंद्रैः । यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः स  
देवदेवो हृदये ममास्तां ॥ १२ ॥ यो दर्शनज्ञान-  
सुखस्वभावः समस्तसंसारविकारबाह्यः । समा-  
धिगम्यः परमात्मसंज्ञः स देवदेवो हृदये ममा-  
स्तां ॥१३॥ निषूदते यो भवदुःखजालं निरीक्ष-

ते यो जगदंतरालं । योतर्गतो योगिनिरीक्षणीयः  
 स देवदेवो हृदये ममास्तां ॥१४॥ विमुक्तिमार्ग-  
 प्रतिपादको यो. यो जन्ममृत्युव्यसनाद्यतीतः ।  
 त्रिलोकलोकी विकलोऽकलंकः, स देवदेवो हृदये  
 ममास्तां ॥१५॥ क्रोडीकृताशेषशरीरिवर्गाः, रा-  
 गादयो यस्य न संति दोषाः । निरिन्द्रियो ज्ञान-  
 मयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्तां ॥१६॥  
 यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः. सिद्धो विबुद्धो  
 धुतकर्मबंधः । ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स  
 देवदेवो हृदये ममास्तां ॥ १७॥ न स्पृश्यते कर्म  
 कलंकदोषैः यो ध्वांतसंघैरिव तिग्मरश्मिः ।  
 निरंजनं नित्यमनेकमेकं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये  
 ॥ १८ ॥ विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्य-  
 माने भुवनावभासि । स्वात्मस्थितं बोधमयप्रकाशं  
 तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १९ ॥ विलोक्यमाने  
 सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विवक्तं  
 शुद्धं शिवं शांतमनाद्यनंतं, तं देवमाप्तं शरणं  
 प्रपद्ये ॥२०॥ येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा, विषाद-

निद्राभयशोकचिंता । क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपंचस्तं  
देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २१ ॥ न संस्तरोऽश्मा  
न तृणं न मेदिनी विधानतो नो फलक्रे विनि-  
र्मितः । यतो निरस्तक्षकषायविद्विषः सुधी-  
भिरात्मैव सुनिर्मतो मतः ॥ २२ ॥ न संस्तरो भद्र !  
समाधिसाधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनं ।  
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वा  
मपि बाह्यवासनां ॥ २३ ॥ न संति बाह्या मम  
केचनार्था भवामि तेषां न कदाचनाहं । इत्थं वि-  
निश्चित्य विमुच्य बाह्यं स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र  
मुक्त्यै ॥ २४ ॥ आत्मानमात्मन्यवलोक्यमान-  
स्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः । एकाग्रचित्तः खलु  
यत्र तत्र स्थितोपि साधुर्लभते समाधिं ॥ २५ ॥  
एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा विनिर्मलः साधि  
गमस्वभावः बहिर्भवाः संत्यपरे समस्ता न शा-  
श्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥ २६ ॥ यस्यास्ति  
नैक्यं वपुषापि सार्द्धं तस्यास्ति किं पुत्रकलत्र  
मित्रैः । पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः कुतो हि



तिष्ठति शरीरमध्ये ॥ २७ ॥ संयोगतो दुःखम-  
 नेकभेदं, यतोऽनुते जन्मवने शरीरी । ततस्त्रि-  
 धासौ परिवर्जनीयो, यियासुना निर्वृतिमात्मनी-  
 नां ॥ २८ ॥ सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं संसार-  
 कांतारनिपातहेतुं । विविक्तमात्मानमवैक्ष्यमाणो  
 निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ॥ २९ ॥ स्वयं कृतः  
 कर्म यदात्मना पुरा फलं तदीयं लभते शुभाशुभं ।  
 परेण दत्तं यदि लभ्यते, स्फुटं स्वयंकृतं कर्म निर-  
 र्थकं तदा ॥ ३० ॥ निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो  
 न कोपि कस्यापि ददाति किंचन । विचारयन्ने  
 वमनन्यमानसः परो ददातीति विमुच्य शेमुषीं  
 ॥ ३१ ॥ यैः परमात्मऽमितगतिबंधः सर्वविविक्तो  
 भृशमनवद्यः । अश्वदधीतो मनसि, लभंते मु-  
 क्तिनिकेतं विभववरं ते ॥ ३२ ॥ इति द्वात्रिंशति-  
 वृत्तैः परमात्मानमीक्षते । योऽनन्यगतचेतस्को,  
 यात्यसौ पदमव्ययं ॥ ३२ ॥

मेरी भावना ।

जिसने राग रोष कामादिक जीते, सबजग

जान लिया, सब जीवोंको मोक्षमार्गका निस्पृह  
 हो उपदेश दिया । बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर,  
 ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो, भक्ति-भावसे  
 प्रेरित हो यह चित्त उसीमें लीन रहो ॥ १ ॥  
 विषयोंकी आशा नहिं जिनके साम्य-भाव धन  
 रखते हैं, निजपरके हित-साधनमें जो निश-  
 दिन तत्पर रहते हैं । स्वार्थत्यागकी कठिन  
 तपस्या विना खेद जो करते हैं, ऐसे ज्ञानी साधु  
 जगतके दुखसमूहको हरते हैं ॥ २ ॥ रहै सदा  
 सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहै,  
 उन्ही जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहै ।  
 नहीं सताऊँ किसी जीवको, झूठ कभी नहिं  
 कहा करूँ, परधन वनितापर न लुभाऊँ, संतोषा-  
 मृत पिया करूँ ॥ ३ ॥ अहंकारका भाव न  
 रखूँ, नहीं किसीपर क्रोध करूँ । देख दूसरों-  
 की बढतीको कभी न ईर्ष्या-भाव धरूँ । रहै  
 भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूँ ।

---

\* १ । स्त्रियां 'वनिता' की जगह 'परनर' पढ़ा करे ।

बनै जहां तक इस जीवनमें औरोंका उपकार  
 करूं ॥४॥ मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जीवोंसे  
 नित्य रहै, दीन-दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणा-  
 स्रोत बहै। दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतोंपर क्षोभ नहीं  
 मुझको आवै, साम्यभाव रखूँ मैं उनपर, ऐसी  
 परिणति हो जावै ॥ ५ ॥ गुणीजनोंको देख  
 हृदयमें मेरे प्रेम उमड आवै, बनै जहांतक  
 उनकी सेवा करकै यह मन सुख पावै। होऊँ  
 नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवै,  
 गुण-ग्रहणका भाव रहै नित दृष्टि न दोषोंपर जावै  
 ॥६॥ कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवै या  
 जावै, अनेक वर्षों तक जीऊँ या मृत्यु आजही  
 आ जावै। अथवा कोई कैसा ही भय या लालच  
 देने आवै, तो भी न्यायमार्गसे मेरा कभी न पद  
 डिगने पावै ॥ ७ ॥ होकर सुखमें मग्न न फूलै  
 दुखमें कभी न घबरावै, र्वत-नदी-श्मशान-भ-  
 यानक अटवीसे नहिं भय खावै। रहै अडोल-  
 अकंप निरंतर यह मन दृढतर बन जावै, इष्टवि-

योग-अनिष्टयोगमें सहनशीलता दिखलावै । ८।  
 सुखी रहैं सब जीव जगतके कोई कभी न घब-  
 रावैं । बैर-भाव-अभिमान छोड जग नित्य नये  
 मंगल गावैं । घर घर चर्चा रहै धर्मकी दुष्कृत  
 दुष्कर हो जावैं, ज्ञान-चरित उन्नतकर अपने  
 मनुजजन्मफल सब पावैं ॥९॥ ईति-भीत व्यापै  
 नहिं जगमें वृष्टि समयपर हुआ करै, धर्मनिष्ठ  
 होकर राजाभी न्याय प्रजाका किया करै । रोग  
 बर्रा दुर्भिक्ष न फैले प्रजा शांतिसे जिया करै,  
 परम अहिंसा-धर्म जगतमें फैल सर्वहित किया  
 करै ॥१०॥ फैलै प्रेम परस्पर जगमें मोह दूरही  
 रहा करै, अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं कोई  
 मुखसे कहा करै । बनकर सब 'युगवीर' हृदयसे  
 देशोन्नतिरत रहा करै, वस्तुस्वरूपविचार खुशी-  
 से सब दुख-संकट सहा करै ॥ ११ ॥

## । जकडी रूपचंद्रकृत ।

राग गौड़ी ।

चेतन चिर भूल्यो भूम्यौ देख्यौ चित न विचारि ।  
करम कुसंगति बहि परयो इह भव-गहन मभारि ॥ इह भवगहनमभारि मूरख दुखदवानल  
नित दह्यौ । मिथ्यातापितसौं दिष्टि आई मुकति  
पंथ न तै लह्यौ ॥ तू पंच-इंद्री-सुखतृषा वसि  
विषय-खार-सलिल छम्यौ । निज सुख सुधार-  
सविमुख चहुंगति चेतन चिर भूल्यौ भूम्यौ । १।  
चहुंगति चिर भ्रमतहिं गयौ रहियौ कहुं न थि-  
राय । कर्मप्रकृतिपर्यो फिर्यो देख्यौ लोक शि-  
राय ॥ देखियौ लोकशिराय सबतैं ऊंच नीच  
परजै धरै । करम अरु नोकरमरूपी सकलपुद-  
गल आहरै ॥ परिनयौ परपरनति निरंतर काज  
कछु भूलि न भयौ । परम-रत्नत्रय-लबाधि बिनु  
चहुंगति चिर भ्रमतहिं गयौ ॥ २॥ गाफिल द्वैके  
कहा रह्यौ अपनी सुरत विसारि । विषय कषा-  
यनिरत भयौ दीने योग पसारि ॥ दीने नियोग

पसारि तीनों, सुभासुभरसपरिनयौ । आश्रये  
 संतत करम बहु विधि, तोहि तिनि आवरिलयो ॥  
 जिय कञ्च सुधिबुधि तोहि नार्हीं, मूढमोहग्रहानि  
 गह्यौ । गुन सील सरवस खोय अपनौ गाफिल  
 ह्यै कहा रहयो ॥ ३ ॥ चेति चतुरमति चेतना  
 परपरनतिहिं निवारि । दर्शनज्ञानचरित्रमय अ-  
 पनी वस्तु सँभारि ॥ अपनी वस्तु सँभारि विसरी  
 कहा इत उत भटक ही । वहिरमुख भूल्यो भैया  
 कत, छोडि कन तुष भटकही ॥ निजवस्तु अंत-  
 रगत विराजित, चिदानंदनिकेतना । स्वानुभव  
 बुद्धि प्रजुंजि देखहि चेति चतुरमतिचेतना ॥४॥  
 इह संसारकुवासतैं, दुख देखे चिरकाल । अब तू  
 यातैं विरचकरि, छोडि सकल भ्रमजाल ॥ छोडि  
 सकल भ्रमजाल चेतन, रतनत्रय आराध ही ॥  
 आपुने बलहिं सँभार अतिबल, करम-वैरिनि सा  
 ध ही । समरसांभात्र सुभावपरनति, सदारहहि

उदासतैं । रूपचंद, सहजहीं छूटहि. इह संसार-  
कुवासतैं ॥ ५ ॥

### जकड़ी दौलतरामकृत ।

अब मन मेरा बे. सीखवचन सुन मेरा । भजि  
जिनवर पद बे. ज्यों विनसै दुख तेरा ॥ विनसै  
दुख तेरा भववनकेरामनवचतन जिनचरन भजौ  
पंचकरनवश राखै सुज्ञानी. मिथ्यामतमग-दौर  
तजौ । मिथ्यामतमग पगि अनादितैं. तैं चहुंगति  
कीन्हा फेरा । अबहू चेत अचेत होय मत, सीख  
वचन सुन मनमेरा । १ । इस भववनमें बे तैं साता  
नहिं पाई । वसुविधिवश है बे, तैं निजसुधि वि-  
सराई ॥ तैं निजसुधि विसराई भाई, तातैं विमल  
न बोध लहा । परपरनतिमें मगन भयो तू, जन्म  
जरा. मृत. दाह. दहा ॥ जिनमत सारसरोवरकों  
अब, -गाहि लागि निजचिंतनमें । तो दुखदाह  
नशै सब नातर, फेर फंसै इस भववनमें ॥ २ ॥

संसाररूपी बनका । २. पांच इन्द्रियां । ३ आठ कर्मों के बन्ध  
होकर ।

इस तनमें तू बे, क्या गुन देख लुभाया । महा  
 अपावन बे, सतगुरु याहि बताया ॥ सतगुरु याहि  
 अपावन गाया, मलमूत्रादिकका गेहा । कृमिकुल  
 कलित लखत धिन आवै, यासौं क्या कीजै नेहा ॥  
 यह तन पाय लगाय आपनी, परनति शिवमग-  
 साधनमें । तो दुखदंद नशै सब तेरा, यही सार है  
 इस तनमें ॥३॥ भोग भले न सही, रोग शोकके  
 दानी । शुभगतिरोकन बे दुर्गतिपथ अगवानी ॥  
 दुर्गतिपथ अगवानी हैं जे, जिनकी लगन लगी  
 इनसौं । तिन नानाविध विपति सही है, विमुख  
 भयौ निजसुख तिनसौं ॥ कुंजर भख अलि  
 शलभ हिरन इन, एक अक्षवश मृत्यु लही ।  
 यातैं देख समझ मनमांहीं, भवमें भोग भले न  
 सही ॥ ४ ॥ काज सरै तब बे, जब निजपद  
 आराधै । नशै भवावलि बे निरावाधपद लाधै ॥  
 निरावाधपद लाधै तब तोहि, केवलदर्शनज्ञान



जहां । सुख अनंत अति इंद्रियमंडित, वीरज  
अचल अनंत तहां ॥ ऐसा पद चाहै तो भज  
निज बार बार अब को उचरै । दौल; मुख्य  
उपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥५॥

। जकडी दौलतरामकृत ।

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं शारद अंबा चित  
लाऊं । द्वैविधि-परिग्रह-परिहारी, गुरु नमहुं स्व-  
पर हितकारी ॥ हितकारि ताकर देव श्रुत गुरु-  
परख निजउर लाइये । दुखदायकुपथविहाय  
शिवसुख-दाय जिनवृष ध्याइये । चिरतैं कुमग-  
पगि मोहठगकरि ठग्यौ भव-कानन पर्यौ ।  
व्यालीसाद्विकलख जौनिमें जरं-मरन-जामनदव-  
जर्यौ ॥१॥ जब मोहरिपु दीन्हीं घुमरिया तस-  
वश निगोदमें परिया । तहां स्वास एककेमाहीं  
अष्टादश मरन लहाहीं ॥ लहि मरन अंतमुहूर्तमें  
छयासठ सहस शत तीन ही । षटतीस काल

५ "जिन, भी पाठ है । ६ चौरासी लाख योनि । • वृद्धावस्था,  
और जन्मरूपो अग्निमें जला ।

अनंत यों दुख सहे उपमा ही नहीं ॥ कबहू लहो  
 वर आयु छिति जल-पवन-पावक तरुतणी । तस  
 भेद किंचित कहूं सो सुन कह्यौ जो गौतमगणी  
 ॥ २ ॥ पृथिवी द्वयभेद बखाना मृदु माटी-  
 कठिन पखाना । मृदु द्वादशसहस बरसकी पाहन  
 बाईस सहसकी ॥ पुनि सहस सात कही उर्दक  
 त्रय सहसवर्ष समीरकी । दिन तीन पावक दश  
 सहस तरु प्रभृति नाश सुपीरकी ॥ विनघात  
 सूक्ष्म देहधारी घातजुत गुरुतन लह्यौ । तहें  
 खनन तापन जलन व्यंजन छेद-भेदन दुख स  
 ह्यौ । ३। शंखादि दुइंद्री प्राणी थिति द्वादशवर्ष  
 बखानी ॥ यूकांदि तिइंद्री हैं जे वासर उनचास  
 जैय ते ॥ जीवै अमास अलीप्रमुख व्यालीस  
 सहसउरगतनी । खगकी बहत्तरसहस नवपूर्वांग  
 सरिसृपकी भनी ॥ नरमत्स्यपूरवकोटकी थिति  
 करमभूमि बखानिये । जलचराविकलाविन भोग-

१ पृथ्वी । ६ पानी । ७ जूं आदि ।

भू-नर.-पशु त्रिपल्य प्रमानिये ॥ ४ ॥ अघवश  
 करि नरक वसेरा. भुगतेँ तहँ कष्ट घनेरा । छेदें  
 तिलतिल तन सारा. छेपें द्रहपूतिमझारा ॥  
 मझार वज्रानिल पचावें. धरहिं शूली ऊपरें ।  
 सींचें जु खारे वारिसौंदुठ. कहैं व्रण नीके करैं ॥  
 वैतरणिसरिता समलजल अति दुखद तरुसेवल  
 तने । अति भीमवन असिक्रांत समदलें. लगत  
 दुख देवें घने ॥ ५ ॥ तिस भूमैं हिम गरमाई.  
 सुरगिरिसम अस गल जाई । तामें थिति सिंधु  
 तनी है. यों दुखदनरक अवनी है ॥ अवनी त-  
 हांकी तें निकसि. कबहू जनम पायौ नरौ । स-  
 वांग सकुचित अति अपावन. जठरजननीके प-  
 रौ ॥ तहँ अधोमुख जननीरसांश. थकी जियौ  
 नव मास लौं । ता पीरमें कोउ सीर नाहीं. सहै आप  
 निकस लौं ॥ ६ ॥ जनमत जो संकट पायौ,  
 रसनातें जात न गायौ । लहिबालपने दुखभारी.

१ भोगभूमिया मनुष्य और पशु । २ दुर्गधिके भरे तालाब ।  
 ३ फोड़े । ४ तलवारकी धार । ५ पत्ते । ६ लोहा । ७ पृथ्वी ।

तरुनापौ लयौ दुखकारी ॥ दुखकारि इष्ट  
 वियोग अशुभ. सँयोग सोग सरोगता । परसेव  
 ग्रीषमसीतपावस. सहै दुख अतिभोगता ॥ का-  
 हू कुतियँ काहू कुबांधव. कहुं सुता व्यभिचा-  
 रिणी । किसहू विसनै-रत पुत्र दुष्ट. कलत्र  
 कोऊ पररिणी ॥ ७ ॥ वृद्धापनके दुख जेते.  
 लखिये सब नयननतैँ ते । मुख लाल बहै तन  
 हालै. विनशक्ति न वसन सँभालै ॥ न संभाल  
 जाके देहकी तो कहो वृषकी का कथा । तबही  
 अचानक आन जम गहै. मनुजजन्म गयौ वृथा ॥  
 काहू जनम शुभ ठान किंचित. लह्यो पद चउ-  
 देवको । अँभियोग किर्लिष नाम पायौ. सह्यौ  
 दुख परसेवको ॥ ८ ॥ तहँ देख महा सुररिद्धी.  
 झूरयो विषयनकरि गृद्धी । कबहूँ परिवार  
 नसानौ. शोकाकुल ह्वै विललानौ ॥ विललाय  
 आति जब मरन निकट्यौ. सह्यो संकट मानसी

---

१ दूसरोंकी सेवा नौकरी । २ दुष्ट स्त्री । ३ व्यसनी । ४ स्त्री ।  
 ५ धर्मकी । ६ चारप्रकारके देव । ७—८ देवोंमें अभियोग  
 और किर्लिष एक प्रकारके नीचे सेवकोंके समान देव होते हैं ।

सुरविभव दुखद लगी तबै जब, लखी मॉल  
 मलानँसी ॥ तबही जु सुर उपदेशहित समु-  
 भाइयौ समुझ्यौ न त्यों । मिथ्यात्वजुत व्युत  
 कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यों ॥६॥ यों  
 चिर भव-अटवी गाही, किंचित साता न लहाही ।  
 जिन कथित धरम नहिं जान्यो, परमाहिं अप-  
 नपो मान्यो ॥ भान्यो न सम्यक त्रयातम आतम  
 अनातममें फँस्यो । मिथ्या-चरण दृग्ज्ञान रंज्यौ  
 जाय नवग्रीवक वस्यो ॥ पै लह्यो नहिं जिन-  
 कथित शिवमग वृषा भूम भूल्यो जिया । वि-  
 दभावके दरसावबिन सब गये अहँले तपकिया  
 ॥१०॥ अब अद्भुत पुण्य उपायो, कुलजात  
 विमल तू पायो । यातैं सुन सीख सयाने, विष-  
 यनसौं रति मत ठाने ॥ ठाने कहा रतिविषयमें  
 ये विषम विषधरमम लखो । यह देह मरत  
 अनंत इनकौं—त्यागि आतमरस चखो ॥ या  
 रसरामिकजन बसे शिव अब—वसैं पुनि बसि

६ सुरझानी हुई । ७ व्यर्थ ।

हैं सही । 'दौलत' स्वरचि परविरचि सतगुरु-  
सीख नित उर धर यही ॥

। जकड़ी भूधरकत ।

अब मन मेरे बे, सुन सुन सीख सयानी। जिन-  
वर चरना बे, कर कर प्रीति सुज्ञानी ॥ करप्रीति  
सुज्ञानी शिवसुखदानी, धन जीतब है पंचदिना ।  
कोटिबरसजीवौ किसलेखे, जिनचरणांबुज भक्ति  
विना ॥ नरपरजाय पायअति उत्तम गृहबसि यह  
लाहा लेरे । समझ समझ बोलें गुरुज्ञानी, सीख  
सयानी मन मेरे ॥१॥ तू मति तरसै बे, संपति  
देख पराई । बोये लुनि ले बे, जो निज पूर्वक-  
माई ॥ पूर्वकमाई संपति पाई देखि. देखि मति  
झूर मरै । बोय बँबूल शूल तरु भांदू, आमनकी  
क्यों आस करै ॥ अब कछु समझ-बूझ नर तासौ  
ज्यौं फिर परभव सुख दरसै । कर निज-ध्यान  
दान तप संजम देखि विभवपर मत तरसै ॥२॥  
जो जगदीसै बे, सुंदर अर सुखदाई । सो सब  
फालिया बे. धरम-कल्पद्रुम भाई ॥ सो सब धर्म

कल्पद्रुमके फल, रथ पायक बहु रिद्धि सही ।  
 तेज तुरंग तुंग गज नौ निधि, चौदह रतन छ-  
 खंड मही ॥ रति उनहार रूपकी सीमा सहस  
 छ्यानवै नारि वरै । सो सब जान धर्मफल भाई  
 जो जग सुंदरि दृष्टि परै ॥३॥ लगैं असुंदर बे,  
 कंटकबान घनेरे । ते रस फालिया बे, पापकनक-  
 तरुकेरे ॥ ते सब पापकनकतरुके फल, रोग  
 सोग दुख नित्य नये । कुथित शरीर चीर नहिं  
 तापर, घरघर फिरत फकीर भये ॥ भूख प्यास  
 पीडै कन मांगै, होत अनादर पगपगमें । ये पर-  
 तच्छ पापसंचितफल, लगैं असुंदर जे जगमें । ४।  
 इस भववनमें बे, ये दोऊ तरु जाने । जो मन  
 मानै बे, सोई सींच सयाने ॥ जो सींच सयाने जो  
 मन मानै, बेर बेर अब कौन कहै । तू करतार  
 तुही फल भोगी, अपने सुख दुख आप लहै ॥  
 धन्य धन्य जिनमारग सुंदर, सेवनजोग तिहुं-  
 फनमें । जासों समुझि परै सब 'भूधर' सदा श-  
 रण इस भववनमें ॥ ५ ॥

## । जकड़ी रामकृष्णकृत ।

अरहंतचरन वितलाऊं । पुन सिद्ध शिवंकर  
 ध्याऊं ॥ बंदों जिनमुद्राधारी । निर्ग्रथ यती अ-  
 विकारी ॥ अविकार करुणावंत बंदों, सकललो-  
 कशिरोमणी । सर्वज्ञभाषित धर्म प्रणमूं, देय सुख  
 संपत्ति घनी । ये परममंगल चार जगमें, चारु  
 लोकोत्तम सही । भवभ्रमत इस असहाय जिय-  
 को, और रक्षक कोउ नहीं ।१। मिथ्यात्व महा-  
 रिपु दंड्यो । चिरकाल चतुर्गति हंड्यो ॥ उप-  
 योग-नयन-गुन खोयौ । भरि नींद निगोदे सोयौ ।  
 सोयौ अनादि निगोदमें जिय, निकर फिर  
 थावर भयो । भू तेज तोय समीर तरुवर, थूल-  
 सूच्छमतन लयौ ॥ कृमि कुंथु अलि सैनी असैनी  
 न्योम जल थल संचन्यौ । पशुयोनि बासठलाख  
 इसविध, भुगति मर मर अवतन्यौ ॥२॥ अति  
 पाप उदय जब आयौ । महानिंद्य नरकपद पायौ ।  
 थिति सागरोंबंध जहां है । नाना विध कष्ट तहां  
 है ॥ है त्रास अति आताप वेदन, शीत-बहुयुत



है नहीं । जहं मार मार सदैव सुनिये, एक क्षण  
 साँता नहीं । मारक परस्पर युद्ध ठान, असुर-  
 गण क्रांड़ाकरें । इमविध भयानक नरकथानक,  
 सहैं जी परवश परें ॥३॥ मानुषगतिके दुख  
 भूल्यो । बसि उदर अधोमुख भूल्यो ॥ जनमत  
 जो संकट सेयां । अविवेकउदय नहिं बेयो ॥ बेयो  
 नकछुलघुबालवयमैं, वंशतरुकोंपल लगी । दल-  
 रूप यौवन वयस आयो, काम-दौ-तव उर जगी ॥  
 जब तन बुढापो घट्यो पौरुष, पान पकि पीरो  
 भयो । झडि पन्यौ काल-बयार बाजत, बादि  
 नरभव यौं गयो ॥४॥ अमरापुरके सुख कीने ।  
 मनवांछित भोग नवीने ॥ उरमाल जबै मुर-  
 ज्ञानी । विलप्यो आसन-मृतु जानी ॥ मृतु  
 जान हाहाकार कीनों, शरण अब काकी गहौं ।  
 यह स्वर्गसंपति छोड अब मैं, गर्भवेदन क्यों सहौं ॥  
 तब देव मिलि समुझाइयो, पर कछु विवेक न  
 उर बस्यो । सुरलोक-गिरिसों गिरि अज्ञानी,  
 कुमति-कादौं फिर फँस्यो ॥ ५ ॥ इहविध इस

मोही जीनें । परिवर्तन पूरे कीनें ॥ तिनकी बहु  
 कष्ट कहानी । सो जानत केवलज्ञानी ॥ ज्ञानी  
 विना दुख कौन जानें, जगत-वनमें जो लह्यो ।  
 जरजन्ममरणस्वरूप तीछन, त्रिविध दावानल  
 दह्यो ॥ जिनमतसरोवरशीतपर अब, बैठ तपन  
 बुझाय हो । जिय मोक्षपुरकी बाट बूझौ, अब न  
 देर लगाय हो ॥६॥ यह नरभव पाय सुज्ञानी ।  
 कर कर निजकारज प्रानी ॥ तिर्जचयोनि जब  
 पावै । तब कौन तुझै समझावै ॥ समुझाय गुरु  
 उपदेश दीनो, जो न तेरे उर रहै । तो जान  
 जीव अभाग्य अपनो, दोष काहूको न है ॥ सू-  
 रज प्रकाशै तिमिर नाशै, सकल जगको तम  
 हरै । गिरि-गुफा-गर्भ-उदोत होत न, ताहि  
 भानु कहा करै । ७। जगमाहिं विषयवन फूल्यो ।  
 मनमधुकर तिहिंविच भूल्यो ॥ रसलीन तहां  
 लपटान्यो । रस लेत न रंच अघान्यो ॥  
 न अघाय क्यों ही रमें निशिदिन, एक छन  
 भी ना चुकै । नहिं रहै बरज्यो बरज देख्यो,

बार बार तहां ठुकै ॥ जिनमतसरोज-सिधांतसुं-  
 दर, मध्य याहि लगाय हो । अब 'रामकृष्ण'  
 इलाज याकौ, किये ही सुखपाय हो ॥ ८ ॥

### शारदास्तवन प्रभाती ।

केवलिकन्ये वाङ्मय गंगे, जगदंबे अघनाश हमारे ।  
 सत्य स्वरूपे, मंगलरूपे मनमंदिरमें तिष्ठ हमारे  
 ॥टेक॥ जंबूस्वामी गौतम गणधर, हृये सुधर्मा पुत्र  
 तुम्हारे । जगत्तै स्वयं पार है करके दे उपदेश बहुत  
 जन तारे ॥ १ ॥ कुंदकुंद अकलंकदेव अरु, विद्या-  
 नंदिआदिमुनि सारे । तब कुलकुमुद चंद्रमा ये  
 शुभ, शिक्षामृत दे स्वर्ग सिधारे ॥२॥ तूने उत्तम  
 तत्त्व प्रकाशे, जगके भ्रम सब क्षयकर डारे । तेरी  
 ज्योति निरख लज्जा बश, रविशशि छिपते नित्य  
 विचारे ॥ भवभय पीडित व्यथित चित्त जन, जब जो  
 आये सरन तिहारे, छिनभरमें उनके तब तुमने, करु-  
 णाकरि संकट सब टारे ॥४॥ जबतक विषय कषाय  
 नशै नहिं, कर्मशत्रु नहिं जाय निवारे । तबतक  
 'ज्ञानानंद' रहै नित, सब जीवनतै समता धारे ॥५॥

## १ ज्ञानपङ्क्तिर्सी १

सुरनरतिरियगयोनिमै. नरकनिगोदभमंत । म-  
 हामोहकी नींदसों, सोये काल अनंत ॥१॥ जैसें  
 ज्वरके जोरसों, भोजनकी रुचि जाय । तैसें कुक-  
 रमके उदय. धर्मवचन न सुहाय ॥ २ ॥ लगै  
 भूख ज्वरके गये. रुचिसों लेय अहार । अशुभ  
 गये शुभके जगे, जानै धर्म विचार ॥३॥ जैसें  
 पवनझकोरतैं, जलमैं उठै तरंग । त्यों मनसा  
 चंचल भई, परिगहके परसंग ॥४॥ जहां पवन-  
 नहिं संचरै, तहां न जलकल्लोल । त्यों सब परि  
 गह त्यागतैं मनसा होय अडोल ॥ ५ ॥ ज्यों  
 काहू विपधर डसै. रुचिसों नीम चबाय । त्यों  
 तुम ममतासों मढे. मगन विषयसुख पाय ॥६॥  
 नीम रसन परसै नहीं, निर्विष तन जब होय ।  
 मोह घटै ममता मिटै. विषय न बांछै कोय ।७।  
 ज्यों सछिद्र नौका चढे. बूडहि अंध अदेख । त्यों  
 तुम भवजलमैं परे, विनविवेक धर भेख ॥ ८ ॥  
 जहां अखंडित गुण लगै, खेवट शुद्धविचार ।

आतमरुचिनौका चढे, पावहु भवजलपार ॥१॥  
 ज्यों अंकुश मानै नहीं. महामत्त गजराज । त्यों  
 मन तृष्णामैं फिरै, गिनै न काज अकाज ।१०।  
 ज्यों नर दाव उपायकैं, गहि आनै गज माधि ।  
 त्यों या मनवश-करनकों. निर्मल ध्यान-समा-  
 धि ॥११॥ तिमिररोगसों नैन ज्यों, लखै औ-  
 रको और । त्यों तुम संशयमें परे. मिथ्यामतिकी  
 दौर ॥ १२ ॥ ज्यों औषध अंजन किये. तिमिर  
 रोग मिट जाय । त्यों मतगुरुउपदेशतैं. संशय  
 वेग विलाय ॥१३॥ जैसें सब यादव जरे, द्वा-  
 रावतिकी आगि । त्यों मायामैं तुम परे, कहां  
 जाहुगे भागि ॥ १४ ॥ दीपायनसों ते बचें. जे  
 तपसी निरग्रंथ । तजि माया समता गहो, यहै  
 मुक्तिको पंथ ॥ १५ ॥ ज्यों कुधातुके फेंटमों  
 घटबढ कंचनकांति । पापपुण्यकर त्यों भये, मूढा-  
 तम बहुभांति ॥१६ ॥ कंचन निजगुण नहिं त-  
 जै. हीन बानके होत । घटघटअंतर आतमा.  
 महज्जस्वभाव उदोत ॥ १७ ॥ पन्नापीट पकाडये

शुद्ध कनक ज्यों होय । ल्यों प्रघटै परमात्मा-  
 पुण्यपापमल खोय ॥१८॥ पर्वराहुके ग्रहणसों  
 सूरसोम छविछीन । संगति पाय कुसाधुकी-स-  
 ज्जन होय मलीन ॥१९॥ निंबादिक चंदन करै  
 मलयाचलकी बास । दुर्जनतैं सज्जन भये, रहत  
 साधुके पास ॥ २० ॥ जैसे ताल सदा भरै, जल  
 आवै चहुंओर । तैसें आस्रवद्वारसों, कर्मबंधको  
 जोर ॥ २१ ॥ ज्यों जल आवत मूंदिये. सूखै  
 सरवरपानि । तैसें संवरके किये. कर्मनिर्जरा  
 जानि ॥२२॥ ज्यों बूटीसंयोगतैं. पारा मूर्छित  
 होय । ल्यों पुदगलसों तुम मिले. आत्मशक्ति  
 समोय ॥ २३ ॥ मेलिखटाई माजिये. पारा पर-  
 घट रूप । शुक्लध्यान अभ्यासतैं. दर्शन ज्ञान अ-  
 नूप ॥ २४ ॥ कहि उपदेश 'वनारसी' चेतन  
 अब कछु चेत । आप बुझावत आपको, उदय-  
 करनके हेत ॥ २५ ॥

**धर्म फन्कीसी ।**

भव्यकमल रवि सिद्ध जिन, धर्मधुरंधर धीर ।

नमूं सदा जग-त्तमहरण, नमूं त्रिविध गुरुवीर ॥

चौपाई १५ मात्रा ।

मिथ्याविषयनमें रत जीव । तातैं जगमें भ्रमहिं  
सदीव ॥ विविधप्रकार गहै परजाय । श्रीजिन-  
धर्म न नेक गुहाय ॥ २ ॥ धर्मविना चहुंगतिमें  
फिरै । चौरासी लख फिर फिर धरै ॥ दुखदावा-  
नलमाहिं तपंत । कर्म करै मुख भोग लहंत । ३।  
अति दुरलभ मानुष परजाय । उत्तम धनकुल रो-  
ग न काय ॥ इस अवसरमें धर्म न करै । फिर  
यह अवसर कब को वरै ॥ ४ ॥ नरकी देह पा-  
य रे ! जीव । धर्म विना पशु जान सदीव ॥  
अर्थकाममें धर्म प्रधान । ता विन अर्थ न काम  
न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत । शु-  
भसंगम आवै कर प्रीत ॥ विघन हरै सब का-  
रज सरै । धनसों चारों कोने भरै । ६। जन्मज-  
रामृतके वश होय । तिहूंकाल जग डोलै सोय ॥  
श्रीजिनधर्मरसायनपान । कबहुं न रुचि उपजै  
अज्ञान ॥ ७ ॥ जो कोई मूरखजन होय । गहै

हलाहल अमृत खोय ॥ त्यों शठ धर्मपदारथ  
 त्याग । विषयनों ठानै अनुराग ॥८॥ मिथ्या  
 ब्रह्मगहिया जो जीव । छांडि धर्म विषयनचित  
 दीव ॥ ज्यों सठ कल्पवृक्षको तोड । वृक्ष धतूरे-  
 के बहुजोड ॥९॥ नरदेही जानो परधान । विसर  
 विषय, कर धर्म सुजान ! ॥ त्रिभुवनइंद्रतने सु-  
 खभोग । पूजनीक हो इंद्रनजोग ॥ १० ॥ चंद्र-  
 विनानिश गजविनदंत । जैमें तरुणनारि विन-  
 कंत ॥ धर्मविना त्यों मानुषदेह । तातें करिये  
 धर्मसनेह ॥११॥ हय गय रथ पायक बहुलोग ।  
 सुभट बहुतदल चमर मनोग ॥ धुजा आदि रा-  
 जाविन जान । धर्म विना त्यों नरभव मान ॥१२॥  
 जैमें गंध विना है फूल । नीरविहीन सरोवर  
 धूल ॥ ज्यों धनविन शोभित नहिं भौन । धर्म  
 विना नर त्यों चिंतौन ॥ १३॥ अरचै सदा देव  
 अरहंत । चरचै गुरुपद करुणावंत ॥ खरचै  
 दान धर्मसों प्रेम । न रचै विषय सकल नर एव  
 ॥ १४ ॥ कमला चपल रहै थिर नाय । यौवन



कांति जरा लपटाय ॥ सुत मित नारी नावसँजो-  
 ग । यह संसार सुपनका भोग ॥ १५ ॥ यह  
 लखि चितधर शुद्ध सुभाव । कीजे श्रीजिनधर्म  
 उपाव ॥ यथाभाव जैसी गति गहै । जैमी गत  
 तैसा सुख लहै ॥ १६ ॥ जो मूरख बुद्धी-  
 करहीन । विषयपंथरत व्रत नहिं कीन ॥  
 श्रीजिनभाषित धर्म न गहै ॥ जैमी गत  
 तैसा सुख लहै ॥ १७ ॥ आलममंद बुद्धि है  
 जास । कपटी मगन-विषय मठ ताम ॥ कायगना  
 नहिं परगुण ठकै । सो तिर्यचजोन लहि थकै  
 ॥ १८ ॥ आरतरौद्रध्यान नित करै । क्रोधादिक  
 मच्छरता धरै ॥ हिंसक वैरभाव अनुमरै । सो  
 पापिष्ठ नरकगति परै ॥ १९ ॥ कपट हीन करु-  
 णा चितमाहिं । हेय उपादे भूलै नाहिं । भक्तिवंत  
 गुणवंत जु कोय । सरल सुभाव सुमानुष होय  
 ॥ २० ॥ श्रीजिनवचनमगन तपदान । जिन-  
 पूजै दे पात्रहिं दान ॥ रहै निरंतर विषयउदास ।  
 सोही लहै सुरग आवास ॥ २१ ॥ मानुषजोन

अंतकी पाय । सुन जिनवचन विषय विसराय ॥  
 गहै महाव्रत दुर्द्धर वीर । शुक्लध्यानथिर लह  
 शिव धीर ॥२२॥ धर्म करत सुख होय अपार ।  
 पाप करत दुख विविधप्रकार ॥ बालगुपाल कहैं  
 नर नारि । इष्ट होय सोई अवधारि ॥ २३ ॥  
 श्रीजिनधर्म मुक्तिदातार । हिंसाकर्म बढइ सं-  
 सार ॥ यह उपदेश जान बडभाग । एकं धर्मसों  
 कर अनुराग ॥ २४ ॥ व्रतसंजम जिनपद थुति  
 सार । निर्मल सम्यकभाव जु धार । अंतकषाय  
 विषयकृष करो । जो तुम मुक्तिकामिनी वरो  
 ॥ २५ ॥ दोहा—

बुधकुमदनिशशिसुखकरन, भवदुखसागरजान  
 कहैं ब्रह्म जिनदास यह, ग्रंथ धर्मकी खान ॥२६॥  
 द्यानत जे बांचै सुनै, मनमें करै उछाह ।  
 ते पावै सुखसास्वते, मनवांछित फललाह ॥२७॥

। अध्यात्मपंचासिका ।

दोहा ।

आठ कर्मके बंधतैं, बँधै जीव भववास । कर्म

हरे सब गुण भरे, नमों सिद्धि सुखरास ॥ १ ॥  
 जगतमाहिं चहुंगति विषै जन्ममरणवश जीव ।  
 मुक्तिमाहिं तिहुंकालमें. चेतन अमर सदीव । २ ।  
 मोक्षमाहिंसेती कभी, जगमें आवै नाहिं । जगके  
 जीव सदीव ही. कर्मकाट शिवजाहिं ॥ ३ ॥ पूर्व  
 कर्मउद्योगतें. जीव करै परिणाम । जैसें मदिरा  
 पानतें, करै गहल नर काम ॥ ४ ॥ तातें बांधै कर्म  
 को, आठ भेद दुखदाय । जैसें चिकने गातमें  
 घूलिपुंज जमजाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मनके  
 उदय, करै जीव बहु भाय । फिरके बांधै कर्मको.  
 यह संसारसुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावनतें पुण्य  
 है, अशुभभावतें पाप । दुहूंअछादित जीव सो  
 जान सकै नहिं आप ॥ ७ ॥ चेतनकर्मअनादि-  
 के, पावक काठ बखान । छीरनीर तिलतेल ज्यों  
 खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल बँध्यो गठड़ी-  
 विषै. भानु छिप्यो घनमाहिं । सिंह पींजरें दि-  
 यो, जोर चलै कछु नाहिं ॥ ९ ॥ नीर बुझा  
 आगको, जलै टोकनीमाहिं । देहमाहिं चेतन

दुखी. निज सुख पावैं नाहिं ॥ १० ॥ यदपि  
 देहसों छुटत है, अंतर तन है संग । ताहि ध्यान  
 अग्नी दहै, तव शिव होय अभंग ॥ ११ ॥  
 रागरोषतें आपही. पडै जगतके माहिं । ज्ञान  
 भावतैं शिव लहै, दूजा संगी नाहिं ॥ १२ ॥ जैसें  
 काहू पुरुषके द्रव्य गड्यो घरमाहिं । उदर भरै  
 कर भीख ही. व्योरा जानैं नाहिं ॥ १३ ॥ ता  
 नरसों कि नहीं कही. तू क्यों मांगै भीख । तेरे  
 घरमें निधि गड़ी, दीनी उत्तम सीख ॥ १४ ॥  
 ताके बचनप्रतीतसों. वहै कियो मनमाहिं । खोद  
 निकाले धन विना, हाथपरै कछु नाहिं ॥ १५ ॥  
 त्यों अनादिकी जीवकै. परजैबुद्धि बखान । मैं  
 सुर नर पशु नारकी, मैं मूरख मतिमान ॥ १६ ॥  
 तासों सतगुरु कहत हैं तुम चेतन अभिराम ।  
 निश्चय मुक्तिसरूप हो. ये तेरे नहिं काम ॥ १७ ॥  
 काललब्धि परतीतसों, लखत आपमें आप ।  
 पूरण ज्ञान भये विना, मिटै न पुन अरु पाप  
 ॥ १८ ॥ पाप कहत है पुण्यको. जीव सकल

संसार । पुण्य कहत है पापको. ते विरले मति-  
धार ॥१९॥ बंदीखानेमें परे. जातैं छूटै नाहिं ।  
विन उपाय उद्यम किये. त्यों ज्ञानी जगमाहिं  
॥२०॥ साबुन ज्ञान विराग जल. कोरा कपडा  
जीव । रजक दक्ष धोवै नहीं. विमल न होय स-  
दीव ॥ २१ ॥ ज्ञानपवन तप-अगन दिन. दहै  
मूस जिय हेम । कोडवर्षलों राखिये. शुद्ध होय  
मन केम ॥२२॥ दरब कर्म दौकर्मतैं. भावकर्मतैं  
भिन्न । विकल्प नहीं सुबुद्धिकै, शुद्ध चेतना  
चिन्ह ॥ २३ ॥ चारों नाही सिद्धकै, तू चारोंके  
माहिं । चार विनासै मोक्ष है. और बात कछु  
नाहिं ॥ २४ ॥ ज्ञाता जीवनमुक्त है, एक देश  
यह बात । ध्यान-अग्नि-विन कर्मवन. जलै न  
शिव किम जात ॥ २५ ॥ दर्पण काई अथिर  
जल, मुख दीसै नहिं कोथ । मन निर्मल थिर  
विन भये. आपदरश क्यों होय ॥२६॥ आदि-  
नाथ केवल लह्यो. सहस वर्ष तप ठान । सोई  
पायो भरतजी. एक मुहूरत ज्ञान ॥ २७ ॥ रा

रोष संकल्प है, नयकै भेद विकल्प । रोषभाव  
 मिटजाय जब, तब दुख होय अनल्प ॥ २८ ॥  
 रागविरागदुभेदरत्न, दोयरूपपरिणाम । रागी  
 जगके भूमिया, वैरागी शिवधाम ॥२९॥ एक  
 भाव है दिग्गके भूय लगे तृण खाय । एकभाव  
 मंजारके, जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥ विविध  
 भावके जीव बहु, दीसत हैं जगमाहिं . एक कछु  
 चाहै नहीं, एक तजै कछु नाहिं ॥ ३१ ॥ जगत  
 अनादि अनंत है. मुक्ति अनादि अनंत । जीव  
 अनादि अनंत हैं कर्म दुविध सुन संत ॥३२॥  
 सबके कर्म अनादिके, कर्म भव्यको अंत । कर्म  
 अनंत अभव्यके, तीनकाल भटकंत । ३३ । फरश  
 बरन रस गंध स्वर पांचों जानै कोय । बोलै डोलै  
 कौन है, जो पूछै है सोय ॥३४॥ जो जानै सो  
 जीव है, जो मानै सो जीव । जो देखै सो जीव  
 है, जीवै जीव सदीव ॥ ३५ ॥ जातपना दो  
 विध लसै. विषय-निर्विषय-भेद । निरविषयी  
 संवर लसै, विषयी आस्रव वेद ॥ ३६ ॥ प्रथम

जीवश्रद्धानसों, कर वैराग्य उपाय ॥ ज्ञान किये-  
 सों मोक्ष है, यही बात सुखदाय ॥३७॥ पुद्गल  
 सों चेतन बँध्यो, यही कथन है हेय । जीव बँध्यो  
 निज भावसों, यही कथन आदेय ॥३८॥ बंध  
 लखै निज औरसे, उद्यम करै न कोय । आप  
 बँध्यो निजसों समझ, त्याग करै शिव होय  
 ॥३९॥ यथा भूपको देखकै, ठौर रीतिको जान ।  
 तब धनअभिलाषी पुरुष. सेवा करै प्रधान ।४०।  
 तथा जीवसरधानकर, जानै गुणपरजाय ।  
 सबै जु शिवधनआशधर, समतासों मिलजाय  
 ॥४१॥ तीनभेद व्यवहारसों, सर्व जीव सबठाम ।  
 श्रीअरहत परमात्मा, निश्चय चेतनराम ॥४२॥  
 कुगुरु कुदेव कुधर्म रति, अहंबुद्धि सब ठौर ।  
 हित अनहित सरधै नहीं, मूढनमें शिरमौर ।४३।  
 आपआप परपर लखै, हेयउपादे ज्ञान । अब  
 तो देशव्रती महा.व्रती सबै मतिमान ।४४।जा  
 पदमें यह पद लसै.दर्पन ज्यों अविकार । सकल  
 निकल परमात्मा. नित्यनिरंजन सार ॥४५॥

बहिरात्मके भाव तजि, अंतरआत्म होय । पर-  
 मात्म ध्यावै सदा, परमात्म सो होय । ४६ । बृंद  
 उदधि मिल होत दधि, बीती फरश प्रकाश (?) ।  
 त्यों परमात्म होत है, परमात्म अभ्यास । ४७ ।  
 सब आगमको सार ज्यां, सब साधनको धेव ।  
 जाको पूजै इंद्र सो, सो हम पायो देव ॥ ४८ ॥  
 सोहं सोहं नित जपै, पूजा आगमसार । सत-  
 संगतिमें बैठना, यहै करै व्यवहार ॥ ४९ ॥  
 अध्यात्म पंचाशिका, -माहिं कह्यो जो सार । द्या-  
 नत ताहि लगे रहो, सबसंसार असार ॥ ५० ॥

॥ इति अध्यात्मपंचासिका समाप्ता ॥

## । सप्तव्यसनके बीदोले ।

सात व्यसन । दोहा—

सातविसन जगमें बुरे, बुरा इन्होंका संग ।  
 जिसके सिर चढ जात हैं, केई दिखावत रंग ॥  
 केई दिखावत रंग संगमें, नफा नहीं सुन भाई ।  
 अपना तन धन धर्म गुमावै, जगबदनामी छाई ॥



तात मात सुत नारी छोडै, मुँह न लगावै भाई ।  
हाय हाय किस नीच जीवने, इनकी चाल चलाई ॥

भङ्ग—

चालमें सब जग आया, ख्यालमें जन्म गमाया ।  
पाप कर नरक सिधाया, बहुत पीछें पछताया ॥  
विसनकी सुनो कहानी, कही जैसेँ जिनवानी ।  
तज्या जिन्होंने विसन जिनेश्वर तिनकी शिक्षा  
मानी ॥ १ ॥

( १ ) जुआखेलनघ्यसन ।

जुआ खेलकर जगतमें, होय मुफ्त बदनाम ।  
मजा नहीं इस काममें, सजावार वसु जाम ॥  
सजावार वसु जाम धाम, आराम कभी नहीं  
पाता । फिकरमंद मतिअंध वक्तपर, खानेको  
नहीं जाता ॥ संग जुआरी कई रंगका, ढंग  
देख घवराता । मारपीट बहु माल खायकर, तौ  
भी नहीं लजाता ॥

भङ्ग—

लाज ज्वारीके नाहीं, दया नहीं मनके माहीं ।

सत्य नहिं कहै कदाही, राज्यका चोर सदाही ॥  
 पांडुसुत खेल किया था, नारिका दाव दिया था ।  
 तजा जिन्होंने जुआ जिनेश्वर तिन सब सुख  
 लिया था ॥ २ ॥

( २ ) मांसभक्षणव्यसन ।

श्वास श्वासपर खैरको, चाहैं सकल जहान ।  
 श्वास नाराकर होत है, मांस महा दुखदान ॥  
 मांस महा दुखदान खानकी बात सुनत धिन  
 आवे । थरहर काँपै वऱ्य हाय पशु दीन बडा  
 षबरावै ॥ बेकसूर पशुमांसलालची तनमें छुरी  
 चलावै । बडे निर्दयी जीव जगतमें, आमिषभो-  
 जन खावैं ॥

भङ्ग—

भावना हिरदै खोटी, छोंककर आमिस बोटी ।  
 मनुष भी राक्षस जोटी, धरे शिर अघकी पोटी ॥  
 मांसका नाम न लेना, असनके लायक है ना ।  
 मांस असनको त्याग जिनेश्वर जगमें कीरति  
 लेना ॥ ३ ॥

( ३ ) मदिरासेवनव्यसन ।

जितने नशे जहाँनमें, सभी विनाशै ज्ञान । ति-  
नमें मदिरा अति बुरी, सही गमावै प्रान ॥ सही  
गमावै प्रान ज्ञानका, नाम न रहने पावै । मदिरा  
पीके मनुष होशमें, कबहूँ नाहिं रहावै ॥ जननी  
भगिनी नार न जानै, मदमातुर हो जावै । अ-  
ति बेहोश पडा दुख भुगतै, मूरख प्रान गमावै ॥

ॐ—

प्रान बहु जीवन खोया, जादवां वंश डुबोया ।  
ऋषीको क्रोध जगाया, द्वारिका दाह कराया ॥  
तुच्छकी कौन कहानी, बड़ोंकी कालनिशानी ।  
यातैं मदिरा त्याग जिनेश्वर करो धर्म सुखपानी ॥

( ४ ) शिकारव्यसन ।

अपने अपने प्रानकी सभी मनावै खैर । हाय  
सिकारी बनविषै, पशु मारै विन बैर ॥ पशु मा-  
रै विन बैर खैरकी दया हिये नहिं लावै । शीत  
घाम सब सहै वनीमें, भोजन भी नहिं पावै ॥  
नाम भजन हरनाम त्यागकैं मार मार मुख गा-  
वै । कायर क्रूर कुरंग अंगमें भारी चोट लगावै ॥

झड—

चोटमें हिरन सताया, दयाका नाम मिटाया । भ-  
गेके पीछे धाया, वीरका नाम लजाया ॥ मृगी-  
पर हाथ चलाया, वृथा क्षत्री कहलाया । दुर्ग-  
तिपंथ शिकार त्यागकर, यही जिनेश्वर गाया ॥

( ५ ) चौरिव्यसन ।

प्रानोंसे प्यारी गिनै, धनदौलत संसार । याके  
कारन नरपती, हाथ गहै तलवार ॥ हाथ गहै  
तलवार समरमें सूरवीर शिर देते । नद सागर  
तिर जांय वणिक शिर बडी आपदा लेते ॥  
कठिन कठिनकर लछमी जोड़ें सहै सभी दुख  
जेते ॥ हाय हाय ताको ठगता करि सहज चौर  
कर लेते ॥

झड—

चौरकों राजा मारै, सजा दे देश निकारै । लोग  
सबही दुतकारै, बडी बेशरमी धारै ॥ भूल मति  
चौरी करियो, चौरसंगतिसैं डरियो । डरियो  
जगतमझार जिनेश्वर चौरी कबहुं न करियो । ६।

( ६ ) वेश्यासेवनव्यसन ।

नीचनकी संगत रहै, करै नीच सब काम । मू-

रखजन फँसि जात हैं, देख ऊजरो चाम ॥ दे-  
ख ऊजरो चाम दामकी, खातिर धरम गमावै ।  
ऊंच नीचका ख्याल करै ना, सबको अंग लगावै ॥  
जगकी झूट जानि गनिकाको, मूरख मन लल-  
चावै । हा धिक धिक ऐसे जीवनको, गनिका  
संग रहावै ॥ झड-

लगै जब गनिका प्यारी, बुद्धि नशि जाय अ-  
गारी । क्रोडपति होय भिखारी, कर्मगति टरै  
न टारी ॥ भूल मति यारी करियो. देहदुरग-  
तिसां डरियो । तजि गनिकाको नेह जिनेश्वर  
धर्मविषै मन धरियो ॥ ७ ॥

( ७ ) परस्त्रीसेवनव्यसन ।

कुलकलंकदायक सदा. परकामिनिको प्यार ।  
मूरखमन ते हतनको. मृगनैनी तलवार ॥ मृग-  
नैनी तलवार कलेजा आरपार हो जावै । दृग-  
कटाक्ष सर चोट लगै तब. ओट न कोई आवै ॥  
ऊपर घाव प्रगट नहिं दीखै. मनही मन पछतावै ।  
खानपान गृहवास खासका. मजा हाथसे जावै ॥

( तज—भण्डा उंचा रहे हमारा )

जैन धर्मका भंडा प्यारा सबसे उंचा रहे हमारा  
आओ प्यारे भाई आओ, घर घर में सब  
इसे घुमाओ । एकदम सारी शक्ति लगाओ  
तब हो सफल मनोरथ सारा ॥ जैन धर्म ॥  
युवकोंका तो प्रान यही है, हम सबका  
सन्मान यही है । जैन धर्मकी शान यही  
है, यही करे उद्धार हमारा ॥ जैन० ॥ प्रेम  
भाव दर्शानेवाला, सत्य बात दिखलाने  
वाला । मनमें द्वेष हटाने वाला ये जीवन  
आधार हमारा ॥ जैन० ॥ इस भण्डेके नीचे  
आना, जैन धर्मकी महिमा गाना । इसकी  
घर घर तान सुनाना, यही करे भवसागर  
पारा ॥ टेक ॥ मनसे सकल विकार हटाकर  
आपसमें सब प्रेम बढ़ाकर । वीतराग से नेह  
लगाकर, बोलो जैन धर्म जयकारा । टेक ।

गा० १—( घम दशा )

जिन धर्मका भण्डा घर घर में फहरा  
दिया केवल ज्ञानीने । इसकी महिमा को

कानोंमें समझा दिया केवल ज्ञानी ने ॥  
 अज्ञान अंधेरी छाई थी, इस धर्मसे प्रीति  
 हटाई थी । उस समय पुनः करके प्रचार दिख-  
 ला दिया केवल ज्ञानीने ॥ जिन० ॥ जब  
 नैया डूबी जाती थी, नहीं कोई पार बसाती  
 थी । बनके मल्लाह किनारे ला, संभला दिया  
 केवल ज्ञानीने ॥ जिन० ॥ जब लोग हमें  
 भड़काते थे, और श्रद्धा इससे हटाते थे ।  
 फिर उस जागृति भावनाको, दिखला दिया  
 केवल ज्ञानीने ॥ जिन० ॥ जब धर्म बृत्त  
 मुरझाया था, आपसमें प्रेम बढ़ाया था । इस  
 धर्मका डङ्का एक साथ, बजवा दिया केवल  
 ज्ञानीने ॥ जिन० ॥

गायन—( देश दशा )

जमाना रंग बदलता है, कभी नहीं थिर  
 वह रहता है । दिनको निकले सूर्य, रातको  
 चांद निकलता है ॥ जमाना० ॥ एक समयमें  
 जैन धर्म था, सबही का सिरताज । उसी  
 धर्मकी दशा देख लो, कैसी हो रही आज

वक्त टाले नहीं टलता है ॥ जमाना० ॥ बड़े  
 बड़े हो गये इसीमें धनी और विद्वान । इसी  
 धर्म के लिये कर दिया, तन मन धन कुर्बान ॥  
 बिगड़ कर कोई संभलता है ॥ जमाना० ॥  
 राजा हो या चाहे रंक हो, चाहे अमीर  
 कंगाल । अन्त समयमें पड़े जायकर, उसी काल  
 के गाल ॥ यहां वस किमका चलता है  
 ॥ जमाना० ॥ कुछ बिगड़े दिल धर्म कार्य  
 में, करते विघ्न अपार । नहीं अमीरों को  
 अवसर, जो देखें नजर पसार । किधरको  
 सूर्य निकलता है ॥ जमाना० ॥ अब तो  
 समय आगया हो जाओ कसकर कमर तै-  
 यार । इसी धर्म की खातिर सारा, तन मन  
 धन दो वार ॥ गया फिर वक्त न मिलता है  
 ॥ जमाना० ॥ करे बुराई चाहे भलाई रह  
 जाता है नाम । “प्रेम” बढ़ाकर आपस में  
 सब करे धर्मका काम ॥ धर्म परभवमें चलता  
 है ॥ जमाना० ॥



## फूलमाल पचीसी

दोहा—जैनधरम त्रेपन क्रिया, दयाधरम संयुक्त।  
मदों वंश विषैं जिये, तीन ज्ञान करि युक्त॥१॥  
भयो महोत्सव नेमिको, जूनागढ़ गिरनार ।  
जाति चुरासिय जैनमत, जुरै लोहनी चार॥२॥  
माल भई जिनराजकी, गूंथी इंद्रन आय ॥  
देशदेशके भव्य जन, जुरै लेनकों धाय॥३॥

छप्पय—देश गौड़ गुजरात चोड़ सोरठि  
बीजापुर । करनाटक काश्मीर मालवा अरु  
अमरेपुर ॥ पानीपत हिंसार और वैराट महा-  
लघु । काशी अरु मरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन  
सिंधु ॥ तंह बंग चंद बन्दर सहित, उदधि  
पारला जुरिया सब । आये जु चीन मह चीन  
लग, माल भई गिरनारि जब ॥ नाराच छंद-  
सुगन्ध पुष्प बेलि कुंदि केतकी मंगायके ।  
चमेली चंप सेवती जूहीगुही जु लायके ।  
गुलाब कंज रायची सबै सुगन्ध जाति के ।  
सुमालती महा प्रमोद लै अनेक भांतिके॥५॥

सुवर्णतार पोई बीच मोती लाल लाइया ।  
 सु हीर पन्न नील पीत पद्म जोति लाइया ॥  
 शची रची विचित्र भांति चित्त देवनाइ है ।  
 सुइन्द्रने उच्चाहसों जिनेन्द्रको चढ़ाई है ॥६॥  
 सुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि वानिये ।  
 जुरी तहां चुरासि जातिराव राज जानिये ॥  
 अनेक और भूप लोग सेठ साहुको गने ।  
 कहालुं नाम वणिण सु देखते सभा बने ॥७॥  
 खण्डेलवाल, जैसवाल, अग्रवाल, आइया ।  
 बघेरवाल, पोरवाल, देशवाल, छाइया ॥  
 सहेलवाल, दिल्लीवाल, सेतवाल जातिके ।  
 बंदलवाल पुष्पमाल श्री श्रीमाल पांतिके ॥८॥  
 सु ओसवाल पल्लिवाल चूरुवाल चौसखा ।  
 पद्मावतीय पोरवाल परवार अठे सखा ॥  
 गंगेरवाल बन्धुराल तोर्णवाल सोहिला ।  
 करिन्दवाल पल्लिवाल मेड़वाल खांहिला ॥९॥  
 लमेंचु और माहुरे महेसरी उदार हैं । सुगोल-  
 त्वार गोलपूर्व गोलहूँ सिधार हैं ॥ बंधनार

३६ ३६ ३२ ३९  
 मागधी विहारवाल गूजरा । सुखगण्ड राग होय  
 और जानराज बूसरा ॥ भुराल और सोरठ  
 और मुराल चितोरिया । कपोल सोमराठ वर्म  
 हूमड़ा नागौरिया । सीराग होड़ भंडिया कनौ-  
 जिया अजोधिया । मिवाड़ मलवान और  
 जोधड़ा समोधिया ॥११॥ सुभट्टनेर रायबल  
 नागरा रुधाकरा । सुकन्थ राहु जालरालु बाल  
 भीक भाकरा । परवारलुड चोड़कोड़ गोड़  
 मोड़ संभारा । सु खगिडआत श्री खंटाचतुर्थ  
 पंच मंभरा ॥१२॥ सरत्ताकार भोजकार नरसिंह  
 है पुरी । सु जम्बूवाल और क्षेत्रब्रह्म वश्य लौं  
 जुरी ॥ आई हैं चुरासी जाति जनैधमकी घनी ।  
 सबविराज गोठियों जु इन्द्रकी सभा बनी ॥१३॥  
 सुमाल लेनेको अनेक भूप लोग आवहीं ॥ सुएक  
 एक तैं सुमांग मालको बढ़ावहीं ॥ कहें जु नाथ  
 जोरि-जोरि नाथ माल दीजिये । मंगाय देउंहेम  
 रत्न सो भण्डार कीजिये ॥१४॥ बधेरवाल वां  
 कड़ा हजार बीस देत हैं । हजार दे पचास पर

वार फेरि लेत हैं । सु जैसवाल लाख देत माल  
 लेत चोपसों । जु दिखीवाल दोय लाख देत हैं  
 आगोपसों ॥१५॥ सु अब्रवाल बोलिये जु माल  
 मोहि दीजिये । दिनार देहुं एक लक्ष सो गिनाय  
 लीजिये खंडेलवाल बोलियो जु दोय लाख  
 देउंगो. सुबांटिके तमोल मैं जिनेद्र माल लेउं-  
 गो ॥१६॥ जसुंभरी कहैं सुमेरि खान लेउ जाय  
 कैं । सुवर्ण खानि देत हैं चित्तौड़िया बुलायके ॥  
 अनेक भूप गांव देत रायसों चंदेरिका । खजाना  
 खोल कोठरी सु देत हैं अमेरिका ॥१७॥ सु-  
 गाड़वाल यों कहैं गयंद बीस लीजिये । मंगाय  
 देव हेमदन्त माल मोहि दीजिये । परमारकेतुरंग  
 साजि देत हैं बिना गिनैं । लगाम जीन पाहुडे  
 जड़ाउ हेमके बने ॥१८॥ कनौजिया कपूर देत  
 गाड़िया भरायके । सुहीरा मोति लाल देत ओस-  
 वाल आयके ॥ सु हूंमड़ा हंकार ही हमें न  
 माल देउगे । भराइये जहाजमें कितेक दाम  
 लेउगे ॥१९॥ कितेक लोग आयके खड़ेथे हाथ

जोरिके । कितेक भूप देखिके चले जु वाग  
 मोरिकें ॥ कितेक सूमयों कहैं जु कैसे लक्षि देत  
 हौ । लुटाय माल आपनो सु फूलमाल लेत हौ  
 ॥२६॥ कई प्रवीन श्राविका जिनेन्द्रको बधा  
 वहीं । कई सुकण्ठ रागसों खड़ी जु माल गाव-  
 हीं । कई सु नृत्यकों करै लहैं अनेक भावहीं ।  
 कई मृदङ्ग तालपै सु अंगको फिराव हीं ॥२१॥ कहैं  
 गुरु उदारधी सुयों न माल पाइये ॥ कराइये जि-  
 नेन्द्र यज्ञ बिंबहू भराइये ॥ चलाइये जु संघजात  
 संघही कहाइये । तबै अनेक पुण्यसों अमोल  
 माल पाइये ॥२२॥ संबोधि सर्व गोटिसो गुरु उ-  
 तारके लई । बुलायके जिनेन्द्र माल संघरायको  
 दई । अनेक हर्षसों करैं जिनेन्द्रतिलक पाइये  
 सुमाल श्री जिनेन्द्रकी विनोदीलाल गाइए ॥२३॥  
 दोहा-माल भई भगवंतकी, पाई सिंघई नारिन्द ।  
 लालविनोदी उच्चरै सबको जयाति जिनन्द ॥२४॥  
 माला श्री जिनराजकी, पावै पुण्य संयोग ।  
 यश प्रगटै कीरति बढै, धन्य कहैं सब लोग ॥२५॥

## छहढाला ।

स्वर्गीय पं० दौलतरामजी कृत—सोरठा ।

तीन भुवनमें सार, वीतराग विज्ञानता ।  
शिवस्वरूप शिवकार, नमों त्रियोग सम्हारिकें ।

पहली ढाल । चौपाई ( १५ मात्रा ) ।

जे त्रिभुवनमें जीव अनंत । सुख चाहैं दुखतैं  
भयवंत ॥ तातैं दुखहारी सुखकारि । कहै सीख  
गुरु करुणा धारि ॥ २ ॥ ताहि सुनो भवि मन  
थिर आन । जो चाहो अपनो कल्यान ॥ मोह  
महामद पियो अनादि । भूलि आपको भरमत  
बादि । ३ । तास भ्रमनकी है बहु कथा । पै कछु  
कहूं कही मुनि जथा ॥ काल अनंत निगोदमँ-  
झार । बीत्यो एकेंद्रिय-तन धार ॥ ४ ॥ एक  
स्वासमें अठदश बार । जन्म्यो मन्यो भन्यो दु-  
खभार ॥ निकसि भूमि जल पावक भयो । पव-  
न प्रतेक वनस्पति थयो ॥ ५ ॥ दुर्लभ लहि ज्यों  
चिंतामणी । त्यों परजाय लही त्रसतणी ॥ लट-

पिपीलि अलि आदि शरीर । धरधर मन्यो सही  
 बहु पीर ॥६॥ कबहूं पंचेंद्रिय पशु भयो । मन-  
 विन निपट अज्ञानी थयो ॥ सिंहादिक सेनी ह्वै  
 कूर । निबल पशू हति खाये भूर ॥ ७ ॥ कबहूं  
 आप भयो बलहीन । सबलनिकरि खायो अ-  
 तिदीन ॥ छेदन भेदन भूखपियास । भारबहन  
 हिम आतप त्रास । ८ । बध-बंधन आदिक दुख  
 घने । कोटि जीभतैं जात न भने ॥ अतिसंक्ले-  
 श भावतैं मरयो । घोर शुभ्रसागरमें धरयो । ९ ।  
 तहां भूमि परसत दुख इस्यो । बीछू सहस डसैं  
 तन तिस्यो ॥ तहां राधशोणितबाहिनी । कृमि-  
 कुलकलित देह-दाहिनी ॥१०॥ समरतरुजुत द-  
 लअसिपत्र । असि यों देह विदारैं तत्र ॥ मेरु  
 समान लोह गलिजाय । ऐसी शीत उष्णता थाय  
 ॥ ११ ॥ तिलतिल करहिं देहके खंड । असुर  
 भिडावैं दुष्टप्रचंड ॥ सिंधुनीरतैं प्यास न जाय ।  
 तौ पण एक न बूंद लहाय ॥१२॥ तीनलोकको  
 नाज जु खाय । मिटै न भूख कणा न लहाय ॥

ये दुख बहु सागरलौं सहै । कर्मजोगतैं नरतन  
 लहै ॥१३॥ जननी उदर बस्यो नवमास । अंग  
 सकुचतैं पाई त्रास ॥ निकसत जे दुख पाये घोर ।  
 तिनको कहत न आवै ओर ॥१४॥ बालपनमें  
 ज्ञान न लह्यो । तरुणसमय तरुणीरत रह्यो ॥  
 अर्धमृतकसम बूढ़ापनो । कैसें रूप लखै आपनो  
 ॥१५॥ कभी अकामनिर्जरा करै । भवनत्रिकमें  
 सुरतन धरै ॥ विषय-चाह-दावानल दह्यो । मरत  
 विलाप करत दुख सह्यो ॥ १६ ॥ जो विमान  
 बासी हू थाय । सम्यकदर्शन विन दुख पाय ॥  
 तहँतैं चय थावरतन धरै । यों परिवर्तन पूरे  
 करै ॥ १७ ॥

दूसरी ढाल । पद्धति छंद ।

ऐसें मिथ्या-दृग्ज्ञानचरण । वश भ्रमत भरत  
 दुख जन्ममरण ॥ तातैं इनको तजिये सुजान ।  
 सुन तिन संछेप कहूं बखान ॥ १ ॥ जीवादि प्र-  
 योजनभूत तत्व । सरधै तिनमांहिं विपर्ययत्व ॥  
 चेतनको है उपयोगरूप । विन मूरति चिनमू-



रति अनूप ॥ २ ॥ पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल  
 इनतैं न्यारी है जीवचाल ॥ ताकों न जान वि-  
 परीत मान । करि करै देहमें निज पिछान ॥३॥  
 मैं सुखी दुखी मैं रंक राव । मेरो धन गृह गोधन  
 प्रभाव ॥ मेरे सुत तिय मैं सबल दीन । बे रूप  
 सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥ तन उपजत अपनी  
 उपज जानि । तन नशत आपको नाश मान ॥  
 रागादि प्रगट जे दुःखदैन । तिनहीको सेवत  
 गिनहि चैन ॥ ५ ॥ शुभअशुभबंधके फलम-  
 झार । रति अरति करै निजपद विसार ॥ आत-  
 महितहेतु विराग ज्ञान । ते लखै आपको कष्ट  
 दान ॥ ६ ॥ रोकी न चाह निज शक्ति खोय ।  
 शिवरूप निराकुलता न जोय । याही प्रतीतजुत  
 कछुक ज्ञान । सो दुखदायक अज्ञान जान ।७।  
 इनजुत विषयनिमें जो प्रवृत्त । ताको जानो  
 मिथ्याचरित्त ॥ या मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह ।  
 अब जे गृहीत सुनिये सु तेह ॥ ८ ॥ जो कुगुरु  
 क्रुधर्म सेव पोषैं चिर दर्शन मोह एव

अंतररागादिक धरें जेह । बाहरधन अंबरतें  
 सनेह ॥ ९ ॥ धरें कुलिंग लहि महतभाव ।  
 ते कुगुरु जनम-जल उपल-नाव ॥ जे रागरोषमल-  
 करि मलीन । वनितागदादिजुत चिन्हचीन ॥  
 ॥ १० ॥ ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव । शठ  
 करत न तिन भवभ्रमनछेव ॥ रागादिभाव हिंसा  
 समेत । दर्वित त्रसथावर मरनखेत ॥ ११ ॥ जे  
 क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म । तिन सरधै जीव  
 लहै अशर्म ॥ याकों गृहीतमिथ्यात जान । अब  
 सुन गृहीत जो है कुज्ञान ॥ १२ ॥ एकांतवाद  
 दूषित समस्त । विषयादिकपोषक अप्रशस्त ॥  
 कपिलादिरचित श्रुतको अभ्यास । सो है कुबोध  
 बहु देन त्रास ॥ १३ ॥ जो ख्यातिलाभ पूजादि  
 चाह । धरि करत विविधविध देहदाह । आत्म  
 अनात्मके ज्ञानहीन । जे जे करनी तनकरन-  
 चीन ॥ १४ ॥ ते सब मिथ्याचारित्र त्यागि ।  
 अब आत्मके हित पंथ लागि ॥ जगजालभ्रमन  
 को देय त्यागि । अब दौलत' निज आत्म

## सुपाणि ॥ १५ ॥

तीसरी ढाल । नरेंद्रछंद ( जोगीरासा । )

आत्मको हित है सुख, सो सुख आकुलता  
विन कहिये । आकुलता शिवमांहीं न तातें.  
शिवमग लाग्यो चाहिये । सम्यकदर्शन ज्ञान  
चरन शिव-मग सो दुविध विचारो । जोसत्या  
रथरूप सु निश्चय. कारन सो व्यवहारो ॥ १ ॥  
परद्रव्यनितैं भिन्न आपमें रुचि, सम्यक्त भला है  
आप रूपको जानपनो, सो सम्यकज्ञानकला है ॥  
आपरूपमें लीन रहै थिर, सम्यकचारित सोई ।  
अब व्यवहार मोख मग सुनिये, हेतु नियतको  
होई ॥ २ ॥ जीव अजीव तत्व अरु आस्रव, बंध  
रु मंवर जानो । निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको,  
ज्योंको त्यौं सरधानो ॥ है सोई समकित व्यव-  
हारी, अब इन रूप बखानौ । तिनको सुनि  
सामान्यविशेषै, दृढ प्रतीत उर आनौ ॥ ३ ॥  
बहिरात्म अंतरआत्म परमात्म जीव त्रिधा  
है । देह जीवको एक गिनै, बहिरात्मतत्व मुधा

है ॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविधिके अंतरआत-  
 मज्ञानी । द्विविध संगविन शुधउपयोगी, मुनि  
 उत्तम निजध्यानी ॥ ४ ॥ मध्यम अंतर आतम  
 हैं जे देशवृती आगारी । जघन कहे अविरत-  
 समदृष्टी तीनों शिवमगचारी ॥ सकल निकल  
 परमातम द्वैविधि तिनमें घाति निवारी । श्री  
 अरहंत सकल परमातम लोकलोकनिहारी । ५ ॥  
 ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल-वर्जित सिद्ध महंता  
 ते हैं निकल अमल परमातम, भोगों शर्म अनंता  
 बहिरातमता हेय जानि तजि, अंतरआतम हूजै  
 परमातमको ध्याय निरंतर, जो नित आनंद  
 पूजै ॥ ६ ॥ चेतनता विन सो अजीव हैं, पंच  
 भेद ताके हैं पुद्गल पंच वरन, रसपन गंध दु  
 फरस वसू जाके हैं ॥ जिय पुद्गलको चलन  
 सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी । तिष्ठत होय अधर्म  
 सहाई, जिन विनमूर्ति निरूपी ॥ ७ ॥ सकल द्रव्य  
 को वास जासमें, सो आकाश पिछानों । नियत  
 वरतना निशिदिन सो व्यवहारकाल परिमानो

यों अजीव अब आस्रव सुनिये. मनवचक्राय  
 त्रियोगा । मिथ्या अविरत अरु कषायपरमादस-  
 हित उपयोगा ॥८॥ ये ही आत्मके दुखकार-  
 न, तातैं इनको तजिये । जीवप्रदेश बँधै विधिसों  
 सो, बंधन कबहुं न सजिये ॥ शमदससों जो कर्म  
 न आवैं, सो संवर आदरिये । तपबलतैं विधि-  
 झरन निरजरा, ताहि सदा आचरिये ॥९॥ स-  
 कल करमतैं रहित अवस्था, सो शिव थिरसुख  
 कारी । इहिविधि जो सरधा तत्वनकी, सो सम-  
 कित व्योहारी ॥ देव जिनेंद्र गुरू परिग्रह विन,  
 धर्म दयाजुत सारो । यहू मान समकितको कारन  
 अष्टअंगजुत धारो ॥१०॥ वसुमद टारि निवारि  
 त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो । शंकादिक  
 वसु दोष विना, संवेगादिक चित पागो । अष्ट-  
 अंग अरु दोष पचीसों. अब संक्षेपहु कहिये ।  
 विन जानेतैं दोषगुननको, कैसे तजिये गहिये ॥  
 ११॥ जिनवचमें शंका न धारि वृष. भवसुखवांछा

१ प्रशम संवेग अनुकंपा आस्तिक्य ।

भानै, मुनितन मलिन न देख घिनावै. तत्व  
 कुतत्व पिछानै। निजगुन अर पर अवगुन ढाकै,  
 वा जिनधर्म बढावै। कामादिककर वृषतै विग-  
 ते, निजपरको सु दढावै ॥१२॥ धर्मीसों गउ-  
 बच्छप्रीतिसम, कर जिनधर्म दिपावै। इन गुनलैं  
 विपरीतदोष वसु, तिनको सतत खिपावै ॥ पिता  
 भूप वा मातुल नृप जो, होय तो न मद ठानै।  
 मद न रूपको मद न ज्ञानको, धन बलको मद  
 भानै ॥ १३ ॥ तपको मद न मद जु प्रभुताको  
 करै न सो निज जानै। मद धारै तौ येहि दोष  
 वसु, समकितको मल ठानै ॥ कुगुरुकुदेवकुवृष-  
 सेवककी नहिं, प्रशंस उचरै है। जिनमुनि जि-  
 नश्रुत विन कुगुरादिक, तिन्हैं न नमन करै है  
 ॥१४॥ दोषरहित गुनसहित सुधी जे, सम्यक-  
 दरश सजै हैं। चरितमोहवश लेश न संजम, पै  
 सुरनाथ जजै हैं ॥ गेही पै गृहमें न रचै ज्यों,  
 जलमें भिन्न कमल है। नगरनारिको प्यार

१ धर्मसे। २ मामा।

यथा, कादेंमें हेम अमल है ॥ १५ ॥ प्रथम  
 नरक विन षट् भू ज्योतिष, वान भवन षँढे  
 नारी । थावर विकलत्रय पशुमें नहिं, उपजत  
 समकित-धारी ॥ तीनलोक तिहुँकालमाहिं नहिं,  
 दर्शनसम सुखकारी । सकलधरमको मूल यही  
 इस, विन करनी दुखकारी ॥ १६ ॥ मोहमह-  
 लकी परथम सीढ़ी, या विन ज्ञान चरित्रा । स-  
 न्यकता न लहै सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा ॥  
 'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत  
 खोवै । यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो  
 सन्यक नहिं होवै ॥ १७ ॥

चौथी ढाल । दोहा—

सम्यकश्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यकज्ञान ।  
 स्वपरअर्थ बहु धर्मजुत, जो प्रकटावन भान । १।

दोहा छंद २३ मात्रा ।

सम्यकसाथै ज्ञान होय, पै भिन्न अराधो । लक्षण  
 श्रद्धा जान, दुहूमें भेद अवाधो ॥ सम्यककारण

१ नपुंलक ।

जान, ज्ञान कारज है सोई । युगपद होतैं हू,  
 प्रकाश दीपकतैं होई ॥ १ ॥ तास भेद दो हैं प-  
 रोक्ष, परतछ तिनमाहीं । मति श्रुत दोय परोक्ष,  
 अक्ष मनतैं उपजाहीं ॥ अवधिज्ञानमनपर्जय, दो  
 हैं देशप्रतच्छा । द्रव्यक्षेत्रपरिमान लिये जानैं  
 जिय स्वच्छा ॥ ३ ॥ सकल द्रव्यके गुन अनंत,  
 परजाय अनंता । जानैं एकै काल, प्रगट केवलि  
 भगवंता ॥ ज्ञान समान न आन, जगतमें सुख-  
 को कारन । इह परमामृत जन्म, जरामृतरोग-  
 निवारन ॥ ४ ॥ कोटि जनम तप तपैं, ज्ञान विन  
 कर्म झरैं जे । ज्ञानीके छिनःगांहिं गुप्तितैं सहज टरैं  
 ते ॥ मुनिव्रत धार अनंतवार, ग्रीवक उपजायो ।  
 पै निजआतमज्ञान विना सुख लेश न पायो । ५ ।  
 तातैं जिनवरकथित, तत्त्व अभ्यास करीजै ।  
 संशय विभ्रम मोह, त्याग आपो लखि लीजै ।  
 यह मानुषपरजाय, सुकुल सुनिबो जिनवानी ।  
 इहविधि गये न मिलै, सुमणि ज्यों उदधिसमानी  
 ॥ ६ ॥ धन समाज गज बाज, राज, तो काज



न आवै । ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल  
 रहावै ॥ तास ज्ञानको कारन. स्वपरविवेक बखा-  
 न्यो । कोटि उपाय बनाय. भव्य ताको उर आन्यो  
 ॥७॥ जे पूरब शिव गये. जांय अब आगें जै  
 हैं । सो सब महिमा झनतनी. मुनिनाथ कहै हैं ॥  
 विषयचाह-दव-दाह, जगतजन अरनि दझावै ।  
 तासु उपाय न आन ज्ञानघनघान बुझावै ॥८॥  
 पुण्यपाप-फल मांहिं, हरष विलखौ मत भाई ।  
 यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसैं थिर थाई ॥  
 लाख बातकी बात. यहै निश्चय उर लावो ॥  
 तोरि सकल जगदंदफंद, निज आत्म ध्यावो ॥  
 ॥ ९ ॥ सम्यकज्ञानी होइ, बहुरि दृढ चारित  
 लीजै । एक देश अरु सकलदेश, तस भेद कही  
 जै ॥ त्रसहिंसाको त्याग वृथा, थावर न सँघारै ।  
 परवधकार कठोर निंद्य नहिं वयन उचारै ॥१०॥  
 जल मृत्तिकाविन और नाहिं कछु गहै अदत्ता ।  
 निज वनिताविन सकल, नारिसों रहै विरत्ता ॥  
 अपनी शक्ति विचार परिग्रह थोरो राखै । दश

दिशि गमनप्रमान, ठान तसु सीम न नाखे ॥  
 ॥११॥ ताहूमें फिर ग्राम गली गृह बाग बजारा ।  
 गमनागमन प्रमान ठान अन सकल निवारा ॥  
 काहूके धनहानि, किसी जय हार न चीतैं । देय  
 न सो उपदेश, होय अघ बनिज कृषीतैं ॥१२॥  
 कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।  
 असि धनु हल हिंसोपकरन, नहिं दे जस लाधै ॥  
 रागरोषकरतारकथा, कबहूं न सुनीजै । और हु  
 अनरथदंड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजै ॥ १३ ॥  
 धर उर समताभाव सदा, सामायिक करिये ।  
 पर्वचतुष्टयमाहिं पाप तजि प्रोषध धरिये ॥ भोग  
 और उपभोग नियमकरि ममतु निवारै । मुनि-  
 को भोजन देय फेर, निज करहि अहारै ॥१४॥  
 बारहव्रतके अतीचार, पन पन न लगावै । मरन  
 समय सन्यास धारि, तसु दोष नशावै ॥  
 यौ श्रावकव्रत पाल स्वर्ग, सोलम उपजावै ।  
 तहँतें चय नरजन्म पाय मुनि द्वै शिव  
 जावै ॥ १५ ॥

मुनि सकलवृत्ती बडभागी । भवभोगनतैं वैरा-  
गी ॥ वैराग्य उपावन माई । चिंतो अनुदेशा  
भाई ॥ १ ॥ इन चिंतत समरस जागै । जिमि  
ज्वलन पवनके लागै ॥ जबही जिय आत्म  
जानै । तबही जिय शिवसुख ठानै ॥२॥ जोयन  
गृह गोधन नारी ॥ हय गय जन आज्ञाकारी ॥  
इंद्रिय भोग छिन थाई । सुरधनु चपला चपलाई  
॥३॥ सुर असुर रागाधिप जेते । मृग ज्यों हरि  
काल दले ते ॥ मणि मंत्र तंत्र बहु होई । मरते  
नबचावै कोई ॥ ४ ॥ चहुंगतिदुख जीव भरै  
हैं । परिवर्तन पंच करै हैं ॥ सबविधि संसार  
असारा । यामैं सुख नाहिं लगारा ॥ ५ ॥ शुभ  
अशुभ करमफल जेते । भोगै जिय एकहि तेते ॥  
सुत दारा होय न सीरी । सब स्वारथके हैं भीरी  
॥ ६ ॥ जलपय ज्यों जियतन मेला । पै भिन्न  
भिन्न नहिं भेला ॥ तो प्रगट जुदे धन धामा ।  
क्यों है इक मिलि सुत रामा ॥७॥ पल-रुधिर

राध-मल थैली । कीकस वसादितैं मैली ॥ नव  
 द्वार बहै धिनकारी । अस देह करै किम यारी  
 ॥८॥ जो जोगनकी चपलाई । तातैं ह्वै आस्रव  
 भाई ॥ आस्रव दुखकार घनेरे । बुधिवंत तिन्हैं  
 निरवेरे ॥ ९ ॥ जिन पुण्यपाप नहिं कीना ।  
 आतम अनुभव चितदीना ॥ तिन ही विधि  
 आवत रोके । संवर लहि सुख अवलोके । १०।  
 निज काल पाय विधि झरना । तासों निजकाज  
 न सरना ॥ तप करि जो कर्म खापावै । सोई  
 शिवसुख दरसावै ॥ ११ ॥ किन हू न करयो न  
 धरै को । षट्द्रव्यमयी न हरै को ॥ सो लोकमाहिं  
 विन समता । दुख सहै जीव नित भ्रमता । १२।  
 अंतिम ग्रीवकलोंकी हृद । पायो अनंतविरियां  
 पद ॥ पर सम्यकज्ञान न लाध्यो । दुर्लभ निजमें  
 मुनि साथ्यो ॥ १३ ॥ जे भाव मोहतैं न्यारे ।  
 दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ॥ सो धर्म जबै जिय  
 धारै । तबही सुख सकल निहारै ॥ १४ ॥ सो  
 धर्म मुनिनकरि धरिये । तिनकी करतूति उच-

रिये ॥ ताको सुनिके भवि प्रानी । अपनी अनु-  
भूति पिछानी ॥ १५ ॥

छट्ठोढाल ( हरिगीता छंद )

षट्काय जीव न हननतैं सबविधिं दरबहिंस।  
टरी । रागादि भाव निवारितैं हिंसा न भावित  
अवतरी ॥ जिनके न लेश मृषा न जलतृन  
हू विना दीयो गहैं । अठदशसहस विधि  
शीलधर चिदब्रह्ममें नित रमि रहैं ॥१॥ अंतर  
चतुर्दश भेद बाहिर संग दशधातैं टलैं । परमाद  
तजि चउकर मही लखि समिति ईर्यातैं चलैं ॥  
जग सुहितकर सब अहितहर श्रुतिसुखद सब  
संशय हरैं । भ्रमरोग-हर जिनके वचन मुख-  
चंद्रतैं अमृत झरैं ॥ २ ॥ छ्यालीस दोष विना  
सुकुल श्रावकतणे घर अशनको । लें तप बढा-  
वन हेत नहिं तन पोषते तजि रसनको ॥ शुचि  
ज्ञान संजम उपकरन लखिकैं गहैं लखिकैं धरैं ।  
निर्जंतु थान विलोकि तन-मल मूत्र-श्लेषम परि-  
हरैं ॥३॥ सम्यक प्रकार निरोधि मन-चच-काय

आत्म ध्यावते । तिन सुथिर मुद्रा देखि मृग-  
 गन उपल खाज खुजावते ॥ रसरूपगंध तथा  
 फरस अरु शब्द शुभ असुहावने । तिनमें न  
 राग विरोध पंचेंद्रियजयन पद पावने ॥ ४ ॥  
 समता सम्हारें थुति उचारें बंदना जिनदेवको ।  
 नित करें श्रुतरति धरें प्रतिक्रम तजें तन अह-  
 मेवको ॥ जिनके न न्हौन न दंतधोवन लेश  
 अंबर आवरन । भूमाहिं पिछली रयनिमें कछु  
 शयन एकाशन करन ॥ ५ ॥ इक बार दिनमें  
 लें अहार खड़े अल्प निज पानमें । कचलोंच  
 करत न डरत परिषहसों लगे निज ध्यानमें ।  
 आरिमित्र महल मसान कंचन काच निंदन थुति  
 करन । अर्घावतारन असिप्रहारन—में सदा स-  
 मताधरन ॥ ६ ॥ तप तपै द्वादश धरें वृष दश  
 रतनत्रय सेवें सदा । मुनि साथमें वा एक विचरें  
 चहैं नहिं भवसुख कदा ॥ यों है सकल संजम  
 चरित सुनिये स्वरूपाचरण अब । जिस होत  
 प्रगटै आपनी निधि मिटै परकी प्रवृत्ति सब

॥७॥ जिन परम पैनी सुबुधि छैनी डारि अंतर  
 भेदिया । वरनांदि अरु रागादितैं निज भावको  
 न्यारा किया ॥ निजमाहिं निजके हेतु निजकर  
 आपको आपै गह्यो । गुनगुनी ज्ञाता ज्ञानज्ञेय  
 मझार कछु भेद न रह्यो ॥८॥ जहँ ध्यान ध्याता  
 ध्येयको न विकल्प वचभेद न जहां । चिद्धाव  
 कर्म चिदेश करता चेतना किरिया तहां ॥ तीनों  
 अभिन्न अखिन्न शुध उपयोगकी निश्चल दशा  
 प्रगटी जहां दृग ज्ञान व्रत ये तीनधा एकै लशा  
 ॥ ९ ॥ परमान नय निक्षेपको न उदोत अनुभव  
 में दिखै । दृग-ज्ञान-सुख-बलमय सदा नहिं आन  
 भाव जु मोविखै ॥ में साध्य साधकमें अबाधक  
 कर्म अरु तसु फलनितैं । चितापिंड चंड अरुंड  
 सुगुन,—करंडच्युत पुनि कलनितैं ॥१० ॥ यों  
 चित्य निजमें थिर भये तिन अकथ जो आनँद  
 लह्यो । सो इंद्र नाग नरेंद्र वा अहमिंद्रकै नाहीं  
 कह्यो ॥ तबही शुक्लध्यानाग्निकर चउघाति  
 विधिकानन दह्यो । सब लख्यो केवलज्ञानकरि

भविलोककों शिवमग कह्यो ॥११॥ पुनि घाति  
 शेष अघाति विधि छिनमांहिं अष्टमभू बसैं ।  
 वसुकर्म विनशौ सुगुन वसु सम्यक्त्व आदिक सब  
 लसैं ॥ संसार स्वार अपार पारावार तिर तीरहिं  
 गये । अविकार अकल अरूप शुध चिद्रूप  
 आविनाशी भये ॥१२॥ निजमांहिलोक अलोक  
 गुन परजाय प्रतिविंबित थये । रहि हैं अनंता-  
 नंतकाल यथा तथा शिव परनये ॥ धनि धन्य  
 हैं जे जीव नरभव पाय यह कारज किया ।  
 तिनही अनादी भ्रमन पंचप्रकार तजि वर सुख  
 लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यौ बडभागि  
 रत्नत्रय धरैं । अरु धरैंगे ते शिव लहैं तिन सुजस  
 जल जगमल हरैं ॥ इमि जानि आलस हानि  
 साहस ठानि यह सिख आदरो । जबलों न रोग  
 जरा गहै तबलों जगत निज हितकरो ॥१४॥  
 यह राग आग दहै सदा तातैं समामृत सेइये ।  
 चिर भजे विषय कषाय अब तौ त्याग निजपद  
 बेइये ॥ कहा रच्यो परपदमें न तेरो पद यहै



क्यों दुख सहै । अब 'दौल' होउ सुखी स्वपदु  
रचि दाव मत चूको यहै ॥ १५ ॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी, तीज शुक्ल  
वैशाख । कन्यो तत्व उपदेश यह, लखि बुधजन-  
की भाख ॥ १६ ॥ लघुधी तथा प्रमादतैं, शब्द  
अर्थकी भूल । सुधी सुधार पढो सदा, जो पावो  
भवकूल ॥ १७ ॥

इति श्री पं० दौलतरामजीकृत छहढाला समाप्त ।

## अथ वाईस परीषह ।

छप्पय ।

क्षुधा तृषाँ हिमँ ऊर्नँ डंसमंसकँ दुख भारी ।  
निरावरणँ तन अरँति वेद उपजावन नारी ॥  
चरयाँ आसनँ शयनँ दुष्ट वायकँ बध बन्धनँ ।  
याचैँ नैहीं अलाभँ रोगँ तृणँ परस होय तन ॥  
मल जँनित मान सनमानँ वश प्रज्ञाँ और  
अज्ञानँ कर । दरशनँ मलीन वाईस सब साधु  
परीषह जान नर ॥ १ ॥

दोहा ।

सूत्र पाठ अनुसार ये कहे परीषह नाम । इन-

के दुख जो मुनि सहेँ तिनप्रति सदा प्रणाम । २ ।

( १ ) क्षुधापरीषह पोमावती छंद ।

अनसन ऊनोदर तप पोषत पक्षमास दिन बीत  
गये हैं । जो नहिं बने योग्य भिक्षा विधि सूख  
अंग सब शिथिल भये हैं । तब तहां दुस्सह  
भूखकी बेदन सहत साधु नहिं नेक नये हैं ।  
तिनके चरणकमल प्रति प्रतिदिन हाथ जोड  
हम शीश नये हैं ॥ ३ ॥

( २ ) तृषापरीषह

पराधीन मुनिवरकी भिक्षा परघर लेंय कहेँ  
कुछ नाहीं । प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढत  
प्यासकी त्रास तहांहीं ॥ ग्रीषमकाल पित्त अ-  
तिकोपै लोचन दोय फिरे जब जाहीं । नीर न  
चहेँ सहेँ ऐसे मुनि जयवन्ते वतों जगमाहीं । ४ ।

( ३ ) शीतपरीषह

शीतकाल सबही मन कम्पत खडे तहां वन  
वृक्ष डहे हैं । झंझा वायु चलै वर्षाऋतु वर्षत पा-  
दल झूम रहे हैं । तहां धीर तटनी तट चौपट

ताल पाल परकर्म दहे हैं । सहैं सँभाल शीतकी  
बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥ ५ ॥

( ४ ) उष्णपरीषह

भूखप्यास पीडै उरअंतर प्रजुलै आंत देह सब  
दागै । अग्नि स्वरूप घूप ग्रीषमकी ताती वायु  
झालसी लागै । तपैं पहाड़ ताप तन उपजति  
कोपै पित्त दाह ज्वर जागै । इत्यादिक गर्मीकी  
बाधा सहैं साधु धीरज नहिं त्यागैं ॥ ६ ॥

( ५ ) डन्समशक परीषह

डन्स मशक माखी तनु काटैं पीडैं बन पक्षी  
बहुतेरे । डसैं ब्याल विषहारे विच्छू लगैं खजू-  
रे आन घनेरे ॥ सिंह स्याल सुंडाल सतावैं रीछ  
रोझ दुख देहिं घनेरे । ऐसे कष्ट सहैं समभावन  
ते मुनिराज हरो अघ मेरे ॥ ७ ॥

( ६ ) नम्र परीषह

अन्तर विषय वासना बरतै बाहरलोक लाज  
भय भारी । यातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिं  
सकैं दीनसंसारी ॥ ऐसी दुर्द्धर नगन परीषह

जीतें साधु शीलव्रतधारी । निर्विकार बालक-  
वत निर्भय तिनके चरणों धोक हमारी ॥ ८ ॥

( ७ ) अरति परीषह

देशकालका कारण लहिकै होत अचैन  
अनेक प्रकारें । तब तहां छिन्न होत जग वासी  
कलमलाय थिरतापद छडैं ॥ ऐसी अरति प-  
रीषह उपजत तहां धीर धीरज उर धारैं । ऐसे  
साधुनको उर अंतर बासो निरन्तर नाम  
हमारे ॥ ९ ॥

( ८ ) स्त्री परीषह

जो प्रधान केहरिको पकडैं पन्नग पकड पान-  
से चाबैं जिनकी तनक देख भों बांकी कोटिन  
सूर दीनता जापैं । ऐसे पुरुष पहाड़ उड़ावन  
प्रलय पवन त्रिय वेदपयापैं । धन्य २ वे सूर  
साहसी मन सुमेर जिनका नहिं कांपैं ॥१०॥

( ९ ) चर्या परीषह

चार हाथ परवान परख पथ चलत दृष्टि इत  
उत नहिं तानैं । कोमल चरण कठिन धरतीपर  
धरत धीर बाधा नहिं मानैं । नाग तुरंग पालकी

घटते ते सर्वादियादि नहिं आनैँ । यों मुनिराज  
सहैँ चर्या दुख तब दृढकर्म कुलाचल भानैँ ॥११॥

( १० ) आसन परीषह

गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसैँ जहां शु-  
द्ध भूँ हरेँ । परमितकाल रहैँ निश्चल तन बार  
बार आसन नहिं फेरैँ । मानुषदेव अचेतन पशु-  
कृत बेटे विपाति आन जब धेरैँ । ठौर न तजैँ  
भजैँ थिरतापद ते गुरु सदा बसो उर मेरैँ ॥१२॥

( ११ ) शयन परीषह

जो प्रधान सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय  
सुख जोवैँ, ते अब अचल अंग एकासन कोम-  
ल कठिन भूमिपर मोवैँ ॥ पाहनखांड कठोर  
कांकरी गड़त कोर कायर नहिं होवैँ । ऐसी श-  
यन परीषह जीतैँ ते मुनि कर्मकालिमा धोवैँ ॥

( १२ ) आक्रोश परीषह

जगत जीव जावन्त चराचर सबके हित स-  
वको सुखदानी । तिन्हें देख दुर्वचन कहैँ खल  
पाखंडी ठग यह अभिमानी । मारो याहि पकड़

पापीको तपसी भेष चोर है छानी । ऐसे वचन  
बाणकी बेला क्षमा ढाल ओढ़ें मुनिज्ञानी ॥१४॥

( १३ ) व्रत बंधन परीषद्

निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट  
लोग मिल मारें । कोई खैच खंनसै बांधै कोई  
पावकमें परजारें । तहां कोप करते न कदा-  
चित पूरब कर्म विपाक विचारें । समरथ होय  
सहै बध बंधन ते गुरु भव भव शरण हमारें ॥

( १४ ) याचना परीषद्

घोर वीर तप करत तपोधन भयेक्षीण सूखी  
गल बाँहीं । अस्थि चाम अवशेष रहो तन न-  
साँजाल झलकें तिसमाहीं ॥ औषधि असन  
पान इत्यादिक प्राण जाउ पर जांचत नाहीं ।  
दुर्द्धर अयाचीक व्रत धारें करें न मालिन  
धरम परछाहीं ॥ १६ ॥

( १५ ) अलाम परीषद्

एकबार भोजनकी बेला मौनसाध बस्तीमें  
आवें । जो न बनै योग्य भिक्षा विधि तो मह-

न्त मन खेद न लावैं ॥ ऐसे भ्रमत बहुत दिन  
चीतैं तब तपवृद्धि भावना भावैं । यों अलाभ  
की परम परीषह सहैं साधु सो ही शिव पावैं ॥

( १६ ) रोग परीषह

वात पित्त कफ श्रोणित चारों ये जब घटैं  
बढ़ैं तनु माहीं, रोग संयोग शोक जब उपजत  
जगत जीव कायर होजाहीं ॥ ऐसी ज्याधि  
वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न चाहीं । आ-  
तमलीन विरक्त देहसों जैनयती निज नेम  
निवाहीं ॥ १८ ॥

( १७ ) तृणस्पर्श परीषह

सूखेतृण अरु तीक्ष्णकांटे कठिन कांकरीपांय  
विदारैं । रज उड़ आनपड़े लोचनमें तीर फां-  
स तनु पीर विथारैं ॥ तापर पर सहाय नहिं  
बांछत अपने करसैं काढ न डारैं । यों तृण  
परस परीषह विजयी ते गुरु भव २ शरण  
हमारैं ॥ १९ ॥

( १८ ) मल परीषह

यावज्जीव जल न्हौन तजो जिन नग्नरूप

वन थान खड़े हैं । चलै पसेव धूपकी बेला उड़-  
तधूल सब अंग भरे हैं । मलिन देहको देख महा-  
मुनि मलिनभाव उर नाहिं करै हैं । यों मल  
जनित परीषह जीतैं तिनहिं हाथ हम सीस  
धरे हैं ॥ २० ॥

( १६ ) सत्कार पुरस्कार परीषह

जो महान विद्यानिधि विजयी चिर तपसी-  
गुण अतुल भरे हैं, तिनकी विनय वचनसे अ-  
थवा उठ प्रणाम जन नाहिं करै हैं । तो मुनि  
तहां खेद नाहिं मानत उर मलीनता भाव हरे  
हैं । ऐसे परम साधुके अहनिशि हाथ जोड हम  
पांय परे हैं ॥ २१ ॥

( २० ) प्रज्ञा परीषह

तर्क छंद व्याकरण कलानिधि आगम अलं-  
कार पढ जानैं । जाकी सुमति देख परवादी वि-  
लखत होंय लाज उर आनैं ॥ जैसे सुनत नाद  
केहरिका वनगयंद भाजत भय मानैं । ऐसी म-  
दाबुद्धिके भाजन पर मुनीश मद रंच न ठानैं । २२



(२१) अज्ञान परीषह ।

सावधान बर्ते निशिवासर संयमशूर परम  
वैरागी । पालत गुप्ति गये दीरघदिन सकल संग  
ममता परत्यागी ॥ अवधिज्ञान अथवा मन  
पर्यय केवलि ऋद्धि न अजहूं जागी । यों वि  
कल्प नहिं करैं तपोनिधि मो अज्ञान विजयी  
बडभागी ॥ २३ ॥

( २२ ) अदर्शन परीषह

में चिरकाल घोर तपकीना अजां ऋद्धि अ-  
तिशय नहिं जागै । तपबल सिद्ध होत मव सु-  
नियत सो कुछ वात झूठसी लागै । यों कदापि  
चितमें नहिं चिंतत समकित शुद्ध शांति रस  
पागै । सोई माधु अदर्शन विजई ताके दर्शन  
से अघ भागै ॥ २४ ॥

किस किस कर्मके उदय कौन कौन परीषह होती हैं .

घनाक्षरी छन्द ।

ज्ञानावरणीतैं दोइ प्रज्ञा अज्ञान होइ एक महा  
मोहतैं अदर्शन बखानिये । अन्तराय कर्म सेती  
उपजै अलाभ दुख सप्त चारित्र मोहनी केवल

जानिये ॥ नगन निषध्या नारि मान सन्मानगा-  
रियांचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये ।  
एकादश बाकी रहीं वेदना उदयसे कही बाईस  
परीषह उदय ऐसे उर आनिये ॥२५॥

अडिल छंद ।

एकवार इनमाहिं एकमुनिके कही । सब उनी-  
स उत्कृष्ट उदय आवैं सही ॥ आसन शयन  
विहाय दोय इन माहिकी । शीत उष्णमें एक  
तीन ये नाहिकी ॥२६॥

॥ इति बाईसपरीसह समाप्त ॥

पं० सुरजचन्दजी रचित । नरेन्द्र छन्द

**समाधिमरण भाषा ।**

बंदों श्रीअरहंत परमगुरु, जो सबको सुखदाई ।  
इस जगमें दुख जो मैं भुगते, सो तुम जानो राई ॥  
अब मैं अरज करूं प्रभु तुमसे, करसमाधि उर  
माहिं । अंतसमयमें यह बर मांगूं सो दीजै जग  
राई ॥१॥ भवभवमें तनधार नये मैं, भव भव  
शुभ संग पायो । भव भवमें नृपरिद्धि लई मैं ।

मात पिता सुत थायो ॥ भव भवमें तन पुरुष-  
 तनों धर. नारी हू तन लीनो । भवभवमें मैं भयो  
 नपुसक, आतमगुण नहिं चीनों ॥ २ ॥ भवभव  
 में सुरपदवीपाई, ताके सुख अति भोगे । भवभव  
 में गति नरकतनी धर, दुख पाये विधि योगे ॥  
 भव भवमें तिर्यच योनिधर, पायो दुख अति  
 भारी । भवभवमें साधर्मीजनको, संग मिल्यो  
 हितकारी ॥ ३ ॥ भवभवमें जिनपूजन कीनी,  
 दान सुपात्रहिं दीनो । भवभवमें मैं समवसरणमें,  
 देख्यो जिनगुण भीनो ॥ एती वस्तु मिली भव  
 भवमें सम्यकगुण नहिं पायो । ना समाधियुत  
 मरण कियो मैं, तातैं जग भरमायो ॥४॥ काल  
 अनादि भयो जग भ्रमते, सदा कुमरणहिं कीनो  
 एकबार हूं सम्यकयुत मैं, निज आतम नहिं  
 चीनो ॥ जो निजपरको ज्ञान होय तो, यरण  
 समय दुख काँई । देह विनासी मैं निजभासी,  
 जोतिस्वरूप सदाई ॥ ५ ॥ विषयकषायनके  
 वश होकर, देह आपनो जान्यो । कर मिथ्यासर-

धान हियेविच, आतम नाहिं पिछान्यो ॥ यों  
 कलेश हियधार मरणकर, चारों गति भरमायो ।  
 सम्यकदर्शन-ज्ञान-चरन ये, हिरदेमें नहिं लायो  
 ॥ ६ ॥ अब या अरज करूं प्रभु सुनिये, मरण  
 समय यह मांगों । रोगजनित पीडा मत होवो,  
 अरु कषाय मत जागो ॥ ये मुझ मरणसमय  
 दुखदाता, इन हर साता कीजै । जो समाधि-  
 युतमरण होय मुझ, अरु मिथ्यागद छीजै । ७।  
 यह तन सात कुधातमई है, देखतही धिन आवै ।  
 चर्मलपेटी ऊपर सोहै, भीतर विष्टा पावै ॥  
 अतिदुर्गंध अपावनसों यह, मूरख प्रीति बढावै ।  
 देह विनासी, जियअविनासी नित्यस्वरूप कहावै  
 ॥ ८ ॥ यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातें  
 प्रीति न कीजै । नूतन महल मिलै जब भाई,  
 तब यामें क्या छीजै ॥ मृत्युहोनसे हानि कौन है,  
 याको भय मत लावो । समतासे जो देह तजोगे,  
 तो शुभतन तुम पावो ॥९॥ मृत्यु मित्र उपका-  
 री तेरो, इसअवसरके माहीं । जीरनतनसे देत

नयो यह, या सम साहू नहीं ॥ या सेती इस  
 मृत्युसमयपर, उत्सव अति ही कीजै । क्लेशभाव-  
 को त्याग सयाने समताभाव धरीजै ॥१०॥ जो  
 तुम पूरव पुण्य किये हैं, तिनको फल सुखदाई ।  
 मृत्युमित्र विन कौन दिखावै, स्वर्गसंपदा भाई ॥  
 रागरोषको छोड सयाने, सात व्यसन दुखदाई ।  
 अंतसमयमें समता धारो, परभवपंथसहाई । ११।  
 कर्म महादुठ बैरी मेरो, तासेती दुख पावै । तन  
 पिंजरमें बंध कियो मोहि, यासों कौन छुडावै ॥  
 भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तनमें गा-  
 ढै । मृत्युराज अब आय दयाकर, तनपिंजरसों  
 काढै ॥१२॥ नाना वस्त्राभूषण मँने, इस तनको  
 पहराये । गंधसुगंधित अतर लगाये, पटरम  
 असन कराये ॥ रात दिना मैं दास होयकर, सेव  
 करी तनकेरी । सो तन मेरे काम न आयो, भूल  
 रह्यो निधि मेरी ॥ १३ ॥ मृत्युरायको शरन  
 पाय तन- नूतन ऐसो पाऊं । जामें सम्यकरतन  
 तीन लहि आठों कर्म खपाऊं ॥ देखो तन

सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जगमाहीं । मृत्यु  
समयमें ये ही परिजन, सबही हैं दुखदाई ॥ १४ ॥  
यह सब मोह बढ़ावनहारे, जियको दुर्गतिदाता ।  
इनसे ममत्त निवारो जियरा, जो चाहो सुख  
साता ॥ मृत्यु कल्पदुरुम पाय सयाने, मांगोइच्छा  
जेती । समता धरकर मृत्यु करो तो पावो संप-  
तितेती ॥ १५ ॥ चौआराधन सहित प्राण तज,  
तौ ये पदवी पावो । हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर  
स्वर्गमुक्तिमें जावो ॥ मृत्युकल्पदुरुम सम नहिं  
दाता, तीनों लोक मझारै । ताको पाय कलेश  
करो मत, जन्म जवाहर हारे ॥ १६ ॥ इस त-  
नमें क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन होहै ।  
तेजकांति बल नित्य घटत है, या सम अथिर  
सुको है ॥ पांचों इंद्रि शिथिल भई अब, स्वास  
शुद्ध नाहिं आवै । तापर भी ममता नहिं छोडै  
समता उर नहिं लावै ॥ १७ ॥ मृत्युराज उप-  
कारी जियको तनसों तोहि छुडावै । नातर या  
तनबंदीग्रहमें पर्यो पर्यो बिललावै । पुदगु-

## सच्चा जिनवाणी संग्रह—



दासी द्वारा सुदर्शनको रनवासमें ले जानेका पड़यन्त्र ।

( सुदर्शन चरित्र )

## सच्चा जिनवाणी संग्रह—



गौतम स्वामीका अभिमान मानस्तंभको देखकर चूर २ होगया ।

( गौतम चरित्र )



लके परमाणु मिलकें पिंडरूप तब ~~हृदय~~ ~~हृदय~~  
मूरत में अमूरती ज्ञानजोति गुणस्वार्सा ॥१८॥  
रोगशोक आदिक जो वेदन ते सब पुदगुल-  
लारैं। मैं तो चेतन व्याधि विना नित हैं सो  
भाव हमारे ॥ या तनसों इस क्षेत्र संबंधी, कार-  
ण आन बन्यो है। खान पान दे याको पोष्यो  
अब सम भाव ठन्यो है ॥१९॥ मिथ्यादर्शन  
आत्मज्ञान विन यह तन अपना जान्यो। इंद्रि-  
भाग गिने सुख मैंने आपो नाहिं पिछान्यो ॥  
तन विनशनतैं नाश जानि निज यह अयान  
सुखदाई। कुटुम आदिको अपनो जान्यो भूल  
अनादी छाई ॥२०॥ अब निज भेद जथारथ  
समभयो मैं हूं ज्योतिस्वरूपी। उपजै विनसै सो  
यह पुदगल जान्यो याको रूपी ॥ इष्टऽनिष्ट जेते  
सुख दुख हैं सो सब पुदगल सागै। मैं जब  
अपना रूप विचारों तब वे सब दुख भागै  
॥ २१ ॥ विन समता तनऽनंत धरे मैं तिनमें  
ये दुख पायो। शस्त्रघाततैंऽनन्त बार मर

नाना योनि भूमायो ॥ बार अनंतहि अग्नि  
 माहिं जर मूवो सुमति न लायो । सिंह व्याघ्र  
 अहिऽनन्त बार मुक्क नाना दुःख दिखायो  
 ॥२२॥ विन समाधि ये दुःख लहे मै अब उर  
 समता आई । मृत्युराजको भय नहिं मानो देवै  
 तन सुखदाई ॥ यातै जब लग मृत्युन आवै  
 तबलग जपतप कीजै । जपतपविन इस जगके  
 माहीं कोई भी ना सीजै ॥ २२ ॥ स्वर्गसंपदा  
 तपसों पावै तपसों कर्म नसावै । तपही सों  
 शिवकामिनिपति द्वै यासों तप चित लावै ॥  
 अब मै जानी समता विन मुक्क कोऊ नाहिं  
 सहाई । मात पिता सुत बांधव तिरिया ये सब  
 हैं दुखदाई ॥ २४ ॥ मृत्यु समयमें मोह करें ये  
 तातै आरत हो है । आरततै गति नीची पावै  
 यों लख मोह तज्यो है ॥ और परीग्रह जेते जग  
 मै तिनसों प्रीत न कीजे । परभवमै ये संग न  
 चालें नाहक आरत कीजे ॥२५॥ जे जे वस्तु  
 लखत हैं ते पर तिनसों नेह निवारो । परगति

मैं ये साथ न चालै, ऐसो भाव विचारो ॥ जो  
 परभवमें संग चलै तुझ. तिनसों प्रीत सु कीजै ।  
 पंच पाप तज समता धारो, दान चार विध दीजै  
 ॥ २६ ॥ दशलक्षणमयधर्म धरो उर, अनुकंपा  
 उर लावो । षोडशकारण नित्य विचारो, द्वादश  
 भावन भावो ॥ चारों परवी प्रोषध कीजै, अशन  
 रातको त्यागो । समता धर दुरभाव निवारो,  
 संयमसों अनुरागो ॥ २७ ॥ अंत समयमें यह  
 शुभ भावहि, होवें आनि सहाई । स्वर्गमोक्षफल  
 तोहि दिखावें, ऋद्धि देहिं अधिकाई । खोटे भाव  
 सकल जिय त्यागो, उरमें समता लाकैं । जासेती  
 गतिचार दूरकर, बसहु मोक्षपुर जाकैं ॥ २८ ॥  
 मनथिरता करकै तुम चितो, चौ आराधन भाई ।  
 येही तोकों सुखकी दाता, और हितू कोउ नाहीं ॥  
 आगैं बहु मुनिराज भये हैं, तिन गहि थिरता  
 भारी । बहु उपसर्ग सहे शुभ पावन, आराधन  
 उरधारी ॥ २९ ॥ तिनमें कछुइक नाम कहूं मैं,  
 सो सुन जिय चित लाकै । भावसहित अनु-

मोदें तासों, दुर्गति होय न ताकै ॥ अरु समता  
 निज उरमें आवै, भाव अधीरज जावै । यों नि-  
 शदिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये विच  
 लावै ॥ ३० ॥ धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि,  
 कैसैं धीरज धारी । एक श्यालनी जुगबन्नाजुत  
 पांव भरूपो दुखकारी ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर  
 थिरता, आराधन चितधारी । तो तुमरे जिय  
 कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव भारी ॥ ३१ ॥  
 धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी. व्याघ्रीने तन  
 स्वायो । तौ भी श्रीमुनि नेक डिगे नाहिं. आतम  
 सों हित लायो ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता,  
 आराधन चितधारी । तौ तुमरे ० ॥ ३२ ॥ देखो  
 गजमुनिके शिर ऊर. विप्र अग्नि बहु बारो ।  
 शीश जलै जिम लकडी तिनको. तौ भी नाहिं  
 चिगारी ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता. आरा-  
 धन चितधारी । तौ तुमरे ० ॥ ३३ ॥ सनतकु-  
 मार मुनीके तनमें, कुष्ट वेदना व्यापी । छिन्न  
 भिन्न तन तासों हूवो, तत्र क्रियो गुण आपी ॥

यह उपमर्ग मह्यो धर थिरता, आराधन चित  
 धारी । तौ तुमरे० ॥ ३४ ॥ श्रेणिकसुत गंगा  
 में डूब्यो नब जिननाम चितर्यो । धर सले-  
 खना गरिग्रह छोड्यो शुद्ध भाव उर धार्यो ॥  
 यह उपमर्ग मह्यो धर थिरता आराधन चित  
 धारी । तौ तुमरे० ॥ ३५ ॥ ममतभद्रमुनिवरके  
 तनमें छुधावेदना आई । तौ दुखमें मुनिनेक  
 न डिगियो चित्यो निजगुण भाई । यह उपमर्ग  
 मह्यो धर थिरता आराधन चितधारी तौ तु  
 मरे० ॥ ३६ ॥ ललितघटादिक तीस दोय मुनि  
 कौशांबीतट जानो । नदीमें मुनि बहकर मूवे  
 सो दुख उन नहिं मानो ॥ यह उपमर्ग मह्यो  
 धर थिरता आराधन चितधारी । तौ तुमरे०  
 ॥ ३७ ॥ धर्मघांश मुनि चंपानगरी बाह्य ध्यान  
 धर ठाड़ो । एक मामकी कर पर्यादा तथा दुःख  
 सह गाढो ॥ यह उपमर्ग मह्यो धर थिरता आ-  
 राधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ३८ ॥ श्रीदत्तमु-  
 निको पूर्वजन्मको वैरी देव सु आके । विक्रिय

कर दुख शीततनो सो, सह्यो साध मन लाके ॥  
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित-  
 धारी । तौ तुमरे० ॥ ३९ ॥ वृषभसेन मुनि उ-  
 ष्णसिलापर, ध्यान धन्यो मनलाई । सूर्यधाम  
 अरु उष्ण पवनकी, वेदन सहि अधिकाई ॥ यह  
 उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।  
 तौ तुमरे० ॥ ४० ॥ अभयघोषमुनि काकंदीपुर,  
 महावेदना पाई । बैरी चंडने सब तन छेद्यो, दुख  
 दीनो अधिकाई ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता,  
 आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ४१ ॥ विद्युत-  
 चरने बहु दुख पायो, तौ भी धीर न त्यागी ।  
 शुभभावनसों प्राण तजे निज, धन्य और  
 बट्यागी ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आ-  
 राधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ४२ ॥ पुत्रचि-  
 लाती नामा मुनिको, बैरीने तन घाता । मोटे  
 मोटे कीट पडे तन, तापर निज गुण राता ॥ यह  
 उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी ।  
 तौ तुमरे० ॥ ४३ ॥ दंडकनामा मुनिकी देही, बा

कर अरि भेदी । तापर नेक डिगे नहिं वे मुनि,  
 कर्म महारिपु छेदी ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिर-  
 ता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ४४ ॥ अभि-  
 नंदन मुनि आदि पांचसौ, घानी पेलि जु मारे ।  
 तौ भी श्रीमुनि समताधारी, पूरबकर्म विचारे ॥  
 यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित-  
 धारी । तौ तुमरे० ॥ ४५ ॥ चाणकमुनि गौध-  
 रके माहीं, मूंद अगिनि परजाल्यो । श्रीगुरु उर  
 समभाव धारकै, अपनो रूप सम्हाल्यो ॥ यह उ-  
 पसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी । तौ  
 तुमरे० ॥ ४६ ॥ सातशतक मुनिवर दुख पायो,  
 हथनापुरमें जानो । बलिब्राह्मणकृत घोरउपद्रव,  
 सो मुनिवर नहिं मानो ॥ यह उपसर्ग सह्या धर  
 थिरता आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ४७ ॥  
 लोहमयी आभूषण गढके, ताते कर पहराये ।  
 पांचों पांडव मुनिके तनमें, तौ भी नाहिं  
 चिगाये ॥ यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता,  
 आराधनचितधारी । तौ तुमरे० ॥ ४८ ॥ और

अनेक भये इस जगमें, समतारसके स्वादी ।  
 वे ही हमको हो सुखदाता, हर हैं देव प्रमादी ॥  
 सम्यकदर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारों ।  
 ये ही मोको सुखकी दाता, इन्हें सदा उर धारों  
 ॥ ४९ ॥ यों समाधि उरमाहीं लावो, अपनो  
 हित जो चाहो । तज ममता अरु आठों मदका-  
 जोतिस्वरूपी ध्यावो ॥ जो कोई नित करत प-  
 यानो. ग्रामांतरके काजै । सो भी शकुन विचारै  
 नीके. शुभके कारण साजै ॥ ५० ॥ मातपिता  
 दिक् सर्व कुटुम सब. नीके शकुन बनावै । हलदी  
 धनिया पुंगी अक्षत, दूब दही फल लावै ॥ एक  
 ग्रामजानेके कारण, करै शुभाशुभ सारे । जब  
 परगतिको करत पयानो. तब नहिं सोचौ प्यारे  
 ॥ ५१ ॥ सर्वकुटुम जब रोवन लागै. तोहि रु-  
 लावै सारे । ये अपशकुन करै सुन तोकों. तू यों  
 क्यों न विचारै ॥ अब परगतिको चालत विरियां.  
 धर्मध्यान उर आनो । चारों आराधन आराधो.  
 मोहतनो दुख हानो ॥ ५२ ॥ होय निःशल्य तजो



सब दुविधा. आत्मराम सुध्यावो । जब परग-  
 तिको करहु पयानो. परम तत्त्व उर लावो ॥ मोह  
 जालको काट पियारे. अपनो रूप विचारो । मृत्यु-  
 मित्र उपकारी तेरो. यों उर निश्चय धारो ॥ ५३ ॥  
 दोहा—मृत्युमहोत्सव पाठको. पढो सुनो बुधि-  
 वान । सरधा धर नित सुख लहो. सूरचंद शि-  
 वथान ॥ ५४ ॥ पंच उभय नव एक नभ. संबत  
 सो सुखदाय । आश्विन श्यामा सप्तमी. कह्यो  
 पाठ मन लाय ॥ ५५ ॥

इति श्रीसमाधिमरण पाठ भाषा समाप्ता ॥

बारहमासा नेमिराजुलका ।  
 विनवै उग्रसेनकी लाडलड़ी करजोर नेमिजीके  
 आगें खरी । तुम काहे पिया गिरनार चढे. हम-  
 सेती कहो कहा चूक परी ॥ यह समय नहीं पिय  
 संजमको. तुम काहेको ऐसी चित्त धरी । कैसे  
 बारहमास बितावोगे तुम. समझावो मुहिको  
 सगरी ॥ १ ॥

तुम आगें अषाढमें क्यों न लियो व्रत. काहे

को एती बरात बुलाई । अरु छप्पनकोड जुड़े  
यदुवंशी. व्याहन आये निशान बजाई ॥ संग  
समुद्रविजय बलभद्र मुरारिहुकी तुम्हें लाज न  
आई । नेमिपिया उठ आवो घरै. इन बातनमें  
कहो कौन बडाई ॥ २ ॥ बडाई कहा करिये  
सुन राजुल. जीवन है निशको सुपनो । सुत  
बंधु बधू सब जात चले. जलबूंद जैसें तन है  
अपनो ॥ दिन चारकके महमान सबै. थिरता न  
कछू सब है स्वपनो । तिहँतैं इह जान अनित्य  
सबै. हमरे अब सिद्धनको जपनो ॥ ३ ॥

पिया सावनमें व्रत लीजे नहीं, घनघोर घटा  
जुर आवैगी । चहुँओरतैं मोर जु शोर करैं,  
वन कोकिल कुहक सुनावैगी ॥ पिय रैन अँधेरी  
में सूझै नहीं. कछु दामन दमक डरावैगी । पुर-  
वाईकी झोंक सहोगे नहीं. छिनमें तपतेज छुडा-  
वैगी ॥ ४ ॥ या जियको कोइ न राखनहार.  
कहो किसकी शरणागत जैये । कालबली सब  
साँ जगमें तिहसाँ. निशिवासर देख डरैये ॥ इंद्र

नरेंद्र धनेंद्र सर्वे जम आन परै तब बांध चलैये ।  
यातैं कहा डर सावनको सुन, राजुल चित्तको  
यां समभैये ॥५॥

पिय भादवकी वरषा वरषै कैसेँ दिन रैन गमा-  
वोगे । चहुँओरतैं पौन भकोर करै तब क्योंकर  
बुँदैं बचाओगे ॥ घर ही क्यों न आयकै जोग  
धरो बनमें बहु दुःख उठावोगे । कहै राजमती  
पिय मान कही शिवसुंदर यां नहिँ पावोगे ॥

।६। या जगमें सुख नेकु न राजुल दुःखमें काल  
अनंत गँवायो । योनहिँ लाख चुगर्मा फिरयो  
गति चारुंही जाय महादुख पायो ॥ रोगहि  
शोक वियोग भरे फिर जामन मरण अनेक  
सतायो । भादवकी वरषा किस गिनर्तामें नर-  
क निगोदनमें फिर आयो ॥ ७ ॥

पिय लागैगो मास असोज जबै तब शीतल  
बूंद सुहावैगी । कितहूँ गरजै कितहूँ वरषै कितहूँ  
दुतिचंद्र दिखावैगी ॥ छिन वायु ब्रहै छिन श्रीष-  
मता छिनमें ऋतु तीन जनावैगी । कहै राजम-

ती पिय मान कह्यो. छिनही छिन चित्त डुलावैगी  
 ॥ ८ ॥ कैसें कर चित्त डुलै सुन राजुल. एकतै  
 एक समाधि लगावै । एक फिरै तिहुँलोकमें  
 हिंडत. एक विना फिर एक न पावै ॥ जाय जहां  
 तहां है इकलो. इकलो विडवै इकलोइ गँवावै ।  
 आवत जात अकेलो रहै यह. आदि अनादि  
 अकेलो ही धावै ॥ ९ ॥

पिय कातिकमें मन कैसें रहै जब भामिनि  
 भौन सजावैगी । रचि चित्र विचित्र सुरंग सबै.  
 घर ही घर मंगल गावैगी ॥ पिय नूतन नारि  
 मिंगार किये अपनो पिय टेर बुलावैगी । पिय  
 बारहिवार बरै दियरा. जियरा तुमरा तरसावैगी  
 ॥१०॥ तो जियरा तरसै सुन राजुल. जो तनको  
 अपनो कर जानै । पुदगल भिन्न है भिन्न सबै  
 तन. छांडि मनोरथ आन समानै ॥ बूडैगो सोई  
 कलिधारमें. जड़ चेतनको जो एक प्रमानै । हंस  
 पिवै पय भिन्न करै जल. सो परमात्म आत्म  
 जानै ॥ ११ ॥

• हिमकी ऋतु आवैगी नाथ जबै. तब शीतल  
 पौन सुआवैगी । तब शीतल नीर समीर लगै.  
 तन अंबर प्रीत जनावैगी ॥ सब भोजन पान  
 सुहान लगै. सगरी तनताप बुझावैगी ॥ कहै  
 राजमती अगहनमें जबै ऋतु नायक लायक  
 आवैगी ॥ १२ ॥ यह देह अपावन खेह भरी.  
 सुन राजुल यामें कहा थिर है ॥ यह चामकी  
 चादर ओट दिये. इसमें कृमिकीटनको घर है ॥  
 यह मूतन पीव पुरीष भरी यह. हाडरु पिंजरको  
 घर है। तिहितैं इसको हम नेह तज्यो. हमको  
 अब शीतको का डर है ॥ १३ ॥

पिय पौषमें जाड़ो परैगो घनो विन. सौडके  
 शीत कैसें भरहो । कहा ओढोगे शीत लगै  
 जबही. किधौं पातनकी धुवनी धर हो ॥ तुमरो  
 प्रभुजी तन कोमल है. कैसें कामकी फौजनसों  
 लरहो । जब आवैगी शीत तरंग सबै. तब देखत  
 ही तिनकों डर हो ॥ १४ ॥

आस्रव होय जहांपर शोभित. शीत लगै अरु

पौन भकोरै । इंद्रिय पांच पसार जहां तहां राग  
 रोषतैं नातो हि जोरै ॥ आठ महामद मात रहैं  
 परद्रव्यको देख जहां चित्त दारै । जो पर आप  
 विचार न राजुल तो गृह आपतैं आपही बारै ॥

पिय माघ तुषार परैगो घनो. तब पाथरतैं  
 परिहौ गिरिकैं । यह मानुषदेह कहा वपुरी विन  
 अंबर शीत नहीं ठरकै । किन पावक होय सहाय  
 जहां नहिं शीत तुषार नहीं हरकै । कहै राजमती  
 उठमानो कहयो जु समै सिर जोग लिये फिरकै ॥  
 संवरअंबरमें रह राजुल शीत तुषार अनंत ब-  
 चाऊं । राग रु द्वेषबयार बहै तब छांय छिमा  
 तन छांनि छावाऊं । इंद्रिय पांच निरोध किये  
 करुणा करके मद आठ गवांऊं । आप लखों  
 परद्रव्य तजों समता गहिकैं मनको समभा-  
 ऊं ॥१७॥ पिय लागेगो फागुन मास जबै, तब  
 गावैंगी चहुं ओरतैं होरी । केसरकी पिचकारी  
 लिये कर. फै हैं गुलालनकी भर भोरी ॥ गावत  
 गीत धमार बजावत, ताल मृदंग लिये डफ गोरी

तब भूलोगे पिया बात सबै, जब खेलन आवैंगी  
 सब ओरी ॥१८॥ हम होरी खेलें सुन राजुल यों,  
 अपने घर ऐसे खेल मचाऊं । पांच सखी अपने  
 सँग लेकर, द्वादश भांतिके नाच नचाऊं ॥ पांच  
 सखी अपने सँग लेकर निर्जरसे सब कर्म जरा-  
 ऊं । खेल रचूं शिवसुंदरसों, तब आठहि कर्मकी  
 धूर उडाऊं ॥ १९ ॥ पिय लागैगो चैत वसंत सु-  
 हावनो, फूलैंगी बेल सबै बनमाहीं । फूलैंगी का-  
 मिनि जाको पिया घर, फूलैंगी फूल सबै बनराई ॥  
 खेलहिंगे ब्रजके बनमें सब बाल गुपाल रुकुँवर  
 चन्हाई । नेमि पिया उठ आवो घरै तुम काहेको  
 करहो लोग हँसाई ॥२०॥ तीनहु लोकको जा-  
 न सबै पुरुषाकर चौदह राजु ऊँचाई । ताके  
 घनाकार सबै तीनसौ तेतालिस है चौराई ॥ बात  
 बलैनसों बेठि रह्यो हरता करता न कोई ठहराई ।  
 यह आदि अनादितैं आयो चल्यो, सुन राजुल  
 यामें कहा है हँसाई ॥ २१ ॥ पिय मास वैशाख-  
 की ग्रीष्मता ऋतु शीतल नीरकी प्यास लगैगी ।

क्यों गिरिपै रहो नाथ मेरे अति घाम परै सब  
 देह दगैगी ॥ ऐसे कठोर भये कबतैं ममता तज-  
 के सब प्रीति पगैगी । नेमि पिया उठ आवो  
 घरै सुन एकहि बार न सिद्धि जगैगी ॥ २२ ॥  
 धर्मतैं सिद्धि नजीक है राजुल धर्म कियेतैं कहा  
 नहिं आवै । धर्मतैं इंद्र नरेंद्र धनेंद्र सुरेंद्रनका  
 सब ही पद पावै ॥ धर्म सुदर्शन ज्ञान चरित्र क-  
 रै तिहितैं शिवमार्ग पावै । धर्म महत्त बडो  
 जगमें जहां जीवदया तहां धर्म कहावै ॥ २३ ॥  
 धर्मकी बात तो सांची है नाथ पै जेठमें कैसैं ध-  
 र्म रहैगो । लूह चलै सरवान कमान ज्यों घाम  
 परै गिरमेरु बहैगो ॥ पक्षी पतंग सबै डर हैं अ-  
 पने घरको सब कोई चहैगो । भूखतृषा अति देह  
 दहै तब एसो महाव्रत क्यों निबहैगो ॥ २४ ॥  
 दुर्लभ है नरको भव राजुल दुर्लभ श्रावकयोनि  
 हमारी । दुर्लभ धर्म जु है दशलच्छन दुर्लभ षो-  
 डशभावना भारी ॥ दुर्लभ श्रीजिनराजको मा-  
 र्ग दुर्लभ है शिवसुंदर नारी । यह सब दुर्लभ



जान तबै जब दुर्लभ है सन्यासकी त्यारी । २५।  
 बारह मास जे पूरे भये तब नेमिहि राजुल जाय  
 सुनाये । नेमहिं द्वादस भांति तबै उठ पीछेसों  
 राजुलको समझाये ॥ राजुलने तब संजम ले सब  
 निर्जराकर वसु कर्म जराये । राजुलके पति नेमि  
 जिनेश्वर उत्तर लालविनोदीने गाये ॥ २६ ॥

॥ इति नेमिराजुलका बारहमासा समाप्त ॥

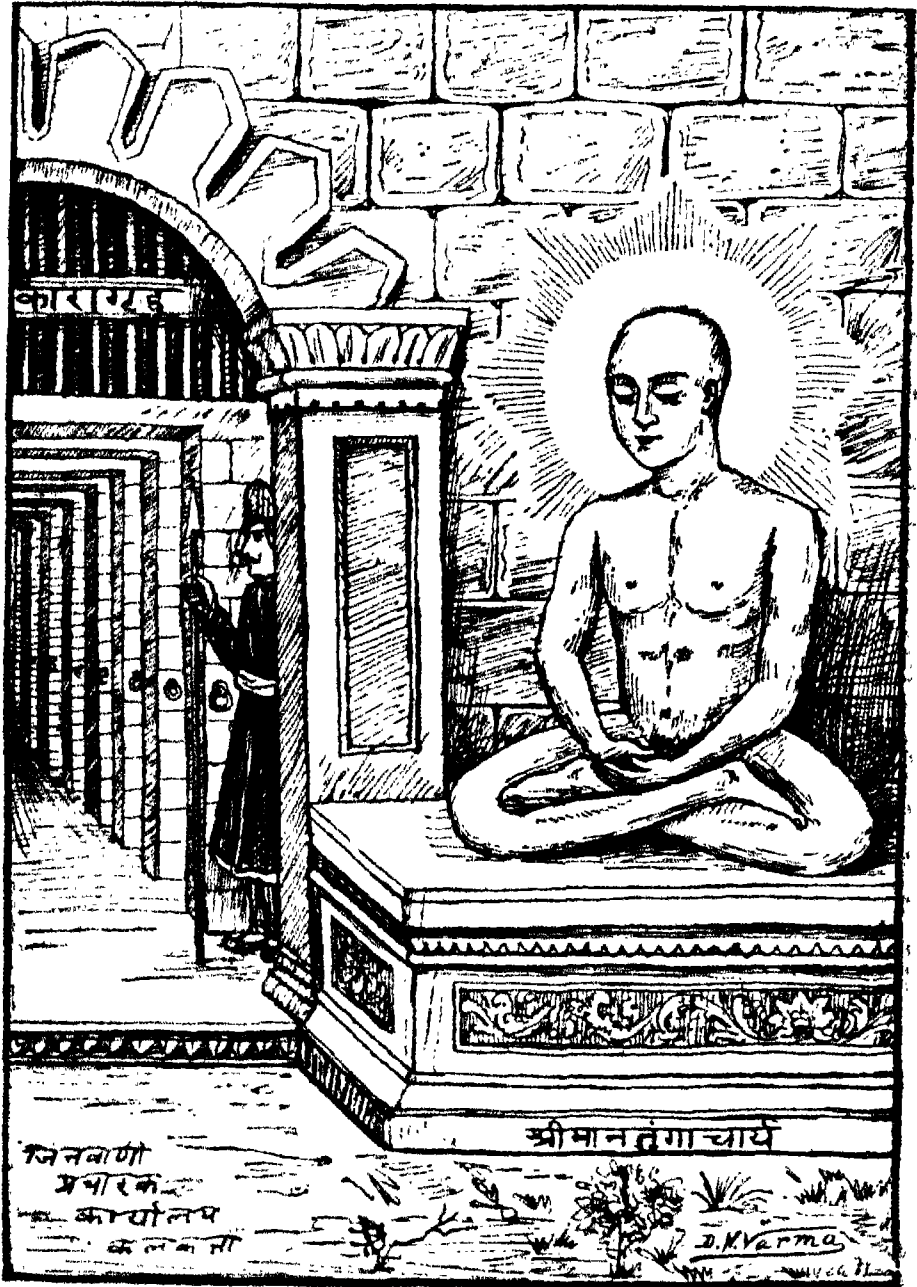
### । बारहमासा सीतासतीका ।

यति नैनसुखदासकृत ।

रागिनी हिंडोला चाल श्रावणकी मल्हार तथा निहालदे ।

विन कारण स्वामी क्यों तजी विनवै, जनक  
 दुलारि, विन कारण स्वामी क्यों तजी ॥ टेक ॥  
 साढ घुमडि आये बादरा, घन गरजै चहुं ओर ।  
 निर्जन वनमें स्वामी तुम तजी, बैठनकूं नहिं  
 ठौर ॥ विनकारण स्वामी क्यों तजी, विनवै  
 जनकदुलारि । विन० ॥ १ ॥ क्या मैं सतगुरु  
 निंदियो, क्या दियो सतियन दोष । क्या हम  
 सत संजम तज्यो, किस कारण भये रोस । वि०

# भक्तामरके प्रभावसे ४८ ताले टूट गये



॥२॥ क्या परपुरुष निहारिकै, परभव कियो है  
निदान । क्या इसभव इच्छा करी, क्या मैं कियो  
अभिमान । विन० । ३ । कटुक वचन स्वामी नहिं  
कहे, हिंसा करम न कीन । परधन पर चित नहिं  
दियो, क्यों मन भयो है मलीन ॥ विन० ॥ ४ ॥

श्रावण तुमसँग वनविषै, विपति सही भग-  
वान । पाँवपयादी बन बन में फिरी, तनक न  
राखी आन । विन० । १ । स्वसुर दिसौटा जिस  
दिन तुम दियो, कियो भरत सरदार । तादिन  
विकल्प नहिं कियो, तज संपति भइ लार ।  
विन० ॥ २ ॥ जनक पिताकी मैं हूँ लाडली, मात  
विदेहाकी बाल । भ्रात प्रभामंडलसे बली, विपत  
भरुं बेहाल । विन० ॥ ३ ॥ मात मंदोदरी गर्भमें  
जन्मी रावणगेह । परभव करमसंयोगसे, रावण  
कियो है सँदेह । विन० ॥ ४ ॥

भादों पंडित पूछियो, पंडित करी है विचार ।  
कन्याके कारण राजा तुम मरो, दीनी तुरत  
विसार । विन० ॥ १ ॥ छोडी धर मंजूसमें, जनक

नगर वनबीच । हलजोतत किरसानके, लई  
करमने खींच । विन० ॥ २ ॥ मरण भयो नहिं  
ता दिना, करम लिखे दुखदोष । करी नजर  
राजा जनकने, पाली पुत्र संजोग । विन० । ३।  
जनक स्वयंवर जब कियो, लिये सबभूप बुलाय ।  
दरशनकर थारे वश भई, परी चरणबिच आय  
॥ विन० ॥ ४ ॥

कारमास फिरगये भूपसब, मोकारण कियो  
युद्ध । बहुत बली मारे रणविषै, ठायो धनुष प्र-  
बुद्ध ॥ विन० ॥ १ ॥ खरदूषणके युद्धमें, आयो  
रावण दौड । छलकर धोका प्रभु तोहि दियो,  
नाद बजायो घनघोर । विन० ॥ २ ॥ जल्दी  
पधारो प्रभु में घिर गयो, तुम जानी भगवान ।  
कष्ट पड्यो जी मेरे भ्रातपै, उपज्यो मोह निदान  
॥ विन० ॥ ३ ॥ मोहि लकोई पात बटोरिकै,  
करम लिखी कछु और । आप पधारे अपने वीर  
पै आगयो रावण चोर ॥ विन० ॥ ४ ॥ चील  
झपट्टा करिकै लेगयो, मोकूं अधर उठाय । देखी

नाथ जटायुनै, क्या तुम जानत नाहिं । विन०  
 ॥ ५ ॥ झपटि झपटि वाकै शिर हुयो, मुकुट  
 खसोट्यो मूँछ उपारि । मारि तमानो डान्यो  
 भूमिपर, पक्षी खाईजी पछार ॥ विन० ॥ ६ ॥  
 लछमन तुमहिं निहारिकै, बात कही करि गौर ।  
 विनहिं बुलाये आये भ्रात क्यों है कछु कारण  
 और ॥ विन० ॥ ७ ॥ काहू छलियाने यह कछु  
 छल कियो. कै कछु करम चरित्र । नाहिं पिछा-  
 न्यो जावैं युद्धमें. कौन है वैरी कोन मित्र ॥  
 विन० ॥ ८ ॥

कातिक तुरत पटाइयो. उलट तुम्हें थारे भ्रात ।  
 विनही बुलाए आये आप क्यूं. शत्रु करेंगे उत-  
 पात । विन० ॥ १ ॥ आएजी तुरत रक्षा करनकूं,  
 हममे धर प्रभु प्यार । बिखरे ही पाये पत्र बेल  
 तब. खाई आप पछार । विन० ॥ २ ॥ भ्रात  
 हटाई आकै मूरछा. सकल शत्रुगण जीत । पडा  
 जटायू सिसकता, श्रावण धर्म पुनीत । विन०  
 ॥ ३ ॥ जन्म सुधारयो वाको आपने. मोविन

पायो नहिं चैन । डारी डारी दूंडी वनविषैं. रोय  
 सुजाये तुम नैन । विन० ॥ ४ ॥ धीर बंधाई  
 लछिमन भुजबली. बहुत करी थारी सेव । वि-  
 पति कटैगी प्रभु धीरज धरे. तदपि न माने थे  
 तुम देव । विन० ॥ ५ ॥ ल्याऊं काढ पतालसे.  
 ल्याऊं पर्वत फोर । अवर मिलैं तो सब कुछ मैं  
 करूं, चीर बगाऊं थारा चोर । विन० ॥ ६ ॥  
 फेर मिले जी प्रभु सुग्रीवसे. साहसगति दियो  
 मार । पाय सुतारा ल्यायो हनुमानकूं. दूंदन  
 भेज्यो मोहि ततकार । विन० ॥ ७ ॥

अगहन खबर मँगायकै, मोढिग भेज्यो  
 हनुमान । कूदि समुंदर गयो गढलंकमें. भेजी  
 तुम मुंदरी भगवान । विनका० ॥ १ ॥ तुमबिन  
 बैठी रोऊं बागमें. रामहि राम पुकार । अन्न  
 कियो ना पानी मैं पियो. परवश पडी थी  
 लाचार । विन० ॥ १ ॥ मुख धुलवायो हनुमानने.  
 तुम आज्ञा परवान । प्राण बचाये मेरे विपतमें.  
 करवायो जलपान । विन० ॥ ३ ॥ तुरतही भेज्यो

तुमरे चरणमें. चूड़ामणि दियो तारि । गाय  
फसी है गाढ़ी गारमें. खैंव निकारोजी भरतार  
विनकारण० ॥ ४ ॥

पौष चढे जो गढलंकपै. युद्ध कियो भगवान ।  
गारत किये लाखों सूरमा. मार कियो घमसान  
। विन० ॥ १ ॥ काटा शिर लंकेशका. लक्ष्मी-  
धर वर वीर । कूद पडेजी जोधा लंकमें, लवण  
समुंदर चीर । विन० ॥ २ ॥ ल्याये तुरत छुडायकै  
अशरण शरण अधार । इतनी कर ऐसी क्यों  
करी. घरसे दई क्यूं निकार । विन० ॥ ३ ॥  
पगभारीजी गिरगिर में पडूं. शरण सहाय न  
कोय । अपनी कही न मेरी तुम सुनी. बहुत  
अँदेशा है मोहि । विनकारण० ॥ ४ ॥

माघ प्रभुजी पाला पड रह्या. पड़नेकूं नहिं  
सेज । ओढनकूं नहिं कांबली. दई क्यूं विपतिमें  
भेज । विन० ॥ १ ॥ सिंह धडुकैं कूकैं भेडिये.  
नारै गज चिंघाड़ । थरथर कांपै थांरी कामिनी  
स्यालिनी रही है दहाड़ । विन० ॥ २ ॥

भूत पिशाचगण, रुंड मुंड विकराल । सनन  
 सनन सारा बन करै, कांटे चुभैजी कराल ।  
 विन०॥३॥ कित बैठूं लेटूं कित प्रभू, पास ख-  
 वास न कोय । अन्न करूं ना पानी मैं पिउं, बा-  
 लककूं दुख होय । विन०॥४॥ तुम सब जानत  
 मेरे हालकूं, अष्टमबलि अवतार । तुम सूरज मैं  
 पटवीजनी, क्या समझाउं भरतार । विन०॥५॥  
 समरथ है प्रभु क्यों कसी प्रगट किया क्यों ना  
 दोष । धोका दे क्यों धक्का दियो आवै नहिं  
 संतोष ॥ विन० ॥६॥

फागुन आईजी अठाइयां अपने करम दे दोष ।  
 ध्यान धन्यो भगवानको बैठ रही मनमोस ॥  
 विनकारण० ॥ १ ॥ अरज करौं प्रभु दरवारमें  
 ममताभाव निवार । तुमही पिता प्रभु तुम मात  
 हो तुमही भ्रात हमार ॥ विन० ॥२॥ निर्धन-  
 के प्रभु तुम धनी निर्जनके परिवार । इकबर  
 राम मिलायके दीजियो दोष उतार ॥ विन०  
 ॥ ३ ॥ तुम हो प्रभु राजा धरमके परजा ल-



गायो हमें दोष । शीलमें मेरे सब संशय करें, रा-  
 म रुसाये हुये रोस ॥ विन० ॥ ४ ॥ त्याग दिये  
 हम रामजी, त्यागि दियो संसार । गर्भवती हूं  
 संजोगसे, इससे हुई हूं लाचार ॥ विन० ॥ ५ ॥  
 जिस दिन प्रभु पल्लापाक हो, मिलै मोहि भरता  
 र । भरम मिटाकै धारूं धरमको, त्यागूं सब सं-  
 सार ॥ विन० ॥ ६ ॥ राम मनावै तौ भी ना मनूं,  
 करि जाउं बनकूं विहार । करपै श्री रघुवीरके,  
 चोटी धरूंगी उपार ॥ विन० ॥ ७ ॥ भावै यों  
 सीता वैठी भावना, ध्यावै पद नवकर । पाप घट्यो  
 प्रगट्यो पुण्यफल, सुन लई तुरत पुकार ॥ वि-  
 न० ॥ ८ ॥ पुंडरीकपुर नगरका, वज्रजंघ भू-  
 पाल । आये पुण्यसंयोगसों गज पकड़न तिहँ  
 काल ॥ विन० ॥ ९ ॥ दूढत गजपति बनविषैं,  
 भनक पड़ी बाकै कान । कोई सतवंती रोवै बन-  
 विषैं, किनही सताई अज्ञान ॥ विन० ॥ १० ॥  
 दोष लगायो कहा पूछिये, गज तज उतरन्यो  
 धीर विनयसाहित दुख पूछन चल्यो, जैसे भै-

नाके घर वीर ॥ विन० ॥ ११ ॥ तुम हो बहन मेरी  
धर्मकी विपत्ति कहो समुभाय । मातापिता पति  
परिवारसैं दूंगा बहन मिलाय । विनः । जनक पिता  
कीमें हूँ लाडली भ्रात प्रभामंडल धीर । स्वसुर  
हमारे दशरथ नृपबली भर्ता श्रीरघुवीर । विन०  
॥ ३ ॥ रावण हरकै ले गयो दोष धरै संसार ।  
शीलमें सब संशय करै दीनी राम निकार ॥  
विन० ॥ १४ ॥ सुनी कथा छाती थरहरी टपकै  
असुवनधार । हायरे कर्म ऐसी क्यों कसी कियो  
तुरत उपगार ॥ विन० ॥ १५ ॥ देव धरम दिय  
बीचमें बहन बनाई ततकार पुंडरीकपुर लै  
गयो करिकै गज अवसर ॥ विन० ॥ १६ ॥  
पुत्र भये लवअंकुश बली शिवगामी अवतार ।  
वज्रजंघ रक्षाकरी पालकिये हुशियार ॥ विन०  
चैत्रमास नारदमुनि मिले चरण पडे दोऊ  
बीर राम लखनकीसी संपदा हूज्यो थारै वर  
वीर । विनकारण० ॥ १ ॥ पूछ्यो तबै अपनी  
मातसैं राम लखन माता कौन । टसटस

लागीं आसूं टपकने, मारच्यो मन धारच्यो मौन ॥  
 विन० ॥२॥ नारद मुनि समुझाइयो, पिछलो  
 सकल वृत्तंत । सुनत उठे योधा खडग ले, बैठ  
 विमान तुरंत ॥ विन० घेरि अजुच्या रणभेरी  
 दई, कांपै सुरग पताल । सोच भयो श्रीरघुवीर-  
 को, आये कौन अकाल ॥ विन० ॥४॥ निकसे  
 दोउ भ्राता युद्धकूं, खूब मचा घमसान । राम  
 लखन घबरा दिये, तोड्यो रथ काटे बाण ॥ वि-  
 न० ॥ ५ ॥ हलमूशल धारे रामने, लछमन चक्र  
 सँभार । सातवार फेंक्यो तानके, वृथाही गये  
 सातों बार । विन० ॥ ६ ॥ हम हरि बल अरु ये  
 किधों, उपज्यो सोच अपार । आग बबूला  
 होकै फिर लियो, चक्रप्रलय करतार ॥ विन०  
 ॥७॥ तब नारद आये भूमि पर, रामलखण-  
 ढिग जाय । बात कही सब समुझायकै, किसपै  
 कोपे रघुराय ॥ विन० ॥ ८ ॥ पुत्र तुम्हारे दोऊं  
 भुजबली, लवअंकुश बलवंत । मातविपति सुन  
 कोपिया, मारुयो सकल वृत्तंत ॥ विन० ॥ ९ ॥

भरि आई छाती श्रीरघुवीरकी, रणकूं दियो है  
निवार । आय परे सुत चरणमें, लीने दोऊं पु-  
चकार ॥ विन० ॥

मास विसाख बसंतरितु, सुनि सीताजीकी सार ।  
भागपडे हनुमतसे बली, ल्याये करि मनुहार ॥  
विन० ॥ १ ॥ वजूजंघ आयो धूमसे, लायो सब  
परिवार । राम कहैं मैं आने दूं नहीं, सीता दई  
मैं निकार ॥ विन० ॥ २ ॥ जो आवै तो आवो  
इसतरां, कूदो अगनिमझार । देय परीछा अ-  
पने शीलकी, होवे मेरी पटनार ॥ विन० ॥ ३ ॥  
सीता सती प्रण धारियो, होवै कुंड तयार । अ-  
गन जलावो देरी मत करो, इक जोजन विसता  
र ॥ विन० ॥ ४ ॥ साड़ी कसि त्यारी करी, अंग  
ढकयो बड़भाग । कुंड खुदायो मनभावतो, चेत-  
न कर दई आग ॥ विन० ॥ ५ ॥ जाय चढी  
ऊंचे दमदमे, देखै सब संसार । सत मूरत सूरत  
सोहनी, मनमें हर्ष अपार ॥ विन० ॥ ६ ॥ देखैं  
देवता, देखैं भवनपत स । चंद्र सूरज

देखै ज्येतिषी देखै भूत पतीस ॥ विन० ॥ ७ ॥  
 देखै सब विद्याधरा देखै गणगंधर्व । कमर क-  
 सी फौजें आ पड़ी देखै राजा सर्व ॥ विन० ॥ ८ ॥  
 अगनि लपट ऊठी गगनलों तड़तड़ाट भयो घो-  
 र । कहत प्रजा श्रीरामसों क्यों प्रभु भए हो  
 कठोर ॥ विन० ॥ ९ ॥ वज्र बचै ना औसी अग-  
 निमें फाटि धरणि पताल । पर्वत फाटि मठ गिर  
 गडैं हे प्रभु कीजिये टाल ॥ विन० ॥ १० ॥ रा-  
 म खडग सूंत्यो हाथमें मत कोई कहो जी ब-  
 नाय । आज्ञा मानै मेरी जानकी देवै भरम मि-  
 टाय ॥ विन० ॥ ११ ॥ हुकम दियो रघुवीरने  
 शीलपरीक्षा देहु । नातर क्यों आई तू यहां  
 परजा करै है संदेहु ॥ विन० ॥ १२ ॥ पंच परम-  
 गुरु वंदिकैं करि पतिकूं परणाम । छिमा कराई  
 सब जीवसों देखै लछमन राम ॥ विन० ॥ १३ ॥  
 पुत्र जुगल छोड रोवते सोहैं चंद्रसमान । हरष  
 भरी सतवंती महा बोली वचन महान ॥ विन०  
 ॥ १४ ॥ जो परपुरुष निहारिकैं मैं कछु कियो

हैं कुभाव । भस्म अगनि मोहि कीजियो  
 नातर जल हो जाव ॥ विन० ॥ १५ ॥ जठ तपै  
 सूरज आकरो नीचे अगनि प्रचंड । आस-  
 पास जल थल सभी सूकि गए बनखंड ॥ विन०  
 ॥ १ ॥ कूदपड़ी जलती अगनिमें शांति भई  
 ततकार । उभर कँवल अकाशलों लीनी  
 अधर सहार ॥ विन० ॥ २ ॥ जल हलरावै बोलैं  
 हंसनी कर रही मीन कलोल । छत्र फिरैजी  
 उसके सीसपै इंद्र चँवर रहे ढोल ॥ विन कार-  
 न ॥ ३ ॥ शीतल मंद सुगंध जुत मीठी मीठी  
 चलत बयार । बरषै मनु अमृत कणी देव करें  
 जै जैकार ॥ विन० ॥ ४ ॥ धन्य सती धन सत-  
 वंतिनी धन धन धीरज येह । धृग धृग हम  
 उनकूँ करें जिनके मनसंदेह ॥ विन० ॥ ५ ॥

बारह भावना सीताजीकी ।

सीता भावै मनमें भावना यह संसार अनित्य ।  
 धर्म बिना तीनों लोकमें शरण सहाई ना मित्त ॥  
 विन० ॥ ६ ॥ उलट पुलट चालै रहटसा यह सं-

सारी चक्र । एक अकेलो भटकै आत्मा, क्या  
 पशु पंछी क्या शक्र ॥विन० ॥ ७ ॥ ना कोई  
 जगमें आपना औ न हम काहूके मीत । अशु-  
 चि अपावन तनविषै, करम करै विपरीत ॥ विन  
 कारण० ॥८॥ संवर जल विन ना बुझै, तृष्णा  
 अगनि प्रचंड । कर्म खिपाये विन ना स्वपै  
 भटकै सब ब्रह्मंड ॥विन०॥१॥ दुर्लभबोध जग-  
 त्तमें दुर्लभ श्रीजिनधर्म । दुर्लभ स्वपथ विचार  
 है, कर्मन डान्यो भर्म ॥ विन ० ॥१० ॥ पर-  
 वशभोगी भारी वेदना, स्ववश सही नहिं रंच ।  
 सास्वत सुख जासों पावती, लैई करमने बंच ॥  
 विन० ॥११ ॥ अब मैं सब वेदन सही, कीनी  
 धरम सहाय । परतिज्ञा पूरी करूं, मोह महा  
 दुखदाय ॥ विन० ॥१२॥ राम कहै प्यारी चल  
 घरां, ल्या धुजमें भुज डार । पाडि शिखा करपै  
 धरि दई, त्यागयो हम संसार ॥ विन० ॥१३॥  
 तुम त्यागी निरदोष कूं, हम त्यागे लख दोष ।  
 करिकै छिमा मैं संजम लियो, करियो मत अ-

फसोस ॥ विन० ॥ १४ ॥ गई सतीजी बन खंडकू,  
 भई अरजिका धीर । उग्र उग्र तप वह करै,  
 सब दुख सहै है शरीर ॥ विन० ॥ १५ ॥ पूरी  
 करि परजायकू, अच्युत सुरगमभार । इंद्र भई-  
 जी पुण्य सँजोगसों, भोगै सुख अपार ॥  
 विन० ॥ १६ ॥

इति सीता सतीका धारहमासा समाप्त ।

### चौवीस दंडक ।

दोहा—वंदों वीर सुधीरको, महावीर गंभीर ।  
 वर्द्धमान सन्मति महा, देवदेव अतिवीर ॥ १ ॥  
 गत्यागत्य प्रकाश जो, गत्यागत्य वितीत ।  
 अदभुत अतिगत सुगति जो जैनेश्वर जगतीत  
 ॥ २ ॥ जाकी भक्ति विना विफल, गये अनंते  
 काल । अगिनत गत्यागति धरीं घट्यो न जग  
 जंजाल ॥ ३ ॥ चौवीसों दंडकविषै, धरी अनंती  
 देह । लख्यो न जिनपद ज्ञानविन, शुद्ध स्वरूप  
 विदेह ॥ ४ ॥ जिनवाणी परसादतैं, लहिये  
 आत्मज्ञान । दहिये गत्यागति सबै गहिये पद



निर्वाण ॥५॥ चौवीसों दंडक तनी. गत्यागति  
सुनि लेहु । सुनकर विरक्त भाव धर. चहुंगति  
पानी देहु ॥ ६ ॥

चौपाई-पहिलो दंडक नारकितनो । भवन  
पती दस दंडक मनो ॥ ज्योतिस व्यंतरस्वर्ग  
निवास । थावर पंच महा दुखरास ॥७॥ विक-  
लत्रय अरु नर तिर्यच । पंचेंद्री धारक परपंच ॥  
यह चौवीस जु दंडक कहे । अब सुनु इनमें भेद  
जु लहे ॥ ८ ॥ नारककी गति आगति दोय ।  
नर तिर्यच पंचेंद्री जोय ॥ जाय असैनी पहली  
लगे । मनविन हिंसाकर्म न पगे ॥ सरीसर्प दूजे  
लों जाय । अरु पत्नी तीजैलों थाय ॥ सर्प जाय  
चौथे लों सही । नाहर पंचम आगे नहीं ॥१०॥  
नारीछट्टे लगही जाय । नर अरु मच्छ सातवें  
थाय ॥ ऐतौ नारक आगति कही । अब सुन  
नारककी गति सही ॥११॥ नरक सातवेंको जो  
जीव । पशुगति ही पावै दुखदाव ॥ अरु सब  
नारक मर नर पशु । दोऊ गति आवैं परवसू

॥ १२ ॥ छट्टेको निकस्यो जु कदापि । सम्यक  
 सह श्रावक निष्पाप । पंचम-निकस्यो मुनि हू  
 होय । चौथेको केवालि हू कोय ॥ १३ ॥ तृतीय  
 नरकको निकस्यो जीव । तीर्थकर भी हो जग-  
 गीव ॥ यह नारककी गत्यागती । भाषी जिन-  
 वाणीमें सती ॥ १४ ॥ तेरह दंडक देव निकाय  
 तिनको भेद सुनो मन लाय ॥ नर तिर्यच पंचेंद्री  
 बिना । औरनको नहिं सुरपद गिना ॥ १५ ॥  
 देव मरै गति पांच लहाँहिं । भू जल तरुवर नर  
 तिरमाहिं ॥ दूजे सुरग उपरले देव । थावर है  
 न कहयो जिनदेव ॥ १६ ॥ सहस्रार्तें ऊंचे खिरा  
 मरकर होवै निश्चय नरा ॥ भोगभूमिके तिर्यच  
 नरा दूजे देवलोकतें परा ॥ १७ ॥ जाय नहीं  
 यह निश्चय कही । देवन भोगभूमि नहिं गही ॥  
 कर्मभूमियां नर अरु ढोर । इन बिन भोगभूमि  
 की ठौर ॥ १८ ॥ जाइ न तातें आगति दोइ ॥  
 गति इनकी देवनकी होइ ॥ कर्मभूमियां तिर्यग  
 श्रावकव्रत धर बारम शुद्ध ॥ १९ ॥ सह-

सार ऊपर तिर्यंच । जाय नहीं तज है परपंच ॥  
 अव्रत सम्यकदृष्टी नरा ॥ बारमतेँ ऊपर नहिं  
 धरा ॥ २० ॥ अन्यमती पंचागानि साध । भवन-  
 त्रिकतेँ जाइ न वाद । परिव्राजक तिरदंडी देह ।  
 पंचम परै न उपजै जेह ॥ १ ॥ परमहंस नामैँ  
 परमती । सहस्रार ऊपर नहिं गती ॥ मोक्ष न  
 पावै परमाति माहिं । जैन बिना नहिं कर्म नसाहिं  
 ॥ २२ ॥ श्रावक आर्य अणुव्रत धार । बहुरि  
 श्राविकागण अविकार ॥ सोलह स्वर्ग परैँ नहिं  
 जाय । ऐसो भेद कहयो जिनराज ॥ २३ ॥ द्रव्य  
 लिंगधारी जे जती । नवग्रीवक ऊपर नहिं गती  
 नवहिं अनुत्तर पंचोत्तरा ॥ महामुनि विन और  
 न धरा ॥ २४ ॥ केई बार जीव सुर भया । पण  
 केइकपद नाहीं गहा ॥ इंद्र भयो न शचीहू भयो ।  
 लोकपाल कबहू नहिं थयो ॥ २५ ॥ लोकांतिक  
 हूवो न कदापि । नहीं अनुत्तर पहुंच्यो आप ॥  
 ए पद धर बहु भव नहिं धरै ॥ अल्पकालमें मु-  
 क्तिहि वरै ॥ २६ ॥ हैं विमान सरवारथ सिद्ध ।

सक्तेँ ऊंचो अतुल सुरिद्ध ॥ ताके सिर पर है  
 शिवलोक । परै अनंतानंत अलोक ॥ २७ ॥  
 गत्यागत्य देवगति भनी । अब सुन भ्रात मनु-  
 षगति तनी । चौबीसों दंडकके माहिं । मनुष  
 जांहिं यामै शक नाहिं ॥ १८ ॥ मोक्षहु पावै  
 मनुष मुनीश । सकल धराको जो अवनैश ॥  
 मुनि विन मोक्ष नहीं कोउ बरै । मनुष विना  
 नाहिं मुनि ह्वै तरै ॥ २६ ॥ सम्यकदृष्टी जे मुनि-  
 राय । भवजल उतरै शिवपुर जाय । तहां जाय  
 अविनाशी होय ॥ फिर पीछे आवै नाहिं कोय ॥  
 ॥ ३० ॥ रहै शाश्वते शिवपुरमाहिं । आतमराम  
 भयो सक नाहिं ॥ गति पचीस कही नरतनी ।  
 आगति फुनि बाइसहि भनी ॥ ३१ ॥ तेजकाय  
 अरु वाय जुकाय । इनविन और सबै नर थाय ॥  
 गति पचीस आगति बाइस । मनुषतनी जो  
 भाखी ईश ॥ ३२ ॥ ताहि सुरासुर आतमरूप ।  
 ध्यावै चिदानंद चिद्रूप ॥ तौ उतरो भवसागर  
 जिया । और न शिवपुर मारग लिया ॥ ३३ ॥

यह सामान्य मनुष्यकी कही । अब सुन पदवी-  
 धरकी सही ॥ तीर्थकरकी दो आगती । स्वर्ग नर  
 कों आवै सती ॥३४॥ फेरि न गति धारै जग-  
 दीस । जाय विराजै जगके शीस ॥ चक्री अर्ध-  
 चक्रि अरु हली । सुरग लोकतैं आवैं बली ॥  
 ॥३५॥ इनकी आगति एकहि जान । गतिकी  
 रीति कहूं जु बखानि ॥ चक्रीकी गति तीन जु  
 होय । सुरग नरक अरु शिवपुर जोय ॥३६॥  
 तप धारै तौ शिवपुर जांय । मरै राजमें नरकहि  
 ठांय ॥ आखरिमें ह्वै पद निर्वाण । पदवी धारक  
 बडे प्रधान ॥३७॥ बलभद्रनकी दोयहि गती ।  
 सुरग जांहि कै ह्वै शिवपती ॥ तप धारें ये नि-  
 श्रय भया । मुक्तियात्र ये श्रुतिमें कह्या ॥३८॥  
 अर्द्धचक्रिको एकहि भेद । नारक होय लहै अति  
 खेद राजमाहिं ये निश्रय मरें । तदभवमुक्ति  
 पंथ नहिं धरें ॥ ३९ ॥ आखिर पावै जिनवर  
 लोक । पुरुष शलाका शिवके थोक ॥ ये पद  
 कबहुं न पाये जीव ॥ ये पदपाय होय शिवपीव

॥४०॥ औरहु पद कइयक नहिं गहे । कुलकर  
 नारदपदहु न लहे ॥ रुद्र भये न मदन ना भये ।  
 जिनवर मात पिता नहिं थये ॥ ४१ ॥ ये पद  
 पाय जीव नहिं रुलै । थोडेहि दिनमें जिन सम  
 तुलै ॥ इनकी आगति श्रुतमें जानि । गतिको  
 भेद कहूं जो बखानि ॥४२॥ कुलकर देवलोक  
 ही गहै । मदन सुरग शिवपुरको लहै ॥ नारद  
 रुद्र अधोगति जाय । सहै कलेश महा दुखदाय  
 ॥ ४२ ॥ जन्मांतर पावैं निरवान । बडे पुरुष  
 जे सूत्र प्रमान ॥ तीर्थकरके पिता प्रसिद्ध ।  
 स्वर्ग जांय कै हो हैं सिद्ध ॥ ४४ ॥ माता स्वर्ग  
 लोक ही जाय । आखिर शिवपुर लोक लहाय ॥  
 ये सब रीति मनुषकी कही । अब सुन तिर्यचन  
 गति सही ॥ ४५ ॥ पंचेंद्री पशुमरण कराय ।  
 चौवीसों दंडकमें जाय ॥ चौवीसों दंडकतैं मरै ।  
 पशु होय तौ नाहि न करै ॥४६॥ गति आगती  
 कही चौवीस । पंचेंद्री पशुकी जिन ईश । तौ  
 परमेश्वरको पथ गहौ ॥ चौविस दंडक नाहीं

लहौ ॥४७॥ विकलत्रयकी दश ही गती । दस  
 आगती कहीं जगपती ॥ पांचों थावर विकल जु  
 तीन । नर तिर्यच पंचेंद्री लीन ॥ ४८ ॥ इनहीं  
 दशमें उपजें जाय । पृथिवी पानी तरवरकाय ॥  
 इनहीतैं विकलत्रय आय । इन ही दसमें जन्म  
 कराय ॥ ४९ ॥ नारक विन सब दंडक जोय  
 पृथ्वी पानी तरुवर सोय । तेज वायु मरि नवमें  
 जाय । मनुष होय नहिं सूत्र कहाय ॥५०॥ थावर  
 पच विकलत्रय ठौर । ये नवगति भाखी मदमोर  
 दसतैं आवै तेज अरु वाय । होय सही गावै जि-  
 नराय ॥५१॥ ये चौईस दंडके कहे । इनकूं त्याग  
 परमपद लहे ॥ इनमें रूलै सु जगको जीव ।  
 इनतैं रहित सु त्रिभुवनपीव ॥५२॥ जीवईसमें  
 और न भेद । ए करमी वे कर्म उछेद ॥ कर्म बंध  
 जोलों जगजीव । नाशे कर्म होय शिव-पीव ॥  
 दोहा—मिथ्या अव्रत योग अर, मद परमाद क-  
 षाय । इंद्रियविषय जु त्याग ये, भ्रमन दूरि है  
 जाय ॥ जिन विनगति भवतैं धरी, भयी नही

सुरझार । जिनमारग उर धारिये, हो हैं भव-  
दधि पार ॥ ५५ ॥ जिन भज सब परपंच तज  
बडी बात है येह । पंच महाव्रत धारिकै, भवज-  
लकों जल देह ॥ ५६ ॥ अंतर करण जु सुद्ध  
है, जिनधर्मी अभिराम । भाषा कारण कर सकूं  
भाषी दौलतराम ॥ ५७ ॥ इति ॥

। श्रीचौकिस तीर्थकरोंके चिन्ह ।  
वृषभनाथका 'वृषभ' जु जान । अजितनाथके  
'हाथी' मान ॥ संभवजिनके 'घोडा' कहा । अ-  
भिनंदनपद 'बंदर' लहा ॥ १ ॥ सुमतिनाथके  
'चकवा' होय । पद्मप्रभके 'कमल' जु जोय ॥  
जिनमुपासके 'सथिया' कहा । चंद्रप्रभपद 'चंद्र'  
जु लहा ॥ २ ॥ पुष्पदंतपद 'मगर' पिछान ।  
'कल्पवृक्ष' शीतलपद मान ॥ श्रीश्रियांसपद  
'गंडा' होय । वासुपूज्यके 'भैंसा' जोय ॥ ३ ॥ वि-  
मलनाथपद 'शूकर' मान । अनंतनाथके 'सेही'  
जान ॥ धर्मनाथके 'वज्र' कहाय । शांतिनाथपद  
'हिरन' लहाय ॥ ४ ॥ कुंथुनाथके पद 'अज'



चीन । अरजिनके पद चिह्न जु 'मीन' ॥ मल्लि  
 नाथपद 'कलसा' कहा । मुनिसुव्रतके 'कछुआ'  
 लहा ॥ ५ ॥ 'लालकमल' नमिजिनके होय ।  
 नेमिनाथ-पद 'संख' जु जोय ॥ पार्श्वनाथके  
 'सर्प' जु कहा । वर्द्धमानपद 'सिंह' हि लहा । ६ ।

### संक्षिप्त सूतकविधि ।

सूतकमें देव शास्त्र गुरुको पूजन प्रक्षालादिक करना, तथा  
 मंदिरजीकी जाजम वस्त्रादिको स्पर्श नहीं करना चाहिये । सूतक  
 का समय पूण हुये बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिये ।

१—जन्मका सूतक दश दिन तक माना जाता है ।

२—यदि स्त्रीका गर्भपात ( पांचवें छठे महीनेमें ) हो तो जितने  
 महीनेका गर्भपात हो उतने दिनका सूतक माना जाता है ।

३—प्रसूति स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है, कहीं कहीं चालीस  
 दिनका भी माना जाता है । प्रसूतिस्थान एक मास तक अशुद्ध है

४—रजस्वला स्त्री चौथे दिन पतिके भोजनादिकके लिये शुद्ध  
 होती है परन्तु देव पूजन, पात्रदानके लिये पांचवें दिन शुद्ध होती  
 है । व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता है ।

५ मृत्युका सूतक तीन पीढी तक १२ दिनका माना जाता है ।

बौधी पीढीमें छह दिनका, पांचवीं छठो पीढी तक चार दिनका,  
 सातवीं पीढीमें तीन, आठवीं पीढीमें एक दिन रात, नवमो पीढी  
 में स्नानमात्रमें शुद्धता हो जाती है ।

६—जन्म तथा मृत्युका सूतक गोत्रके मनुष्यको पांच दिनका होता है। तीन दिनके बालककी मृत्युका एक दिनका आठ वर्षके बालककी मृत्युका तीन दिन तकका माना जाता है। इसके भाग्ये बारह दिनका।

७—अपने कुलके किसी गृहत्यागीका सन्यास मरण, वा किसी कुटुम्बीका संप्राममें मरण हो जाय तो एकदिनका सूतक माना जाता है।

८—यदि अपने कुलका कोई देशांतरमें मरण करे और १२ दिन पहले खबर सुने तो शेष दिनोंका ही सूतक मानना चाहिये। यदि १२ दिन पूर्ण हो गये हों तो स्नानमात्र सूतक जानो।

९—गौ, भैंस, घोड़ी आदि पशु अपने घरमें जनै तो एक दिनका सूतक और घरके बाहर जनै तो सूतक नहीं होता। दासी सद तथा पुत्रीके घरमें प्रसूति होय तो एक दिन, मरण हो तो तीन दिनका सूतक होता है। यदि घरसे बाहर हो तो सूतक नहीं। जो कोई अपनेको अग्नि आदिकमें जलाकर वा विष, शस्त्रादिसे आत्महत्या करे तो छह महीनेतकका सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराणसे जानना।

१०—बच्चा हुये बाद भैंसका दूध १५ दिन तक, गायका दूध १० दिन तक; बकरीका ८ दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देशभेदसे सूतक विधानमें कुछ न्यूनाधिक भी होता है परन्तु शास्त्रकी पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिये। \*समाप्त\*

पंचपरमेष्ठीके नाम

अरहत सिद्ध, आचार्य उपाध्याय सर्वसाधू ।

ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा । ओं नमः सिद्धेभ्य ॥

नोट—अ सि आ उ सा नाम पंचपरमेष्ठीका है ।

ॐ में पंच परमेष्ठीके नाम व २४ तीर्थंकरोंके नाम गभित हैं ।

तीर्थंकरोंका निर्वाण क्षेत्र

ऋषभदेवजीने कैलाश पर्वतपरसे, वासुपूज्यजीने  
चम्पापुरसे, नेमिनाथजीने गिरनारसे, महावीरजीने  
पावापुरसे निर्वाण प्राप्त किया है और शेष २०  
तीर्थंकरोंने श्री मम्मदेदशिव्वरजीसे निर्वाण प्राप्त  
किया है ।

पांच महाकल्याण

१ गर्भकल्याण २ जन्मकल्याण ३ तपकल्याण  
४ ज्ञानकल्याण ५ मोक्षकल्याण ।

आठ महाप्रातिहार्य

१ अशोक वृक्ष २ पुष्पवृक्ष देवाकुल ३ दिग्ग-  
ध्वनि ४ चमर ५ छत्र ६ मिहामन ७ भामण्डल  
८ दुन्दुभि शब्द ।

चार अनन्त अतुष्टय

अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्तसुख, अनन्त  
वीर्य ।

चार घातिया कर्म

ज्ञानावर्ण, दर्शनावर्ण मोहनीय और अन्तराय कर्म ।

### समवसायकी ११ भूमियां

१ चैत्यभूमि २ स्नातिभूमि ३ लताभूमि ४ उप-  
वनभूमि ५ ध्वजाभूमि ६ कल्याणभूमि ७ गृहभूमि  
८ सद्गुण भूमि ९-१० तथा तीन पाठिका ऐसी  
११ भूमि हैं ।

### अठारह दोष

क्षुधा, तृषा, जन्म, जरा, मरण, रोग, भय, मद,  
राग, द्वेष, मोह, चिन्ता, रति, निद्रा, विस्मय,  
विषाद, खेद, स्वेद ।

### पाड़श भावना

दर्शन विशुद्धि, विनय, समन्ता, शीलव्रतेष्व-  
नतिचार, अभीक्षणज्ञानापयोग, संवेद, शक्ति-  
स्त्याग, तप, साधु समाधि, बेधाव्रत्यकरण, अहन्त  
भक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति,  
आवश्यकपरिहान, मार्ग प्रभावना, प्रवचन  
वात्सल्य ।

### दश प्रकारके कल्प वृक्ष

वादित्रांग, पात्रांग, भूषणांग, पानांग, भोजनांग,  
पुष्पांग, ज्योतिरांग, गृहांग, वस्त्रांग और दीसांग ।

### बारह चक्रवर्ती

भरत महाराज, सगर, मधवा, सनतकुमार, शांति-  
जिन, कुंधजिन, अरहजिन, सुभूम, पद्मनाभि,  
हरिषेण, जयसेन, ब्रह्मदत्त ।

चक्रवर्ती राजोंके सात अंग

१ स्वामी २ मन्त्री ३ जनसमूह प्रजा ४ कोट  
५ खजाना ६ मित्रगण ७ सेना ।

चक्रवर्तीके चौदह रत्न

१ सेनापति २ गृहपति ३ शिल्पकार ४ पुरोहित  
५ स्त्री ६ हस्ती ७ अश्व ये मजीब रत्न हैं ।

चक्रवर्तीकी नवनिधि

कालनिधि, महाकालनिधि, माणवनिधि, पिंगल-  
निधि, नैसर्पनिधि, पद्मनिधि, पांडुक निधि,  
शंख निधि, नाना रत्ननिधि ।

चक्रवर्तीके दस भोग

रत्न निधि, सुन्दर स्त्रियां, नगर, भासन, शय्या  
६ सैन्य, भाजन, पात्र, नाट्यशालाएं, वाहन ।

नव नारायण

त्रिवृष्टि, द्विवृष्टि, स्वयम्भू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह,  
पुण्डरीक, वृत्त, लक्ष्मण, कृष्ण ।

नव प्रत्नारायण

अश्वघ्रीव, तारक, मेरुक, विशम्भु, मधु ( मधु-  
कैटभ ) बली, प्रहलारण, रावण, जरासिंध ।

नव बलभद्र

विजय २ अवध ३ भद्र ४ सुप्रभ ५ सुदर्शन ६  
आनन्द ७ नन्दननन्द, ८ पद्म रामचन्द्र ९ बलभद्र ।

नव मारद

भीम २ महाभीम ३ रुद्र ४ महारुद्र ५ काल ६  
महाकाल ७ दुर्मुख ८ नरकमुख ९ अधोमुख ।

ग्याह रुद्र

भीमबली २ जितशत्रु ३ रुद्र ४ विश्वानल ५  
सुप्रतिष्ठ ६ अबल ७ पुण्डरीक ८ अजितधर ९  
जितनाभि १० पीठ सात्यकी ।

चौदह कुलकर

प्रतिश्रुति २ सन्मति ३ क्षमङ्कर ४ ४ क्षेमंकर ५  
सोमकर ६ सीमंधर ७ विमल वाहन ८ चक्षष्मात  
हयशस्वी ९ १० अभिचन्द्र ११ चन्द्राभ १२ मरुदेव  
१३ प्रसेनजित १४ नाभिराजा ।

बारह प्रसिद्ध पुरुष

नाभि श्रेयांस ३ बाहुबला ४ भरत ५ रामचन्द्र  
६ हनुमान ७ सीता ८ रावण ९ कृष्ण १० महा-  
देव ११ भीम १२ पार्श्वनाथ ।

चौदह गुणस्थान

मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अविरत, सम्पत्त्व  
देशविरत, प्रमत्त विरति, अप्रमत्तविरत, अपूर्वकरण,  
सूक्ष्मसांभ्राय, उपशांत कषाय वा उपशांत मोह,

क्षीणकषाय वा क्षीणमोह, सयोगकेवली, अयोग-  
केवली ।

ग्यारह प्रतिमा

दर्शन प्रतिमा, व्रतप्रतिमा, सामायिकप्रतिमा,  
प्रोषधोपवासप्रतिमा, सचित्त त्याग प्रतिमा, रग्नि  
भुक्तित्याग प्रतिमा, ब्रह्मचर्यप्रतिमा, आरम्भत्याग-  
प्रतिमा, परिग्रहत्यागप्रतिमा, अनुमतित्यागप्रतिमा  
उद्दिष्टत्याग प्रतिमा ।

श्रावकके १७ नियम

जोजन, अचित्तवस्तु, गृह, संग्राम, दिशा गमन,  
औषधिविलेपन, तांबूल, पुष्पसुगंग, नाच, गीत-  
श्रवण, स्नान, ब्रह्मचय, आभूषण, बस्त्र शय्या,  
औषध खानो, घोड़ा बैल आदिकी सवारी ।

सप्त व्यसन

दोहा-जुआ खेलना मांसमद, बेरया विसन शिकार ।

चोरी पररमनीरमन, सातो व्यसन विसार ॥

अष्ट मूलगण

पांच उदम्बर-गूलर कटूम्बर बड़फल, पीपल फल,  
( पिलखन फल ) तीन मकार मद्य, मांस, मधु ।  
इनका त्याग ही मूलगुण हैं ।

दशलक्षण धर्म

उत्तम क्षमा, आर्तव, मार्जव, सत्य, शोच,  
संयम, तप, त्याग, आकिंचन और ब्रह्मचर्य

तीन प्रकारका लोक  
उर्ध्वलोक, मध्यलोक, पाताललोक ।

पांच प्रकारके ब्रह्मचारी  
उपनयन, अदीक्षित, अवलम्ब, गूढ़, नैष्ठिक ।

उह आर्यकर्म  
इज्या, धार्ता, दत्ति, संधम, स्वाध्याय, तप ।

दशों पूजा  
अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु,  
जिनधिम्व, शास्त्र जिनवाणी, सम्यकदर्शन, दश-  
लक्षण धर्म ।

चार प्रकारके ऋषि  
राजर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि, परमर्षि ।

नव प्रकारका प्रायश्चित्त  
आलोचना, प्रतिक्रमण, उभय, विवेक, व्युत्सर्ग,  
तपश्छेद, परिहार, उपस्थापन, ऐसे प्रायश्चित्तके  
नौ भेद हैं ।

बारह प्रकारका तप  
अनशन, अवमोदर्य, व्रत परिसंख्यान, रसपरि-  
त्याग, शिवक्त शय्यासन, कयाक्लेश, ऐसे बाह्य  
तप हैं और प्रायश्चित्त विनय वैशावृत्य, स्वध्याय,  
व्युत्सर्ग, ध्यान ऐसे, आभ्यन्तर तप, सब मिला  
कर बारह प्रकार है



॥ श्रीः ॥

## जैन भण्डा गायन

—७—

ये जैन धरमका प्यारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
स्वस्तिक चिह्न विभूषित पावन, अर्धचन्द्र शिव  
थल प्रकटावन । पुष्प त्रयान्वित है मन भावन ।  
यह उज्ज्वल यश धारा, भण्डा हो ऊंचा हमारा ।  
शांति सुधाका नीरव निर्भर, विश्व प्रेमका सुन्दर-  
सासर । शुभ सन्देशक नव साहसवर । है  
संस्कृति का प्यारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
ऋषभ देवसे आदि विधायक, मूल मन्त्र ओंकार  
सहायक । बना जर्मनीका यह नायक, गौरव नभ  
ध्रुवतारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ स्याद्वाद  
संदेश सुनाया, परम अहिंसा धर्म बताया । वीरप्रभूने  
यह फहराया, अपने केवल द्वारा । भण्डा हो ऊंचा  
हमारा ॥ प्रिय भ्राताका शीश कटा कर, बौद्धिक  
वातावरण हटाकर । दिग्विजयी अकलंक दिवाकर

---

\*यह पंजाब तर्ज पर है जैसे:—मेरा रंगदे बसन्ती चोला ।

ने इसको परसारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
 दिव्य समन्त भद्र गुण मंडित, खण्ड खंड शंकर  
 कर खण्डित, किया इसे जगमें अभिमंडित ॥  
 अपने कौशल द्वारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
 चन्द्रगुप्त सम्राट वीरने, दिव्य साहसी सुभट  
 धीरने । इस भंडेकी एक पीरने, मान शत्रुका मारा  
 भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो तुम भी तो बल  
 शाली, रखना इसकी गौरव लाली । हो दुनियांमें  
 शान निराली, यह प्राणोंसे प्यारा । भण्डा हो  
 ऊंचा हमारा\* इसको निज करमें ले सत्वर, कार्य  
 क्षेत्रमें बढो अग्रसर । उन्नत रखना प्राण गवांकर  
 आत्मज्योति उजियारा । भंडा हो ऊंचा हमारा ॥  
 बतलाता क्या फहर व्योमपर, सीखो तुम जीना  
 भी मरकर । अमर रहा कोइ न धरा पर, है यह  
 विजय सितारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो  
 इसके नीचे आना, विश्व शिखर पर यह  
 फहराना । तुम कुमरेश इसे अपनाना, बहा प्रेमकी  
 धारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

---

\*इस पद्यसे आगे वे पद्य जोड़कर पढ़ने चाहिये. जिस समय  
 उत्सव हो जिस त्योहारका ।

## होलीकोत्सवके समय—

होली होगी वीरो आओ, फूट द्वेषको खूब  
जलाओ, आपसमें आकर मिल जाओ, जिससे हो  
सुखसारा । भंडा हो ऊंचा हमारा ॥ छल-कपटोंकी  
होली है बस, मिथ्या मायाकी होली बस । दुरव्य-  
सनों की होली है बस, इनसे हो छुटकारा । भण्डा  
हो ऊंचा हमारा ॥ कीचड़ धूल नहीं उड़ पावे,  
गन्दी रस्मोंकी जड़ जावे । होलीकी होली होजावे,  
कोई न दुखियारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
वीरो ! होली होवे ऐसी, हों पापों की ऐसी तैसी ।  
दुनियां हो फिर पहले जैसी, हो दुखका परिहारा ।  
भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

## दिवालीके समय—

वीरो, सभ्य दिवाली आकर, बतलातो है क्या  
हंगित कर । हुआ वीर निर्वाण इसीपर, है वो ही  
दिन सारा । भंडा हो ऊंचा हमारा ॥ देवोंने आनन्द  
मनाया, रत्नोंका उद्यान रखाया । तबसे ही हमने  
अपनाया, ये सुख का करतारा । भण्डा हो  
ऊंचा हमारा ॥ यही दिवाली पर्व हमारा, इसे

मनाओ कर परचारा । बह जावे आनन्द की धारा  
 हो जगमें उजियारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
 नहीं खेलना जुआ भूलकर, यह सब पापों का ही  
 है घर । दूर प्रथा इसको कर सत्वर, करो धर्म  
 परचारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

### वीर जयन्ती के समय—

वीरो वीरजयन्ती सुखकर, आई है आनंद नव  
 लेकर । साहस देनेको हां सत्वर । यह आनंदकी  
 धारा । झंडा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो यह कर्त्तव्य  
 बताने, भूला पथ तुमको दर्शाने । निज आदर्श  
 तुम्हें समझाने ॥ आई है सुखकारा । झण्डा हो  
 ऊंचा हमारा ॥ जीवन आज हुआ कंटकमय, पद-  
 पदपर मिलता तुमको भय । तोभी तुम हो सुखमें  
 भी लय, है तुमको धिक्कारा । झण्डा हो ऊंचा  
 हमारा ॥ वीरो तुम अब भी जग जाओ, प्राणोंका  
 मत मोह बढ़ाओ । निज रक्षा हिन बलि चढ़  
 जाओ, मिले उन्नति द्वारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
 वीर जयन्ती यही बताने का, समझाती है तुम्हें  
 निरन्तर । वीरो सत्वर आगे बढ़ कर, काटो बंधन  
 कारा । झण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

## रक्षा-बन्धन के समय—

रक्षा बन्धन आओ सुखमय, हम तुम में हो जाये  
बस लय । दूर हमारे अब सब हों भय ॥ हो  
जीवन सुख सारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
वीरो यह रक्षाका है दिन, व्यथित हुये जब मान  
शतक मुनि । विष्णु कुमार यही केवल मुन,  
बलि का गर्व निवारण । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
हमको भी आगे बढ़ना है, रक्षा अपनी अब  
करना है । नहीं व्यथित हो कर मरना है ॥ दुखसे  
हो निस्तारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

## पयूपण पर्वके अवसर पर—

वीरो, पयूपण सुख सागर, धर्म ध्यान साधन  
उजियागर । इस अवसर को मानन्द पाकर,  
भरो पुण्य भण्डारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
क्रोध मान माया मन करना, मत्स्य जौच संयम  
से रहना । यथा शक्ति तप त्यागन करना,  
आंकितन ब्रह्मचारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥  
इस पुण्य विधि से है पाया, पुण्य करम करलो  
मन भाया । पापोंकी छोड़ा भी काया, होगा शिव  
सुख सारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

## अक्षय तृतियाके समय ।

अक्षय तृतिया पर्व सलोना, ऋषभ प्रभु आहार  
बनोना । नृप श्रेयांस तव विधवत दीना ॥ मीखो  
तुम आचारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ पर्वत से  
भी यह प्रचलित है, होना नहीं कभी विचलित  
है । पुण्य करो इससे मंचित है ॥ यह मुखका  
दातारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥ वीरो इस  
विस्मृत अतीत पर, गर्व हमें अबतक है सादर ।  
इसकी परम्परा प्रचलित कर ॥ कर दो फिर  
उजियारा । भण्डा हो ऊंचा हमारा ॥

---

## नवीन भजन ।

( १ )

तर्ज—नंदके लाला मुरलीवाले तुमको लाखों प्रणाम ।

सब जगसे वीर निराले तुमको लाखों प्रणाम ।  
तुमको लाखों प्रणाम ॥ त्रिमला की आंखोंके तारे,  
कुण्डलपुरके हो उजियारे । जग जीवनके हो हित-  
कारे ॥ तुम हो मुक्तीवाले तुमको लाखों प्रणाम ।

तुमको लाखों प्रणाम ॥ सबको प्रेमामृत पिलवाया,  
 शिवमारग तुमने दिखलाया । जगको हित अपना  
 बनलाया ॥ तुम हो भोले भाले तुमको लाखों  
 प्रणाम । तुमको लाखों प्रणाम ॥ श्वान भेक सब  
 ही तो तारं, जो फिरते थे मारं मारे । कर कुमरेशकी  
 नाव किनारं ॥ तुम हो तारन वाले, तुमको लाखों  
 प्रणाम तुमको लाखों प्रणाम ॥

( २ )

तर्ज - वीर भगवान मुझे दर्श दिखादे आज ।

घोर सागरमें पड़ा आज तिरादे आज ॥ सुनते  
 आये हैं तुम्हे तू है निराला स्वामी । अपनी शक्ति  
 के करिश्मे तो दिखादे आज ॥ नाव मझधार पड़ी  
 कौन किनारं लावे । टूटी किस्तीको मेरी पार लगादे  
 आज ॥ गमकी छाई है घटा हाय गजब मुझ पर  
 ये । रंजो गम मेरा प्रभु शीघ्र मिटादे आज ॥  
 तेरं बिन और न कोई है सहारा स्वामिन । तूही  
 कुमरेशको धीर बंधादे आज ॥

( ३ )

तर्ज—मरोता कहां भूल आये प्यारं ननदोइया

प्रभुको काहे भूल रह्यो मोरे ज्ञानी भैया ॥ रंक ॥

पहले तू निज आत्म भूल्यो । भूल्यो पथ दैव्या ।  
 ता पीछे तू भूल गयो सब ज्ञान ध्यान व्रत वैश्या ॥  
 पहले तू निज हित ही भूलो भूलो स्वहित करैय्या ।  
 ता पीछे तू भूल गयो सब दर्शनादि शिवपैय्या ॥  
 पहले तू निज संयम भूलो भूलो शमदम धैय्या ।  
 कैसे हो कुमरेश तुम्हारी आज किनारं नैय्या ?

( ४ )

तर्ज—अगर किस्मतसे लैलाके गलेका हार ही जाता ।

मुझे प्रभुका मनोहारी अगर दीदार हो जाता ॥  
 जमाने भरके दुग्वोंसे महज ही पार हो जाता ।  
 न होता मोह मायाका वहां पर बोल वाला यूँ ॥  
 छुड़ा कर बनसे पट्टा तू जहांसे पार हो जाता ॥  
 करम शठ कर रहे हाते खड़े किस्मत को बं गेते ।  
 निरंजन निर विकारी तू सुग्वोंका मार हो जाता ॥  
 कपट हट आदिको छिनमें रुला उनको मिटा देना ।  
 मदानंद बीतरागी तो स्वयं भव पार हो जाता ॥  
 प्रभुका ध्यान तू धरना न तेरा कुछ बिगड़ जाता ।  
 अरे कुमरेश मुक्तीका तुझे दीदार हो जाता ॥

( ५ )

तर्ज—या इलाही मिट न जाये ददें दिल ।

हे प्रभो यह मिट न जाये आत्मबल । मिटने वाले



को उठाये आत्मबल ॥ रात दिन रहते पड़े हम  
 हाय सब, मोहमें अपना छुपाये आत्मबल ॥  
 आत्मबल भी क्या कहीं मिलता अरं । मांगले  
 जो मुफ्तमें हम आत्मबल ॥ आत्मबल ही इस  
 जगतमें मार है । मुक्तिदायक है यही निज  
 आत्मबल ॥ मोचले कुमरोज दिलमें तू यही ।  
 आत्मबल ही है जगतमें आत्मबल । हे प्रभो यह  
 मिट न जाये आत्मबल ॥

( ६ )

तर्ज - प्रेम बिन कोई नहीं अपना ।

धर्म बिन कोई नहीं अपना ॥ टेक ॥ विकल प्राण  
 जब निकल जायेंगे, सब सम्पद सपना ॥  
 झूठा तन धन झूठा यौवन झूठी जगकी रचना ।  
 झूठा र अब क्यों न तजेरं झूठ नहीं अपना ॥  
 धर्म-ध्यान धर धर्म गान कर धर्म सदा करना ।  
 धर्म तुम्हारी आत्म वस्तु है धर्म ही चित रखना ॥  
 धर्म मोक्षका द्वार, जगतमें कोई नहीं अपना ॥

( ७ )

यह जग झूठा सारा रं मन नाहक क्यों ललचाया

तन धन यौवन पर गुमान क्या यह चपलाकी  
 छाया ॥ सच मुच क्षणमें बिनमि जायगी तेरी  
 कंचन काया । रं मन नाहक क्यों ललचाया ॥  
 मात पिता परिवार पुत्र सब नारी अरु समुदाया ।  
 देखतके नीके हैं लागत वक्त पै काम न आया ॥  
 रं मन नाहक क्यों ललचाया । धर्म अमर है अमर  
 रहेगा याकी सांची छाया ॥ विफल गवांवन क्यों  
 मानुष भव कठिन कठिन तें पाया । रं मन नाहक  
 क्यों ललचाया ॥ वीर प्रभु का ध्यान निरन्तर  
 करले मन हषाया । समय निकल कुमरेश जायगा  
 औसर तज पछताया ॥ रं मन नाहक क्यों  
 ललचाया ॥

( ८ )

तर्ज छोटोमो बलमा मोरे आंगनामें गिद्धा विंते ।

देखो अज्ञानी जिघा जगतमें भ्रमता डोले ॥ टेक ॥  
 कबहुं नरक गयो वां अरं सुख दुखको तोले ।  
 सह करके दुखड़ोंकी मार ये तो रोता डोले ॥ १ ॥  
 कबहुं तिर्यंच भयो वां अरं मद माता डोले ।  
 देखके दुखड़ोंका गार ये तो रोता डोलें ॥ २ ॥  
 कबहुं मनुष भयो वां अरं भोगोंमें भूले ।

समझके विषयनको सार ये तो हंसता डोले ॥३॥  
 कबहुं असुर भयो वां अरे समता को रोले ।  
 देखके औरन को कार ये तो भुरता डोले ॥ ४ ॥  
 अबहुं कुमरेश जगो अपने को क्योंकर भूले ।  
 जगत दुग्वों का है गार यां तो रोता डोले ॥ ५ ॥

( ६ )

( तर्ज—बिदिया मांगी खोय गई का जाने गम )

उमर सारी खोय गई नहीं कीना ध्यान ॥ टेक ॥  
 बाली उमर मोरी खेलनमें खोय गई । मोवनमें  
 निकल गई नहीं कीना ध्यान ॥ १ ॥ तरुण उमर  
 मोरी विषयन में खोय गई । भोगन में निकल गई  
 नहीं कीना ध्यान ॥ २ ॥ वृद्ध उमर मोरी मोचनमें  
 खोय गई । रोगनमें निकल गई नहीं कीना ध्यान ।  
 सारी उमर कुमरेश यों खोय गई । गफलन में  
 निकल गई नहीं कीना ध्यान ॥ ४ ॥

( १० )

( तर्ज—धर्मको जाना नहीं फिर जन्म लेकर क्या किया )

वीर प्रभुकी भक्ति बिन सूना रहा जिसका दिया ॥  
 धरमका संसारमें आदर्श पहिचाना नहीं । वह  
 अगर सुम्नसे जिया आखिर जिया तो क्या जिया

धरमका जिसने न रक्खा ध्यान किंचित भी कभी,  
 वह हुआ बाधा अरे तो कौनमा सुकृत किया ॥३॥  
 धर्म ही संसार में कुमरेश बस हितकार है ।

( ११ )

रं जिघा विमरत क्यों पद अपना ॥ टंक ॥  
 यह पर पद सम्पद नहीं तेरा यह है रैन सपना ।  
 क्षणभरके भीतरही भीतर विनस जायेगा सपना ।  
 मात-पिता भगनी सुतदारा इनको माने अपना ।  
 अन्त समय कोई साथ चलेना जाय तड़फता अपना,  
 जा तन नृ मलमल कर धोवत येही संग चले ना ।  
 फिर कितपर कुमरेश आश है कौन मगाहै अपना ।

( १२ )

( तज- यह वह नागिन हैं जो कि आपसे मारी न गई )  
 वीर प्रभु तेरी छवि दिल से भुलाई न गई ॥  
 तेरी दौलत भी अरे मुझसे संभाली न गई ।  
 तेरी महिमाको करुं कैसे वयां मेरे प्रभु ।  
 तेरी हस्ती भी अभी मुझसे संभाली न गई ।  
 जिसने भी देखा तुझे वन गया तेरा शौदा ।  
 तेरी वाणी भी कभी तीरसी खाली न गई ॥

तेरी फुरकतमें तड़फता है मिरा दिल नादा ।  
तेरी कुमरेश छवि दिलसे हटाई न गई ॥

( १३ )

ठुमरी—हे प्रभु मैं हूं दास तिहारो—  
तुम करुणा निधि दीन दयालो  
मैं हूं अधम उदारो ।  
भवमागरमें डूब रह्यो हूं  
मेरी ओर निहारो ॥  
जर्जर जीवन तरणी डगमग  
दूर अभी है किनारो ।  
विषय वायु अति प्रबल चलत है  
चहुं दिश मद अंधियारो ॥ २ ॥  
इष्ट-अनिष्ट नहीं कुछ सुभत  
है नहिं ज्ञान उजारो ।  
पद कुमरेश तुम्हारं ध्यावन  
मोहि वेग अब तारो ॥

( १४ )

हे वीर जगके रक्षक तू मुझ पे दया करना ।  
आनेको जो मरपे हों तू दूर बला करना ।  
मुझ भूले हुये पथको पथ आके बता देना ।

मैं तुझमें समा जाऊं तू मुझमें रमा करना ।  
मैं विश्वकी ममतामें मायामें उलभता हूँ ।

तू उनसे बचा करके भव पार मुझे करना ।  
संभव है मतोमें पड़ मैं तुझको भुला बैठूं  
पर नाथ कहीं तू भी विस्मृत न मुझे करना ।  
निर्विघ्न हो गया अब मैं तेरे आसरंपर  
कुमरेशको दुनियांसे अब पार प्रभो करना ।

( १५ )

चेतत क्यों नहीं आज चेतनवा

चेतत क्यों नहीं आज ॥ टेक ॥

सोवत सोवत वीत गये जुग क्यों न करे निज काज ।  
तू विषयन बिच नाच रह्यो है भोगत आवें न लाज ।

चेतनवा चेतत क्यों नहीं आज ॥ १ ॥

समदमसंघम जपतप त्यागत त्यागत है निज साज ।  
तू नागिन ममताके फंदे फंसि भूल रह्यो निज राज ॥

चेतनवा चेतत क्यों नहीं आज ॥ २ ॥

यह निज निधि सम्यक विध धरले फिर थिरकर  
निज काज

तू कुमरेश जगत सर तरजा समग्र अभी है भाज ॥

चेतनवा चेतत क्यों नहीं आज ।

( १६ )

तर्ज—तन प्रेमकी राख लगा करके नित प्रेमकी  
धूनि रमायेंगे ।  
मन धर्ममें नित्य लगा करके सुख प्रेमकी धूनि  
रमायेंगे ।  
फिर वीरके नामकी माला ले शुभ सत्यके अलग्ग  
जगायेंगे ।  
धर्म ही साजन धर्म ही पूजन धर्मसे ही है सफल  
यह जीवन  
धर्मसे होकर लैस जगतमें धर्मकी वंशी बजायेंगे ।  
धर्म पुजारी धर्म मन्दिरमें धर्मके पुष्प चढ़ायेंगे ।  
धर्म एक कुमरेश प्रेमसे धर्म ही धर्म मनायेंगे ।

( १७ )

तर्ज—कोई प्रेमके गीत सिखा दे हमें—  
कोई धर्मके गीत सिखा दे हमें—  
कोई धर्मकी रीति बता दे हमें—  
खिल जावे धर्मकी दिलमें कली ॥ टेक ॥  
कोई पापी धर्म कहां जाने  
कहीं भूँटा भी सत्यको पहिचाने  
जग धर्म महत्वको क्या जाने

खिल जावे धर्मकी दिलमें कली ॥ १ ॥  
 यह सब दुनियाके धन्धे हैं  
 नर धर्म बिना सब अन्धे हैं  
 सब वीर प्रभूके वन्दे हैं  
 मिल जावे धर्मसे ज्योति भली ॥ २ ॥  
 तुम धर्म कगो दिन रैन चलो  
 जग जाल कराल अभीसे दलो  
 सिवा वीरके औरका नाम न लो  
 कुमरेश मिलेगी मुक्ति थली ।

( १८ )

तर्ज- [ हमतो मक्केको जायेंगे भूम २ कर ]  
 हम तो दर्शनको जायेंगे भूम भूमकर ।  
 पुण्य बाधेंगे नाचेंगे घूम घूमकर ॥ १ ॥  
 देवो कैसी मनोहर है प्रतिमा प्रभु  
 गुण गाधेंगे आयेंगे घूम घूम कर ॥ २ ॥  
 वीतरागी भलक कैसी आभा अहा  
 हम तो देखेंगे हर्षित हो भूम भूमकर ॥ ३ ॥  
 काट कुमरेश अपने करम दर्श कर  
 हमतो चरणोंको आयेंगे चूम चूमकर ॥ ४ ॥



राग—उत्तम क्षमा पे अचंभो मोहि भारी जी,

किस विधि किये क्रोध रिपु दूर ।  
एक तो प्रभु तुम परम विरागी  
पास न लेष वसन तन पूर ।  
दूजे भवसागरसे तारक  
तीजे सुखदायक भर पूर ॥ १ ॥

चौथे तुम सन्तोषी स्वामी  
अचल अकम्पन जगमें शूर ।  
कोमल वचन सुधा सम सुखकर  
हिय उपदेशी नायक भूर ॥ २ ॥

पाँचवें जीव दयाके सागर  
ज्ञायक जगत द्रव्यनके नूर ।  
छठवें सिद्ध स्वरूपी ध्यानी  
निरलाभी कृतराग विदूर ॥ ३ ॥

सातवें मोह न पास निहारे  
कर्मन की कीनी तुम धूर ।  
निज पदको निशदिन चिन्तनकर  
तप संयममें होकर शूर ॥ ४ ॥

आठम अष्टम भूमि बसे हो  
निज गुनमें निज सुर परिपूर ।

सिर कुमरेश नवावत तुम पद

दूर करो मेरे दुखको क्रूर ॥ ५ ॥

( २० )

[ तर्ज--मुझे शम्भु दर्शन दिखाना पड़ेगा ]

मुझे स्वामी दर्शन दिखाना पड़ेगा ॥ टेक ॥

पड़ा घोर सागर तिराना पड़ेगा ॥

ये संसार सागर महादुःखका घर ।

मुझे पार इसके लगाना पड़ेगा ॥

मैं सुनता हूँ तुमको परम वीतरागी ।

मुझे वीतरागी बनाना पड़ेगा ॥

मेरी किस्तिये गम भँवरमें पड़ी है ।

किनारे से अब तों लगाना पड़ेगा ॥

ये तूफान करमोंका आकर सताता ।

करम जाल मुझसे हटाना पड़ेगा ॥

यही आरजू एक कुमरेश की है ।

मेरा पार बेड़ा लगाना पड़ेगा ॥

( २१ )

ऐसो नर क्यों न दुखी हो जावे—

जाको मारदव भाव न भावे ॥ टेक ॥

मत विषरूप फलत है ऐसे सब सम्पद विनसावे ।  
 आत्म गुणनको चिन्तन तजके बुद्धिस्वयंनसजावे ॥१॥  
 पर द्रव्यन पर गर्व करत है मेरो है नित गावे ।  
 सुन्दर तन धन पाय अयाने और न खूब चिढ़ावे ॥  
 गवण लंकपतीक कथासे क्यों नहिं शिक्षा पावे ।  
 भूल रह्यो अपने मदमें तू एक दिना पछतावे ॥३॥  
 निज जड़को तू काट रह्यो है फेर कहां टिक पावे ।  
 तू स्वयमेव गिरोगे ऐसे खोज नहीं फिर पावे ॥४॥  
 ताते जग कुमरेश सयाने आपही विष मत खावे ।  
 जान बूझकर अंध बने मत समय बृथा न गंवावे ॥५॥

तर्ज [ तेरे इशकका जिसको आजार होगा ]

प्रभु वीरका जिसको दीदार होगा ।

जमानेसे वोही अरे पार होगा ॥

न यों किस्तिथे गम भंवरमें भी पड़ेगी ।

न दुनियांमें भी वह कभी ख्वार होगा ॥

न जीवन मरणके कभी दुख सहेगा ।

अरे एकदम उसका उद्धार होगा ॥

यही खासियत है प्रभु वीरमें बस ।

कि दर्शनसे भक्तोंका उपकार होगा ॥

सदा वीर दर्श कुमरेश कर ले ।

कि दुनियांके दुखांसे तू पार होगा ॥

( २२ )

[ कांटो लागेरे देवरिया मोपै गैल चलो ना जाय ]  
आर्जवधर्म अमित हितकारी गुरुने यहीबताया है।टेका  
करमततू छरु कपट कभी भीयह स्वभावनहीं तेरा है।  
निज स्वभाव तज होत बावरो क्यों भरमाया है ॥  
अपना तनधन अपना जोवन मान रहा यह मेरा है।  
परजानत क्या नाहिअयाने विनसि जायगी काया है।  
किनके हित करना फिरता है तू निशिदिन फेरा है।  
कौन सगा अपना है मूरख क्यों भरमाया है।  
बूंद पड़त आकाश चाह तो उड़ना भ्रम यह तेरा है।  
रतन छोड़कर कांच खण्डपर क्यों ललचाया है।  
समभसोचकुमरेश समय अब बहुत रह गयाथोड़ा है  
आर्जव भाव सहज अपनाले क्यों भरमाया है ॥

( २३ )

[ तर्ज—क्या जादू भर लाई रे मेरा बारा दिवरिया ]  
तू तो बड़ा अज्ञानी रे छोड़ी शिवकी डगरिया।  
बन गया अब अभिमानी रे पड़ भवकी भंवरिया ॥  
शैर—छोड़ अभिमानको मूरख नहीं दुख उठायेगा।  
पिटेगा मार खायेगा मरेगा नर्क जायेगा ॥  
रोबेगा वहां अज्ञानो रे लग्न दुखही नगरिया ॥१॥

शैर-अरे कर प्यार समतासे विषयकेफंदमें मनपड़।  
 बुरा इनका नतीजा है यहां पर जायगा तू सड़ ॥  
 पाये न फिर अज्ञानीरे शिव सुखकी डगरिया ॥२॥  
 शैर-अगरतू चाहता हितहै तो अब जिनराजको भजले  
 सुपथपर आजसे चल दे अरे शुभ कामकुछ करले।  
 कुमरेश सुन जिनवाणीरे पाले मुक्ति महरिया ॥

( २४ )

मत मलमल होवे काया नहीं शुचि बावरे ॥ टेक ॥  
 मल मूत्रादिक भरी थैलियां देखन ही घिन आव ।  
 क्यों इसपर तू रीझ रह्यो है पीछे हो पछताव ॥  
 कर मल मल होवे काया नहीं शुचि बावरे ॥ १ ॥  
 नित प्रित गंगा जमुना न्हावे और सभी दरियाव ।  
 यह पवित्र होनेकी नाही इसका अशुचि स्वभाव ।  
 मत जनम डुबावे काया नहीं सुध जावरे ॥ २ ॥  
 यह माटीकी बनी हुई है माटीकी परियाव ।  
 माटी ऊपर माटी नीचे माटी का पहिनाव ॥  
 यह माटी होवे काया नहीं रह जावरे ॥ ३ ॥  
 रत्नत्रय निधि अन्तर धरले समय यही है आव ।  
 समता जल पीले कुछ पीले लोभ क्रोध विनसाव ॥  
 नहीं येही होवे काया जगत भरमाव रे ॥ ४ ॥

तू शुचि शारद गंग नहाले ज्ञान पयोनिधि जाव ।  
धर्म शौच कुमरेश समझले तब जगसे तिरजाव  
नहीं ये ही होवे काया नहीं सुख पावरे ॥ ५ ॥

( २५ )

( तर्ज—तू क्या उम्रकी शाखपर सो रहा है )

तुझे जर पे इतना गुमां हो रहा है ।

खबर भी है दममें कि क्या हो रहा है ॥

जो कल था शहंसाह वही आज देख ।

कि जा जाके दरपे खड़ा हो रहा है ॥

थी जिनके खजानेमें दौलत ही दौलत ।

बह पैसेके खातिर शिला ढो रहा है ॥

ये है जिन्दगी बस अरे चार रोजा ।

कि जिसपर तू इतना मगन हो रहा है ॥

समझ सोच कुमरेश अब भी समय है ।

क्यों गफलतमें प्यारं पड़ा सो रहा है ॥

( २६ )

( रसिया )

जिया तोहि बार बार समझायो समझ रे भूठ

कभी मत बोल ।

जगमेंसे परतीत उठत है लाभ नहीं कछु होय ।

लाभ नहीं कछु होय चतुर अब सत्य सदा शिवतोल ॥  
 वसु राजाकी तरफ गौरकर यही हाल बस होय ।  
 यही हाल बस होय देख अब आंख जरा तू खोल ॥  
 सत्यघोष सम भूठ बोलकर पकड़ करमको रोय ।  
 पकड़ करमको रोय मूढ़ नर रखमत दिलमें पोल ॥  
 आत्म हित कछु सोच बावरे पागल मत तू होय ।  
 पागलमत तू होय भूलकर आफत ले मत मोल ॥  
 भूँट बोलकर और न ठगनों कहा ठगीसे होय ।  
 कहा ठगीसे होय करम नर शुभ कारज कर धोल ॥  
 तू कुमरेश संभल अब भी जा भूँट कहे नहीं कोय ।  
 भूँट कहेंना कोयमिले नहिं यह नर भव अनमोल ॥

( २७ )

[ तज—क्यों न लूटे मजे वस्ते पारके रे ]

क्यों न करले उपाय उद्धारके रे ।

दिन तो आये हैं अब निस्तारके रे ॥

शैर—तोड़ संसारका जाल क्षणमें अभी ।

मोह ममतासे नाता न तू कर कर ॥

छोड़ भूँट सभी संसारके रे ॥ १ ॥

शैर—देख पछतायेगा एक दिन तू यहां ।

तेरा होगा न दुनियांमें नामोनिशां ॥

फिर न होगा न तू भव पारके रे ॥ २ ॥

शैर—मानले सीख जो है लिखी धर्ममें ।  
 मन लगा आजसे शुद्धसे कर्ममें ॥  
 सुख पाये सदा शिव सारके रे ॥३॥  
 है समय अब भी कुमरेश तू चेत जा ।  
 साफ अपनी नियत रख कहा मानजा ॥

( २८ )

[ तर्ज—छोटी बड़ी सुइयां रे जालीका मेरा काढ़ना ]  
 भोले भाले जीयारे संयमको चितमें धारना ॥ टेक ॥  
 एक दुखपायोतूने इंद्रियनके वशमें, हो इंद्रियोंकेवशमें  
 मनको मारा रे, गनियोंमें तेरा जावना ॥ १ ॥  
 एकदुखपायोतूने नरक निगोदमें, हाँ नरक निगोदमें ।  
 लड़ना भिड़नारे सुखसे तो कहा जायना ॥ २ ॥  
 एक दुख पायो तूने गति तिर्यचमें हां गति तिर्यचमें  
 पिटना बंधना रे बोझका तेरा लादना ॥ ३ ॥  
 एक दुःख पायो तूने देवगतीमें हाँ देवगतीमें ।  
 और की लखके रे सम्पतिका तेरा भूरना ॥ ४ ॥  
 एक दुःख पायो तूने मनुष्य गतीमें हां मनुष्य गतीमें ।  
 आधी व्याधी रे विषयनकी तेरी चाहना ॥ ५ ॥  
 बहुदुख पायो तूने ज्ञान विसार जिया ।  
 कुमरेश अब जगरे संयमको प्यारे धारना ॥ ६ ॥



( २६ )

[ तर्ज—मेरी जान माँगी तो क्या तूने माँगा ]

विषय सुखको भोगा तो क्या तूने भोगा ।  
तुझे भोगने का कोई रोग होगा ॥  
समझता है दिल में कि मैं भोगता हूँ ।  
मगर तेरा उलटा यहाँ भोग भोगा ॥ २ ॥  
अरे भोग का सुन नतीजा बुरा है ।  
किसी दिन तुझे सच स्वयं शोक होगा ॥ ३ ॥  
जो तू फंस गया फन्द में हाथ इनके ।  
नहीं फिर कभी तेरा उद्धार होगा ॥ ४ ॥  
इसी से समझ सोच कुमरेश दिलमें ।  
न संयम सा जगमें कहीं यार होगा ॥ ५ ॥

( ३० )

हम भक्त हैं तेरे वीर प्रभू  
तुझे ढूँढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ।  
तू वीतराग है दोष रहित  
इसकी परवा हमको है नहीं ॥  
हम दीवाने हैं तेरे प्रभू  
तुझे ढूँढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥  
हो देव रहो देवालय में  
या जाके रहो सिद्धालय में ।

हम प्यासे हैं तेरे दर्शनके  
 तुझे दूढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥  
 चाहे यां पे रहो चाहे वां पे रहो ।  
 जहां चाहे रहो है मेरं प्रभू ।  
 इक आश लगी तेरे दर्शनकी  
 तुझे दूढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥  
 है चाह एक कुमरेश यही  
 हो जाय कहीं दीदार तेरा ।  
 तेरी भक्ति सदा ही दिलमें रहे  
 तुझे दूढ़ ही लेंगे कहीं न कहीं ॥

( ३१ )

अर्ज करूं महावीर भव दुखसे मुझको काहना ।  
 बहु दुख पाये मैंने कुमतिके संगमें ।  
 नर्क निगोद मझार मर करके मेरा जावना ॥ २ ॥  
 बहुत दिना दुख भोगत बीते ।  
 काल अनन्ता रे मुझसे तो कहा जायना ॥ २ ॥  
 करम न जाने कौन क्रिये मैंने ।  
 पापोंमें मन रतरे समताकी नाहीं चाहना ॥ ३ ॥  
 बड़े सौभाग्य से हम दर्शन पाये—  
 कुमरेश दुखिया है इसपे तो दया धारना ॥ ४ ॥

( ३२ )

बतादे बतादे बतादे महावीर

मुक्तिका पंथ बतादे महावीर ॥

भव भव भ्रम कर सही हाथ वीर ।

पाई नहीं मैंने कोई ऐसी तदवीर ॥

मिटादे मिटादे मिटादे मेरी पीर ।

आयो तेरें चरन शरन महावीर ॥ १ ॥

मुन यश द्विग तेरें आयो अतिवीर ।

पलट दे आज मेरी खोटी तकदीर ॥

दिखादे दिखादे दिखादे सुखसीर ।

अरज यही है मेरी इक महावीर ॥ २ ॥

मेरी अब बात मुन ओरें धीरवीर ।

काट कुमरेशकी करम जंजीर ॥

पिलादे पिलादे पिलादे वह नीर ।

समकित शुद्ध पिलादे महावीर ॥ ३ ॥

( ३३ )

बीच भंवरमें नैथ्या है डगमग सन्मति पार लगाना

मतका पड़ा है मुझ पर फन्दा, किसको पुकारे

तेरा वन्दा । नावके नाविक तुमही हो बस,

सन्मति पार लगाना ॥ १ ॥ पिता पुत्र नारी अरु

माता, वक्त पड़े कोई काम न आता । बिगड़ी सब  
 की बनाने वाले, बिगड़ी मेरी बनाना ॥ २ ॥  
 करो दया अब मुझ पै अपारा, तेरे बिना नहीं  
 कोई सहारा । है कुमरेश भंवर में आका, बड़ा  
 पार लगाना ॥ ३ ॥

## “प्रेम” जीके गायन

† प्रार्थना †

थारं चरणोंमें नमें चौबीसों जिनराज ।

रिखब अजित संभव अभिनंदन,

सुमति नाथ काटें भव फंदन,

पद्म प्रभू महाराज ॥ थारे० ॥

श्री सुपार्श्व को शीश भुकावें,

चन्द्र प्रभू जग फन्द छुड़ावें,

पुष्प दन्त महाराज ॥ थारे० ॥

शीतल शीतल करने वाले,

श्रेयांस दुख हरने वाले,

वास पूज्य महाराज ॥ थारे० ॥

विमल नाथके मिल गुण गाओ,  
श्री अनन्त से ध्यान लगाओ,

धर्मनाथ महाराज ॥ थारे० ॥

कुंथनाथ आधार तुम्हारा,  
अरहनाथ कर दें निस्तारा,

मल्लनाथ महाराज ॥ थारे० ॥

मुनिसोब्रत हम शरण तुम्हारी,  
नमी नेम की छवि सुखकारी,

पार्श्वनाथ महाराज ॥ थारे० ॥

महावीर तुम सब गुण आगर,  
दर्शन दोजै नाथ दया कर,

दया करो महाराज ॥ थारे० ॥

हमतो शरण तुम्हारी आए,  
“प्रभू” दरश करके हर्षाए,

सुधि लीजै महाराज ॥ थारे० ॥

## गायन २

( तर्ज—भारतमें फिरसे आज्ञा बंशी बजाने वाले )

इस दिलमें फिर समाजा-दिलवर कहाने वाले ।  
बिगड़ी को फिर बनाजा-बिगड़ी बनाने वाले ॥  
लाखोंको जगसे तारा मुझको तेरा सहारा ।

शिव मग मुझे बताजा शिव मग बताने वाले ।  
 है क्रोध मोह का दल मायाके छाये बादल ।  
 इनसे मुझे बचादे दुःखसे छुड़ाने वाले ॥  
 अन्धकार यहाँ है छाया कुछ भी नजर न आया ।  
 इसको प्रभू मिटादे, भ्रमतम मिटाने वाले ॥  
 यह प्रेम हुआ है निर्बल कलसे हुआ है बेकल ।  
 संसार के चक्कर से तुम हो बचाने वाले ॥

### गायन ३

( तर्ज—वेदोंका डङ्का आलममें )

विपदाका पर्वत टूट पड़ा महावीर प्रभो महावीर प्रभो ।  
 संसारमें हाहाकार मचा महावीर प्रभो महावीरप्रभो ॥  
 निर्बलके बल निर्जनके जन निर्धनके धन तुमहीं  
 तो हो । अब कष्ट हमारा दूर करो महावीर प्रभो  
 महा० ॥ भवतापसे गर जो कोई जलता हो  
 उसको चन्दन सम हो शीतल । इस तापको  
 भगवन शांत करो महावीर प्रभो महावीर प्रभो ॥  
 भव सिंधुमें गोते खाते हैं और नाम जबांपर  
 लाते हैं । अब नाथ हमारा हाथ गहो महावीर  
 प्रभो महा० ॥ अबतो आधार तुम्हारा है और  
 पदमने तुम्हें पुकारा है । इस “प्रेम” के जीवन  
 धन तुमहो महावीर प्रभो महावीर प्रभो ॥

## गायन ४

( तर्ज—सुना है तुमने हैं लाखों तादे )

शरणमें आये तुम्हारी भगवन दया करो हे  
दयालु जिनवर । करो आत्मा हमारी निर्मल दया  
करो हे दयालु जिनवर ॥ मनुष्य जन्म यह है सार  
जगमें इसे भूल करके खो रहे हैं । तुम्हारी भक्ती  
हृदयमें होवे दया करो हे दयालु जिनवर । तुम्हें  
भुलाया न सुख है पाया पड़े हैं संसार सिंधुमें हम अब  
हमें उबारो और जगसे तारो दया करो हे दयालु  
जिनवर ॥ तुम्हारी छवि दिलमें है समाई और  
ध्यान धरेंगे तुम्हारा निशदिन । जन्म सुधारें  
हम जगमें अपना दया करो हे दयालु जिनवर ॥  
कभी न माया पर हम भुलावें क्रोध भावको दूर  
घटावें । सुनें न बातें बुरी किसीकी दया करो हे  
दयालु जिनवर ॥ बस "प्रेम" चरणोंसे अब तुम्हारे  
दास पदमका बनालो अपना । पवित्र मनमें बसो  
निरंतर दया करो हे दयालु जिनवर ॥

## गायन ५

( तर्ज—सच्चे दिलसे जो तैने लौभी लगाई होती )  
उसको कहते हैं महावीर जमाने वाले ।  
वीरता अपनी जमानेको दिखाने वाले ॥

उन्हींके नामको सन्मतिभी कहा करते हैं ।  
 थे अहिंसाकी वो तलवार चलाने वाले ॥  
 पूर्ण योवन था जब संसारको छोड़ा पलमें ।  
 घोर तप करके हैं निर्वाण पद पाने वाले ॥  
 कर्म शत्रूको जीतनेमें वह लामानी थे ।  
 विष बुझे तोर थे कर्मों पै चलाने वाले ॥  
 ऐसे महावीरके चरणोंमें प्रेम हो तेरा ।  
 पद्मकी नावको पल भरमें तरानेवाले ॥

## गायन ६

( तर्ज - नाज भी होता रहे बेदाद भी )

दीन बन्धु हो प्रभू दुग्वियोंके जीवन प्राण हो,  
 आनन्द सिन्धु हो तुम्हीं सारे सुखोंकी खान हो ।  
 घट घटके ज्ञाना आप हैं क्या आपकी महिमा कहें,  
 भक्त वत्सलनाथ हो भक्तोंके तनकी जान हो ।  
 इन्द्र सुर नर भी तुम्हारा पा नहीं सकते पता ।  
 शक्तियां कहां तक कहें तुम सर्वशक्तीमान हो ।  
 तर गये लाग्रों बसर वो नाम लेकर आपका,  
 संसारके हो प्राण तुम जगमें निगली शान हो ।  
 पद्मको तो "प्रेम" है शिवका स्वरूप दिखाइए,  
 तार दो हमको हमारा नाथ तब कल्याण हो ।



## गायन ७

( तर्ज—फैले गुलशनमें दाने अनारके )

अब तो ध्यावो प्रभु जिनराज को रे ।  
तूतो विषयोंके चक्करमें आया हुआ ।  
और भगवनका ध्यान भुलाया हुआ ।  
मत छोड़ो कभी सरताजको रे ॥ अब तो० ॥  
बड़ी मुश्किलसे नर देह पाई तैने,  
और पाकरके यंही गंवाई तैने ।  
क्यों न किया तैने शुभ काज को रे ॥ अब तो० ॥  
गर चरणों से लौ लगाएगा तू ,  
बुरे भावोंको दिलसे हटायेगा तू ।  
मत छोड़ो गरीब निवाजको रे ॥ अब तो० ॥  
सच्चे दिलसे जो जिनवरके गुण गायगा ।  
भव सागरसे आखिरको तर जायगा ।  
“प्रेम” छोड़ दे नखरे नाज को रे ॥ अब तो० ॥

## गायन ८

( तर्ज—टाकीज सिनेमा-बालम आन बसो मोरे मनमें )

भगवन आन बसो मेरे मनमें  
दीन बन्धु सुख धाम तुम्हीं हो  
और निश्चल निष्काम तुम्हीं हो

कर्म जलावें करें तपस्या मुनिवर जाकर बनमें ॥

॥ भगवन० ॥ १ ॥

है मुझको आधार तुम्हारा

लिया तुम्हारा नाथ सहारा

नाम तुम्हारा जपूँ निरन्तर तुम्हीं बसे इस तनमें ।

॥ भगवन० ॥ २ ॥

प्रभु तुम्हारा जो गुण गावे

भवसागरसे वह तर जावे

“प्रेम” तुम्हारी छबी बसी है मेरे दोउ नैनन में ॥

॥ भगवन० ॥ ३ ॥

## गायन ६

( कौवाली )

भाइयो सो रहे हो कहां ध्यान है

उठो निद्रा तजो व्यर्थ अभिमान है

जब कि धर्मका पौदा है कुम्हला रहा

दिन व दिन देखो कैसा है मुरझारहा

करो सर सब्ज पौदेको नुकसान है ॥ भाइयो० ॥

भाई भाईके दुश्मन बने जा रहे

फूटसे दर व दर ठोकरें खा रहे

फूटसे किरकिरी सब हुई शान है ॥ भाइयो० ॥

आपसमें मुकदमा लड़ाने लगे  
 धन अदालतमें जाकर लुटाने लगे  
 जीत जावें मुकदमा यही ध्यान है ॥ भाइयो० ॥  
 छोड़ो आपसमें करना गिला भाइयो  
 मिलो सीनेसे सीना मिला भाइयो  
 वरना जाति चमन होगा बीरान है ॥ भाइयो० ॥  
 “प्रेम” आपसमें अब तो बढ़ाते चलो  
 धर्म क्या है पदम ये बताते चलो  
 बस इसमें हमारा ही कल्याण है ॥ भाइयो० ॥

## गायन १०

( तर्ज—चाहे बोलो या न बोलो )

हे दीनबन्धु तुम हो दुखसे छुड़ाने वाले ।  
 नैया मेरी किनारे भगवन लगाने वाले ॥  
 मझधार में भंवर का तूफान उठ रहा है ।  
 भगवान एक तुम हो इसके बचाने वाले ॥  
 संसार में फंसा हूं दुख पा रहा हूं कैसा ।  
 तुम हो प्रभु भगत की विपदा मिटाने वाले ॥  
 इस भव विशाल वनमें कुछ भी पता नहीं है ॥  
 बस “प्रेम” जबाँ पर है तेरा ही नाम भगवन ।  
 आवागमन मिटा कर शिव मग दिखाने वाले ॥

## गायन ११

श्रीशान्ति सागर मुनि संघके पधारनेपर गाया हुआ भजन ।

( तर्ज—आये मालकाने तरुत वह दौलत कहां गई )

आनन्द सुधा सार श्री मुनिराज पिलाया ।  
सोती हुई समाज को आकार के जगाया ॥  
पौदा ये जैन धर्म का कुम्हला सा था गया ।  
उपदेश दे मर-सब्ज इस पौदेको कराया ॥ आनंद ॥  
पर्दा पड़ा था मोह का अन्धकार हो रहा ।  
अज्ञान के अन्धरे को था दूर भगाया ॥  
था आप की जवान में जादू भरा हुआ ।  
गौरव भी जैन धर्म का कैसा है बढ़ाया ॥  
तप का भी दर्जा ऊंचा है शास्त्रोंमें है लिखा ।  
उस चमत्कारको हमें प्रत्यक्ष दिखाया ॥ आनंद ॥  
श्री शान्ति सागर मुनि के जो मुनिराज साथ हैं ।  
अब “प्रेम” हैं मुनिराजके चरणोंसे हमारा ।  
वह तर गया है जिसने इनसे नेह लगाया ॥ आनंद ०

## गायन १२

( तर्ज—टाकीज सिनेमाकी—नजरिया लाग रही कित ओर )

नजरिया लाग रही प्रभू ओर ।

दीन-बन्धु वह हैं जगनायक, दीनन के ये हैं

सुखदायक । उनकी अनुपम कोर ॥ नजरिया० ॥  
 नाम निरंजन सब सुख कंजन, श्रीजिनराज सर्व  
 दुखभंजन । लगी उन्हींसे डोर ॥ नजरिया० ॥  
 उनकी छबी देख हर्षाते, इन्द्रादिक भी पार न पाते  
 “प्रेम” जगतमें शोर ॥ नजरिया० ॥

### गायन १३

( तर्ज-प्रभूका मिल गुण गावेंगे )

प्रेमका नगर बसावेंगे,  
 वहां सुख शान्ती पावेंगे ।  
 प्रेमकी एक मकान बनावें,  
 प्रेमकी कड़ियों से पटवावें ।  
 प्रेमकी छत पर प्रेम का,  
 चूना भी डलवायेंगे । प्रेम० ।  
 प्रेमका आंगन प्रेमके आले,  
 प्रेमके द्वार होइ मतवाले ।  
 प्रेम भरोखे बैठे प्रेमसे,  
 प्रभु गुण गावेंगे । प्रेम० ।  
 प्रेम पड़ोसी बसे हुए हों,  
 प्रेम मित्र भी बने हुए हां ।  
 प्रेमका हो संसार,  
 प्रेमकी साया पावेंगे । प्रेम० ।

प्रेम-सुधा का पान करेंगे,  
प्रेमके जलमें स्नान करेंगे ।  
प्रेम का गंगा बहे,  
“प्रेम” से गोते त्वावेंगे । प्रेम० ।

### गायन १४

( तर्ज—फलक देता है इनको पेश )

कलामे शास्त्रको श्रावक समझ कर चलना बहतर है ।  
लो फिर तो मोक्ष जानेमें हमारा फर्स्ट नम्बर है ।  
बहुत मुश्किल हैं इस नर तनका पाना गौरसे सुन लो  
और पाना जैन मतका फिर भलाये कैसा अवसर है  
दया हो दिलमें हरदम ध्यान हो जिनराजका सुन लो  
तो भव सिन्धूके चक्करसे न मुश्किल होना बाहर है ।  
धर्म पुलसे गुजर जावे हमारे जिस्मकी मोटर ।  
बता दो मोक्ष जानेमें हमें किस बातका डर है ॥  
स्पेशल जैनियोंकी मोक्ष जानेमें नहीं खटका ।  
“प्रेम”इंजिनमें जब होवे ज्ञान और तपकी पावर है ।

### गायन १५

( तर्ज—दर्शन दीजे भगवन आज )

आओ आओ श्री जिनराज ।  
मनमें धर्म भाव भर जाओ ॥

द्वेष कषाय दूर कर जाओ

राह देखती जैन समाज ॥ आओ०॥

शीघ्र यहाँ पर जो आवोगे ।

हृदय पवित्र बना पाओगे ।

दया करो सरताज ॥ आओ० ॥

घरघरमें हो आनन्द भारी ।

हर्षित होंगे नर और नारी ।

होय यहाँ शुभ काज ॥ आओ० ॥

‘प्रेम’ धर्मकी दशा सुधारो ।

शीघ्र यहाँ भगवान पधारो ॥

रहे धर्मकी लाज ॥ आओ० ॥

### गायन १६

( तर्ज—आंखोंमें समाजाओ परदेमें रहा करना )

भगवान मुझे अपने चरणोंमें लगा देना ।

मायामें फंस रहा हूँ, अब इससे बचा देना ॥

मिथ्यात्वका अंधेरा इस घरमें छा रहा है ।

पर ज्ञान सुधा रसका एक जाम पिला देना ॥

अज्ञानके भंवरका तूफान उठ रहा है ।

चक्करमें पड़ी नैया अब पार लगा देना ॥

दुनियाँके झंझटोंमें शायद मैं भूल जाऊँ ।

पर नाथ नहीं मेरी तुम याद भुला देना ॥

उम्मेद 'प्रेम' ये है तारोगे नाथ मुझको ।  
करना दया दयामय भव-फन्द छुड़ा देना ।

### गायन १७

[ तर्ज—वेदोंका झंडा आलममें ]

मसजिदमें मिलो चाहे मन्दिरमें हम तुमसे मिलेंगे  
कहीं न कहीं ।

तेरी चाह हमारे दिलमें बसी तुझे ढूँढ़ ही लेंगे  
कहीं न कहीं ।

दिखलाके हमें एक बांकी झलक रूपोश हुआ तू  
हमसे अलग ।

तड़फाया हमें तो समझ लेना महशरमें मिलेंगे  
कहीं न कहीं ॥

हाथमें लेकर अभी देखा तेरी तसबीर को ।  
ख्याल आया ढूँढ़ता रह गया मैं तदबीरको ॥

शकल थी कैसी मनोहर सामने आई हुई ।  
संसारमें जिस उजालेकी रोशनी छाई हुई ॥

ख्याल करना किसीका संसारमें बेकार है ।

सार कुछ भी है नहीं भगवानका आधार है ॥

उस दिन ही जवांसे यह निकला भगवनसे मिलेंगे  
कहीं न कहीं ॥

नाम भगवनका गे मित्रो भुलाते न चलो ।



‘प्रेम’ हो सबसे किसीको भी सताते न चलो ।  
 गर होगा कुछ नालोंमें असर वह हमसे मिलेंगे।  
 कहीं न कहीं ॥

### गायन १८

( तर्ज—हो जाओगे बदनाम जमाना नहीं अच्छा )  
 विषयोंमें अपने दिलको लगाना नहीं अच्छा ।  
 सत धर्मसे इस दिलको हटाना नहीं अच्छा ॥  
 अपनी जान जानिए औरोंकी हमेशा ।  
 उन बेकसोंका खून बहाना नहीं अच्छा ॥ विषयों०॥  
 छोड़ो शराब पीना है ये बुरी बला ।  
 मयखानेमें जा जाम चढ़ाना नहीं अच्छा ॥ विषयों ॥  
 मरते हो नजाकत पर है मौतका सामां ।  
 देना न दिल किसीको जमाना नहीं अच्छा ॥विषयों०  
 लाग्रोंकी जान जाती है तब बनाता है शहद ।  
 इससे शहदसे हाथ लगाना नहीं अच्छा ॥ विषयों०॥  
 रख देते हैं धन धाम जुएबाज हमेशा ।  
 जुएमें अपनी शान मिटाना नहीं अच्छा ॥विषयों०॥  
 चोरोंको सजा मिलती है होते हैं परेशान ।  
 फिर इस बलामें हाथ फँसाना नहीं अच्छा ।विषयों०  
 सत धर्ममें अब ‘प्रेम’ से कर लीजे तरक्की ।  
 विषयोंमें कभी दिलका भुकाना नहीं अच्छा ॥विष०

# अहिचेत्र पार्श्वनाथ स्तुति ।

जोगीरासेकी चालमें ।

बंदौ श्रीपारसपदपंकज, पंच परम गुरु  
ध्याऊँ । शारदामाय नमो मनवचतन. गुरु गौतम  
शिरनाऊँ ॥ एक समय श्रीपारस जिनवर बनतिष्ठे  
वैरागी । बाह्याभ्यंतर परिग्रह त्यागे आतमसों  
लव लागी ॥ १ ॥ कल्प—द्रुमसम प्रभुतन  
सोहै, करपल्लव तनसाखा । अविचल आतम-  
ध्यान पगे, प्रभु इक चितमन थिर राखा ॥ माता  
तात कमठचर पापी, तपसी तप करि मूवो । अ-  
ज्ञानी अज्ञान तपस्या-बल, करि सो सुर हूवो ॥२॥  
मारग जात विमान रह्यो थिर, कोप अधिक मन  
ठान्यो । देखत ध्यानारूढ़ जिनेश्वर, शत्रु आपनो  
मान्यो ॥ भीषणरूप भयानक दृग कर, अरुण वरण  
तन कापै । मूसलधारासम जल छोड़ै, अधर डश-  
ततल चापै ॥ ३ ॥ अति अँधियार भयानक निशि  
अति, गर्ज घटा घनघोरै । चपला चपल चमकती  
चहुँदिशि धीर न धीरज छोरै ॥ शब्द भयंकर करत  
असुर गण, अग्निजाल-मुख-छोड़ै । पवन प्रचण्ड  
चलाय प्रलत, यव द्रुमगण तृणसम तोड़ै ॥ ४ ॥

पवन प्रचंड मूमलजलधारा, निशि अतिही अन्धि-  
 यारी । दामिनि दमक चिकार पिसाचन, बन कीनो  
 भयकारी ॥ अविचल घोर गंभीर जिनेश्वर, धिर  
 आसन बन ठाढ़े । पवनपरीषहसों नहिं कांपै सुर-  
 गिरि सम मन गाढ़ें ॥५॥ प्रभुके पुण्यप्रताप पवन-  
 वश, फणपति आसन कंप्यो । अति भय भीत  
 बिलोक चहुंदिशि, चकित हूँ मनजंप्यो ॥ जाण्यो  
 प्रभु उपसर्ग अवधिबल पद्मावतिजुत धायो । फणको  
 छत्र कियो प्रभुके गिर, मर्षारिष्ट नशायो ॥ ६ ॥  
 फणपतिकृत उपसर्ग निवारण, देखि असुर दुठ  
 भाग्यो । लोकालोक विलोकन प्रभुके, तुरतहिं  
 केवल जाग्यो ॥ समवशरणकी रचना कारण, सुर-  
 पति आज्ञा दीनी । मणिमुक्ता हीराकंचनमय, धन-  
 पति रचना कीनी ॥७॥ तीनों कोट रचे मन मंडित  
 धूलीसाल बनाई । गोपुर तुङ्ग अनूप विराजै, मणि-  
 मय गहरी खार्ई ॥ सरवर सजल मनोहर सोहैं,  
 बन उपवनकी शोभा । वापी विविध विचित्र बिलो-  
 कत सुरनर खग मनलोभा ॥८॥ खेवैं देव गलिनमैं  
 घटभरि धूपसुगंध सुहाई । मंद सुगंध प्रतापपवन-  
 वश, दशहूँ दिशिमैं छाई ॥ गरुणादिकके चिन्ह

अलंकृत धुज चहुं ओर विराजैं । तोरन बंदनवारी  
 सोहैं नवनिधिकी छबि छाजैं ॥ ९ ॥ देवीदेव खड़े  
 दरवानी, देखि बहुत सुख पावैं । सम्यकवंत महा-  
 श्रद्धानी, भविसों प्रीति बढ़ावैं ॥ तीन कोटिके  
 मध्य जिनेश्वर गंधकुटी सुखदायी । अंतरीक्ष  
 सिंहासन ऊपर, राजैं त्रिभुवन राई ॥ १० ॥ मणिमय  
 तीन सिंहासन शोभा, वरणत पार न पाऊं । प्रभुके  
 चरणकमलतल सोभै, मनमोदित सिर नाऊं ॥  
 चन्द्रकांतिसम दीप्ति मनोहर, तीन छत्रछबि आखी  
 तीन भुवन ईश्वर ताके हैं, मानों वे सब साखी  
 ॥ ११ ॥ दुन्दुभि शब्द गहिर अति बाजैं, उपमा  
 वरनि न जाई ॥ तीन भुवन जीवन प्रति भाखैं,  
 जयघोषण सुखदाई ॥ कल्पतरुवर पुष्प सुगंधित  
 गंधोदककी वर्षा । देवी देव करे निशिवाशर, भवि  
 जीवन मत हर्षा ॥ १२ ॥ तरु अशोककी उपमा  
 वरणत भविजन पार न पावैं । रोग वियोगदुखी  
 जन दर्शत, तुरतहिं शोक नशावैं । कुन्दपुहुप सम  
 श्वेत मनोहर, चौसठि चमर हुराहीं । मानों निरमल  
 मरगिरिके तट, भरना भूमकि भराहीं ॥ १३ ॥  
 प्रभुतन-श्री भामंडलकी दुति, अद्भुत तेज विराजैं

जाकी दीसि मनोहर आगैं, कोटि दिशकर लाजै ॥  
दिव्य बचन सब भाषा गर्भित, खिरहिं त्रिकाल  
सुवानी । 'आसा' आस करे सो पूरण, श्री पारस-  
सुखदानी ॥ १४ ॥ सुर नर जिय तिरयंच घनेरे,  
जिनवंदनचित आनै । वैरभावपरिहार निरन्तर  
प्रीति परस्पर ठानै । दशहूँदिशि निरमल अति  
दीखै, भयो है शोभ घनेरा । स्वच्छसरोवरजलकर  
पूरे, बृक्ष फरे चहुं फेरा ॥ १५ ॥ साली आदिक खेत  
चहूँदिशि भई स्वमेव घनेरी । जीवनबध नहिं होय  
कदाचित यह अतिशय प्रभुकेरी । नख अरु केश  
बढ़ै नहिं प्रभुके, नहिं नैनन टमकारे । दर्पणवत  
प्रभुको तन दीपै, आननचार निहारे ॥ १६ ॥ इंद्र  
नरेंद्र धनेंद्र सबै मिलि धर्माभृत अभिलाषी । गण  
धरपदशिरनाथ सुरासुर प्रभुकी थुति अतिभाषी  
दीनदयाल कृपाल दयानिधि, तृषावंत भवि कीन्हें  
धर्माभृत वर्षाय जिनेश्वर; तोषित बहुविधि कीन्हें  
॥ १७ ॥ आरज खण्डबिहार जिनेश्वर कीनो भवि-  
हितकारी । धर्मचक्र आगौनि चलै प्रभु, केवल  
महिमा भारी ॥ पंद्रह पांति कमल पंद्रह जुग  
सुन्दर हेम सम्हारे । अन्तरीक्ष डग सहित चलै

प्रभु, चरणांबुज जल धारे ॥१८॥ मिटि उपसर्ग भये  
 प्रभु केवलि, भूमि पवित्र सुहाई । सो अहिक्षेत्र  
 थप्यो सुर नर मिल, पूजकको सुखदाई ॥ नाम  
 लेत सब बिघन विनाशौ, संकट क्षणमें चूरे । बंदन  
 करत बहै सुख सम्पति सुमिरत आशा पूरै ॥१९॥  
 जो अहिक्षेत्र विधान पढ़ै नित, अथवा गाय सुनावै  
 श्रीजिनभक्ति धरै मनमें दिढ़, मनवांछित फल पावै  
 जुगल वेद वसु एक अङ्क गणि, बुधजन वत्सर  
 जान्यो । मारग शुक्ल दशै रबिबासर, “आशाराम”  
 बखान्यो ॥

### आराधना पाठ ।

मैं देव नित अरहंत चाहूं सिद्धका सुमिरन  
 करौं । मैं सुर गुरु मुनि तीनि पद, मैं साधुपद हृदय  
 धरौं ॥ मैं धर्मकरुणामयी चाहूं, जहां हिंसा रंच ना  
 मैं शास्त्रज्ञान विराग चाहूं जासु मैं परपंच ना  
 ॥ १ ॥ चौबीस श्रीजिनदेव चाहूं और देव न मन  
 बसैं । जिनबीस क्षेत्र विदेह चाहूं बंदिते पातिकनशै  
 गिरनार शिखर संमेद चाहूं चम्पापुरी पावापुरी  
 कैलास श्रीजिनधाम चाहूं भजतभाजैं भूमजुरी ॥२॥

नवतत्वका सरधान चाहूं और तत्व न मन धरों  
 षटद्रव्य गुण परजाय चाहूं ठीक ताशों भय हरो ॥  
 पूजा परम जिनराज चाहूं और देव न हूं सदा ।  
 तिहुंकालकी मैं जाय चाहूं पाप नहिं लागै कदा  
 ॥ ३ ॥ सम्यक्त दरशन ज्ञान चारित्र सदा चाहूं  
 भावसों । दशलक्षणी मैं धर्म चाहूं महा हर्ष  
 उछावसों । सोलह जु कारण दुखनिवारण सदा  
 चाहूं प्रीतिसो ॥ मैं चित्त अठाई पर्व चाहूं लहा  
 मंगल रीतिसों ॥४॥ मैं वेद चारों सदा चाहूं आदि  
 अंत निवाहसों । पाए धरमके चार चाहूं अधिक  
 चित्त उछाहसों । मैं दान चारों सदा चाहूं भुवन  
 वशि लाहो लहूं । आराधना मैं चारि चाहूं अन्तमें  
 जेई गहूं ॥५॥ भावन बारह सदा भाऊं भाव निर  
 मल होत हैं । मैं व्रत जु बारह सदा चाहूं त्याग  
 भाव उद्योत हैं ॥ प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूं  
 ध्यान आसन सोहना । बसुकर्मतैं मैं छुटा चाहूं  
 शिव लहूं जहं मोहना ॥६॥ मैं साधुजनको संघ  
 चाहूं प्रीति तिन हीं सो करौं । मैं पर्वके उपवास  
 चाहूं अरम्भै मैं परिहरौं । इस दुःख पंचमकाल  
 माहीं कुल शरावक मैं लहौं ॥ अरु महाव्रत धरि

सकों नाहीं निबल तन मैंने गहो ॥७॥ आराधना  
 उत्तम सदा चाहूं सुनो जिनरायजी । तुम कृपानाथ  
 अनाथ आनत दयाकरना न्यायजी ॥ बसुकर्मनाश  
 विकाश ज्ञान प्रकाश मोकोकीजिए । करि सुगति  
 गमन समाधि मरन सुभक्ति चरनन दीजिए ॥ ८ ॥

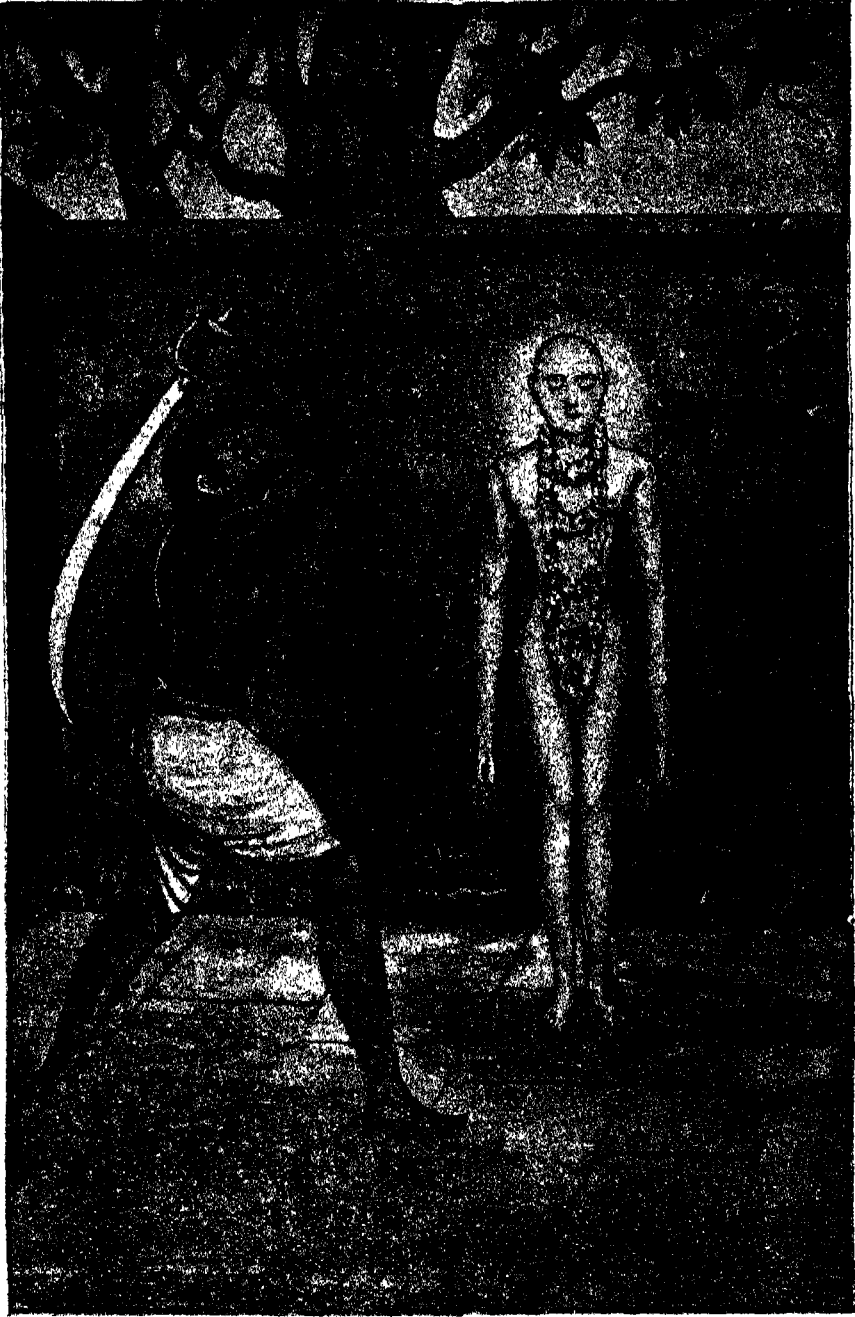
णमोकार महिमा प्रभाती ।

प्रातकाल मन्त्रजपो णमोकार भाई । अक्षर  
 पैंतीस शुद्ध हृदयमें धराई ॥ १ ॥ नर भव तेरो  
 सुफल होत पातक टर जाई । विघन जासू दूरहोत  
 संकटमें सहाई ॥ २ ॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिंतामणि  
 जाई ऋद्धि सिद्ध पारस तेरे प्रकटाई ॥ ३ ॥ मन्त्र  
 जन्त्र तन्त्र सब जाही बनाई । सम्पति भंडार  
 भरे अक्षय निधि आई ॥ ४ ॥ तीन लोक महिं सार  
 वेदनमें गाई । जगतमें प्रसिद्ध धन्य मंगलीक  
 भाई ॥ ५ ॥

पुण्याश्रव कथाकोष ३) आराधना कथाकोष  
 तीनों भाग ३॥॥ सप्तव्यसन चरित्र १) चौबीसी  
 पुराण ( सचित्र ) ३) भक्तामर कथा ( मंत्र-तंत्र )  
 १) महावीरपुराण ३॥) पांडवपुराण ५) मंगाइये ।



## सच्चा जिनवाणी संग्रह—



सुदर्शन पर तलवारोंके वार सब फूलों की माला हो जाते हैं।  
( सुदर्शन चरित्र )

सच्चा जिनवाणी संग्रह—



सती चंदना महावीरको आहार दे रही है ।

( महावीर पुराण )



## श्री सम्मोदशिखर पूजा-विधान

( क्रमानुसार टोंक प्रति टोंकका अर्घ )

ज्ञानधर कूट

१ दोहा—कुंथुनाथ जिनराजका, कूट ज्ञान धरजेह ।

मन वचन कर पूजहूं, शिखर सम्मोद यजेह ॥

ओं हीं श्री कुंथुनाथजिनेद्रादि ६६ कोडाकोडी ६६ कोडि  
३२ लाख ९६ हजार ७४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चर-  
णार विन्दको मेरा मन बचन काय करि बारम्बार नमस्कार हो  
जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

२—ओं हीं श्रीपंडित गौतमस्वामी आदि गणधरदेव गुण  
वा ग्रामके उद्यान आदि भिन्न-भिन्न स्थानोंसे निर्वाण पधारे हैं  
तिनके चरणारविन्दको जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

मित्रधर कूट

३—नमिनाथ जिनराजका कूट मित्रधर जेह ।

मन मनवचनकर पूजहूं शिखर सम्मोद यजेह ॥

ओं हीं श्रीनमिनाथ जिनेन्द्रादि नौसै कोडाकोडी १ अरब  
 ४५ लाख ७ हजार ९४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके  
 चरणारविन्दको मेरा नमस्कार हो जलादि अर्घ ॥ ३ ॥

#### नाटक कूट

४ दोहा—अरहनाथ जिनराजका नाटक कूट है जेह ।

वच तन कर पूजहूं शिखरसम्मोद यजेह ॥

ओं हीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि ६६ कोड़ ६६ लाख ६६  
 हजार ६ सै ९६ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्द  
 को जलादि अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

#### संबल कूट

५ दोहा—मल्लिनाथ जिनराजका संबल कूट है जेह

मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मोद यजेह ॥

ओं हीं श्रीमल्लिनाथ जिनेन्द्रादि ६६ कोड़ मुनि इस कूटसे  
 सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको जलादि अर्घ ।

#### संकुल कूट

६ दो०—श्रेयांसनाथजिनराजका संकुल कूट है जेह ।

मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मोद यजेह ॥

ओं हीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९६ कोड़ाकोड़ी  
 ६६ कोड़ ६५ ॥ लाख ९ हजार ५४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये  
 तिनके चरणारविन्दको अर्घ ।

### सुप्रभ कूट

७ दो०—पुष्पदन्त जिनराजका सुप्रभकूट है जेह ।

मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं हीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ि ६६ लाख ७ हजार ४८० मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके करणारविन्दको अर्घ ।

### मोहन कूट

८ दो०—पदमप्रभु जिनराजका मोहन कूट है जेह ।

मन वच तनकरपूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं हीं श्री पदमप्रभु जिनेन्द्रादि ६६ कोड़ ८७ लाख ४३हजार ७२७ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दको अर्घ ।

### निर्जर कूट

९ दो०—मुनिसुब्रत जिनराजकानिर्जर कूट है जेह ।

मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं हीं श्री मुनिसुब्रतनाथ जिनेन्द्रादि ६६ कोड़ाकोड़ी ६७ कोड़ ६ लाख ६६६ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ ।

### ललित कूट

१०दो०--चन्द्रप्रभु जिनराजका ललित कूट है जेह ।

मनवचतनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओं हीं श्रीचन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि ६८४ अरब ७२ कोड़ ८० लाख  
८४ हजार ५६५ मुनि इसकूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ ।

११ दो०-ऋषभदेवजिन सिद्ध भये गिरिकैलाशसे ज्योय  
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमूंपद दयो ।

ओं हीं श्री ऋषभनाथजिनेन्द्र कैलाशपर्वतसे सिद्ध भये तिनके  
चरणारविन्दको अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

विद्युत कूट

१२ दो०-शीतलनाथ जिनराजका कूट विद्युतवरजेह  
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं हीं श्रीशीतलनाथ जिनेन्द्रादि १८ कोड़ाकोड़ी ५२ कोड़ ३२  
लाख ४२ हजार ६०५ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ ।

स्वयम्भूकूट

१३ दो०-अनंतनाथ जिनराजका कूट स्वयंभू जेह  
मन वच तनकर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं हीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि ६६ कोड़ाकोड़ी ७० कोड़  
७० लाख ७० हजार ७ सौ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ

धवलकूट

१४ दो०-संभवनाथ जिनराजका धवलकूट धर जेह  
मन वच तन कर पूजहूं शिखर सम्मेद यजेह

ओं हीं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्रादि ६ कोड़ाकोड़ ७२ लाख  
४२ हजार ५ सौ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ ।

१५ दो०-वासुपूज्य जिन सिद्ध भये चम्पापुरसे जेह  
मन बच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह  
ओं हीं श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्रादि चम्पापुरसे सिद्ध भये तिनके  
अर्घ ।

१६ दो०-अभिनंदन जिनराजका आनंद कूट है जेह  
मन वच कर तन पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह  
ओं हीं श्रीअभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि ७२ कोड़ाकोड़ ७०कोड़  
७० लाख ४२ हजार ७०० मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ ।  
सुदत्तवर कूट

१७ दोहा-धर्मनाथ जिनराजका कूट सुदत्तवर जेह  
मन बच तनकर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह  
ओं हीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि २६ कोड़ाकोड़ी १६ कोड़  
६ लाख ६ हजार ७६५ मुनि सिद्ध भये तिनके० अर्घ ।  
अविचल कूट

१८ दो०-सुमतिनाथ जिनराजका अविचलकूट है जेह  
मन वचतन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह  
ओं हीं सुमतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि १ कोड़ाकोड़ी ८४ कोड़  
७२ लाख ८१ हजार ७०० मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके अर्घ  
शांतिप्रभु कूट ( कुन्दप्रभु कूट )

१९ दो०-शांतिनाथ जिनराजका कुन्दप्रभ है जेह ।  
मन वच तनकर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह

ओं ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्रादि ६ कोड़ाकोड़ी ६ लाख ६ हजार ६६६ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ ।

२० दो०-महावीर जिन सिद्ध भये पावापुरके जोय  
मन वच तन कर पूजहूं शिखर नमूं पद होय  
ओं ह्रीं श्री महावीर स्वामी पावापुरसे सिद्ध भये तिनके अर्घ  
प्रभास कूट

२१ दो०-मुपार्श्वनाथ जिनराजका प्रभासकूटहै जोह ।  
मन वच तनकर पूजाहूं शिखर सम्मेद यजोह  
ओं ह्रीं श्रीमुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि ४६ कोड़ाकोड़ी ८४कोड़ी  
७२ लाख ७ हजार ७४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके० अर्घ  
सुवीर कूट

२२ दो०-विमलनाथ जिनराजका कूट सुवीर है जोह  
मन वच तनकर पूजाहूं शिखर सम्मेद यजोह  
ओं ह्रीं श्रीविमलनाथ जिनेन्द्रादि ७० कोड़ाकोड़ि ६० लाख  
६ हजार ७४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणार विन्दको  
अर्घ ।

२३ दो०-अजितनाथ जिनराजका सिद्ध वरकूटहै जोह  
मन वच तनकर पूजाहूं शिखर सम्मेद यजोह  
सिद्धवर कूट

ओं ह्रीं श्रीअजितनाथ जिनेन्द्रादि १ अरब ८० कोड़ ५४  
लाख मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणारविन्दके अर्घ ।



२४ दोहा-नेमिनाथजिन सिद्ध भये सिद्धक्षेत्र गिरनार  
मन वच तनकर पूजाहूं भवदधि पार उतार ॥

ओं हीं श्रीनेमिनाथ भगवान् गिरनार पर्वतसे मोक्ष गये  
तिनके चरणारविन्दको अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वर्णभद्र कूट

२५ दोहा-पार्श्वनाथ जिनराजका स्वर्णभद्र है कूट ।  
मन वच तन कर पूजाहूं जाउं कर्मसे छूट ॥

ओं हीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि ८२ कोड़ ८४ लाख ४५  
हजार ७ सौ ४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणार-  
विन्दको अर्घ्य निर्मपामीति स्वाहा ।

इस कूटका शुद्ध भावसे ध्यान व दर्शन करनेसे पशुगतिसे  
छुटकारा हो जाता है ।

## सलूना पूजा

श्री १०८ मुनीन्द्र विष्णुकुमार पूजन

बलि मद् मर्दन मदन जप, मंगल मय जगदीश ।  
महारथी जिनधर्मके अशरण शरण मुनीश ॥१॥  
आह्वानन कैसे करै, कहां बिठावैं तोहि ।  
अर्चामें असमर्थ हैं, क्षमा कीजिये मोहि ॥ २ ॥  
तब गुण अगम अपार हैं, कैसे करूं बखान ।  
अपनीसी वर शक्ति दो हमें“विष्णु”भगवान्॥३॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्र ! अत्र तिष्ठ•तिष्ठ । ठः ठः ।

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

प्रासुक मिष्ट सुगंधित शीतल, स्वर्ण पात्रभर  
निर्मल नोर । जन्म मरण दुख दूर करन हित, लाया  
तव पदपंकज तीर ॥ वत्सलताकी मूर्ति मनोरम,  
धर्म ध्वजाके थंभ महान । अन्तस्थलमें शांति  
सुधाका श्रोत बहादो अय भगवान ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वे-  
पामीति स्वाहा ।

शुचि सुरभित मलयज संसर्गित कुंकुम और  
लिया कपूर । आशा है संसृतिका सारा ताप हमारा  
होगा दूर ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय सुगन्धं निर्वेपा  
मीति स्वाहा ।

उज्वल अनुपम धवल तुहिन सम अक्षत परम  
पवित्र महेश । अर्चाहित ! जागदर्चित ! लाया वर  
अक्षय पदके उद्देश्य ॥ वत्सलता० ॥

ओं ह्रीं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०स्वाहा  
जिसका पी मकरन्द मधुप भी सारी सुध बुध

देत बिसार । कुसुम माल मद-मदन-दलन हित  
लाया चरणोंसे उपहार ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० स्वा०

वह नैवेद्य विविधि रस पूरित मिष्ट मनोहर  
भरकर थाल । लाया हूं भव भेंट प्रभो ! मम-नश  
जाये क्षुद्रव्यथा विशाल ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय श्रुधारोग विनाशाय नैवेद्यं नि० स्वा०

मणिमय दीप सजाकर झिलमिल झिलमिल  
करता विमल प्रकाश । मोह महातम दलनहेतु तब  
करूं आरती तब उल्लास ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय मोहान्धकारविध्वंसनाय दीपं नि० स्वा०

दश बिध द्रव्य सुगंधित लेकर चूर्ण बनाया  
यह तत्काल । डाल हुताशनमें महकाऊं जलजाये  
कर्मोंका जाल ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० स्वाहा

श्रीफल सेव सन्तरा ऐला केला कमरख अरु  
बादाम । निःश्रेयस पद प्राप्त करनको लाया हूं प्रभु  
कलमी आम ॥ वत्सलता० ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं नि० स्वाहा

मलयज अक्षत सलिल पुष्प चरु धूप दीप फल

मिश्रित अर्घ्य । लेकर तव पद-पंकज अर्चूँ मिल  
जाये पद हेम अनर्घ्य ॥ वत्सलताकी मूर्ति मनोरम  
धर्म ध्वजाके थंभ महान अन्तस्थलमें शान्ति  
सुधाका श्रोत बहा दो अथ भगवान ।

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा

जयमाल ।

—००—

जयति २ जय २ विभो ! मुनिवर विष्णुकुमार ।  
अर्चा मिस अभ्यर्थना, होवे मम स्वीकार ॥  
अकम्पन सूरि आदिपर अहह ! किये वलिने  
जब अत्याचार । चतुर्दिक बाड़ी लगा नरमेघ-रच  
किया पशुओंका संहार ॥ पुनः धधकादी अनल  
प्रचण्ड, प्रेम प्रस्तित हुआ चहुँओर । कंठ होजानेसे  
विच्छिन्न, हुआ दुख सब ऋषियोंको घोर ॥ एक  
क्षणमें भूतल पर धर्म-प्रेमियोंमें तब भारी शोर ।  
हुआ, पर थे सबही चुपचाप देख अन्याय नृपतिका  
घोर ॥ सुना जब अर्धरात्रिके समय आज ऋषियों  
पर प्राणाघात । हो रहा हस्तिनागपुर बीच, सुनत  
ही सूख गया सब गात ॥ चले फिर सत्वर हीतुम  
देव ! योगि रक्षा करने तत्काल । लिया नहिं पल,

भर भी विश्राम, त्याग निज हितका स्वार्थ विशाल ॥  
 बनाकर वामनका निज रूप-दान शालामें बलिके  
 पास । गये, मांगी निज पगसे भूमि-तीन ही पग  
 हो बहुत उदास ॥ दुष्ट बलिने त्रय बचन उचार  
 तुम्हें दे दिया भूमिका दान । भटिति तब ऋद्धि  
 सिद्धिसे वाह ! किया तन अपना मेरु समान ॥  
 पुनः द्रव्य पगही में नर लोक-मापकर बलिके ऊपर  
 जोर । लगाकर रखा तीसरा पैर, भूमि तब कांप  
 उठी चहुंओर ॥ असुर सुर नर मुनियोंके बीच,  
 देख तब अनुपम रूप विशाल । हुआ आश्चर्य विषाद  
 अपार, हर्षके साथ एकही काल ॥ कृत्य यह बलिका  
 लख सब लोग, रहे थे उसे बहुत धिक्कार । कह  
 रहे थे उससे मंगर्ज-“कियेका फल चाले मक्कार” ।  
 आपके प्रति हैं नम्री भूत-सभीने गाया मंगलगान  
 धन्य है शक्ति तुम्हारी नाथ ! धर्मके रक्षक श्री  
 भगवान । आजका रक्षाबंधन पर्व अहाहा ! स्मृति  
 यह सुखद ललाम । मनाई जाती है चहुंओर, उसी  
 मुनि रक्षक दिनके नाम ॥ उसी दिनसे ही बस  
 कुछ लोग, मानते वामनका अवतार । किन्तु सच  
 मुच वह तुम वात्सल्य-अंग धारक थे विष्णुकुमार ॥

भुका सिर चरणोंमें हरबार मांगता देव ! यही  
 वरदान । धर्मके रक्षा करने हेतु-हमें दो शक्ति  
 “विष्णु” भगवान ॥

ॐ ह्रीं विष्णुकुमारमुनीन्द्राय अनर्घ्यं पदं प्राप्तये पूर्णार्घ्यंनि० स्वा०

श्रद्धा भक्ति भाव वैभवसे सज मन मन्दिर  
 दिव्य ललाम । अनुपम मूर्ति मुनीन्द्र तुम्हारीआरो  
 पण कर हो निष्काम ॥ जो “अवनीन्द्र” निरन्तर  
 कर्ता अर्चा चर्चा और प्रणाम । संसृतिमें स्वर्गिक  
 विभूति या मुक्तिश्री पाये अभिराम ॥

( पुष्पांजलि क्षिपेत् )

॥ इति शुभम् ॥

## प्रातःकालकी स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजनकी अब पूरो  
 आस । ज्ञान भानुका उदय करो मम मिथ्यातमका  
 होय विनाश ॥१॥ जीवोंकी हम करुणा पालें भूठ  
 बचन नहिं कहैं कदा । परधन कबहुं न हरहुं स्वामी  
 ब्रह्मचर्य व्रत रखे सदा ॥२॥ तृष्णा लोभ बड़े न  
 हमारा तोष सुधा निधि पिया करें । श्री जिनधर्म  
 हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥ ३ ॥ दूर

भगावें बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार ।  
 मेल मिलाप बढ़ावें हमसब धर्मोन्नतिका करें प्रचार  
 ॥ ४ ॥ सुख दुखमें हम समता धारें रहें अचल  
 जिमि सदा अटल । न्याय मार्गको लेश न त्यागें  
 वृद्धि करें निज आत्मबल ॥५॥ अष्टकर्म जो दुःख  
 हेतु हैं तिनके क्षयका करें उपाय । नाम आपका  
 जपै निरन्तर विघ्न शोक सबही टल जाय ॥ ६ ॥  
 आत्म शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा ॥  
 विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञानहू बड़े सदा  
 ॥ ७ ॥ हाथ जोड़कर शीष नवावें तुमको भविजन  
 खड़े खड़े । यह सब पूरो आस हमारी चरण  
 शरण हैं आन पड़े ॥ ८ ॥

### सायंकालकी स्तुति

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिमय गुणमणि बालक जन-  
 पर करहु दया । कुमति निशा अंधियारीकारीसत्य  
 ज्ञान रबि छिपा दिया ॥१॥ क्रोध मान अरु माया  
 तृष्णा यह बटमार फिरें चहुं ओर । लूट रहे जग  
 जीवनको यह देख अविद्यात्मका जोर । मारग  
 हमको सूझे नांही ज्ञान बिना सब अन्ध भये ।  
 घटमें आय विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े

नये ॥ ३ ॥ शतपथ दर्शक जनमन हर्षक घटघट  
 अन्तर्यामी हो । श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसके  
 तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥ घोर विपतमें आन पड़ा  
 हूँ मेरा बेरा पार करो । शिक्षाका हो घर घरआदर  
 शिल्पकला संचार करो ॥ ५ ॥ मेल मिलाप बढ़ाने  
 हम सब द्वेष भावकी घटाघटी । नहीं सतावे  
 किसी जीवको प्रीत क्षीरकी गटागटी ॥ ६ ॥ मात  
 पिता अरु गुरुजनकी हम सेवा निशदिन किया  
 करें । स्वारथ तजकर सुखदे परको आशिष सबकी  
 लिया करें ॥७॥ आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल  
 नहिं चढ़े कदा । विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म  
 ज्ञान हूँ बढ़े सदा ॥८॥ दोऊकर जोड़े बालक ठाड़े  
 करै प्रार्थना सुनिये तात । सुखसे बोते रैन हमारी  
 जिनमतका हो शीघ्र प्रभात ॥ ९ ॥ मात पिताकी  
 आज्ञा पालै गुरुकी भक्ति धरें उरमें । रहें सदा हम  
 करतब तत्पर उन्नति कर निज निज पुरमें ॥ १ ॥

### शील महात्म्य

जिनराज देव कीजिये मुझ दीनपर करुना ।  
 भवि वृन्दको अब दीजिये बस शीलका शरना  
 ॥ टेक ॥ शीलकी धारामें जो स्नान करे है । मल



कर्मको सो धोयके शिवनार वरै है । ब्रतराज सो  
 बेताल ब्याल काल डरे हैं । उपसर्ग वर्ग घोर कोट  
 कष्ट टरै हैं ॥१॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग  
 आचारा । इस शीलसे सब धर्मके मुंहका है  
 उजारा ॥ शिवपंथ ग्रंथ मंथके निर्ग्रन्थ निकारा ।  
 बिन शील कौन कर सके संसारसे पारा ॥२॥ इस  
 शीलसे निर्वाण नगरकी है अबादी । त्रेसठ शलाका  
 कौन ये ही शील सबादी । सब पूज्यके पदवीमें  
 है परधान ये गादी । अठारा सहस्र भेद भने वेद  
 अबादी ॥३॥ इस शीलसे सीताको हुआ आगसे  
 पानी । पुर दार खुला चलनिमें भर कूपसों पानी ।  
 नृप ताप टरा शीलसे रानी दिया पानी । गङ्गामें  
 ग्राहसों बची इस शीलसे रानी ॥४॥ इस शील-  
 हीसे सांप सुमन माल हुआ है । दुख अञ्जनाका  
 शीलसे उद्धार हुआ है । यह सिन्धुमें श्रीपालको  
 आधार हुआ है । वप्राका परम शील ही से यार  
 हुआ है ॥ ५ ॥ द्रोपदीका हुआ शीलसे अम्मरका  
 आमारा । जा धातु द्वीप कृष्णने सब कष्ट निवारा ।  
 सब चन्दना सतीकी व्यथा शीलने टारी । इस  
 शीलसे हा शक्ति विशल्याने निकारी ॥ ६ ॥ वह

कोट शिला शीलसे लक्ष्मणने उठाई । इससे ही  
 नागको नाथा श्रीकृष्ण कन्हाई । इस शीलने  
 श्रीपालजीकी कोढ़ मिटाई । अरु रैनमञ्जूसाको  
 लिया शील बचाई ॥ ७ ॥ इस शीलसे रनपालकूँ  
 अरकी कटी बेड़ी । इस शीलसे विष सेठकी नन्द-  
 नकी निवेड़ी । शूलीसे सिंह पीठ हुआ सिंह ही  
 सेरी । इस शीलसे करमाल सुमन माल गलेरी  
 ॥ ८ ॥ समन्तभद्रजीने यही शील सम्हारा । शिव  
 पिण्डसे जिनचन्दका प्रतिविम्ब निकारा । मुनि  
 मानतुङ्गजीने यही शील सुधारा । तब आनके  
 चक्रेश्वरी सब बात सम्हारा ॥ ९ ॥ अकलङ्कदेवजीने  
 इसी शीलसे भाई । ताराका हरा मान विजय बौद्ध  
 से पाई । गुरु कुन्दकुन्दजीने इसी शीलसे जाई ।  
 गिरनारपै पाषाणकी देवीको बुलाई ॥ १० ॥ इत्यादि  
 इसी शीलकी महिमा है घनेरी । विस्तारसे कहनेमें  
 बड़ी होयगी देरी । पल एकमें सब कष्टको यह नष्ट  
 करेगी । इसही से मिले रिद्धि मिद्धि वृद्धि सबेरी  
 ॥ ११ ॥ बिन शील खना खाते हैं सब काँछके ढीले ।  
 इस शील बिना तन्त्र मन्त्र जन्त्र ही कीले । सब  
 देव करें सेव इसी शीलके हीले । इस शीलहीसे

चाहे तो निर्वाण पदी ले ॥१२॥ सम्यक्त्व सहित  
शीलको पाले हैं जो अन्दर । सो शील धर्म होय  
है कल्याणका मन्दिर ॥ इससे हुए भव पार हैं कुल  
कौल और बन्दर । इस शीलकी महिमा न सकै  
भाष पुरन्दर ॥१३॥ जिस शीलके कहनेमें थका  
सहस बदन है । जिस शीलसे भय पाय भगाकूर  
मदन है ॥ सो शील ही भविवृन्दको कल्याणप्रद  
है । दश पैडही इस पैडसे निर्वाण सदन है ॥१४॥

## णमोकार मंत्रका महामृत्य

( पं० सतीसचन्द्रजी न्यायतीर्थ )

णमोकार है मंत्र सर्व पापोंका हर्ता ।

मङ्गल सबसे प्रथम यही शुचि ज्ञान सुकर्ता ॥  
संसार सार है मन्त्र जगतमें अनुपम भाई ।

सर्व पाप अरिनाश मंत्र सबको सुखदाई ॥१॥  
संसार छेदके लिये मंत्र है सर्व प्रधाना ।

विषको अमृत करे जगतने यह सब माना ॥  
कर्म नाशकर ऋद्धि सिद्धि शिव सुखका दाता ।  
मंत्र प्रथम जिन मंत्र सदा तू क्यों नहिं ध्याता ॥ २॥  
सुर सम्पत्ति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती ।

सर्व विपत्ति विनाश ज्ञानकी ज्योती होती ।

पशु पक्षी नर नारि श्वपच जो धारण करते ।  
ज्ञान, मान, सम्मान, और सुख सम्पति भरते ।३।  
जीवन्धर थे स्वामि एक जन करुणा धारी ।

कुत्तेको दे मन्त्र शीघ्र गति भली सुधारी ॥  
मन्त्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये ।  
ध्याये जो जन उसे सर्व सुख हो मनचाये ॥४॥

### श्रीजिनगिरा स्तवन

शरण आया माता, जिनेश्वर वाणी दुख हरो ।  
विरत् अनुपम तेरा, प्रगट जगत्राता सुख करो ।  
भ्रमो जग बहुतेरा, सहा दुःख जन्मन मरणका ।  
दरे नहीं टारा, यत्न बहु कीना हरणका ॥१॥ भजे  
बहुते देवा, करी बहु सेवा शरणकी । फँसे भव  
दुख सोही न पाई आशा शरणकी । अष्ट विधि  
खलमारी, हमारी कीनी दुर्दशा । इन्हींके बश  
माता, भवोदधि दुखमें मैं फँसा ॥२॥ सतत चारों  
गतिमें भ्रमावें मोकों ये बली । ज्ञान धनको हरिके  
भुलाई मोकों शिवगली । नरक पशु नर देवा,  
चतुर्गतिमें जो दुख लहो । कहा जाता नहीं, तुम्हीं  
सब जानों जो सहो ॥३॥ निबल मोको पाके सताते  
ये खल अति घने । शरण राखो माता, बचावो

इनसे निज जने । सुमति अब दे माता । बिनाशों  
 आठों खलनमें । लहौं शिवपुर पन्था, दहों ना फिर  
 त्रय ज्वलनमें ॥ ४ ॥ अल्प मति मैं माता सुमति  
 निज दीजे दासको । यही विनती मेरी, पुरावो अम्बे  
 आशको । युगल पदकी सेवा, करत नर देवा  
 ध्यायके । लहत शिव सुख मेवा, शरण मां तेरी  
 पायके ॥ ५ ॥

दोहा-तुम पदाब्ज मो उर बसो, नशो तिमिर अज्ञान  
 सेवक नाथूरामको, दीजे मां बरदान ॥ ६ ॥

## रविव्रत पूजा

यह भवजन हितकार, सु रवि व्रत जिन कही  
 करहु भव्यजन लोग, सुमन देके सही ॥ पूजों  
 पार्श्व जिनेन्द्र त्रियोग लगायके । मिटै सकल  
 संताप मिले निधि आयके ॥ मति सागर इक सेठ  
 कथा ग्रन्थन कही । उन्हींने यह पूजा कर आनन्द  
 लही ॥ ताते रविव्रत सार, सो भविजन कीजिये ।  
 सुख सम्पति सन्तान, अतुल निधि लीजिये ।  
 दोहा-प्रणमों पार्श्व जिनेशको हाथ जोड़ शिरनाय ।  
 परभव सुखके कारने, पूजा करुं बनाय ॥

एतवार व्रतके दिना एही पूजन ठान । ता फल  
सुरग सम्पति लहै, निश्चय लीजे मान ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर तिष्ठ  
तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो० ।

अष्टक—उज्वल जल भरके अति लायो रतन  
कटोरन मांहीं । धार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म  
जरा मिट जाहीं ॥ पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रबि-  
व्रतके दिन भाई । सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत  
ही आनन्द मङ्गलदाई ॥

ओं ह्रीं पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं निर्व० ।

मलयागिर केशर अति सुन्दर कुमकुम रंग बनाई  
धार देत जिन चरनन आगे भव आताप नसाई ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्व० ।

मोती सम अति उज्वलःतन्दुल ल्यावो नीर  
पखारो । अक्षत पदके हेतु भावसों श्रीजिनबर  
दिग धारो ।

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ।

केला अर मचकुन्द चमेली पारजातके ल्यावो ।  
चुन चुन श्रीजिन अग्र चढ़ाओ मनवांछित फल  
पावो ॥

ओंहीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायकामवाणविध्वंशनायपुष्पनिर्वपामी०

बावर फेनी गोजा आदिक घृतमें लेत पकाई ।

कञ्चन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई ।

ओंहीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुभारोगविनाशनाथ नैवेद्यनिर्वपा०

मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत  
जगाई । जिनके आगे आरती करिके मोह तिमिर  
नस जाई ।

ओंहीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायमोर्हाधकारविनाशनाथदीपःनिर्वपा०

चूरनकर मलयागिरि चन्दन धूप दशाङ्ग बनाई  
तट पावकमें खेय भावसों कर्मनाश हो जाई ।

ओंहीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपःनिर्वपामीति०

श्रीफल आदि बदाम सुपारी भांति भांतिके  
लावो । श्रीजिनचरनःचढ़ाय हर्ष कर तातै शिवफल  
पावो ।

ओंहीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्रायमोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति०

जल गन्धादिक अष्टदरवले अर्घ बनाओ भाई ।  
नाचत गावतहर्ष भावसाँ, कञ्चन थार भराई ।

ओंहीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ निर्वपामीति०

गीतका छन्द-मन बचनकाय विशुद्ध करके  
पार्श्वनाथसु पूजिये । जल आदि अर्घ बनाय भवि-

जन भक्तिवन्त सु हूजिये । पूज्य पारसनाथ जिनवर  
सकल सुख दातारजी । जे करत हैं नर नार पूजा  
लहत सुख अपार जी ।

## जयमाला

—०—

दोहा--यह जगमें विख्यात है, पारसनाथ महान ।  
जिनगुणकी जयमालिका, भाषा करो बखान ॥  
जय जय प्रणमों श्रीपार्श्वदेव । इन्द्रादिक  
तिनकी करत सेव । जय जय सु बनारस जन्म  
लीन्ह ॥ तिहुं लोकविषै उद्योत कीन ॥ १ ॥ जय  
जिनके पितु श्री विश्वसेन । तिनके घरभये सुख  
चैन एन । जय बामादेवो मात जान तिनके उपजे  
पारस महान ॥ २ ॥ जय तीन लोक आनन्द देन ।  
भविजानके दाता भये हैं पैन । जय जिनने प्रभुकी  
शरण लीन । तिनकी सहाय प्रभूजी सो कीन ॥ ३ ॥  
जय नाग नागनी भये अधीन । प्रभू चरनन लाग  
रहे प्रवीन । तजके सो देह स्वर्गेंसु जाय । धरनेंद्र  
पद्मावती भये जाय ॥ ४ ॥ जे चार अंजना अधम  
जान । चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान । जे मतिसा-  
गर इक सेठ जान । जिन रविब्रत पूजा करी ठान



॥५॥ तिनके सुत थे परदेश माहिं जिन अशुभ  
 कर्म काटै सु ताहि ॥ ६ ॥ जे रविब्रत पूजन करी  
 सेठ । ताफलकर सबसे भई भेंट । जिन-जिनने  
 प्रभुकी शरनलीन । तिन रिद्धि-सिद्धि पाई  
 नवीन ॥७॥ जे रविब्रत पूजा करहि जेय । ते सुख्य  
 अनंतानंत लेय । धरनेंद्र पद्मावति हुए सहाय ।  
 प्रभु भक्ति जान ततकाल जाय ॥८॥ पूजा विधान  
 इहि विधि रचाय । मन वचन काय तीनों लगाय ।  
 जो भक्तिभाव जेमाल गाय । सोही सुख सम्पत्ति  
 अतुलपाय ॥९॥ बाजत सृद्रंग वीनादिसार । गावत-  
 नाचत नानाप्रकार । तन नन नन नन ताल देत ।  
 सन नन नन सुर भर सु लेत ॥१०॥ ता थेई थेई  
 थेई पग धरत जाय । छमछम छमछम घुंघरु बजाय ।  
 जे करहिं विरति इहि भांति भांति । ते लहहिं  
 सुख्य शिवपुर सुजात ॥११॥

दोहा-रविब्रत पूजा पार्श्वकी, करे भवक जनकोय ।

सुख संपत्ति इहि भव लहै, तुरत सुरग पद होय ।

अडिल्ल--रविब्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भव  
 मन धरै । भव भवके आताप सकल छिनमें टरै ॥  
 होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहै । सुख सम्पत्ति

सन्तान अटल लक्ष्मी रहैं ॥ फंर सर्व विधि पाय  
भक्ति प्रभु अनुसरे । नाना विधि सुख भोग बहुरि  
शिव त्रियवरे ॥

ओंह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घि निर्वपामीति स्वाहा ॥

## संस्कृत प्रार्थना

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानंदैककारणं  
कुरुस्व । मयि किंकरेऽत्र करुणा यथा तथा जायते  
मुक्तिः ॥१॥ निर्विण्णोऽहंनितर मार्हन् बहुदुःखया  
भवस्थित्या । अपुनर्भवाय भव हर ! कुरु करुणा-  
मत्र मयि दीने ॥२॥ उद्धर मां पतितमतो विषमाद्  
भवकूपतः कृपांकृत्वा । अर्हन्नल मुद्धरणे त्वमसीति  
पुनः पुनर्वन्मि ॥३॥ त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव  
शरणंजिनेश ! तेनाहम् मोहरिपुदलित मानसःफूत्क-  
रणं तव पुरः कुर्वे ॥४॥ ग्रमपतेरपि करुणा परेण  
केनप्युपद्रुते पुंसि । जगतां प्रभो ! न किं तव,  
जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥५॥ अपहर मम  
जन्म दर्या, कृत्वैत्येकवचसि वक्तव्यमा तेनातिदग्ध  
इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वम् ॥६॥ तव जिनवर  
चरणाब्जायुगं करुणामृतशीतलं यावत् । संसारता-  
पतसः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥७॥ जगदेक-

शरण भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ! किं  
बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥ ८ ॥

( परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् )

## महावीर स्वामी

जय महावीर जिनेन्द्र जय, भगवन् । जगत्  
रक्षा करो । निज सेवकोंके भव-जनित संतापको  
कृपया हरो ॥ हैं तेजके रवि आप हम, अज्ञान तममें  
लीन हैं । हैं दयासागर आप हम, अति दीन हैं  
बलहीन हैं ॥१॥ दानी न होगा आप-सा, हम-सा  
न अज्ञानी कहीं । अवलम्ब केवल हैं हमारे, आप  
ही दूजा नहीं ॥ भवसिंधुके भव भ्रमरमें हम डूबते हैं  
हे प्रभो ! भटपट सहारा दीजिये, हम जबते हैं हे  
प्रभो ॥२॥ गिरिको अंगूठेसे हिलाया आपने तो  
क्या किया ॥ यदि इन्द्रके मदको मिटाया आपने  
तो क्या किया ॥ यदि कमलको गजने हिलाया तो  
प्रशंसा क्या हुई । यदि सिंहने गीदड़ भगाया तो  
प्रशंसा क्या हुई ॥ ३ ॥ अपकारियोंके साथ भी  
उपकार करते आप थे । मनमें न प्रत्युपकारकी कुछ  
चाह रखते आप थे ॥ बड़वाग्नि वारिधिके हृदयको  
है जराता नित्य ही । पर जलधि अपनाये उसे है

क्रोध कुछ करता नहीं ॥ ४ ॥ शुभ स्वावलम्बनका  
 सुपथ सबको दिखाया आपने । दृढ़ आत्म बलका  
 मर्म भी सबको सिखाया आपने ॥ समता सभीके  
 साथ सबदिन आपकी रहती रही । इस हेतु सेवा  
 आपकी निश्छल मही करती रही ॥ ५ ॥ यद्यपि  
 अहिंसा क्रम सभीने श्रेष्ठ मत माना सही । पर  
 वास्तविक उमके विधानोंको कभी जाना नहीं ॥  
 किस भाँति करना चाहिये जगमें अहिंसा धर्मको ।  
 अतिशय सरल करके दिखाया आपने इस मर्मको  
 ॥६॥ करके कृपा यदि अवतरित होते न भूपर आप  
 तो । मिटता नहीं संसारका त्रयकालमें त्रय ताप  
 तो ॥ जितकाम हो निष्काम हो अरु शांतिके सुख  
 धाम हो । योगीश भोगोंसे रहित गुण हीन हो  
 गुण ग्राम हो ॥ ७ ॥ जय जय महावीर प्रभो  
 जगको जगाकर आपने । संसारके हिंसा-जनित  
 भयको भगाकर आपने ॥ इस लोकको सुरलोकसे  
 भी परम पावन कर दिया । अज्ञान-आकर विश्व  
 को प्रज्ञान-सागर है किया ॥८॥

—००—

## शांति पाठ भाषा ।

चौपाई १६ मात्रा

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी । शीलगुणव्रत-  
संगमधारी ॥ लखन एक सौ आठ विराजै । निर-  
खत नयन कमलदल लाजै ॥ १ ॥ पंचम चक्रवर्ति  
पदधारी । सोलम तीर्थकर सुखकारी ॥ इन्द्र नरेन्द्र  
पूज्य जिननायक । नमो शांतिहित शांतिविधायक  
॥२॥ दिव्य विटप पुहुपनकी वरषा । दुन्दुभिआसन  
वाणी सरसा ॥ छत्र चमर भामण्डल भारी । ये तुव  
प्रातिहार्य मनहारी ॥३॥ शांति जिनेश शांति सुख-  
दाई । जगतपूज्य पूजाँ शिरनाई । परमशांति दीजै  
हम सबको । पहुँ तिन्हें, पुनि चार संघको ॥४॥

वसन्ततिलका

पूजै जिन्हे मुकुट हार किरीट लाके ।  
इन्द्रादिदेव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ॥  
सो शांतिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप ।  
मेरे लिये करहिं शांति सदा अनूप ॥५॥

इन्द्रबज्रा

संपूजकोंकों प्रतिपालकोंको । यतीनको औ

यतिनायकोंको ॥ राजा प्रजा राष्ट्र सुदेशको ले ।  
कीजे सुखी हे जिन शांतिको दे ॥ ६ ॥

सूधरा

होवै सारी प्रजाको सुख बलयुत हो धर्मधारी  
नरेश । होवै वर्षा समै पै तिलभर न रहै व्याधि-  
योंका अन्देसा । होवै चोरी न जारी सु समय वरतै  
हो न दुष्काल भारी । सारे ही देश धारै जिनवर  
वृषको जो सदा सौख्यकारी ॥७॥

दो०-घातिकर्म जिन नाश करि पायो केवलराज ।

शांति करो सब जगतमें वृषभादिक जिनराज ॥

मंदाक्रांता

शास्त्रोंका हो पठन सुखादा लाभ सत्संगतीका ।  
सद्वृत्तोंका सुजस कहके, दोष ढांकूँ सभीका ॥  
बोलूँ प्यारे वचन हितके, आपका रूप ध्याऊँ ।  
तौलों सेऊँ चरण जिनके, मोक्ष जौलों न पाऊँ ॥

अर्थ्या

तब पद मेरे हियमें, मम हिय तेरे पुनीत चर-  
णोंमें । तबलों लीन रहौँ प्रभु, जबलों पाया न मुक्ति  
पद मैंने । १०। अक्षर पद मात्रासे, दूषित जो कछु  
कहा गया मुझसे । क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा

करि पुनि छुड़ाउं भवदुखसे ॥ ११ ॥ हे जगबन्धु  
जिनेश्वर, पाऊं तब चरण शरण बलिहारी । मरण  
समाधि सुदुर्लभ, कर्मों काक्षय सुबोध सुखकारी १२

परिपुष्पांजलिंक्षिपेत्

### विसर्जन पाठ भाषा

दोहा—बिन जाने वा जानके, रही टूट जो  
कोय । तुव प्रसाद तैं परमगुरु, सो सब पूरन होय  
॥१॥ पूजनविधि जानों नहीं, नहिं जानों आह्वान ।  
और विसर्जन हू नहीं, क्षमा करो भगवान ॥२॥  
मंत्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव । क्षमा  
करहु राखहु मुझे, देहु चरणकी सेव ॥ ३ ॥ आये  
जो जो देवगन, पूजे भक्ति प्रमान । सो अब जावहु  
कृपाकर अपने अपने थान ॥४॥

### श्रीजिनवर पच्चीसी

छप्पै छन्द—ऋषभ आदि चौबीस तीर्थपति  
तिन गुणगाऊं । दिवपुर कुल पितु मात वर्ण  
लक्षण बतलाऊं । कार्य आयु शिव आसन अरु  
शिव सान मनोहर । कहूं सर्व दरशाय जाय पातक  
भव भय हर । प्रातःकाल प्रतिदिन पढ़े स्वर्ग मुक्ति

सुख सों लहै । क्रमशः ऊंचे पाय पद नाथूराम  
 सेवक कहै ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धिसे ऋषभ आयकर  
 बसे अयोध्या । वंशोद्धवाकु प्रधान नाभि पितु अनु-  
 पम योद्धा, । मरुदेवी जिनमात वर्ण कंचन तनु  
 सोहै । वृष लक्षण शत पाँच चाप तनु लख जग-  
 मोहै । धिति चौरासी पूर्व लख पद्मासन कैलास  
 गिरि । मुक्ति थान जिनराज नवो जन्म ना होय  
 फिर ॥ २ ॥ तज सर्वार्थसिद्धि अयोध्या बसे  
 अजित जिन । श्रेष्ठवंश इक्ष्वाकु पिता जिन शत्रु  
 कहे तिन । विजयासेना मात तनु गज लक्षणबर ।  
 ढोंच शतेक धनु तनु धिति पूर्व लाख बहत्तर ।  
 कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेदचल ।  
 नमो त्रियोग सम्हालके त्रिजगनाथ तुमको स्वथल  
 ॥३॥ सम्भव ग्रीवक त्याग जन्म श्रीवस्ती लीना ।  
 वंश कहो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख दीना ।  
 मात सुसेना हेमवर्ण घोटक शुभ लक्षण । शत क  
 चार धनु देह साथ लख पूर्व आयु गण । खड्गा-  
 सनसे शिव गये मुक्तिथान सम्मेद गिरि । नमो  
 त्रिलोकीनाथको जन्म मरण ना होय फिर ॥ ४ ॥  
 अभिनन्दन तज विजय अयोध्या पितु संवर घर ।



सिद्धार्था जिन मात वंश इक्ष्वाकु जन्म वर ।  
 कनक वर्ण कपि चिन्ह हूँठ शत चांप काय जिन ।  
 पूर्व लाख पंचास आयु षड्गासन है तिन । श्रीस-  
 म्मेदाचल विमल मुक्तिनाथ जिनराजका । त्रिकाल  
 वंदों भावसे धन्य जन्म है आपका ॥ ५ ॥ वैज-  
 यन्त तज सुमति अयोध्या नगरी आये । पिता मेव  
 प्रभु मात मंगला अति मन भाये । विमल वंश  
 इक्ष्वाकु हेम तनु चक्रवा.लक्षण । धनुष तीन शत  
 देह तुंग त्रिभुवनसे रक्षण । आयु पूर्व चालीस लाख  
 षड्गासन राजे अटल । सम्मेद शिखरसे शिव  
 गये नमों नमों तुमको स्वस्थल ॥ ६ ॥ पद्म प्रभु  
 ग्रीवक सुत्याग कोशाम्बी आये । धारण नृप  
 पितुमातु सुसीमा आनन्द पाये । वंशकहो इक्ष्वाकु  
 कमल सम लाल वर्ण तन । कमल चिन्ह तन तुंग  
 चांप ढाई सौ भगवन । आयु तीस लाख पूर्वकी  
 षड्गासनसे शिव गये । सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र  
 जिन नमों आज आनन्द लये ॥७॥ नाथ सुपार्श्व  
 ग्रीवकसे काशी उपजाये । सुप्रनिष्ठित पितु माता  
 पृथिवीके मन भाये । विमल वंश इक्ष्वाकु हरित  
 तन स्वस्तिक लक्षण । धनुष दोय सौ काय बीस

लख पूर्व आयु भण । खड्गासन सम्मेदगिरि सिद्ध  
क्षेत्रसे शिव गये । त्रिजग ताप हर्त्तारिको हाथ  
जोड़ हम इत नये ॥८॥ वैजयन्त<sup>३</sup> तज चन्द्रपुरी  
चन्द्रप्रभु स्वामी । महासेतु पितु मात लक्ष्मणाके  
भये नामी । श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि  
लक्षणवर । धनुष डेढ़सौ देह लाख दश पूर्व आयु  
सर । खड्गासनसे मुक्त हो अजर अमर अव्यय  
भये । शिव थान शिखर सम्मेद जिन तिन पदको  
हम नित नये ॥ ६ ॥ पुष्पदन्त आरण दिग्य तज  
काकन्दी राजे । पिता नृपति स्वग्रीव मात रामा  
सुख साजे ॥ वंश लहो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मारग  
लक्षण । सौधनु तुंग शरीर आयु नौ लाख पूर्वगण  
खड्गासनसे शिव गये सम्मेदाचल मुक्ति थल ।  
नमो त्रिलोकीनाथ मैं तुम पद पंकज युग विमल ।  
॥ १० ॥ शीतल अच्युत त्याग वास मंगलपुर  
लीना । दृढ़ रथतात सुमति सुनंदाको सुखदीना ।  
निर्मल कुल इक्ष्वाकु हेम तन श्रीतरु लक्षण ॥  
नब्बे धनुष शरीर आयु लख पूर्व विचक्षण ।  
खड्गासन दृढ़ धारके सम्मेदाचल पर ध्यान धर ।  
मुक्ति भये तिनको नवें शीश नाथ हम जोड़कर ।

॥ ११ ॥ श्रेयांस पुष्पोत्तरसे चय वसे सिंहपुर ।  
 विष्णुपिया विष्णु श्रीमाता उभय धर्मपुर । वंशो-  
 क्ष्वाकु पुनीत हेम तन गेंडा लक्षण । असीचाप  
 तनु लाख असीचउ वर्ष आयु भण । खड्गासन  
 दृढ़ शिव समय मुक्ति थान सम्मेदगिर । नमों  
 त्रियोग लगायके अशुभ कर्मखलु जांय खिर ॥१२॥  
 वासपूज्य कापिष्ठ स्वर्गसे चय चम्पापुर । लिया  
 जन्म वसुपूज्य पिता माता विजया उर । ख्यात  
 वंश इक्ष्वाकु अरुण तनु महिषा लक्षण । सत्तर  
 धनुष शरीर उच्च जग जनके रक्षण । लाख बहत्तर  
 वर्षका आय पद्म आसन अटल । सिद्ध क्षेत्र  
 चंपापुरी बन्दौं सुखदाता अचल ॥ १३ ॥ विमल  
 शुक्र दिव त्याग कम्पिला जन्म लिया वर । कृत  
 वर्मर्मा जिन तात सुरम्या मात गुणाकर । विमल  
 वंश इक्ष्वाकु कनक तन बराह लक्षण । साठ चांप  
 तनु तुङ्ग साठ लाख वर्ष आयु गण । खड्गासन  
 सम्मेदगिर मुक्ति थान वन्दन करों । त्रिभुवनाथ  
 प्रसादसे अब न भवोदधिमें परों ॥ १४ ॥ सहस्रार  
 दिवसे अनन्त जिन जन्म अयोध्या । सिंहसेन  
 पित ग्रेह लिया भविजन प्रति बोधा । सर्व यशा

जित मात वंश इक्ष्वाकु बखानो । हेमवर्ण सेई  
लक्षण जिनवरके जानो । काय धनुष पंचासका  
आयु तीसलख पूर्व जिन । खड्गासन सम्मेद शिव  
नवों चरण कर जोड़ तिन ॥ १५ ॥ पुष्पोत्तरसे  
धर्मनाथ चय बसे रत्नपुर । भानु पिता सुव्रता मात  
इक्ष्वाकु वंश धुर । हेमवर्ण लक्षण सुवज्र तन  
धनु पैतालिस । आयु लाख दश वर्ष संग आसन  
विधि जालिस । सम्मेदाचल मुक्ति थल धर्मपोत  
धर भव्य जन । पार किये भव उदधिसे करुणा-  
कर करुणायतन ॥ १६ ॥ शांतिनाथ पुष्पोत्तरसे  
चय गजपुर आये । विश्वसेन येरा माता गृह बजे  
बधाये । कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण मृग सोहे ।  
काय धनुष चालीस आयु लख वर्ष लयो हैं ।  
षड्गासनसे शिव गये मुक्तिनाथ सम्मेदगिर ।  
युग चरण कमल मस्तक धरों बधे कर्म खलु जांय  
त्रिरि ॥ १७ ॥ कुंथुनाथ पुष्पोत्तरसे चय जन्मे  
गजपुर । सूर्य पिता श्रोदेवी माता उभय धर्मधुर ।  
कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण अज जानो । काय  
धनुष तैंतीस काम सुरकी पहिचानो । आयु सहस्र  
पंचानवे वर्ष खण्ड आसन कहो । सम्मेदशिखर

शिवक्षेत्र शुभ जिन बन्दत हम सुख लहो ॥१८॥  
 अरहनाथ सर्वार्थ सिद्धसे गजपुर आये । पिता  
 सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये । शुभ  
 कुरुवंश महान हेमतनु मच्छ चिन्हवर । तीसचांप  
 तनु तुङ्ग त्रिजन मनमोहन सुन्दर । सहस्र चउरा-  
 सी वर्षका आयु खण्ड आसन अटल । शिवथान  
 शिखर सम्मेद जिन बन्दों तिनके पदकमल ॥१९॥  
 मल्लिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना ।  
 कुम्भ पिता रक्षिता माताको बहु सुख दीना ।  
 वंश कहो इक्ष्वाकु हेमतनु घट लक्षण वर । काय  
 धनुष पचीम तुङ्ग मोहै लख सुर नर । आयु वर्ष  
 पचपन सहस्र खड्गासन सोहैं अचल । शिवथान  
 शिखर सम्मेदवर तीर्थराज बिसरे न पल ॥ २० ॥  
 मुनि सुव्रत अपराजितसे कुशाग्रपुर राजे । पितु  
 सुमित्र पद्यावत माताको सुख साजै । हरि वंशी  
 तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोहै । बीस धनुषका  
 काय तुङ्ग देखत मन मोहै । तीस सहस्र सुवर्षका  
 आयु खड्ग आसन सुभग । सम्मेद शिखर शिव-  
 थान प्रभु तीर्थराज भवि मुक्ति मग ॥२१॥ प्राणत  
 तज नमिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना ॥ विजय

पिता विप्रामाताको अति सुख दीना । विमल वंश  
 इक्ष्वाकु वर्ण तनु हेम सुहावन । पद्म पाखुरी अङ्क  
 षञ्चदश चांप सुभग तन । आयु वर्ष दश सहस्रका  
 पद्मासनसे शिव गये । सिद्ध क्षेत्र सम्मेद गिरि  
 वंदित हो मंगल नये ॥ २२ ॥ बैजयन्तसे नेमनाथ  
 सूरीपुर प्रगटे । सिद्ध विजय शिवदेवीके देखत  
 दुख विघटे । लहो श्रेष्ठ हरिवंश श्याम तनु शंख  
 अंकुवर । काय धनुष दश सहस्र वर्षका आयु  
 पूर्णधर । खड्गासन गिरिनारिसे राजमती पति  
 शिव गये । पशुवंदि छुड़ाई दयाकर तिन पदपङ्कज  
 हम नये ॥ २३ ॥ पारस प्रभु आनत दिव तज  
 काशी राजे । अश्वसेन बामा माता गृह दुन्दुभि  
 बाजे । उग्रवंश तनु नील चिन्ह अहिराज विराजे ।  
 नव कर काय उत्तंग आयु शत वर्ष सु छाजै ।  
 खड्गासन सम्मेदगिरि मुक्ति थान मद कमठ  
 हर । मन बच तन बन्दन करों तेवीसम जिनराज  
 वर ॥ २४ ॥ वर्द्धमान पुष्योत्तरसे कुण्डलपुर आये ।  
 सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये ।  
 नाथ वंश तनु हेमवर्ण हरि चिन्ह मनोहर । सात  
 हाथ तनु आयु बहत्तर अब्द लयोवर । खड्गासन

पावापुरी मुक्ति धान जगताप हर । नवे सु नाथूराम  
नित हाथ जोड़ युग शीशधर ॥२५॥

—०—

## समाधिमरण लघु भाषा ।

गौतम स्वामी बन्दोंनामी मरण समाधि भला  
है । मैं कब पाऊं निशदिन ध्याऊं गाऊं वचन कला  
है । देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ़ सप्त व्यसन नहिं  
जाने । त्यागि बाइस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित  
ठाने ॥१॥ चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी त्रस न  
विरोधै । बनिज करै पर द्रव्य हरै नहिं छहों करम  
इमि साधै । पूजा शास्त्र गुरुनकी सेवा संयम  
तप चहुं दानी । पर उपकारी अल्प अहारी सामा  
यक बिधि ज्ञानी ॥२॥ जाप जापै तिहुं योग धरै दृढ़  
तनुकी ममता टारै । अन्त समय वैराग्य सम्हारै  
ध्यान समाधि विचारै ॥ आग लगै अरु नाव डुबै  
जब धर्म विघन जब आवै । चार प्रकार अहार  
त्यागिके मंत्र सु मनमें ध्यावै ॥३॥ रोग असाध्य  
जहां बहु देखै कारण और निहारै । बात बड़ी है  
जो बनि आवै भार भवनको डारै । जो नुबनै तो

घरमें रह करि सबसों होय निराला । मात पिता  
 सुत त्रियको सोंपै निज परिग्रह इहिकाला ॥ ४ ॥  
 कुछ चैत्यालय कुछ श्रावकजन कुछ दुखिया धन  
 देई । क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मनकी शल्य  
 हनेई ॥ शत्रुन सों मिल निजकर जोरै मैं बहु करिहै  
 बुराई । तुमसे प्रीतमको दुख दीने ते सब बकसो  
 भाई ॥५॥ धन धरती जो मुखसों मांगै सब सो दे  
 संतोषै । छहों कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषै  
 ऊंच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पैले ।  
 दूधाधारी क्रमर तजिके छाछ अहार पहेलै ॥ ६ ॥  
 छाछ त्यागिके पानी राखौ पानी तजि संथारा ।  
 भूमि मांहि फिर आसनमाड़ै साधमीं ढिग प्यारा ॥  
 जब तुम जानो यहै जपै है तब जिनवाणी पढ़िये  
 यां कहि मौन लियो सन्यासी पंच परम पद गहिये  
 ॥७॥ चौ आराधन मनमें ध्यावै बारह भावन भावै  
 दशलक्षण मम धर्म बिचारै रत्नत्रय मन ल्यावै ॥  
 पैंतीस सोलह षटपन चौ दुइ इकई बरन विचारै  
 काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञान मयी तूं सारै ॥ ८ ॥  
 अजर अमर निज गुणसों पूरै परमानन्द सुभावै ।  
 आनन्द कन्द चिदा नन्द साहब तीन जगतपति



ध्यावै । क्षुधा तृषादिक होय परीषह सहै भाव सम  
 राखै । अतीचार पांचों सब त्यागै ज्ञान सुधारस  
 चाखै ॥ ६ ॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम  
 लीन तन त्यागै । अहुन पुण्य उपाय सुरगमें सेज  
 उटै ज्यों जागे । तहंतै आवै शिवपद पावै बिलसै  
 सुख अनन्तो । द्यानत यह गति होय हमारी  
 जैन धरम जयवन्तो ॥१०॥

## देव दर्शन ।

दर्शनं देव देवस्य, दर्शनं पापनाशनं । दर्शनं  
 स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनं ॥१॥ दर्शनेन जिने-  
 न्द्राणाम्, साधूनां बंदनेन च । न चिरं तिष्ठते पापम्  
 छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥ वीतरागमुखां दृष्ट्वा पद्म-  
 रागसमप्रभं । अनेकजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति  
 ॥३॥ दर्शनं जिन सूर्यस्य संसारध्वान्तनाशनं । बोधनं  
 चित्तपद्मस्य, समस्तार्थप्रकाशनं ॥४॥ दर्शनं जिन-  
 चन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणं । जन्मदाहविनाशाय,  
 वर्धनं सुख वारिधेः ॥५॥ जीवादितत्त्वं प्रतिपाद-  
 काय । सम्यक्तवमुख्याष्टगुद्धारणवाय ॥ प्रशांतरूपाय

दिगंबराय । देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥६॥ चिदा-  
 नन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने । परमात्मप्रकाशाय  
 नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥७॥ अन्यथा शरणं नास्ति,  
 त्वमेवशरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष  
 जिनेश्वर ॥८॥ नहिं त्राता नहिं त्राता, नहिं त्राता  
 जगत्त्रये । वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भवि-  
 ष्यति ॥९॥ जिनेभक्तिर्जिने भक्ति-र्जिने भक्तिदिने  
 दिने । सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदा मेत्तु भवे भवे  
 ॥१०॥ जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवच्चक्रवर्त्यपि ।  
 स्याच्चेतोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानवासितः ॥११॥  
 जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिभिरर्जितं । जन्ममृ-  
 त्युजरारोगं हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥ अद्याभावत  
 सुफलता ह्यनद्वयस्य । देव त्वदीयचरणांशुजवीक्ष-  
 णेन । अद्य त्रिलोककतिलकप्रतिभाषते मे । संसारवा-  
 रिधिरयंचुलुक प्रमाणं ॥

## पर्युषण पर्व भजनावली

उत्तम क्षमा-गजल कौवाली ।

उत्तम क्षमाको धारो, दशलक्ष पर्ववालो । मनमें  
 न क्रोध लाओ, हे ऊंचे भाववालो ॥ १ ॥ उत्तम

क्षमाके धारी फैला दो कीर्ति सारी। सुमरो क्षमाकी मुद्रा, जैनी कहानेवालो ॥ २ ॥ फेरो क्षमाकी माला कैसा ये मन्त्र आला । उत्तम क्षमाको रट लो, भक्तीके मार्गवालो ॥ ३ ॥ फैला दो शांति जगमें उत्तम क्षमासे सबमें । भावोंको शुद्धि कर लो, खोटे विचारवालो ॥ ४ ॥ माया ममत्व छोड़ो, प्रभु-जीसे नेह जोड़ो । तृष्णाको अब घटाओ, दानी कहानेवालो ॥ ५ ॥ दश दिन न क्रोध करना, पापोंसे डरते रहना । विद्या बिनयको सुनलो मुक्तीके जानेवालो ॥ ६ ॥

### उत्तम मार्दव

उत्तम मार्दव व्रत करो सब मान कुछ करना नहीं । मान करनेसे कभी भी लाभ कुछ होता नहीं ॥ मानी नरकमें दुःख उठाते, जायकर नर्कों में बे । अभिमानसे होता है सबको फायदा विलकुल नहीं । अभिमानमें रावण मरा अरु दुर्दशा उसकी हुई । दुख उठाये सैकड़ों पर सुख मिला कुछ भी नहीं ॥ दश पर्व व्रतोंके दिनोंमें भाव समताके धरो । संतोष व्रत धारण करो अरु धैर्यको त्यागो नहीं । योग्य नित प्रभु दर्श करना अष्टद्रव्यी मेलसे

निश्चल कौसी शांत मुद्रा मान इसमें कुछ नहीं ।  
 मान विषका कूप है गति नीचमें ले जायगा । अभि-  
 मान ज्ञानी मत करो अरु धर्मको विसरो नहीं ।  
 जाप मार्दवकी जपो, छोटे बड़ोंको सम लखो ।  
 करती विनय “विद्या” यही कि, मान कुछ करना  
 नहीं ।

### उत्तम आर्जव

व्रत पालो उत्तम आर्जव छलसे दूर दूर दूर ।  
 आओ कपट नीतिसे बाज कपटी दूर दूर दूर ॥१॥  
 अब जपलो आर्जव माला, छलका करदे मूकाला ।  
 ये मन्त्रोंमें मन्त्र निराला, सुखसे पूर पूर पूर ॥२॥  
 सब सुन लो जैनी भाई, ये छल है बहु दुखदाई ।  
 है निश्चय धरम सहाई, विपदा चूर चूर चूर ॥३॥  
 कोई रंचक दगा न करना, छलियासे डरते रहना ।  
 सब मनमें सदा सुमरना, जिनका नूर नूर नूर ॥४॥  
 हे सरल स्वभावी जैनी, इस छलकी धारा पैनी ।  
 ‘विद्या’ मत चढ़ये नसैनी श्रावक शूर शूर शूर ॥५॥

### उत्तम सत्य

जगतमें उत्तम सत्य महान ! बुद्धिमान गुण-

वान ॥ जगतमें भूठ वचन नहिं मुखसे बोलो,  
 भूठ महा दुख खान ॥ जगतमें० ॥ दुनियामें है  
 सत्यकी महिमा, सत्यहि मन्त्र महान् ॥जगतमें०॥  
 दृढ़प्रतिज्ञ वन जो सत निबोले तो निश्चय कल्याण  
 ॥जगतमें०॥ पर विश्वासघात न करना, और न  
 करना मान ॥ जगतमें० ॥ परवस्तुमें मन न लुभानी  
 चाहे जावें प्राण ॥ जगतमें० ॥ सत्य सत्य सब  
 नित्य ही सुमिरो, गाकर उसका गान । जगतमें०॥  
 उत्तम सत्यकी माला जपलो, धरकर हृदे ध्यान ॥  
 जगतमें० ॥ हाथ जोड़ सब शीश नवावें, दे प्रभु  
 यह वरदान ॥ जगतमें० ॥ विद्या विनय यही है  
 प्रभुजी, पाऊं उच्च स्थान ॥ जगतमें ॥

### उत्तम शौच

जैनी धारियो जी, उत्तम शौच आज मन  
 भाया ॥ टेक ॥ दुखदाई लालच दुःख देता सुनलो  
 उसका हाल । सच्चे मनसे लोभ त्याग दो ये  
 जीका जंजाल ॥ १ टेक० ॥ कौन कहत है लोभ  
 बिना तुम, होवोगे कङ्गाल । दूर हटाओ दिलसे  
 इसको कैसा रही ख्याल ॥ २ टेक ॥ निर्लोभी बन

नेकी शिक्षा प्रभुसे लेलो आज । उत्तम शौचकी  
जाप जपलो मुक्तीका ये साज ॥टेक० ॥ राग द्वेष  
मनमें नहिं लाना ये है काला सांप । निज सरूप  
पहिचानलो फिर देखो आपहि आप ॥ ४ टेक० ॥  
हृदेमें सन्तोष धारो निश्चय बेड़ापार । “विद्या”  
पर्वके उत्तम दिनमें कर अपना उद्धार ॥ ५ ॥

### उत्तम संयम राग रेखता

संयम तेरा मन बता अब क्यों नहीं लगता ।  
सञ्जम चेतन करता नहीं भोगोंमें क्यों फंसता ॥१॥  
चैतन सम्भलजा अब भी नरकोंमें क्यों धंसता ।  
कर करके कपट जाल क्यों भोगोंको है करता ॥२॥  
संजम रतन सम्भालले विषयोंमें विष दिखाता ।  
भव भव बिगड़ गये तेरे अब क्यों नहीं सुनता  
॥३॥ जग सून्य है संयम बिना पापोंसे नहिं लजता  
छहकायके जीवों पै रहम क्यों नहीं करता ॥ ४ ॥  
सब इन्द्रियां बसमें रखो धारण करो समता ।  
इतना किये बिन पापसे कैसे भला बचाता ॥ ५ ॥  
दुनियाँमें कहीं भी रहो कुछ हो नहीं सकता ।  
‘विद्या’ बिना संजमके देखो कैसा है रुलता ।

## उत्तम तप गजल

आज उत्तम तप बिरतमें मन लगाना चाहिये ।  
इस दुःखदाई लाभसे अब दिल हटाना चाहिये ॥१॥  
निर्लोभी अब बन जाइये लोभ है जहरी छुरा ।  
लोभ लालचको हृदयसे अब हटाना चाहिये ॥२॥  
ये लोभ दुश्मन जानका है जीव लेकर जायगा ।  
इस कष्टमय जीवनको सुखसे अब बिताना चाहिये  
॥ ३ ॥ द्वादश विधिके तप कठिन है, कैसे कब ये  
होंयगे । पर्वके उत्तम दिनोंमें तन तपाना चाहिये  
॥४॥ नर भव महा दुर्लभ रतन मुश्किलसे 'विद्या'  
है मिला । तो क्या बिना तपके इसे, योंही गमाना  
चाहिये ॥५॥

## उत्तम त्याग राग [ बनजारा ]

मन उत्तम त्याग समाया, नरभव जीवनका  
पाया । है दान चार परकारा, दे औषधि दान अहारा  
॥ टेक ॥ दिल अभय शास्त्र मन भाया नर भव  
जीवनका पाया । तप राग द्वेष निरवारे, मेरे कर्म  
शत्रुको मारे, मुनियोंने देह तपाया, मेरे मन त्याग  
सुहाया ॥२॥ ये जीवन बहु दुखदाई, ये विपदा तप

बिन आई । क्यों पाप कूप खुदवाया, नर भव  
जीवनका पाया ॥ ३ ॥ दुनिया भी अन्तमें न्यारी  
“विद्या” निश्चय है खवारी । कह प्रभुसे नेह लगाया  
मेरे मन त्याग समाया ॥४॥

## उत्तम आर्किंचन

(रघुवर कौशल्याके लाल मुनिकी यज्ञ रचानेवाले )

उत्तम आर्किंचन ब्रत धार जैनी मात्र कहाने  
वाले । जैनी मात्र कहानेवाले, त्यागरूप दिखाने  
वाले ॥१॥ त्यागो चौबिस परिग्रह भेद । फिर धर  
तीरथ सिखर सम्मेद । करना आवश्यक नहिं खेद  
धर्मकी बाढ़ बढ़ाने वाले ॥२॥ निश्चय जिनवाणी  
श्रद्धान, जगमें जैनी धर्म प्रधान । कहते बुद्धिमान  
गुणवान, जग उपदेश सिखाने वाले ॥ ३ ॥ ये हैं  
दुखदाई संसार, इसमें सुख पाना दुश्वार । जीवके  
दुश्मन कई हजार, पग पग दुःख दिलानेवाले ॥४॥  
है दुनिया निस्सार, जायेंगे सब कोई हाथ पसार ।  
“विद्या” दान चार परकार, मुक्तिकी राह बताने  
वाले ॥ ५ ॥



## महावीर स्तुति

महावीर तेरे दर्श बिन दिल दासिका बेजार  
है । नाथ मुझको तार जल्दी आपका इकरार है  
॥२॥ आप जैसी शांत मुद्रा, तीन लोकोंमें नहीं ।  
फिर आपकी सेवासे किसको कब भला इन्कार है  
॥२॥ मोह वश अज्ञानतासे भूल भारी हो गई ।  
प्रभु अष्ट कर्मी जालसे बचना मुझे दुश्वार है ॥३॥  
लोभ लालच बेड़ियोंने कसके जकड़ा है मुझे । नाथ  
चरणों आपड़ा हूं तूं जगतका करतार है ।४। लीला  
प्रभु अद्भुत तेरी कौन मुखसे गांय हम । डूबती  
नैयाका तूही मोक्षमग पतवार है ॥५॥ होऊं भव  
भव स्वामी सेवक जोड़ कर विद्या विनय । बिघ्न  
टरता दुःख हरता तूही जगदाधार है ॥

## नेम स्तुति

सामलिया मैं तो आईजी तुम्हारे दरबार टेक  
टुक नजर मेहरकी कीजेजी दासीको अवतार ॥टेक॥  
प्रभु मेरी ओर निहारो तुम इतनी बात बिचारो ।  
अब मुझको पार उतारोजी सुन लीजे भरतार ।  
॥ १ टेक ॥ तुम समद विजै दुलारे सुनलो प्रिय

प्राण हमारे तुम अच्छी बात बिचारीजी मोह छोड़ी मझधार । २ टेक ॥ अब सुनियो प्रीतम मेरे मैं आई हूं ढिग तेरे । मोह दिक्षा देवो प्यारेजी आई हूं तुमरे द्वार ॥ ३ टेक ॥ अजी नौ भव चरणन सेवा करके पाई मैं मेवा । अन्ते समय बिसराये जी सु मनमें दया धार ॥ ४ टेक ॥ नेमि प्रभु दीक्षा दीनी राजुल मन, बच तन लीनी । सुरगोंमें देव भई जी निज करणीली सुधार ॥ ५ टेक ॥ सुन हाथ जोड़ मैं बोलूं अपने हिये पट खोलुं । तुम मनमें सुमरो “विद्या” अपनी उन्नतिको संभार ॥ ६ टेक ॥

### तीर्थकरोंका निर्वाणक्षेत्र

ऋषभदेवजीने कैलास पर्वतसे, वासुपूज्यजी चम्पापुरसे, नेमिनाथजीने गिरनारसे, महावीरजीने पावापुरसे निर्वाण प्राप्त किया है और शेष २० तीर्थकरोंने श्रीसम्मद शिखरजीसे निर्वाण प्राप्त किया है ।

### पांच महाकल्याण

१ गर्भकल्याण २ जन्मकल्याण ३ तपकल्याण  
४ ज्ञानकल्याण ५ मोक्ष कल्याण ।

# जैनव्रत कथा संग्रह ।

दशलक्षणव्रत कथा ।

दोहा—प्रथम बन्दि जिनराजको, शारद गणधर  
पाय । दशलक्षणव्रतकी कथा, कहूँ सुगन सुखदाय ॥

चौपाई

विपुलाचल श्रीवीरकुमार । आये भविभव-  
भंजनहार ॥ सुनि श्रेनिकनृप बंदन गयो ।  
सर्व लोकसंग आनन्द भयो ॥ २ ॥ श्रीजिन  
पूजे गणधर चाव । स्तुति करी जोड़कर भा-  
व ॥ धर्मकथा तहँ सुनी विचार । दान शील  
तप भेद अपार ॥ ३ ॥ भव दुखघातिक दायक  
शर्म । भाख्यो प्रभु दशलच्छन धर्म ॥ ताको  
सुनि श्रेणिक रुचि धरी । गुरु गौतमसों बि-  
नती करी ॥ दशलच्छनव्रत कथा रसाल ।  
सुभक्तो भाखहु दीनदयाल ॥ तब गुरु गौत-

म गणधर कही । मुन जिनधुनिमें भाखी वही  
॥ ५॥ खंड धातुकी पूर्व विदेह । मेरुतैं दक्षि-  
णदिश तेह ॥ सीतौदा नदि तीर जु सही ।  
पुरी विशालाक्षा शुभ कही ॥ ६ ॥ भूपति प्री-  
तंकर तहं बसै । राणी प्रियकारिणी तस ल-  
सै ॥ सुता मृगांकरेखा तस जान । मतिशे-  
खर तस मंत्रि प्रधान ॥ ७ ॥ शशीप्रभा ताकी  
तिय सही । सुता कामसेना तस भई ॥ राज  
सेठ गुणसागर जान । तस तिय शील सुभद्रा  
मान ॥ ८ ॥ सुता मदनरेखा अवतरी । रूप  
कला गुण लक्षण भरी ॥ लक्ष्मभद्रनामा कृत-  
वाल । तस तिय शशिरेश्वा गुणमाल ॥ ९ ॥  
रोहिणी कन्या ताके भई । चारों कन्या मिल  
सखि थई ॥ शास्त्र पढ़ी इक गुरुके पास ।  
बढ्यो सनेह परस्पर जास ॥ १० ॥ रितु बसन्त  
आया निरधार । कन्या चारों बनहिं मझार  
॥ गई सु मुनिवर देखे एक । बन्दन थुति  
कीनी सविवेक ॥ ११ ॥ चारों कन्या मुनिसों

कही । तिय परजाय ज्यों छूटे सही ॥ एसो  
 ब्रत उपदेशहु अबै । जासौं नरतन पावै सबै  
 ॥१२॥ बोले मुनि दशलक्षण सार । यह ब्रत  
 किये होहु भवपार ॥ कन्या बोली किहविध  
 करै । किस दिनतै यह ब्रत हम धरै ॥ १३ ॥  
 तब गुरु बोले बचन रसाल । भादव मास क-  
 ह्यो सुखमाल ॥ शुक्लपंचमी दिनसों लेय ।  
 पंचामृत अंभिषेक करेय ॥ १४ ॥ पूजार्चन  
 कीजे शुभ सही । जिन चौबीसतणी सुख  
 मही ॥ उत्तम क्षमा आदि सुखसार । दशमों  
 ब्रह्मचर्य गुणधार ॥१५॥ तीनकाल अतिभक्ती  
 करो । तीनकाल पुष्पांजलि धरो ॥ इह विध  
 दश वासर आचरो । नियमित ही शुभ कारज  
 करो । उत्तम ब्रत दश अनशन किये । मध्यम  
 ब्रत कुल्ल कांजी लिये ॥ अथवा दश एकाशन  
 करो । भूमिशयन ब्रह्मचर्य जु धरो ॥ १७ ॥  
 या विधि दश बरसहिं लग करै । भवसहित  
 ब्रत विधि अनुसरे ॥ फिर ब्रतका उद्यापन

करै । दान सुपात्रनको विस्तरै ॥१८॥ औषध  
 अभय शास्त्र आहार । चार संधको दे चित  
 धार ॥ रचि मंडल पूजा कीजिये । छत्र चमर  
 आदिक दीजिये ॥१९॥ जो उद्यापन शक्ति न  
 होय । तो दूनों ब्रत कीजै लोय ॥ यह ब्रत  
 पुण्यतणों भंडार । क्रमसों परभव दे शिवसार  
 ॥२०॥ तब च्यारों कन्या ब्रत लियो । भक्ति  
 भाव लखि मुनि ब्रत दियो ॥ यथाशक्ति ब्रत  
 पूरण करयो । उद्यापन विधिसों आचर्यो ॥२१  
 अन्तकाल वे कन्या चार । सुमरण कियो  
 पंच नवकार ॥ चारों मरणसमाधि सु कियो ॥  
 दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥२२॥ सोलह  
 सागर आयू लहो । धर्मध्यान नित सर्व सही  
 ॥ सिद्धक्षेत्र सब करहिं बिहार । क्षायक स-  
 म्यक उदय अपार ॥२३॥ नाना विध सुखभो-  
 गें जहां । दुखका लेस न जानै तहां । यह  
 तो कथारही इह ठौर । आगें सुना भई जो  
 और ॥२४॥ सब दीपनमाधि जबूदापे । दक्षण

लवणसमुद्र समीप ॥ भरतक्षेत्र राजत है  
तहां । आर्यखण्ड राजै शुभ जहां ॥ २५ ॥ ताम्रै  
मालवदेश विशाल । उज्जयनी नगरी सुख-  
साल ॥ स्थुलभद्र ताको नरपती । लक्ष्मीमति  
रानी गुणवती ॥ २६ ॥ क्रमसे चयकर वे सुर  
चार । आयै रानी उदरमभार ॥ प्रथम सुपुत्र  
देवप्रभ भयो । दूजो सुत गुणचन्द्र जु थयो  
॥ २७ ॥ तीजो पद्मप्रभ बलवीर । चौथे  
पद्मसारथी धीर ॥ जन्म महोत्सव तिनके  
करे । असुभ दोय ग्रह सबही टरे ॥ २८ ॥  
पठनयोग्य जब चारों भये । नृपते गुरु समीप  
पठादये । सब विद्या पढ़लीनो सार । व्याह  
योग्य तब भये कुमार ॥ २९ ॥ निकलप्रभ  
राजी सुता । चारोंने परनी गुणयुता ॥ प्रथम  
सुताका 'ब्राह्मी' नाम । दुतिय, कुमारी  
सो गुणधाम ॥ तीजी 'रूपवती' सुकुमाल  
। 'मृगनत्री' चौथी गुणशाल ॥ व्याह महान्छव  
कियो अपार । सुखसों रहने लगे कुमार ॥ ३१ ॥

कुछ दिन राज कियो भूपाल । मन वैराग  
 भयो इह काल । भवतनें भोग लखें निस्सार ।  
 दिक्षा ग्रहण किया सुविचार ॥ ३२ ॥ बड़े  
 पुत्र को राज सु दियो । वनमें जाकर  
 मुनिव्रत लियो ॥ तपकर पायो केवल ज्ञान ।  
 हनि अघात पहुंच्यो शिवथान ॥ ३३ ॥  
 सुखसों राज करै चउभ्रात । पुरजन सुख  
 भोगै दिन रात । चारों भ्राता चतुर  
 सुजान । पूरब पुण्यतणों फलमान ॥ ३४ ॥  
 नितप्रति धर्मध्यान आवै । पापक्रियातैं अति-  
 शय डरै ॥ इकदिन मन उपज्यो वैराग ।  
 राजपाट सब दीने त्याग ॥ ३५ ॥ वनमें  
 जाकर मुनिव्रतधार । करने लगे करम संहार  
 करत करत तप बहुदिन गये । घाति करम  
 सब छय कर दये ॥ ३६ ॥ तब उपज्यो तिन  
 केवल ज्ञान । सुर आये जय जयकर बान  
 ॥ कियो महोच्छ्रव अति सुखमान । कर  
 कल्याण गये निज थान ॥ विविध देश में



कियो विहार । ६ उपदेश भव्यजन तार ॥  
 करम अघाति किये सब नास । सिद्धालय  
 कीनो चिरवास ॥ ३८ ॥ दशलच्छनव्रतका  
 फल यही । पायो च्यारों कन्या सही ॥ तारैं  
 सबजन तनमन धार । दशलच्छनव्रत धारो  
 सार ॥ ३९ ॥ यह व्रतकर बहुजन सुर गये  
 । सुरसुख भोग मुक्ति में गये ॥ गुरु गौतम  
 गणधर यह कही, कर श्रद्धान व्रत धारो यही  
 ॥ भट्टारक श्रीभूषणवीर, तिनके चेला गुण  
 गंभीर । ब्रह्मज्ञान सागर सुविचार, कहीकथा  
 दशलच्छनसार ॥ ४१ ॥ पढ़ै सुने जो नर  
 यह कथा, दशलच्छन व्रत धारैं तथा । दश-  
 लच्छनव्रत वृष भावैं जोय, सो अवश्य शिव  
 तिय पिय होय ॥

॥ इति दशलक्षण व्रत कथा समाप्त ॥

पुष्पाजलिब्रत कथा

वीर देवको प्रणामिकर, अर्चा करों त्रिकाल  
 पुष्पांजलिब्रतकी कथा, सुनो भव्य अघटाल

चौपाई-पर्वत विपुलाचल पर आय । समो-  
 शरण जिनवरका पाय । तिह सुन राजा श्रे-  
 णिक राय । बंदन चले प्रियामुत्त भाय ॥ २ ॥  
 बंदन कर पूछत नृप तबै । हे प्रभु पुष्पाजलि  
 व्रत अबै ॥ मोसो कहो करो चितलाय ।  
 कौनौकिया कहाफल पाय ॥ बोले गौतम  
 बचन रसाल । जम्बूद्वीपमध्य सुविशाल ॥  
 सीतानदी दक्षिण दिशि सार ॥ मंगलावर्त  
 मुदेश मंभार ॥ ४ ॥

दोहा=रतनसंचयपुर तहां, बज्रसेन नृपराय  
 जयवंती बनिता लसै, पुत्र बिना ही थाय । ५ ।  
 चौपाई-पुत्रचाह जिनमंदिर गई । ज्ञानोदधि  
 मुनि बंदित भई ॥ हे मुनिनाथ कहो समभाय  
 मेरे पुत्रहोय कै नाय ॥ ६ ॥ दोहा=मुनि बोले हे  
 बालकी, पुत्रहोय शुभसार । भूमी छह खण्ड  
 साधि है, मुक्ति तनों भरतार ॥ ७ ॥ सुनकर मुनि  
 के बचन तब, उपज्यो हर्ष अपार । क्रमसों पूरे  
 मास नव, पुत्र भयो शुभ सार ॥ ८ ॥ यौवन

वयस सो पायकर, क्रीड़ा मंडर सार । तहां  
 व्योमसों आइयो, खग भूपर तिसवार ॥ ६ ॥  
 रत्नशिखर को देखकर, बहुत प्रीति उरमाहिं ।  
 मेघवाहन पांचसौ, विद्या दीनो ताहि ॥ १० ॥

चौपाई

दोनों मित्र परस्पर प्रीति । गये मेरु बंदन तज  
 भीति ॥ सिद्धकूट चैत्यालय बंदि । आये सब  
 जन मनआणंदि ॥ ११ ॥ ताकी सखी जनाई  
 सार । वेग स्वयंवर करो तयार ॥ भूरि भूप  
 आये तत्काल । माल रत्नशेषर गल डाल ॥ १२ ॥  
 धूमकेतु विद्याधर देख । क्रोधकियो मनमाहिं  
 विशेख ॥ कन्या काज दुष्टता धरी । विद्याबल  
 बहु माया करी ॥ १३ ॥ युद्ध रत्नशेखरसों करयो  
 बहुत परस्पर विद्याधरो ॥ जीत रत्नशेखर तिस  
 वार । पाणिग्रहण कियो व्यवहार ॥ १४ ॥ मदन  
 मंजूषा रानी संग । आयो अपने गेह असंग ॥  
 बज्रसन को कर नमस्कार । तात मात मन  
 सुख अपार ॥ १५ ॥ एकदिना मंदिर गिरयोग

पहुंचे मित्र सहित सबलोग ॥ चारण मुनि बन्दे  
 तिहि बार । सुन्यो धर्म चित भयो उदार ॥ १६ ॥  
 हे मुनि पूर्वजन्म सम्बन्ध । तीनोंके तुम कहो  
 निबन्ध ॥ तब मुनि कहैं सुनो चितधार । एक  
 मृणालनगर सुखकार ॥ १७ ॥ नृपमन्त्री इक  
 तँह श्रुतिकीर्ति । बंधुमती वनिता अति प्रीति  
 ॥ एक दिन वन क्रीड़ा गयो । नारीसंग रमत  
 सो भयो ॥ १८ ॥ पापी सर्प सो भक्षण करी ।  
 मंत्री मृतक लखी निज नरी ॥ भयो विरक्त जि-  
 नालय जाय । दिक्षा लीनी मन हर्षाय ॥ १ ॥  
 यथाशक्ति तप कुछ दिन करयो । पीछे भ्रष्ट  
 भयो तप टरयो ॥ गृह आरंभ करन चित ठन्यो  
 तब पुत्री मुख ऐसे भन्यो ॥ २० ॥ तात जु मेरु  
 चढे किहिं काज । फिर भवासिन्धु पड़े तज लाज  
 ॥ यों सुन प्रभावती बचसार । मंत्री कोप कियो  
 अधिकार ॥ २१ ॥ तब विद्याको आज्ञा करी  
 । पुत्रीको ले वनमें धगी ॥ विद्या जब वनमें ले  
 गई । प्रभावती मन चिन्ता भई ॥ २२ ॥ अर-

हंत-भक्ति चित्त में धरी । तब विद्या फिर आई  
 स्वरी ॥ हे पुत्री तेरा चित्त जहां । वेग बोल  
 पहुंचाऊं तहां ॥२३॥ पुत्री कही कैलाश के  
 भाव । जिनदर्शनको अधिक ही चाव ॥ पूजा  
 करके बैठी वहां । पद्मावति आई सो तहां  
 ॥२४॥ इतने मध्यम देव आइयो । प्रभावती  
 ने प्रश्न जु कियो ॥ ह देवी कहिये किस काज  
 आये देवी देव जु आज ॥ २५ ॥ पद्मावती  
 बोली बचसार । पुष्पांजलिव्रत है सु अबार ॥  
 भादो मास शुक्ल पंचमी । पंचदिवस आरंभ न  
 अमी ॥२६॥ प्रोषध यथाशक्ति व्यवहार ।  
 पूजो जिन चौबीसी सार ॥ नानाविधिके पुष्प  
 जुलाय । करै एक मंडल जु बनाय ॥ २७ ॥  
 तीन काल वह माला देय । बहुत भक्तिसों विनय  
 करेय ॥ जपै जाप शुभ मंत्र विचार । याविधि  
 पंचवर्ष अवधार ॥२८॥ उद्यापन कीजै पुनि सार  
 चार प्रकार दान अधिकार । उद्यापनकी शक्ति  
 न होय, तो दूनो व्रत कीजै लोय ॥२९॥ यह

सुन प्रभावती ब्रत लियो, पद्मावती कृपाकर  
 दियो । स्वर्ग मुक्ति फलका दातार, है यह  
 पुष्पाजलिव्रत सार ॥३०॥ दो०-पद्मावती  
 उपदेशसों, लीनों ब्रत शुभ सार । पृथ्वी परसु  
 प्रकाशिके, कियो भक्ति चितधार ॥ तप विद्या  
 श्रुतकीर्तिने, पाई अति जु प्रचंड । प्रभावती  
 ब्रत खंडने, आई सो बलबंड ॥ ३२ ॥  
 चौपाई चासर तीन व्यतीत जबै, पद्मावती  
 पुनि आई तबै । विद्या सब भागी ततकाल  
 कियो सन्यासमरण तिस वाल ॥३३॥ कल्प  
 सोलवें मुख्य सु जान, देव भयो सो पुण्य  
 प्रमान । तहां देवने किया विचार, मेरा तात  
 भ्रष्ट आचार ॥३४॥ मैं संबोधों वाकों अबै, उत्तम-  
 गति वह पावै तबै । यही विचार देव आइयो  
 मरणसन्यास तातको कियो ॥३५॥ वाही स्वर्ग  
 भयो सो देव, पुण्यप्रभाव लिया फल एव ।  
 बंधुमती माताको जीव, उपज्यो ताही स्वर्ग  
 अतीव ॥ ३६ ॥

प्रभावतीका जीव तू, रत्नशेखर भयो जाय  
 माताको जो जीव थो, मदनमंजूषा थाय ॥३७॥  
 श्रुतिकीर्तिको जीव जु तहां, मंत्री मेघनाहन  
 है यहां । ये तीनोंके सुन पर्याय, भई सुचिन्ता  
 अंगन माय ॥३८॥ सुन व्रतफल अरु गुरुकी  
 बानि, भयो सुचित ब्रत लीनों जानि । अपने  
 थान बहुरि आइयो । चक्रवर्तिपद भोग सु  
 कियो ॥३९॥ समय पाय बैरागी भयो, राजभार  
 सब सुनको दयो । त्रिगुप्ति मुनिके चरणों पास  
 दीक्षा लीनी परम हुलास ॥४०॥ रत्नशेखर दिक्षा  
 ली जबै, भयो मेघनाहन मुनि तबै । भवि  
 जीवोंको अति सुखकार ज्ञान उपायो उनने सार  
 ॥४१॥ घातिकर्म निर्मल सु करै, पाछै मुक्तिगुरी  
 अनुसरै । इह विधि ब्रत पालै जो कांई,  
 अजर अमर पद पावै सोई ॥ ४२ ॥

इति पुष्पांजलि व्रतकथा सम्पूर्ण ।

## अनन्त चौदशव्रत कथा

अनंतनाथ बंदों सदा, मनमें कर बहु भाव ।  
सुर असुरहि सेवत जिन्हें, होय मुक्तिपर चाव  
चौपाई ।

जबूद्वीपमें सार । लख योजन ताको  
विस्तार ॥ मध्य सुदर्शन मेरु बखान । भरत-  
क्षेत्रता दक्षिण मान ॥ २ ॥ मगध देश देशों  
शिरोमणी । राजगृह नगरी अंति बनी ॥  
श्रेणिक महाराज गुणवन्त । रानी चेलना गृह  
शोभंत ॥३॥ धर्मवन्त गुण तेज अपार ।  
राजा शय महागुण सार ॥ एक दिवस विपु-  
लाचल वीर । आये जिनवर गुण गंभीर ।४।  
चार ज्ञान के धारक कहै । गौतम गणधर सो  
संग रहे ॥ ब्रह्म ऋतुके फल देखे नैन । वन-  
माली ले चाल्यो ऐन ॥५॥ हर्ष सहित वन-  
माली गयो । पुष्प सहित राजा पर गयो ॥  
नमस्कारकर जोड़े हाथ । मोपर कृपा करो नर-  
नाथ ।६। विपुलाचल उद्यान महंत । महा-



वीर जिन तहां बसंत ॥ सुन राजा अति हर्षित  
 भयो । बहुत दान मालीको दयो । ७ । सप्त  
 ध्वनि बाजे बाजंतै । प्रजा सहित राजा  
 चालंत ॥ दे प्रदक्षिणा बैठो राय । जिनवर  
 देव कियो चित चाव ॥ ८ ॥ द्वैविधि धर्म  
 कहयो समभाय । जासों पाप सर्व जर जाय  
 ॥ स्वर्ग तंह आया एक तुरंत । सुन्दर रूप  
 महा गुणवन्त ॥ ९ ॥ नमस्कार जिनवर  
 करयो । जय जयकार शब्द उच्चरयो ॥ ताहि  
 देखि अचरज अति कियो । राजा श्रेणिक  
 पूछत भयो ॥ १० ॥ सैना सहित महा गुण-  
 खानि । का यह आयो सुन्दर वानि ॥ याकी  
 बात कहो समभाय । ज्ञानवन्त मुनिवर गुरु  
 राय । ११ । गौतम बोले बुद्धि अपार ।  
 विजयागर कह्यो अतिसार ॥ मनो कुम्भ  
 राजा राजंत । श्रीमती रानीको कंत । १२ ।  
 ताका पुत्र अरिजय नाम । पुण्यवन्त सुन्दर  
 गुणधाम ॥ पूरब तप कीनो इन जोय । ताको

फल भुगतै शुभ सौय ॥ १३ ॥ ताकी कथा  
 कहं विस्तार । जंबूद्वीप द्वीपनमें सार ॥ भरत  
 क्षेत्र तामें सुखकार । कौशल दश विराजतसार  
 ॥ १४ ॥ परम सुखद नगरी तहं जान । विप्र  
 सोमशर्मा गुणखान । सोमिल्या भामिनि ता  
 कही । दुख दरिद्रकी पूरति मही ॥ १५ ॥ पूरब  
 पाप किये अतिघने, तिनके फल भुगते ही  
 बने । सुन राजा याका विरतांत, नगर २  
 सो भ्रमैं दुखांत ॥ १६ ॥ दश विदेश फिरे  
 सुख आश, तो हु न पावै सुख निवास  
 भ्रमत भ्रमत सो आयो तहां, समोशरण जिन-  
 वर का जहां ॥ १७ ॥

अनन्तनाथ जिनराजका, समाशरण तिहिंवार  
 सुर नर अति हर्षित भयें देख महाद्युतिसार

चौपाई ।

विप्र देखि अति हर्षित भयो, समोशरण  
 बदन को गयो । वंदि जिनेश्वर पूछे सोइ  
 कहा पापमैं मै कीनो होई ॥१६॥ दरिद्र पीड़ा

रहै शरीर । सो तो ब्याधि तरो गम्भीर ।  
 गणधर कहै सुनो द्विजराय । अनन्त व्रत  
 कीजै सुखदाय । २०। तबै विप्र बोएयो कर भाय  
 किस विधि होई सो देहु बताय ॥ किस प्रकार  
 या व्रतकों करों । कहो विधान चित्तमें धरो  
 । २३। भाद्रवमास सुखकी स्नान, चौदस शुक्ल  
 कही सुखदान । कर स्नान शुद्ध हो जाय,  
 तब पूजै जिनवर सुखदाय । २२। गुरु बन्दना  
 करै चितलाय । या विधि सों व्रत लये बनाय  
 त्रिकाल पूजन श्री जिनदेव । रात्रि जागरन  
 कर सुख लेव । २३ । गीत रु नृत्य महोत्सव  
 जान, धारा जिनवर करो बखान । वर्ष चतु-  
 र्दश विधिसों धरै, ता पीछे उद्यापन करै । २४।  
 करै प्रतिष्ठा चौदह सार, जासों पाप होइ जर  
 छार । भारी धरै जु अधिक अनूप, स्वर्ण  
 कलश देव शुभरूप । २५। दीवट भालर संकल  
 माल और चन्दोवे उत्तम जाल । छत्र सिंघा-  
 सन विधिसों करै, तातैं सर्व पाप परिहरै । २६।

चार प्रकार दान दीजिये, जासों अतुल सुख  
 लीजिये । अंत समय लेवे सन्यास, तातैं मिलै  
 स्वर्ग का वास ।२७। उद्यापन की शक्ति न होय  
 कीजै व्रत दूनो भवि लोइ । विप्र कियो व्रत  
 विधिसों आय, सब दुख ताके गये बिलाय  
 २८ अंतकाल धरके सन्यास, तातैं पायो स्वर्ग  
 निवास । चौथे स्वर्गदेव सो जान, महाऋद्धि  
 ताके जु बखान ।२९। विजयाधर गिरि उत्तम  
 ठौर, कांजीपुर पत्तन शिरमौर । राजा तहं  
 अपराजित वीर, विजया तासु प्रिया गंभीर  
 ।३०। ताको पुत्र अरिंजय नाम, तिन यह आय  
 किये परनाम । कंचनमय सिंहासन आन, ता-  
 पर नृप बैठो सुख खान ।३१। ब्योमपटल विन-  
 शत लख संत, उपज्यो चित्त वैराग महंत ।  
 राज्य पुत्रको दिया बुलाय, आप लई दीक्षाशु-  
 भ भाय ।३२। सही परीषह दृढ़ चित धार, तातैं  
 कर्मभये घाति छार । घाति, घातिमा केवल भये  
 भिदि बुदि सो पद निर्मयो ।३३। रानीने व्रत

कीना सही, देव देह तिन अच्युत लही । तहां  
सुसुख भुगतै अधिकाय । तहांसों आय भयोनर  
राय । ३४ । राजऋद्धि पाई शुभसार, फिर  
तपकर विधि कीनेछार । तहांतेमुक्तीपुरको गयो  
ऐसो तिन व्रतको फल लयो । ३५ ॥ ऐसो व्रत करे  
जो कोई, स्वर्ग मुक्तिपद पावै सोई । विनयसार  
गुरु आज्ञा करी । श्रावक मुजन चित्तम धरी  
। ३६ । तब यह कथा करी मन ल्याय, यथा  
शास्त्र में वरणी आय । विधि पूर्वक पालै जो  
कोय, ताको अजर अमर पद होय ॥ ३७ ॥

( इति अनंत चौदश व्रतकथा समाप्त ) ।

सुगंधदशमीव्रत कथा ।

बीपाई ।

वर्द्धमान बंदों जिनराय, गुरु गौतम बन्दों  
सुखदाय । सुगंधदशमी व्रतकी कथा, बद्ध-  
मान सुप्रकाशी यथा ॥१॥ मगधदेश राजगृहि  
नाम, श्रेणिक राज करै अभिमान । नाम चेल-  
ना मूढ पट्टसानि चन्द्ररोहिणीरूप समान ॥२॥

नृप बैठ्यो सिंहासन परे, बनमाली फल लायो  
 हरे । कर प्रणाम बच नृपतैं कह्यो, प्रमुदित  
 चित्तसे ठाढ़ो रह्यो ।३। बर्द्धमान आये जिन  
 स्वामि, जिन जीत्यो उद्धत अरि काम । इत-  
 नी सुनत नृपति उठ चला, पुरजनयुत दलब-  
 लसे भला ।४। समोशरण वंदे भगवान, पूजा  
 भक्तिधार बहुमान । नर कोठा बैठ्यो नृपजाय  
 हाथ जोड़ पूछ्यो शिरनाय ।५। सुगंधदशमंत्रित  
 फल भाख । ता नरकी कहिये अब साख, गण-  
 धर कहैं सुनो मगधेश, जम्बूद्वीप विजयार्द्ध  
 प्रदेश ।६। शिवमंदिर पुर उत्तर श्रेणि, विद्या-  
 धर प्रीतंकर जैनि । कमलावती नारि अति रूप  
 सुर कन्यासे अधिक अनूप । सागरदत्त बसे  
 तहां माह, जाके जिन ब्रतमें उत्साह । धनदत्ता  
 बनिता गृह कही, मनोरमा ता पुत्री सही ।७।  
 मुनि सुगुप्त गृहपर आइयो, देख मुनिन्द्र दुःख  
 पाइयो । कन्या मुनि की निन्दा करी, कुञ्ज  
 मनमें नहिं शंका धरी ।८। नमगात दुर्गन्धशरीर

प्रगटपनै देहि नाहिं चीर । मुख ताम्बूल हता  
 मुनि अंग, नाख्यो सुखको कीनो भंग । १०।  
 भोजन अन्तराय जब गयो, मुनि उठ जाय  
 ध्यान बन दियो । समता भाव धरै उर माहिं  
 किंचित खेद चित्तमें नाहिं । ११। बीती अवधि  
 समय कुछ गयो, मनोरमाको काल सु भयो  
 । गधी भई पुनि कुकरी ग्राम, अपर ग्राम भई  
 सूकरी नाम । १२। मगधसुदेश तिलकपुर जान  
 विजयसेन तंहका नृप मान । चित्ररेखा ता  
 रानी कही, तस पुत्री दुर्गन्धा भई । १३। एक  
 समय गुरु बंदन गयो, पूजा कर विनतीको  
 ठयो ॥ मो पुत्री दुर्गन्ध शरीर । कहौ भवां  
 तर गुणगंभीर ॥ १४ ॥ राजा वचन मुनिश्वर  
 मुने । मुनि विरतांत रायसे भने ॥ सब विर  
 तांत हाल जो जान । मुनि राजा से कह्यो  
 बखान ॥ १५ ॥ मुन दुर्गन्धा जोड़े हाथ ।  
 मोपर कृपा करो मुनिनाथ ॥ ऐसा व्रत उपदेशो  
 मोहिं । जासों तनु निरोग अब होहि ॥ १६ ॥

दयावंत बोले मुनिराय । सुन पुत्री व्रत चित्त  
 लगाय ॥ समता भाव चित्त में धरो । तुम  
 सुगन्धदशमी व्रत करो ॥ १७ ॥ यह व्रत  
 कीजै मनबचकाय । यासों रोग शोक सबजाय  
 ॥ दुर्गन्धा विनवै मुनि पाय । कहिये सबिधि  
 महामुनिराय । ऐसे बचन सुनै मुनि जबै ।  
 तब बोले पुत्री सुन अबै ॥ भादों शुक्लपक्ष  
 जब होय । दशमी दिन आराधो सोय ॥ १६ ॥  
 पंचामृतकी धारा देव । मनमें राखो श्रीजिन  
 देव ॥ शीतल जिनकी पूजा करो । मिथ्या  
 मोह दूर परिहरो ॥ २० ॥ व्रतके दिन छोरो  
 आरंभ । यासों मिटै कर्मका बंध ॥ याके करत  
 पाप छय जाय । सो दश वर्ष करो मनलाय  
 ॥ २१ ॥ जब यह व्रत संपूरन होय । उद्यापन  
 कीजै चित्त जोय ॥ दश श्रीफल अमृतफल  
 जान । नीबू सरस सदा फलआन ॥ २२ ॥  
 दश दीजै पुस्तक लिखवाय । इह विधि सब  
 मुनि दई बत्ताय ॥ विधि सुन दुर्गन्धा व्रतलयो



स बहुगन्ध तच्छिन गयो ॥ २३ ॥ व्रत कर  
 आयु जो पूरण करी । दशवें स्वर्ग भई अम्सरी  
 ॥ जिनचैत्यालय बंदन करे । सम्यकभाव सदा  
 उर धरै ॥ २४ ॥ भरतक्षेत्र मंह मध्य सुदेश  
 । भूतितिलकपुर बसै अशेष ॥ राजा मही-  
 पाल तंह जान । मदन सुन्दरी प्रिया बखान  
 ॥ २५ ॥ दशवें दिनसों देवी आन । ताके  
 पुत्री भई निदान ॥ मदनावती नाम धरतास  
 । अति सुरूप तनु सकल सुवास ॥ २६ ॥  
 बहुत बात को करे बखान । सुन कन्या मा-  
 न्यो उन्मान ॥ कोशांबीपुर मदन नरेन्द्र ।  
 रानी सती करे आनन्द ॥ २७ ॥ पुरुषोत्तम  
 नृप सुन्दर जान । विद्यावंत सुगुणकी खान  
 ॥ जो सुगन्ध मदनावलि जाय । सो पुरुषो-  
 त्तम को नरनाय ॥ २८ ॥ राजा मदनसुन्दरी  
 बाल । सुखसों जात न जान्यो काल ॥ एक  
 दिवस मुनिवर बंदियो । धर्म श्रवण मुनिवरपे  
 कियो ॥ २९ ॥ हाथ जोड़ पूछै तब राय ।

महा मनींद्र कहो समुभाय ॥ मो गृहरानी मद-  
 नावली । ता शरीर शौरभता भली ॥ ३० ॥  
 कौन पुण्यसे सुभग सुरूप । सुर बनितासों  
 अधिक अनूप ॥ राजा बचन मुनिशर मुने  
 । सब विरतांत रायसों भने ॥ ३१ ॥ जैसे दुर्ग-  
 न्धा व्रत लह्यो । तैसी विधि नरपतिसों क-  
 ह्यो ॥ मुने भवांतर जोड़े हाथ । दीक्षाव्रत  
 दीजै मुनिनाथ ॥ ३२ ॥ राजाने जब दीक्षा  
 लई । रानी तबै अर्जिका भई ॥ तपकर अन्त  
 स्वर्गको गई । सोलम स्वर्गप्रतेन्द्र सो भई  
 ॥ ३३ ॥ बाहस सागर काल जो गयो । अन्त  
 काल ता दिवसों चयो ॥ भरत सु क्षेत्र मगध  
 तहं देश । वसूधा अमर केतु पुरनेश ॥ ३४ ॥  
 ता गृप गेह जनम उन लहयो । जो प्रतेन्द्र  
 अच्युत दिव कहयो ॥ कनककेतु कंचनद्युति  
 देह । बनिता भोग करै शुभ गेह ॥ ३५ ॥  
 अमरकेतु मुनि आगम भयो । कनककेतु तहं  
 बंदन गयो । सुनो सुधर्म श्रवण संयोग । तज

परिग्रह अरु भव भोग ॥ ३६ ॥ घाति घातिया  
 केवल लयो । पुनिअघ तिह तिनि शिवपुर  
 गहो ॥ ब्रत सुगन्ध दशमी विख्यात । ता  
 फल भयो सुरभियुत गात ॥ ३७ ॥ यह ब्रत  
 पुरुषनारि जो करै । तिहिदुखसंकट मुनि न  
 परै ॥ शहर गहैली उत्तम वास । जैनधर्म को  
 जहां प्रकाश ॥ ३८ ॥ सब श्रावक ब्रत संयम  
 धरै । पूजादानसों पातक हरे । उपदेशी वि-  
 श्वभूषण सही । हेमराज पंडितने कही ॥ ३९ ॥  
 मनवच पढ़ै सुनै जो कोय । ताको अजर  
 अमर पद होय ॥ यासों भविजन पढ़ो त्रिका-  
 ल । जो छूटै भवके भ्रमजाल ॥ ४० ॥

इति श्रीसुगंधदशमीब्रतकथा भाषा समाप्त ।

मुक्तावलीब्रत कथा ।

दोहा ।

ऋषभनाथके पद नमों, भविसरोजरवि जान ।  
 मुक्तावलि ब्रतकी कथा, कहूंसुनो धरिध्यान । १।

मगधदेश देशनप्रधान । तामें राजगृही  
 शुभ थान ॥ राजा तहां श्रेनिकराय । धर्मवंत  
 सबको सुखदाय ॥ २ ॥ ता गृह नारि चेलना  
 सती । धर्मशील पूरणगुणवती ॥ इक दिन  
 समोशरण महावीर । आयो विपुलाचलपर  
 धीर ॥ ३ ॥ सुन नृप अति आनन्दित भयो  
 कुटुमसहित बंदनको गयो ॥ पूजाकर बैठ्यो  
 सुख पाय । हाथ जोड़ कर अर्ज कराय ॥४॥  
 हे प्रभु मुक्तावलिप्रत कहो । यह कर कौनै  
 क्या फल लहो ॥ तब गौतम बोले हर्षाय ।  
 मुनो कथा मुक्तावलि राय ॥ ५ ॥ याही  
 जंबूद्वीप मंभार । भरतक्षेत्र दक्षिणदिशि सार  
 ॥ अंगदेश सोहै रमणीक । नगर बसै चम्पा-  
 पुर ठीक ॥ ६ ॥ नगर मध्य इक ब्राह्मण बसै  
 । नाम सोमशर्मा तसु लसै ॥ ता गृह एक  
 सुता जो भई । यौवनमद कर पूरण थई ॥७॥  
 इक दिन देखे श्रीगुरु जबै । नम्रगात् लखि

निन्दी तबै । अति खोटे दुर्बचन कहाय ।  
बहुतहि ग्लानि चित्तमें लाय ॥ ८ ॥ ताकरि  
महापाप बांधियो । आयु बितीत मरण जो  
कियो ॥ नरक जाय नाना दुख सहै । बेदन  
भेदन जाय न कहे ॥ ९ ॥ नरक आयु पूरी  
कर सोइ । भवभ्रमि द्विजग्रह पुत्री होइ ॥  
निर्नामिका पढयो तिहं नाम । अतिदुर्गन्धा  
देह निकाम ॥ १० ॥ कोई ढिग आवै नहिं  
तहां । क्रमकर बड़ी भई सो वहां ॥ अन्न पान-  
कर दुःखित महा । जूठन भखै कष्ट अति  
लहां ॥ ११ ॥ एक दिवस देखे मुनिराय ।  
कर परनाम विनय शिरनाय ॥ कौन पापमें  
कीनी देव । मैं पायो अति दुःख अभेव ॥ १२ ॥  
तब मुनिवर पूरब भव कहे । गुरुकी निन्दा-  
सों दुख लहे ॥ तब दुर्गन्धा जोड़े हाथ । ऐसो  
व्रत दीजे मोहिं नाथ ॥ १३ ॥ जासों रोग  
शोक सब जाय । उत्तम भव पाऊं गुरुराय । तब  
श्रागुरु बोले हर्षाय ॥ मुक्तावलिप्रत कर मन

लाय ॥ १४ ॥ तासों सबै पाप जर जाय  
 सुख सम्पति मिलै अधिकाय ॥ तब दुर्गन्धा  
 कहै विचार । कौन भांति कीजै व्रतसार ॥ १५ ॥  
 तब मुनिवर इम बचन कहाय । सुनो भेद  
 व्रतको चितलाय ॥ भादों सुदि सप्तमि दिन  
 जोय । ता दिन व्रत कीजै अबलोइ ॥ १६ ॥  
 प्रात समय जिनमंदिर जाय । पूजा कथा  
 सुनो मनलाय ॥ सब आरंभ तजो दिनमान ।  
 संजम शील सजो गुणखान ॥ १७ ॥ भोरभये  
 जिन दर्शन करो । शुद्ध अशन कीजै तब खरो  
 ॥ दूजो व्रत पूरवत करो । अश्विन वदि  
 छठि पाप जु हरो ॥ १८ ॥ तीजे व्रत कीजे  
 उर धार । अश्विनवदि तेरस सुखकार ॥ कर  
 उपवास पाल गुणरसी । चौथो अश्विन सुदि  
 ग्यारसी ॥ १९ ॥ पंचम व्रत कीजे मनलाय ।  
 कार्तिकवदि बारसी सुखदाय ॥ फिर छठवां  
 उपवास सुजान । कार्तिक शुक्ल तीज गुणखान  
 ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनवरने कहयो । कार्ति-

क सुदि ग्यारसि शुभ लह्यो ॥ फेर करो अष्ट-  
 व्रत लोय । मगसिर बदि ग्यारसी जब होय  
 ।२१। नवमो व्रत मगसिर सुदि तीज । येव्रत धर्म-  
 वृक्षके बीज ॥ या विधि कर नव वर्ष प्रमान ।  
 मनबचकाय शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत  
 पूरण होय निदान । उद्यापन कीजै गुणखान  
 ॥ श्रीजिनवर अभिषेक कराय । करो मांडनो  
 जिनगृह जाय ॥ २३ ॥ अष्टप्रकारी पूजा  
 करो । जन्मजन्मके पातक हरो ॥ यथाशक्ति  
 उपकरण बनाय । श्रीजिनधाम चढ़ावो जाय  
 ॥ २४ ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तोदूनो  
 व्रत कीजै सोय ॥ सब विध सुन दुर्गन्धा बाल  
 । मनबचतन व्रत लीनो हाल ॥ २५ ॥ गुरु-  
 भाषित तिन व्रत यह कियो । पूरवभव अघ  
 पानी दियो ॥ ताफल नारि लिंग छेदियो ।  
 प्रथमहिं स्वर्ग देवसो भयो ॥२६॥ तहां आयु  
 पूरण कर सोय । चलत भयो मथुराकी लोय  
 ॥ श्रीधर राजा राज करंत । ताके सुत उपज्यो

गुणवंत ॥ २७ ॥ नाम पद्मरथ षंडित भयो  
 एक दिवश वनक्रीडा गयो ॥ गुफा मध्य  
 मुनिवरको देख । बंदन कर सुन धर्म विशेष  
 ॥ २८ ॥ तहां पूछ मुनिवरसों सोय । तुमसों  
 अधिक प्रभा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले  
 सुन बाल । वासूपूज्य जिनदीसि विशाल ॥२९॥  
 चम्पापुर राजै जिनराज । तेजपुंज प्रभु धर्म  
 जहाज । यह सुन धर्मविषै चित दयो । समो-  
 शरण जिनबंदन गयो ॥ ३० ॥ नमस्कार कर  
 दीक्षा लई । तपकर गणधर पदवी भई ॥  
 अष्टकर्म इस विधिसों जार । पहुंच्यो शिवपुर  
 सिद्धमभार ॥ ३१ ॥ लखौ भव्य व्रतका जु  
 प्रभाव, राज भोग भयो शिवपुर राय ॥ जो  
 नरनारि करै ब्रतसार, सुर सुख लहि पावै  
 भवपार ॥ ३२ ॥

॥ इति मुक्तावली व्रत कथा समाप्त ॥



## रत्नत्रय व्रत कथा

दोहा-अरहनाथ पद बंदिके, बन्दों सरस्वति  
पाय । रत्नत्रयव्रतकी कथा, कहूं सुनो मनलाय

चौपाई

जबूद्धीप भरत शुभ खेत । मगधदेश सुख  
सम्पति हेत ॥ राजगृही तहं नगर बसाय ।  
राजा श्रेणिक राज कराय ॥२॥ विपुलाचल  
जिनवीर कुंवार । केवल ज्ञान विराजत सार  
॥ माली आय जनावो दयो, ततद्धिन राजा  
बंदन गयो ॥ ३ ॥ पूजा बंदन कर शुभ सार  
लाग्यो पूछन प्रश्न विचार ॥ हे स्वामी रत्न-  
त्रयसार । व्रत कहिये जैसा व्यवहार ॥ ४ ॥  
दिव्य ध्वनि भगवान बताय । भादोंसुदी  
द्वादश शुभ भाय । कर स्नान स्वच्छ पट श्वेत  
पहिनो जिनपूजनके हेत ॥ ५ ॥ आठों द्रव्य  
लेय शुभ जाय । पूजो जिनवर मनवचकाय  
॥ जीरण नूतन जिनके गेह । बिंब धराबो  
तिनमें तेह ॥ ६ ॥ हेमरूप्य पीतलके यन्त्र

तांबा यथा भोजनके पत्र ॥ यन्त्र करो बहु  
 मन थिरदेव । रत्नत्रयके गुण लिख लेव  
 ॥ ७ ॥ निशंकादि दर्शन गुण सार । संशय  
 रहित मुज्ञान अपार ॥ अहिंसादि महावृत  
 सार । चारितके ये गुण हैं धार ॥ ८ ॥ ये  
 तीनोंके गुण हैं आदि । इन्हें आदि जेते गुण  
 वाद ॥ शिवसागर के साधन हेत । ये गुण  
 धारे बूती सुचेत ॥ ९ ॥ भादों माघ चैत्रमें जान  
 । तीनों काल करो भवि आन । या विधि  
 तेरह बरस प्रमान । भावन भावै गुणहि नि-  
 धान ॥ १० ॥ लवंगादि अष्टोत्तर आन ।  
 जपो मंत्र मनकर श्रद्धान ॥ पुनि उद्यापन  
 विधि जो एह । कलशा चमर छत्र शुभ देह  
 ॥ ११ ॥ संघ चतुर्विधको आहार । वस्त्राभरण  
 देहु शुभसार ॥ बिंबप्रतिष्ठा आदि अपार ।  
 पूजो श्रीजिन हो भवपार ॥ १२ ॥

दोहा ।

इस विध श्रीमुख धर्म सुनु, भन्यो चित्तधर

भाय । कोनेँ फल पायो प्रभू, सो भाखो समु-  
भाय ॥ १३ ॥

चौपाई ।

जंबूद्वीप अलंकृत हेर । रह्यो ताहि लवणो  
दधि घेर ॥ मेरु सु दक्षिण दिश। है सार ।  
है सो विदेह धर्म अवतार ॥ १४ ॥ कञ्च-  
वती सुदेश तहँ बसै । वीतशोकपुर तामैं लसै ॥  
वैस्त्रिवनाम तहांको राय । करै राज सुरपति  
सम भाय ॥ १५ ॥ मालीने जु जनावा दयो  
विपुल बुद्धि प्रभु बनमें ठयो ॥ इतनी सुन नृप  
बंदन गयो । दान बहुत मालीको दयो ॥ १६ ॥  
हे स्वामी रत्नत्रय धर्म । मोसों कही मिट  
सब भर्म ॥ तब स्वामीने सब विधि कही ।  
जो पहिले सो प्रकाशी सही ॥ १७ ॥ पंचा-  
मृत अभिषेक सु ठयो । पूजा प्रभुणी कर  
सुख लयो ॥ जागणादि ठयो बहु भाय । इस  
विध व्रतकर वैस्त्रिवराय ॥ १८ ॥ भावमहित  
राजा व्रत करयो । धर्म प्रतीत नित्त अनुसरयो

॥ षोडशभावन भावत भयो । अन्त समाधि-  
 मरण नित कियो ॥ १९ ॥ गोत्र तीर्थकर  
 बांध्यो सार । जो त्रिभुवनमें पूज्य अपार ॥  
 सर्वार्थसिद्धि पहुंच्यो जाय । भयो तहां अह-  
 मेंद्र सुभाय ॥ २० ॥ सात हाथ तन ऊंचो  
 भयो । तैतिस सागर आयु सु लयो ॥ दिव्य  
 रूप सुखको भण्डार । सत्यनिरूपण अवधि  
 विचार ॥ २१ ॥ सौधमेंन्द्र विचारी घरी ।  
 यक्षेश्वरको आज्ञा करी ॥ वेग देश निर्माप्यो  
 जाय । थाप्यो सुथरापुर अधिकाय ॥ २२ ॥  
 कुम्भपुर राजा तहं बसै । देवी प्रजावती तिस  
 लसै ॥ श्रीआदिक तहं देवी आय । गर्भ सो-  
 धना कीनी जाय ॥ २३ ॥ रत्नवृष्टि नृप आगन  
 भई । पंद्रह मासलों बरसत भई ॥ सर्वार्थसि-  
 द्धसों सुर आय । परजावती कुक्ष उपजाय  
 ॥ २४ ॥ मल्लिनाथ शुभ नाम जु पाय । दृज-  
 चन्द्रसम बढ़त सुभाय ॥ जब विवाह मंगल वि-  
 धि भई । तब प्रभु चित विरागता लई ॥ २५ ॥

दीक्षा धर वनमें प्रभु गये । घातिकर्म हनि  
 निर्मल ठये ॥ केवल ले निर्वाण सु जाय ।  
 पूजा करी सुरन सब आय ॥ २६ ॥ यह  
 विधान श्रेणिकने सुन्यो । व्रत लीन चित  
 अपने गुण्या ॥ भक्ति विनय कर उत्तम भाय  
 पहुंचे अपने गृहको आय ॥ २७ ॥ या विधि  
 जो नरनारी करै, सो भवसागर निश्चय तरै  
 ॥ नलिन कीर्ति मुनि संस्कृत कही । ब्रह्मज्ञान  
 आभा निर्मयी ॥ २८ ॥

नंदीश्वरव्रत कथा ।

चरण नमों जिनराजके, जासों दुरित नशाय ।  
 शारद बंदों भावसों, सद्गुरु सदा सहाय ॥१॥  
 जम्बूद्वीप सुदर्शन मेरु । रह्यो ताहि लव-  
 णोदधि घेर ॥ मेरुसे दक्षिण भारत खेत ।  
 मगधदेश सुखसंपति हेत ॥ २ ॥ राजगृही  
 नगरी शुभ बसै । गढ़ मठ मन्दिर सुन्दर लसै  
 ॥ श्रेणिक राज करै सु प्रचण्ड । जिन लीनों  
 अरिगण पै दण्ड ॥ ३ ॥ पटरानी चेलना

सुजान । सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा  
 मध्य बैठोसो जाय । बनमाली शिर नायो  
 आय ॥ ४ ॥ दो कर जोड़ करे सो सेव ।  
 विपुलाचल आये जिनदेव ॥ बर्द्धमानको आ-  
 गम सुन्यो । जन्म सफल अपने चित गुन्यो  
 ॥ ५ ॥ राजा रानी पुरजन लोग । बन्दन  
 चाले पूजन योग ॥ चलत चलत सो पहुंचे  
 तहां । समोशरण जिनवरका जहां ॥ ६ ॥  
 दे प्रदक्षिणा भीतर गये । बर्द्धमानके चरणों  
 नये । पुनि गणधर को कियो प्रणाम । हर्षित  
 चित्त भया अभिराम ॥ ७ ॥ दशविध धर्म-  
 सुने जिन पास । जातै गयो चित्तको त्रास  
 दोकरजोड़ नृपति वीनयो । अति प्रमोद मेरे  
 मन भयो ॥ ८ ॥ प्रभुदयाल अब कृपा करेव  
 व्रत नंदीश्वर कहु जिनदेव ॥ अरु सबनिधि  
 कहिये समझाय । भाव सहित यों पूछी गय  
 ॥ ९ ॥ चार ज्ञानधर गणधर कहै । कौशल  
 देश स्वर्ग सम रहै ॥ ताकै मध्य अयोध्यापुरी

धनकन सुखी छतीसों कुरी ॥ १० ॥ तिहिंपुर  
 राज करै हरिसेन । त्याग तेज बल पूरण सेन  
 वंश इच्छाकु प्रगटे चक्रेश । आज्ञा धरे छख-  
 ण्ड प्रदेश ॥ ११ ॥ पाटबन्ध रानी नृप तीन  
 गांधारी जेठी गुणलीन ॥ प्रियमित्रा रूपाश्री  
 नाम । साधे धर्म अर्थ अरु काम ॥ १२ ॥ सुखसों  
 रहत बहुत दिन गये ॥ ऋतुवसंत बनराजा गये  
 जलक्रीड़ा बनक्रीड़ा करै । हास्य बिलास प्रीति  
 अनुसरै ॥ १३ ॥ ता बन मध्य कल्पतरु मूल ।  
 चन्द्रकांति मणि शिलानुकूल । मण्डपलता अ-  
 धिक विस्तार । चारण मुनि आये तिहं बार  
 ॥ १४ ॥ आरिंजय अमितंजय नाम । सोम  
 दयालु धर्मक धाम ॥ राजा रानी पुरजन नारि  
 देखत मुनि तिन दृष्टि पसारि ॥ १५ ॥ सब  
 नर नारि आनन्दित भये । क्रीड़ा तंजिं मुनि  
 बंदन गये ॥ त्रिया पुरुष चरणों अनुसरै ।  
 अष्टद्रव्य मुनि पूजै स्वरै ॥ १६ ॥ धर्म ध्यान  
 कह्यो मुनिराय । श्रद्धा सहित सुन्योकर

भाय ॥ राजा प्रश्न किया मुनि पास । सुन्यो  
 धर्म भया चित्त हुलास ॥ १७ ॥ दलबल  
 सहित संपदा घनी । और भूमि षट्खण्ड जु  
 तनी ॥ महापुण्य जो यह फलहोय । गुरु बि-  
 न ज्ञान न पावै कोय ॥ १८ ॥ बार बार बि-  
 नवै कर सेव । कहो भयंकर पूरव देव ॥ अवाधि  
 ज्ञान बल मुनिवर कहै । पुर अहिच्छेत्र बनिक  
 हक रहै ॥ १९ ॥ सुखित कुवेरामित्र ता नाम  
 साधे धर्म अर्थ अरु काम ॥ जेष्टपुत्र श्रीवर्म  
 कुमार । मध्यम जयवर्मा गुणसार ॥ २० ॥  
 लघु जयकृति कीर्ति विख्यात । तीनों शुभ  
 आनन्दित गात ॥ एक दिवस उपज्यो शुभकर्म  
 वनमें आये मुनि सौधर्म ॥ २१ ॥ सेठपुत्र  
 मुनिवर बंदियो । श्रीवर्मा जु अठई लियो ॥  
 नन्दीश्वर व्रत विधिसों पाल, भवभव पाप  
 पुंजका जाल ॥ २२ ॥ अन्त समाधिमरणको  
 पाय । इस पुर बज्रबाहु नृपराय ॥ ताके  
 विमला रानी जान । तुम हरिसेन पुत्र भये



आन ॥ २३ ॥ पूरव व्रत पाल अभिराम ।  
 तासो लह्यो सुखको धाम ॥ जयवर्मा जय  
 कीरति बीर । निकट भव्य गुणसाहस धीर  
 ॥ २४ ॥ बंदे गुरु जु धुरंधर देव । मनबच  
 काय करी बहु सेव ॥ तत्र मुनि पंच अणुव्रत  
 दिये । दोनों भाव सहित व्रत लिये ॥ २५ ॥  
 अरु नदीश्वर व्रत तिन लियो । अन्त समा-  
 धि मरण तिन कियो ॥ हस्तनागपुर शुभ  
 जहँ बसै, तहां विमलवाहन नृप लसै ॥ २६ ॥  
 ताके नारि श्रीधरा नाम । आरिंजय अमितं-  
 जय धाम ॥ पुत्र युगल हम उपजे तहां ।  
 पूर्वपुण्य फल पायो जहां ॥ २७ ॥ गुरु समी-  
 प जिनदीक्षा लई । तपबल चारण पदवी भई  
 ॥ यासों हम तुम पूरव भ्रात । देखत प्रेम  
 ऊपजै गात ॥ २८ ॥ पूरव व्रत नदीश्वर कियो  
 तासों राज चक्रपद लियो ॥ अब फिर व्रत  
 नंदीश्वर करो । ताँतै स्वर्गमुक्तिपद वरो ॥ २९ ॥  
 तब हरिसेन कहै करजोर । व्रत नंदीश्वर

कहो बहोर ॥ मुनिवर कहैं द्वीप आठमों ।  
 तास नाम नंदीश्वर नमों ॥ ३० ॥ ताके  
 चउदिश पर्वत परे । अंजन दधिमुख रतिकर  
 धरै ॥ तेरह तेरह दिश दिश जान । ये सब  
 पर्वत बावन मान ॥ ३१ ॥ पर्वत पर्वत पर  
 जिन गेह । तस परिमाण सुनो धर नेह ॥  
 सौ योजन ताका आयाम । अरु पचास विस्ता-  
 र सुताम ॥ ३२ ॥ उन्नत है योजन पच्चीस ।  
 सुर तहं आय नवावें शीस ॥ अष्टोत्तर शत  
 प्रतिमा जान । एक एक चैत्यालय मान । ३३ ।  
 गोपुर मणिमयके प्राकार । छत्र चमर ध्वज  
 बंदनवार । प्रातिहार्य विधि शोभा भली ।  
 तिन रवि कोटि सोम छवि छली ॥ ३४ ॥ ताही  
 द्वीप जु सुरपति आय । पूजा भक्ति करै बहु  
 भाय ॥ देव अब्रती ब्रत नहिं धरै । भाव भक्ति  
 कर पातक हरै ॥ ३५ ॥ तास द्वीप सम्बन्धी  
 सार । ब्रत नन्दीश्वर को अधिकार ॥ यहां  
 कह्यो जिनवर सु प्रकाश । आदि अनादि

पुण्यकी राशि ॥ ३६ ॥ जो व्रत मध्यभाव-  
 सों करै । ते भव जन्मजरामय हरै ॥ ता व्रत  
 को सुनिये अधिकार । वर्ष वर्षमें त्रय त्रय बार  
 ॥ ३७ ॥ अषाढ कार्तिक अरु जो फाग ।  
 शाखा तीन करो अनुराग ॥ आठहिं दिन  
 पूर्णों परजंत । भक्ति सहित कीजै व्रत संत  
 ॥ ३८ ॥ सातेंका एकासन करो । यथा समय  
 जिनवर मन धरो ॥ आठेंके दिन कर उपवास  
 । जासों कटै कर्मकी त्रास ॥ ३९ ॥ करो  
 प्रथम जिनका अभिषेक । जातैं पातक जाय  
 अनेक ॥ अष्टप्रकारी पूजा करो । मुखपर-  
 मेष्ठि पञ्च उचरो ॥ ४० ॥ तादिन व्रत नंदी  
 श्वर नाम । ताको फल सुनिये अभिराम ॥  
 फल उपवास लक्ष दश जान । श्रीजिनवर  
 ने कियो बखान ॥ ४१ ॥ दूजे दिन जिन  
 पूजा करो । पात्र दान दे पातक हरो ॥ अष्ट  
 विभूति नाम दिन सोय । ता दिन एकाशन  
 कर लोय ॥ ४२ ॥ फल उपवास सहस्र दश

होई । अब तीजो दिन सुनिये लोई ॥ जिन  
 पूजा कर पात्रहिं दान । भोजन पानी भात  
 प्रमाण ॥ ४३ ॥ नाम त्रिलोकसार दिन कह्यो  
 साठ लाख प्रोषधफल लह्यो ॥ चतुर्थ दिन  
 कर अबमौदर्य । नाम चतुर्मुख दिन सों ह्यै  
 ॥ ४४ ॥ तस उपवास लक्ष फल होई । पंचम  
 दिन विधि करियो सोई ॥ जिन पूजा एका-  
 शन करो । हय लक्षण नामजु दिन धरो ॥ ४५ ॥  
 फल चौंरासी लक्ष उपवास । जासों होय भ्रमण  
 भव नाश ॥ षष्ठम दिन जिन पूजा दान ।  
 भोजन भात आमिली पान ॥ ४६ ॥ तादिन  
 नाम स्वर्गसोपान । व्रत चालीस लक्ष फल  
 जान ॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान ॥ काजै  
 भविजनको सन्मान ॥ ४७ ॥ सब सम्पति  
 नामक दिन सोय । भोजन भात त्रिवेली  
 होय ॥ फल उपवास लक्षको जान । अष्टम  
 दिन व्रत चित्तमें आन ॥ ४८ ॥ कर उपवास  
 कथा रुचि सुनो । पात्र दान दे शुभ कृत

गुनो ॥ इन्द्रध्वजव्रत दिन तस नाम । सुमरो  
 जिनवर आठों जाम ॥४६॥ तीन करोड़  
 अरु लाख पचास । यह फल होय हरै सब  
 त्रास ॥ इस विधि आठ वर्षमें सोइ । भाव  
 सहित कीजे भवि लोइ ॥ ५० ॥ उत्तम आठ  
 वर्ष विधि जान । मध्यम पांच, तीन लघु  
 मान ॥ उद्यापन विधिपूर्वक रचो । वेदीमध्य  
 मांडनो रचो ॥ ५१ ॥ जिन पूजारु महा अ-  
 भिषेक । चन्द्रोपम ध्वज कलस अनेक ॥  
 छत्र चमर सिंहासन करो । बहुविधि जिन  
 पूजा अघ हरो ॥५२॥ चारों दान सुपात्रहिं  
 देहु । बहुत भक्ति कर विनय करहु ॥ बहु  
 विधि जिन भावना होइ । शक्ति समान  
 करो भवि लोइ ॥ ५३ ॥ उद्यापनकी शक्ति  
 न होय । तो दूनों व्रत कीजे सोइ ॥ जिन  
 यह व्रत कीनो अभिराम । तिन पद लियो  
 जु सुखको धाम ॥ ५४ ॥ यह व्रत पूर्व महा-  
 फल लियो । प्रथम ऋषभ जिनवरने कियो ॥

अनन्तवीर्य अपराजित पाल । चक्रवर्तिपदवी  
 मंह हाल ॥ ५५ ॥ श्रीपाल मैनासुन्दरी ।  
 व्रत कर कुष्ट व्याधि सब हरी ॥ बहुयक नर  
 नारी व्रत कियो । तिन सब अजर अमर पद  
 लियो ॥ ५६ ॥ सुन्यो विधान राय हरिसेन  
 अति प्रमोद मुख जपै जु बैन ॥ सब परिवार  
 सहित व्रत लियो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर  
 दियो ॥ ५७ ॥ व्रत कर फिर उद्यापन करयो  
 धर्मध्यानकर शुभपद धरयो ॥ अन्त समाधि  
 मरणको पाय । भयो देव हरिसेन सुराय ॥ ५८ ॥  
 पर्यायांतर जैहैं मुक्ति । श्रेणिक सुन्यो सकल  
 व्रतयुक्ति ॥ गौतम कहयो सकल अधिकार  
 सुन्यो मगाधिपति चित्त उदार ॥ ५९ ॥ जो  
 नर नारी यह व्रत करै । निश्चय स्वर्ग मुक्ति  
 पद वरै ॥ संकट रोग शोक सब जाहिं । दुख  
 दरिद्रता दूर विलाहिं ॥ ६० ॥ यह व्रत नंदी-  
 श्वर की कथा । हेमराज सु प्रकाशी यथा ॥  
 शहर इटावा उत्तम थान । श्रावक करे धर्म

शुभ ध्यान । ६१ । सुने सदा ये जैनपुगन ।  
 गुणीजनोंका राखें मान ॥ तिहिठा सुन्यो  
 धर्म संबध । कीनी कथा चौपाई बंध । ६२ ।  
 कहैं सुनै देवै उपदेश । लहैं भावसों पुण्य  
 विषेश ॥ जाके नाम पाप मिट जांय । तिहं  
 जिनवरके बन्दों पांय । ६३ ।

इति श्री नन्दीश्वरव्रत कथा समाप्त ।

अठारह नातेकी कथा ।

पंच परमगुरु प्रणमि कर, जिनवाणी उरधार ।  
 अठारह नाते कौ कहूँ, भवि जीवन हितकार । १।

जम्बूद्वीप दीपनमें सार । लख जोजन है  
 गोल अकार ॥ भरत क्षेत्र दक्खिन दिन तास  
 उज्जयिनी नगरी तहां खास । २ । विश्वसेन  
 नृप राज्यहि करै । पालै प्रजा नीति अनुसरै  
 ॥ तामे सेठ सुदत्त जु गुनी । सतरह कोटि  
 द्रव्यको धनी । ३ । बसंततिलका वेश्या  
 एक । घरमें राखी रहित विवेक ॥ ताके संग  
 रमहिं दिनरात । तसफल गर्भरहयो सुखपात

॥ ४ ॥ फिर वह वेश्या रुग्नी भई । तबहि  
 सेठ तिहं काढ़ जु दई ॥ अपने घर वह वेश्या  
 गई । कुछ दिन गये निरोगी भई ॥ ५ ॥  
 ताके सुत कन्या दो बाल । जुगल भये सुन्दर  
 सुकुमाल ॥ तिन्हें देख अति दुःखित सोय  
 तिन्हहिं लपेटी कंबल दोय । ६ । दरदाजे  
 उत्तर सुत डार । कन्या डारी दखन दुवार ॥  
 प्रातहिं बनिजारो इक आय । कन्या वानै  
 लई उठाय । ७ । अपनी तियको जाकर दई  
 कन्या देखजु हर्षित भई ॥ तानें पाली तन  
 मन लाय । 'कमला' नाम धरयो सुखदाय  
 । ८ । साकेतापुरवासी एक । वणिक सुभद्रा  
 धरै सविवेक । तिह लीनो वह पुत्र उठाय ।  
 तस तियपाल्यो तिहिं मनलाय । ताको नाम  
 धरयो धनदेव । बढ़त रहयो शशि सम स्व-  
 यमेव । व्याह योग दोनों हो गये । दोनों व-  
 णिक विचारत भये ॥ १० ॥ यह सुन्दर जो-  
 डी सुखदाय । व्याह दिये दोनों मनलाय ।



भाई बहन युग उत्पन्न भये । कर्मयोग तिय  
पति है गये ॥ ११ ॥ दोहा—

सुनहु भविजन कथन अब, पूर्व करम अनु-  
सार । वणिजहेत धनदेव सो गयो उजैन  
मभार ॥१२॥

तहां बसंतिलका तस मात । रहे उजैनीमें बहु  
ख्यात ॥ तासों प्रीति करी धनदेव । रमै मात  
सों वह स्वयमेव ॥ १३ ॥ ताको फल एक  
पुत्र जो भयो । नाम वरुण ताको धर दयो ।  
यह तो कथन रह्यो इह ठौर । आगे भयो  
सुनो जो और ॥ १४ ॥ दोहा—

अवधिज्ञान जुत एक मुनि कमला द्वारै आय ।  
हित पड़गाह्यो भावजुत, माथा धुनि फिर  
जाय ॥ १५ ॥ कमला मुनिढिग जायकर,  
प्रश्न कियो शिरनाय । मो घरतैं पाछे फिरे  
कारणको मुनिराय ॥ १६ ॥

बीपाई

तब मुनि बोले सुनि चित लाय, तेरो व्याह

भ्रातसंग थाय । तुम दोनों वेश्या संतान, यह  
 लखि हम आये बन थान ॥ १७ ॥ तो पति  
 पुनि उज्जयिनी जाय । रमहि मात संग मन  
 हुनसाय ॥ ताको फल पुत्र जु भयो । वरुण  
 नाम ताको धर दयो ॥ यह सुन कमला कं-  
 पित भई । है विराग दीक्षा तब लई ॥ ब्रत  
 आर्याके धारे सार । तबहि गई उज्जयिनि  
 मंभार ॥ १६ ॥ निजमाता वेश्या घर जाय  
 भूने वरुण बाल तिहं ठाय ॥ हे बालक तेरे  
 संग मोर, छह नाते हैं सुन चितचोर ॥२० ॥

वरुणके साथ छह नाते ।

प्रथमहिमेरी मामों जायो, तातैं मेरो है तू  
 भ्रात, दूजे तू सौतनको सुन है वातैं मेरो पुत्र  
 विख्यात, दवर भी मेरा लगता है क्योंकि तू  
 पतिका लघु भ्रात, होय भतीजा भी तू मेरे  
 सगे भ्रातका पुत्र जू ख्यात ॥२१॥ मेरी माका  
 पति धनदेव, जु तातैं वह भी पिता भया पितु  
 का छोटा भाई तातैं, तू काका मम होय गया

सौतिनका सुत है धनदेव जु वह मेरा भी पुत्र  
जु होय । पूतका पूत भया पोता तू, यह  
नाते छह मेरे जोय ॥ २२ ॥ बसंततिलका रोष  
कर, आई कमला पास । तू को है मो सुतहि  
सङ्ग नाते करत प्रकास ॥ २३ ॥ कमला  
बोली मात सुन, छह नाते तो सङ्ग । भिन्न भिन्न  
क्रमसे कहू. तामैं कछू न भंग ॥ २४ ॥

बसन्ततिलका वेश्याके साथ छह नाते ।

मैं धनदेव जुगल तो उरस पदा हे तातैं तू  
मात फिर तू भोजाई है मेरी भ्रात तिया जगमें  
विख्यात ॥ तू माता धनदेव पिता मम पितुकी  
मा दादी जु थई । मो पतिकी तू दूसरी तिय  
है तातैं मेरी सोति भई ॥ २५ ॥ सौत पुत्रकी  
तू तिय है तातैं तू पुत्रबधू मेरी । मो पति जो  
धनदेव उसी की माता तू सासू है री ॥ या  
विध छह नाते सुनते ही, तहां जु आया तब  
धनदेव । तुमरे संग भी छह नाते हैं, सुनलो  
कान लगा स्वयमेव ॥ २६ ॥

धनदेवके साथ छह नाते ।

प्रथम भ्रात है फिर पति हो गये, माताके पति  
हो मम तात । वरुण मेरा काका है ताके पिता  
भये तैं दादा भ्रात ॥ मेरे सौत पुत्र हो तुम  
तातैं मेरे भी पुत्र भये । वेश्या मेरी सास तास  
पति तातैं मेरे श्वमुर थये ॥ २७ ॥

वेश्याके संग रमण तैं, एकहि भवके मांहि  
एक जीवके साथमें, नाते अठदश थांहि ॥२८॥

जैन भारतीका नमूना ।

प्रस्तावना ।

होंगे सजग सबही मनुज पढ़कर हमारी भारती,  
पाषान भी होगा द्रवित सुनकर हमारी भारती ।  
सोये हुये निर्जीवसे उनको जगायेगी सही,  
सन्मार्ग विमुखोंको सदा पथपर लगायेगी सही ।  
जोसड़ रहे हैं खेदसे आलस्यकी ही गोदमें,  
पढ़कर इसे वे नर सदा हंसते फिरेंगे मोदमें ।  
होगा इसीसे ज्ञात सब क्या क्या हमारा हो गया,  
सुविशाल इस भंडारमेंसे रत्न क्या क्या खोगया ।

## रविव्रत कथा

श्रीसुखदायक पार्स जिनेश । सुमति सुगति  
दाता परमेश ॥ सुमरो शारदपद अरविन्द । तिन  
कर व्रत प्रगठ्यो सानन्द ॥ १ ॥ वाणारसि नगरी  
सुविशाल प्रजापाल । प्रगठ्यो भूपाल ॥ मतिसागर  
तहं सेठ सुजान । ताको भूप करै सन्मान ॥ २ ॥  
तासु-तिया गुणसुन्दरी नाम । सात पुत्र ताके  
अभिराम ॥ षट्सुत भोग करै परणीत । बालरूप  
गुणधर सुविनीत ॥ ३ ॥ सहस्रकूट शोभित जिन  
धाम । आये यतिपति खण्डित काम ॥ सुनि  
मुनि आगन हर्षित भये । सर्व लोग बन्दनको गये  
॥ ४ ॥ गुरुवाणी सुनिकें गुणवती । सेठिन तबै  
करी बीनती ॥ प्रभो सुगमव्रत देहु बताय । जासों  
रोगशोक भय जाय ॥ ५ ॥ करुणानिधि भाखहिं  
मुनिराय । सुनो भव्य तुम चित्त लगाय । जब  
आषाढ़ सुदि पक्ष विचार । तब कीजै अन्तिम रवि  
वार ॥६॥ अनशन अथवा अल्प आहार । लव-  
णादिक जु करै परिहार ॥ नवफलयुत पंचामृतधार ।  
बहु प्रकार पूजो भवहार ॥७॥ उत्तमफल इक्यासी

जान । नवश्रावक घर दीजै आन ॥ या विध कर  
 नववर्ष प्रमाण । जातैं होय सर्व कल्याण ॥ ८ ॥  
 अथवा एक वर्ष इस सार । कीजै रविव्रत मनहिं  
 विचार ॥ सुन साहुन निज घरको गई । ब्रत निंदा  
 करि निंदित भई ॥ ९ ॥ ब्रत निन्दातैं निर्धन भये ।  
 सातहिं पुत्र अवधपुर गये ॥ तहां जिनदत्त सेठ  
 घर रहैं । पूरब दुष्कृतका फल लहैं ॥ १० ॥ मात  
 पिता गृह दुःखित सदा । अवधि सहित मुनि पूछे  
 तदा ॥ दयावन्त मुनि ऐसैं कखो । ब्रतनिन्दासैं  
 तुम दुख लखो ॥ ११ ॥ सुनि गुरु वचन बहुरि  
 ब्रत लयो । पुण्य थयो घरसे धन भयो ॥ भविजन  
 सुनो कथा सम्बन्ध । जहं रहते थे वे सब नन्द ॥ १२ ॥  
 एक दिवस गुणधर सुकुमार । घास लेन आयो  
 गृहद्वार ॥ क्षुधावंत भावजपै गयो । दंत बिना नहिं  
 भोजन दयो ॥ १३ ॥ बहुरि गयो जहां मूल्यो दंत ।  
 देख्यो तासों अहिलिपटंत ॥ फणिपतिकी तहं  
 विनती करी । पद्मावति प्रगटी तिहिं घरी ॥ १४ ॥  
 सुन्दर मणिमय पारसनाथ । प्रतिमा एक दई  
 तिहिं हाथ ॥ देकर कखो कुंवरकर भोग । करो  
 क्षणक पूजा संयोग ॥ १५ ॥ आनबिम्ब निज घरमें  
 धख्यो । तिहंकर तिनको दारिद हख्यो ॥ सुखविलास

सेवै सब नन्द । नित प्रति पूजें पार्व जिनन्द  
 ॥१६॥ साकेतानगरी अभिराम । सुन्दर बनबायो  
 जिनधाम ॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य संयोग । आये  
 भविजन संग सु लोग ॥ १७ ॥ संघ चतुर्विधिका  
 सनमान । कियो दियो मनवांछित दान ॥ देख  
 सेठ तिनकी संपदा । जाय कही भूपतिसौं तदा  
 ॥१८॥ भूपति तब पूछ्यो विरतंत । सत्य कस्यो  
 गणधर गुणवंत ॥ देख सुलक्षण ताको रूप । अति  
 आनन्द भयो सो भूप ॥ १९ ॥ भूपति गृह तनुजा  
 सुन्दरी । गुणधरको दीनो गुणभरी ॥ कर विवाह  
 मंगल सानन्द । हय गय पुरजन परमानन्द ॥२०॥  
 मनवांछित पाये सुख भोग । विस्मित भये सकल  
 पुर लोग ॥ सुख सौं रहत बहुत दिन भये । तब  
 सब बंधु बनारस गये ॥ २१ ॥ मातपिताके परसे  
 पांय । अति आनन्द हिरदे न समाय ॥ विघट्यो  
 सबको विषय बियोग । भयो सकल पुरजन संयोग  
 ॥२२॥ आठ सात सोलहके अङ्क । रबिब्रत कथा  
 रची अकलंक ॥ थोड़ो अर्थ ग्रन्थ विस्तार । कहै  
 कवीश्वर ओ गुणसार ॥२३॥ यह ब्रत ओ नरनारी  
 करै । कबहूँ दुर्गतिमें नहिं परै ॥ भाव सहित ते  
 शिवसुख लहै । भानुकीर्ति मुनिवरइमि कहै ॥२४

## निशिभोजन भुंजन कथा

दोहा।

नमों सारदा सार बुध, करै हरै अघ लेप ।

निशि भोजन-भुंजनकथा, लिखूं सुगम संक्षेप ॥

चौपाई।

जम्बूद्वीप जगत विख्यात । भरतखण्ड छवि  
कही न जात ॥ तर्हा देश कुरुजांगल नाम । हस्त-  
नागपुर उत्तम ठाम ॥२॥ यशोभद्र भूपति गुण-  
वास । रुद्रदत्त द्विज प्रोहित तास ॥ अश्वमास  
तिथि दिन आराध । पहिली पडवा कियो सराध  
॥३॥ बहुत विनयसों नगरी तने । न्योत जिमाये  
ब्राह्मण घने ॥ दान मान सबहीको दियो । आप  
विप्र भोजन नहिं कियो ॥ ४ ॥ इतने राय पठायो  
दास । प्रोहित गयो रायके पास ॥ राजकाज कछु  
ऐसो भयो । करम करावत सब दिन गयो ॥ ५ ॥  
घरमें रात रसोई करी । चूल्हे ऊपर हांडी धरी ॥  
हींग लेन उठि बाहर गई । यहां विधाता ओरहिं  
ठई ॥६॥ मेंढक उछल पखो तामहिं । त्रिया तहां  
कछु जान्यो नाहिं ॥ बैंगन छोक दिये ततकाल ।



मेंढक मखो होय बेहाल ॥ ७ ॥ तबहु विप्र नहिं  
 आयो धाम । धरी उठाय रसोई ताम ॥ पराधीनकी  
 ऐसी बात । औसर पायो आधी रात ॥ ८ ॥ सोय  
 रहे सब घरके लोग । आग न दीवा कर्मसंयोग ॥  
 भूखो प्रोहित निकसै प्रान । ततछिन बैठो रोटी  
 खान ॥९॥ बैगन भोलै लीनों ग्रास । मेंढक मुंहमें  
 आयो तास ॥ दांतन तल्लै चब्यो नहिं जबै । काढ़  
 धखो थालीमें तबै ॥ १० ॥ प्रात भयो मेंढक पहि-  
 चान । तौ भी विप्र न करी गिलान ॥ तिथि पूरी  
 कर छोड़ी काय । पशुकी योनि उपज्यो जाय ॥११॥

### सोरठा

घुघू काग विलाव, सावर गिरध पखेरुआ ।  
 सूकर अजगर भाव, बाघ गोह जलमें मगर ॥१२॥  
 दशभव इहविधि थाय, दशों जन्म नरकहिं गयो ।  
 दुर्गति कारन पाय, फल्यो पाप बट वीजवत् ॥१३॥

### दोहा

निशि भोजन करियो नहिं प्रगट दोष अविलोय ।  
 परभव सब सुख संपजे, इहभव रोग न होय ॥१४॥

कीड़ी बुधबल हरै, कंपगत करै कसारी । मकड़ी  
कारण पाय कोढ़ उपजे दुख भारी ॥ जुवां जलो-  
दर जनै फांस गल विधा बढ़ावै । बाल सबै सुरभंग  
वमन मांखी उपजावै ॥ तालुवे छिद्र बिछू भखत,  
और व्याधि बहु करहिं सब । यह प्रगट दोष  
निशि अशनके, परभव दोष परोक्ष फल ॥ १५ ॥

दोहा

जो अघ इहभव अनुभव करै, परभव क्यो न करेय  
डसन सांप पीड़ै तुरत, जहर क्यो न दुःख देय ॥१६॥  
सुवचन सुन डारहारजै, मूरख मुदित न कोय ।  
मणिधर फण फेरै सही, नहीं सांप वह होय ॥१७॥  
सुवचन सतगुरुके वचन, और न सुवचन कोय ।  
सतगुरु वही पिछानिये, जा उर लोभ न लोय ॥१८॥  
भूधर सुवचन सांभलो, स्वपरपक्ष पर बाँन ।  
समुदरेणुका जो मिले, तोड़ैतै गुण कौन ॥ १९ ॥

इति भोजन भुंजन कथा समाप्त ।

# सूची-पत्र

## पद्मपुराण ।

स्वर्गीय कविवर रविषेणःचार्य कृत संस्कृतका अनुवाद पंडित दौलतरामजाने इतनी सरल और मिष्ट भाषामें लिखा है कि उसको आजकलकी भाषामें बदलनेकी इच्छा नहीं होती कारण वे सीधे साधे और भावपूर्ण शब्द पुरुष हो नहीं हमारा स्त्री समाज तथा बालक बालिकायें भी सरलतासे समझ लेता है ।

जबकि देशमें रामायणका प्रचार जोरोंसे है, तब उसी कथाको समझानेके लिये पद्मपुराणका स्वाध्याय अत्यंत उपयोगी है । शास्त्राकार खुले पत्रोंके ग्रन्थकी न्याछावर १०) रुपया ।

## हरिवंशपुराण ।

श्री कृष्णकी जैन धर्ममें कितनी मान्यता है तथा कौरव, पांडव आदिका इतिहास, इस महान ग्रन्थमें संपूर्ण भरा हुआ है । भगवान नेमिनाथ को जीवनीसे तमाम जैन समाजको काफी शिक्षा मिलती है । नीतिपूर्ण एतिहासिक घटनायें पढ़कर मन गदगद हो जाता है । इस ग्रन्थके लेखक वही स्वर्गीय पं० दौलतरामजी हैं जिन्होंने सरल भाषा लिखनेमें काफी ख्याति प्राप्त की है, यह ग्रन्थ भी शास्त्राकार सरल भाषामें छपा है । न्यो० ८) रु०

## श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार ।

यह ग्रन्थ पांच बार छप चुका है, इसके सम्बन्धमें कुछ भी लिखना धूर्यको दीपक दिखाना है । पं० सदासुखजीने श्रावकोंके लिये यह पथ-प्रदर्शक ग्रन्थ लिखकर महान उपकार किया है । शास्त्राकार न्यो० ५॥) रुपया

## पुरुषार्थ सिद्धयुपाय ।

शास्त्राकार पुरानी और नवीन टीकाओं सहित ( स्व० पं० टोडरमलजी कृत ) छपाया है । न्योछावर ४) रुपया मात्र ।

## तत्त्वार्थ राजवार्तिक

स्व० पं० पन्नालालजी दूनीवाल कृत पुरानी भाषामें एक खंड ही छपा था उसका मूल्य सिर्फ ४) रक्खा है ।

## जैनक्रिया कोष ।

स्व० पं० दौलतरामजीने आचार सम्बन्धी इस ग्रन्थको लिखकर बहुत कुछ स्पष्ट कर दिया है । वही दुबारा छपाया था पर थोड़ी कापी बाकी है, अतएव जिन्हें दरकार हो शीघ्र ही मंगा लें । न्योछावर ३) रुपया ।

## चरचा समाधान ।

स्व० पं० भूधरदासजी कृत शास्त्राकार यह छपाया गया है, इसमें तमाम प्रामाणिक ग्रन्थोंके आधारसे सैकड़ों शंकाओंका समाधान किया है ( गोमट्टसार, राजवार्तिक जैसे ग्रन्थोंके आधारसे ) न्यो० २) ६० मात्र ।

## सुकुमाल चरित्र

इसका मिलना भी दुस्प्राप्य था, अतएव उसी शास्त्रीय भाषामें जो जयपुर निवासी श्रीमान पं० नाथूलालजी दोशीने सकलकीर्ती कृत संस्कृतसे भाषामें लिखी थी प्रगट की है, वास्तवमें सुकुमालकी जीवनी पढ़कर आपका हृदय पवित्र हो जायगा, कई उत्तमोत्तम रंगीन चित्र भी दिये हैं । न्यो० १)

# उपयोगी ग्रन्थोंकी सूची

पद्मपुराण	१०)	महाराज श्रेणिक २) रेशमी २॥)
हरिवंश पुराण	८)	चरचा समाधान २)
पांडव पुराण ( सचित्र )	५)	सप्तव्यसन चरित्र १॥) स० १॥॥)
„ सजिल्द ६) रेशमी ६॥)		पार्श्वनाथ पुराण २) सादा १॥)
शांतिनाथ पुराण	६)	भक्तामरकथा मंत्रतंत्र १॥) स० १॥॥)
आदिनाथ पुराण	६)	बोरपूजा नाटक १॥)
बृहद् विमलनाथ पुराण	६)	जैन महिलाभूषण १) सजिल्द १॥)
रत्न करण्ड श्रावकाचार	५॥)	जैन भारती १॥)
चौवीसी पुराण ३) सजिल्द ४)		जापान ब्रिटेनकी छातीपर १॥)
प्रद्युम्न चरित्र ३) रेशमी ४)		यूरुपमें जंगकी तैयारी १॥)
पुरुषार्थ सिद्धुपाय	४)	धन्यवाद (उपन्यास) १॥)
आराधना कथा कोष ३॥॥) ४)		सुकमाल चरित्र १)
महावीरपुराण ३॥॥) सजिल्द ४)		वृन्दावन चौवीसी पाठ १)
मल्लिनाथ पुराण	४)	रामचंद्र चौवीसी १)
मोक्षमार्ग प्रकाशक ३) सजिल्द ३॥॥)		राम वनवास १)
पुन्याश्रवकथाकोष २॥॥) रेशमी ३)		नयीनतीर्थयात्रा ॥॥) नकशायुक्त १)
जैन क्रिया कोष २॥॥) रेशमी ३)		सुदर्शन चरित्र सचित्र १)
सच्चा जिनवाणी संग्रह ३)		चारुदत्त चरित्र ॥॥)
श्रीपालपुराण शास्त्राकार ३)		संग ( उपन्यास ) ॥॥)
जैनव्रत कथा कोष २॥॥)		धनकुमार चरित्र ॥॥)
बड़ापूजा विधान २॥॥)		शील महिमा नाटक ॥॥)
कर्म पथ ( उपन्यास ) २॥॥)		गौतम चरित्र सजिल्द ॥॥)
		पोपंकी ५ कहानियां ॥॥)

पत्र व्यवहार करनेका पता—

जिनवाणीप्रचारक कार्यालय, १६१।१ हरीसन रोड, कलकत्ता

( = )

अंजना पवनजय (नाटक)	॥३॥	दीपमालिका विधान	-॥
भाद्रपद पूजा	॥=॥	अरहंतपासा केवली	-॥
विजातीय विवाह मीमांसा	॥=॥	संसार दुःखदर्पण	-)
नित्यपाठ गुटका (संस्कृत)	॥	जैनस्तव रत्नमाला	-॥
„ (भाषा) सजिल्द	॥	स्कूली	
भाग्य उद्योग	॥	छहढाला सार्थ सचित्र	१-)
साध्वी (काव्य)	॥	„ की कुंजी	=)
जैन गायन सुधा	॥	रत्नकरण्ड श्रावकाचार सार्थ	१-)
दौलतपद संग्रह	॥	द्रव्य संग्रह सार्थ	१-)
प्रद्युम्न चरित्र पं० गुणभद्र कृत	॥	श्रावकाचारकी कहानिया	१=)
प्रेम (सचित्र)	॥	शिशुबोध जैनधर्म प्र० भाग	-)
बुधजन पद „	१=)	“२ रा -॥) ३ रा ≡) ४ था १-)	
जिनेश्वरपद „	१-)	सूत्र भक्तामर मूल	=)
घानतपद „	१-)	निर्बाण कांड आलोचना	-)
भूधरपद „	१-)	पंच मंगल -) छहढाला मूल	-)
विश्वासघात नाटक	१=)	इष्ट छत्तीसी	-)
धंधेर नगरी नाटक	१)	भक्तामर संकट हरण	-)
नवग्रह विधान	≡)	दर्शन पाठ	-)
कमंदहन विधान	=)	उपयोगी शिक्षायें	-॥
पंचपरमेष्ठी विधान	≡)	विनती संग्रह	-॥
पंचकल्याणक विधान	≡)	नित्यपूजा संस्कृत और भाषा १)	
सम्मैद् शिखर विधान	-)	„ संग्रह (भाषा)	=)

जैन शतक	≡)	कुमारी अनन्तमती	≡)
बोडस संस्कार	॥)	बारहमासा संग्रह	-)॥
रक्षा बंधन कथा	-)	श्रावक वनिता रागनी	≡)
सामयिक पाठ सार्थ	-)	सुगन्ध दशमी कथा	-)॥
सौमासती नाटक	≡)	रविवृत कथा	-)॥
शील कथा ( सचित्र )	॥)	आदर्श नाटक	≡)
दर्शन कथा "	॥)	<b>हिन्दीकी उत्तम पुस्तकें</b>	
दान कथा अठारह नाते	॥)	सन् ५७ का गद्दर	१॥)
निशि भोजन कथा	॥)	अवलाकी आत्मकथा	२॥)
रात्रि भोजन तर्ज राधेश्याम	॥)	सद्गुणी सुशीला	२)
प्रम तरंग प्रथम भाग	-)	चिताकी चिनगारियां	१)
दूसरा -) तीसरा -)	-)	डिवेलरा	१॥)
बड़ी बहू बड़े भाग	-)	महारानी द्रोपदी	१॥)
सज्जनचित्त वल्लभ	≡)	<b>सुन्दर तिरंगे चित्र</b>	
दशलक्षण धर्म संग्रह	॥)	( १५×२० साइज )	
भावना संग्रह	≡)	१ भगवानका समोशरण	॥)
वैराग्य शतक	-)	२ नेमनाथ स्वामीका वैराग्य	॥)
मौनव्रत कथा ( सचित्र )	॥)	३ गोमट स्वामी	॥)
जैनव्रत कथा	≡)	४ गिरनार पर्वत	॥)
पिंड शुद्धि	≡)	५ सम्मेद शिखरजी	॥)
समाधिमरण ( सचित्र )	-)	६ राजगृही क्षेत्र	॥)
मेरीभावना	॥)	७ सम्राट चंद्रगुप्तके स्वप्न	॥)

८ भरत चक्रवर्तीके १६ स्वप्न ॥)	१८ चम्पापुरी क्षेत्र ॥)
९ कमठका उपसर्ग ॥)	१९ पावापुरी क्षेत्र ॥)
१० आचार्य शांतिसागरजी ॥)	२० संसार दर्शन मधुविन्दु ॥)
११ सिद्धवर कूट ॥)	२१ बड़वानीजी सिद्धक्षेत्र ॥)
१२ पंच परमैष्टी दर्शन ॥)	२२ आहार दान तीन रंगा ॥)
१३ रक्षाबन्धन महात्म्य ॥)	२३ पार्श्वनाथका वनबिहार ॥)
१४ पावागिरि क्षेत्र ॥)	२४ आचार्य सूर्य सागरजी ॥)
१५ सीताजीकी अग्नि परीक्षा ॥)	२५ ग्रीष्म परिषद् तीन रंगा ॥)
१६ भगवानकी माताके स्वप्न ॥)	२६ भारतवर्षका नकशा ॥)
१७ पुत्र-लेखन ॥)	

## बीस व्यापार ।

### नामक पुस्तकमें

अजमाये हुए प्रतिदिन काममें आनेवाली ३३४ चीजोंके सरल और व्यवहार किये हुए नुसखे ।

जैसे १ आफिसोंकी चीजें, कार्वनपेपर, गोंद, लाख वत्ती २ एसंस लेवेण्डर, ३ उपयोगी ६३ दवाइयां, ४ तिजाब ५ तेल, ६ दन्तमंजन ७ दादकी ११ दवाइयां ८ पानका मसाला ९ पालिस १० पेटेण्ट दवाइयां हैं, इनमेंसे एक एक चीजको बनाकर लोग लखपती हो गये हैं, आप अगर अपने बालकोंको उद्योगी तथा स्वावलम्बी बनाना चाहें तो इस उपयोगी पुस्तकको शीघ्र ही मंगालें । न्यो० १॥=) मात्र रखी है ।

## असली काशमीरी पवित्र केशर

ग्राहकोंकी सुविधाके लिये हमने नई असली केशर मंगा ली है । २॥) तोला ।



## बृहद्विमल पुराण ।

यह ग्रन्थ अप्राप्य था इसको संस्कृतमें प्राप्त कर उसको सरल भाषा-टोका श्रीमान माननीय पं० गजाधरलालजी, न्यायतीर्थसे लिखाकर छपाया गया है । द्वितीय वृत्तिका मूल्य ६) मात्र ।

## शांतिनाथ पुराण ।

यह ग्रन्थ भी संस्कृतमें था, इससे हिन्दी भाषा वाले स्वाध्यायसे चितव हो रह जाते थे, अतएव इसका सरल भाषामें पं० लालारामजी शास्त्री द्वारा अनुवाद कराया गया है । शास्त्राकार छपाया है । मूल्य ६) रुपया ।

## आदिपुराण ।

इस बड़े भारी ग्रन्थको सार रूपमें सरल भाषा बचनिकामें पं० बुद्धि-लाल श्रावकसे लिखवाया गया है । सिर्फ शृङ्गार भाग छोड़कर बाकी प्रत्येक विषयको ग्रन्थमें लानेका प्रयत्न किया है, यही कारण है कि थोड़े ही समयमें ग्रन्थकी द्वितियावृत्ति करानी पड़ी । शास्त्राकार, मूल्य ६) रुपया ।

## मल्लिनाथ पुराण ।

पं० गजाधरलालजी शास्त्रीने संस्कृतसे हिन्दीमें इसकी भाषाटोका की है । ग्रन्थको हिन्दी जाननेवालोंके लिये ही छपाया है । जैन समाजने इसको थोड़े ही समयमें मंगाकर खतम कर दिया है । यह द्वितीय वृत्ति है । न्योछावर ४) रुपया मात्र ।

## पुन्याश्रव कथा कोष ।

इस ग्रन्थका मिलना १५ वर्षसे बन्द हो गया था उसीको सचित्र ४० चित्र देकर छपाया है, इसकी कथायें कितनी सुन्दर और शिक्षाप्रद हैं, यह हमारे धर्मात्मा पाठक स्वाध्याय करके ही अनुभव प्राप्त कर सकते हैं । भाषा वर्तमान ढंगको सरल और मुहावरेदार है । फिर भी इस ४०६ पृष्ठके ग्रन्थकी न्योछावर २॥) मात्र है ।

आदर्श नाटक—इसमें दिल्ली अनाथालयके बालकों द्वारा गाये जाके कले द्रमाओंका संग्रह सचित्र है। मू० =)

सोमासती या बिगड़ेका सुधार—रात्रि भोजनपर अच्छा शिक्षा-पद द्रामा लिखा गया है। मू० =)

### स्कूली पुस्तकें

रत्नकरन्द श्रावकाचार—सचित्र ( सार्थ ) मय चार्ट सहित इतना उत्तम अभी तक नहीं छपा था उसे बहुत परिश्रमसे एक सुप्रसिद्ध विद्वान द्वारा सम्पादन कराया है। मू० 1-)

द्रव्य संग्रह—( सचित्र ) मुख पृष्ठपर छह द्रव्योंका भावपूर्ण दोरंगा चित्र देखकर आप द्रव्योंका रूप आसानीसे समझ लेंगे। उपयोगी कई चार्ट भी दिये गये हैं। सार्थ अन्य तमाम द्रव्य-संग्रहोंसे उत्तम। छपाई सफाई सर्वोत्तम मू० 1-)

छहढाला—(सार्थ) कव्हर पर “जिन सुथिर मुद्रा देख मृग गण उपलब्ध काज खुजावते” का भावपूर्ण चित्र अन्यय अर्थ आदि कठिन-कठिन उलझनों को हमारे सुयोग्य सम्पादकने सुलझानेका प्रयास किया है। छपाई सफाई सर्वोत्तम होनेपर भी मू० 1-) मात्र।

शिशुबोध जैन धर्म—प्रथम बालबोध जैन धर्मकी तरह बड़े-बड़े बम्ब-ईया टाइपोंमें छपा है। १५ पृष्ठका यह प्रथम भाग है, बारह बार छप चुका है। मू० -)

द्वितीय भाग—१० बार छप चुका है। मू० -)॥

तृतीय भाग—सचित्र बहुत ही उत्तम ढंगसे लिखा गया है। मू० ३) आठ बार छप चुका है।

चौथा भाग—सचित्र बहुतही सुंदरताके साथ छपाया गया है। मू० 1-)

भावना संग्रह—पृष्ठ संख्या ३२. इसमें धर्म पञ्चीसी, बारह भावना, भूधर, बुधजन, भगोतीदास, जयचंद्र, मंगतरायकी भावना सम्मिलित हैं, सोलह कारण भावना, वैराग्य भावना, बेरी भावना, ज्ञान पञ्चीसी आदि भी सम्मिलित हैं।

